अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10

(Science / विज्ञान)

05. Hydrogeological Investigation On Grounwater Levels & Its Impacts Of Water Quality In Baghwar Region Of District Sidhi (M.P.) (Suman Singh, Anoop Singh) 12

06. Phytochemical And Antimicrobial Study Of Bridelia Retusa (L) Spreng (Ekdania) (Pooja Gupta) 17

07. Hardness Of Water (Prof. B. K. Rawat, Prof. Shailendra Sisodiya) 21

08. Metallic Pollutants Removal Through Phytoremediation "A Study With Crop Plants" (Dr. Kumud Dubey, Dr. Avinash Dube) 24

09. Importance Of Biological Spectrum In The Ecological Consideration Of The Vegetation (Dr. Mukta Shrivastava) 26

(Home Science / गृह विज्ञान)

10. Nutritional Status And Obesity In Working And Non-Working Married Sikh Women [25-40 Yrs] In Jodhpur City (Arti Soni, Prof. Neelam Wason) 28

11. शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का एक साधन (डॉ. अर्चना मैथ्यू) 31

12. महिला सशक्तिकरण की दिशा में बढ़ते कदम – महिला अधिकार के संदर्भ में (डॉ. भावना रमैया) 34

13. वृद्धजनों की सामाजिक समस्याऐं (डॉ. मंजुला अलान्से) 37

14. शिक्षक – शिक्षण एक विचार (डॉ. मधु गौतम) 39

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

15. A study on Service Quality & Customer Satisfaction on Telecom Service Providers (Dr. Pradeep Kumar Sharma, Vishwas Sharma) 40

16. FDI In Indian Retail Sector : Issues And Challenges (Dr. Vandana k. Mishra) 43

17. A Study of Performance Management and Performance Appraisal (Ram Kumar Lodha, Dr. Ummed Singh) 46

18. Impact Of Ethics In Human Resource Management (Deepika Shrivastava) 49

19. Role of Information Technology in Insurance Industry (Dr. Rakhi Saxena) 52

20. Opportunities And Challenges In Indian Retail Banking Sector 54
(Dr. M. L. Gupta, Dr. R. K. Gupta)

21. मध्य प्रदेश में नियमित मण्डी का विकास (डॉ. रीतू राजपूत) 56

22. संगठनों में औद्योगिक संघर्ष के कारण एवं समाधान (डॉ. एस. सी. मूणत, सविता वर्मा, विनिता तिवारी) 59

23. प्राकृतिक आपदाओं में कमी हेतु विकास व पर्यावरण प्रबंधन की आवश्यकता – एक अध्ययन 62
(डॉ. रश्मि शर्मा, डॉ. पी.एस. पटेल)

24. उज्जैन जिले में कृषि उपज मण्डी समितियों की स्थापना, मापदण्ड एवं वर्गीकरण (डॉ. मोईन खान, डॉ. एम.एस. मन्सूरी) 65

25. स्वरोजगार योजनाओं के संचालन में बैंको की भूमिका(नीतिन बिल्लौरे) 68

26. भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल में कर्मचारी विकास कार्यक्रमों एवं अनुषंगी लाभों का मूल्यांकन(डॉ. इफफ्त खान) 71

27. प्राचीन भारतीय वेदों में करारोपण, औद्योगिक प्रबंधन शब्दावली एवम् राजनीति (डॉ. विम्मी बहल, डॉ. अनिल शिवानी) 73

28. प्राचीन भारत के लघु एवं गृह उद्योग (डॉ. सारिका मिश्रा) 76

29. वाणिज्य शिक्षा के माध्यम से स्थानीय उद्योगों में बढ़ती रोजगार की संभावनाए (डॉ. ऋतु पोरवाल, डॉ. सोनी व्यास) 78

30. भारत में म्यूचुअल फंड के विकास के संदर्भ में सेबी की भूमिका (डॉ. श्रद्धा काबरा) 80

31. डॉ. अम्बेडकर का बौद्धधर्म के विकास में सैद्धान्तिक योगदान (डॉ. मनोज महाजन, डॉ. सुधीर महाजन) 82

32. भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश– एक अध्ययन (डॉ. नीरज करारी, डॉ. ओ. एस. मेहता) 84

33. भारत के सर्वांगीण विकास के लिए समर्पित प्रधानमंत्री जन–धन योजना (डॉ. आर.सी. गुप्ता) 86

(Economics / अर्थशास्त्र)

34. Usage Of Polythene Is A Boon Or Curse To Our Environment ? 88
(Substitution Of Polythene Carry Bags With Eco Friendly Bags) (Visarg Mishra)

35. Effect of Literacy of Women on their Number of Children (Dr. Kamla Gupta) 92

36. कोटा संभाग में पर्यटन की संभावनाऐं (इन्द्रेश पचौरी) 94

37. आतंकवाद का वैश्वीकरण(डॉ. प्रमोद भारतीय) 97

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

38. भारतीय राजनीति में महिला नेतृत्व (डॉ. अशोक चौहान) 100

39. महिला एवं अधिकार – नवीन दृष्टिकोण (डॉ. रजनी दुबे) 102

40. गांधीवाद व मार्क्सवाद – एक तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. सिंधु लाहोरिया) 105

41. भारतीय निर्वाचन प्रक्रिया–एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. वसुधा आवले) 108

42. भारतीय राजनैतिक चिन्तन में नारी की दशा और दिशा – एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. ओ.पी. चक) 111

43. ग्रामीण महिला सशक्तिकरण (डॉ. समीना खॉन खटक) 114

44. सामाजिक गिरावट व कन्या भ्रुण हत्या (भावना ठाकुर) 117

45. महिला मानवाधिकारों का हनन एवं सुरक्षा के उपाय (डॉ. सन्दीप सिंह) 120
46. सूचना का अधिकार – विश्वसनीयता एवं जवाबदेही से भागते राजनीति दल (डॉ. अनिल दीक्षित) 122
47. भारतीय राजनीति में जातिवाद (बल्लु सिंह मुवेल, प्रकाश गुजराती, डॉ. अनिल कुमार जैन) 124
48. नारी सशक्तिकरण के परिप्रेक्ष्य में नारी के उत्तरदायित्व(डॉ. सुमन तनेजा) 126

(Sociology / समाजशास्त्र)

49. वर्तमान सामाजिक परिप्रेक्ष्य में महिलाओं के साथ बढ़ती घरेलू हिंसा का सामाजिक विश्लेषण 128
(कुक्षी तहसील के विशेष संदर्भ में)(विजय यादव)
50. निम्न जातियों में निम्न आय वर्ग की महिलाओं में घरेलू हिंसा की समस्या – एक समाजशास्त्रीय अध्ययन 131
(डॉ. प्रार्थना निगम, डॉ. अनामिका प्रजापति)
51. एक सभ्य समाज में मृत्युदण्ड की प्रांसगिकता पर प्रश्न चिन्ह (डॉ. अनामिका प्रजापति) 133
52. गुणवत्ता प्रबंधन में प्रतिभा बैंक – महाविद्यालय शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में (डॉ. सुधा लाहोटी) 136
53. सीखने की प्रक्रिया एवं व्यक्तित्व विकास (डॉ. उमा लवानिया) 138
54. सृजनात्मकता एवं व्यक्तित्व विकास (डॉ. निशा जैन) 140

(Geography / भूगोल)

55. मध्यप्रदेश में वन और सुरक्षा (विनीता तिवारी, सविता वर्मा) 141
56. जहर का कहर चुनौतियाँ एवं प्रबंधन – इंदौर नगर के विशेष संदर्भ में (डॉ. दिवाकर प्रसाद चतुर्वेदी) 143
57. जनजातियों एवं गैर–जनजातियों में कृषि नवाचार का तुलनात्मक अध्ययन (मध्य प्रदेश के धार जिले के विशेष संदर्भ में) 146
(डॉ. मेकुसिंह निगवाल)

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

58. विद्यानिवास मिश्र के निबंधों में मूल्यवत्ता का अन्वेषण (डॉ. रत्नेश विश्वक्सेन) 148
59. सौंदर्य के कुशल चितेरे पद्माकर (डॉ. अमित शुक्ल) 151
60. राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में सामाजिक चेतना –उखड़े हुए लोग के संदर्भ में (डॉ. सुनिता यादव) 154
61. हिन्दी भाषा का उद्‌गम (डॉ. नरेन्द्र सिंह) 157
62. जनवादी कवि धूमिल (डॉ. मीना डोनीवाल) 159
63. जुझारू व्यक्तित्व के धनी – गजानन माधव मुक्तिबोध (डॉ. सरोज जैन) 161

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

64. The Secondary Protagonists in the plays of G.B. Shaw(Dr. Vikas Jaoolkar, Poonam Matkar) 163
65. Women Empowerment (Dr. Rashmi Nagwanshi) 166
66. Poetic Genius Of Harindranath Chattopadhyaya (Dr. Vikas Jaoolkar, Dr. Ravindra Sharma) 168
67. Existentialism with Special Reference to Anita Desai (Dr. Rajani Singh) 171
68. Mahesh Dattani 's Final Solutions : An Effort To Set A Communal harmony In India 173
(Dr. M.P. Sharma)
69. Healing Effect Of Poetry (Dr. Jyoti Vaidya) 175
70. A Study of Feminine Psyche in the Major Novels of Anita Desai 177
(Dr. Kranti Vats, Dr. Mani Mohan Mehta, Saurabh Mehta)
71. A Short History Of Indian Novel In English(Dr. Seema Sharma) 179

(Marathi / मराठी)

72. स्वातंत्र्यवीर सावरकरांचे जीवन प्रेरणादायी स्मरण (डॉ. शैलजा साबले) 182
73. भारत में धर्म, संप्रदायों की विभिन्नताओं में एकता का दर्शन (डॉ. शैलजा साबले) 185

(Music / संगीत)

74. संगीत में स्वर साधना (डॉ. जितेन्द्र शुक्ला) 187

(Drawing / चित्रकला)

75. ऋतुसंहारम् में महाकवि कालिदास की रंग योजना (डॉ. नीता तोमर) 189
76. अजंता गुफा चित्र शैली में विधि विधान का महत्व (डॉ. नीता तोमर) 191

(Education / शिक्षा)

77. A Study Of Student's Attitude Towards CCE System (An Analytical Study) (Priya Mishra) 193
78. Education In The Era Of Globlization (Dheeraj Verma) 195
79. Either Teaching Or Teaching Learning Process : An Analysis (Dr. Rashmi Sharma) 198
80. किशोरों के आत्म–सम्प्रत्य का उनकी बुद्धि एवं सृजनात्मकता (मधु बाला, डॉ. सतीश गिल) 200
81. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों की बुद्धि का आत्मविश्वास से संबंध का अध्ययन 204
(डॉ. अर्चना श्रीवास्तव, डॉ. रागिनी श्रीवास्तव)
82. प्राचीनकाल से वर्तमान काल तक भारत में नारी शिक्षा की स्थिति (डॉ. सचिन दास) 207

83. शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति एक अध्ययन (उज्जैन संभाग के विशिष्ट संदर्भ में) 209
(डॉ. पंकजा सोनवलकर, प्रतीक्षा पाठक)

84. ग्रामीण क्षेत्र में शासकीय माध्यमिक विद्यालय के अल्पसंख्यक छात्र व छात्राओं के संज्ञानात्मक व्यवहार का 212
तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. नीलम महाडिक)

85. शिक्षण – अधिगम में जनसंचार माध्यमों की भूमिका (डॉ. रश्मि पाण्ड्या) 214

86. कस्तुरबा गाँधी बालिका विद्यालय की उपयोगिता – एक परिचय (डॉ. रागिनी श्रीवास्तव) 216

87. सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी का शोध के क्षेत्र में उपयोग (इम्तियाज मन्सूरी, माधुरी पालीवाल) 218

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

88. Effect Of Bhastrika Pranayama On Psychomotor Abilities Of Volleyball Players 220
(Grace S. Singh)

89. Effect Of Ujjaiyei Pranayama On Psychomotor Abilities Of Volleyball Players 223
(Grace S. Singh)

(Others / अन्य)

90. महिलाओं की सामाजिक – आर्थिक स्थिति और उनके मानवाधिकार(डॉ. मंजू सक्सेना, डॉ. ए.के. सक्सेना) 226

91. वर्तमान काल में नैतिक शिक्षा – उच्च शिक्षा के संदर्भ में (डॉ. सीमा शर्मा) 228

92. समय प्रबंधन (डॉ. पी. सी. काशिव) 230

93. To study the need of upskill development training programs in micro, small and 231
medium scale garment manufacturing units in Indore District (Dr. Sonal Bhati)

(Naveen Shodh Sansar / नवीन शोध संसार)

94. Membership Cum Author's Bio-Data Form 234

95. शोध पत्र तैयार की विधि / Method of Preparing of Research Paper 235

****

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(02) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(03) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(04) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(06) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(10) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(13) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय ..... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(17) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(19) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(20) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(23) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(24) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(25) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(26) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम ..... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(29) प्रो. डॉ. आर.पी. सहारिया ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय तख्तपुर जिला,बिलासपुर (छ.ग.) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्याय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
(38) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित ..... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

****

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ..... प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत

(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर (म.प्र.) भारत

(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल भोपाल (म.प्र.) भारत

(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) भारत

(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टा महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

(06) प्रो. डॉ. अशोका श्रीवास्तव ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

(07) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

(08) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

(09) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ..... प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

(10) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ..... प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

(11) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... प्राचार्य एवं संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा (म.प्र.) भारत

(12) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ..... प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.) भारत

(13) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(14) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत

(15) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय महिदपुर (म.प्र.) भारत

(16) प्रो. डॉ. मंजु दुबे..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(17) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(18) प्रो. डॉ. के.एल. जाट..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, भौतिकी विभाग शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

(19) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, राजनीति विभाग शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला–रतलाम (म.प्र.) भारत

(20) प्रो. डॉ. नटवर लाल गुप्ता ..... प्राचार्य, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

**** विज्ञान संकाय ****

गणित:– ..... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

(2) प्रो.डॉ. रवि कटारे, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

वनस्पति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:– ..... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. सुयश कुमार, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:– ..... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

**** वाणिज्य संकाय ****

वाणिज्य :– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

**** प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ****

प्रबंध :– ..... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

**** विधि संकाय ****

विधि:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

**** कला संकाय ****

अर्थशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. अंजना जैन, एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. अनिल जैन, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा, मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आशुतोष व्यास,** राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.)
(2) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन, शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(4) प्रो. डॉ. उमा लवानिया, शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. प्रशांत मिश्रा,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अजय भार्गव, शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:– ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अर्चना भार्गव, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** सुभारती विश्व विद्यालय मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

✲✲✲ *गृह विज्ञान संकाय* ✲✲✲

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **(1) प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

✲✲✲ *शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. अर्चना श्रीवास्तव, बी.सी.जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)

✲✲✲ *शारीरिक शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

✲✲✲ *ग्रन्थालय विज्ञान संकाय* ✲✲✲

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ..... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर ..... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ..... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन ..... शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ..... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित ..... जैन कला–वाणिज्य–विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार ..... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ..... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक ..... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ..... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन ..... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित ..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ..... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ..... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े ..... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित ..... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे ..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी ..... अजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट ..... शासकीस एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद ..... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर ..... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल ..... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला – झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया ..... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी ..... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल वाला गाँधी ..... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा ..... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ..... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे ..... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ..... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. हेमसिंह मण्डलोई ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला– सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ..... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश ..... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला–विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव ..... सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा–बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ..... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ..... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला–छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल ..... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला – शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ..... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला–शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा ..... शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला– रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ..... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ..... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ..... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा ..... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ..... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित ..... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ..... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ..... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला ..... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. आर.सी. पान्टेल ..... शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.)
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ..... शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन ..... इन्दिरा गाँधी खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ..... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ..... एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा ..... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया ..... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला– प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ..... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल ..... शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Hydrogeological Investigation On Grounwater Levels & Its Impacts Of Water Quality In Baghwar Region Of District Sidhi (M.P.)

Suman Singh * Anoop Singh **

Abstract - The studies of Central Ground Water Board have identified 69 major watersheds in Madhya Pradesh in which the declining trend of ground water level exceeds 0.1 m / year for construction of suitable artificial recharge structures to augment the depleting ground water resources. It has been estimated that the unsaturated zone available for recharge has a storage potential of 2837.49 MCM (based on specific yield of rock types in the watersheds). Scarcity of water due to climatic changes and industrialization may be more crucial in incoming years .So to assess the impacts of the groundwater resource development due to industrialization, groundwater regime of the area around Baghwar (N 24° 19' 39" E 81° 21' 56.9") , located on Rewa-Sidhi state highway 25 kms away from Rewa town has been studied
Keywords - Hydrogeology, Ground water, Water quality, Baghwar (Vindhya Region), Industrial Development.

Introduction - The hydro geological evolution of groundwater is a dynamic process undergoing constant change in space and time (Karanth, 1987). The quality of groundwater is largely controlled by discharge-recharge pattern, nature of host and associated rocks as well as contaminated activities. Quantitative morphometric parameters of the drainage basin also play a major role in evaluating the hydrological parameters, which in turn helps to understand the ground water situation. The geological formations present in the area studied are sandstone, shale and limestone. Kaimur hills comprising of sandstone act as water divide. The hydro-geological formations present towards south and south-east to east of the water divide are alluvium; shale/sandstone and limestone whereas, mainly shale and sandstone is present towards north and north-west of water divide. The area around Baghwar has witnessed rapid industrialization with coming up of cement plants. Consequent increase in water demand has resulted in development of water resources of the area around. The study on groundwater quality of Vindhyan region has been performed by few researchers (Tiwari et. al, 2009, Tiwari and Singh, 2010, Tiwari et.al, 2010 but interference of industrialization in Baghawar has not been studied.

Objective - The principal aim of the present research work is to investigate hydro geological conditions around Baghwar Area of district Sidhi (M.P.), to assess the groundwater regime of the area and the impacts of the groundwater resource development due to industrialization,

Study Area - The area around Baghwar (N 24° 19' 39" E 81° 21' 56.9") is located on Rewa-Sidhi state highway and is about 25 kms from Rewa town. The climatic condition of the area is classified as tropical steppe, semi arid and hot. The temperature increases during the period of April to June and the mean daily maximum and minimum temperature is 44^0C to 26^0C respectively. November to January is coldest month with daily maximum and minimum temperature of 30^0C to 09^0C. The Annual Mean Rainfall is about 1100 mm in which about 80% rainfall occurs during monsoon season

Methodology - Methodology was adopted according to OWREC (1997) for study of status of ground water. The surveyed area covers about 2500 sq km over Vindhyan formation of the district. For this study, observation wells covering buffer zone of 10 km radius around the industrial zone at Baghwar were selected and monitored for the years 2010 and 2011 and pre- and post-monsoon water samples were collected and analysed.

Result and Discussion:

Hydrogeological Setting Of The Area - In the study area, three hydro-geological units namely, alluvium, sandstone associated with shale and limestone exist. The groundwater occurs under water table conditions in all these three formations and is transmitted through the fractures, joints, bedding planes of the hard rock and granular zone in alluvium. The limestone is hard and fine grained and impervious in nature having no primary porosity. The only porosity present is developed due to secondary openings which decrease with depth due to weight of overlying rocks. The sandstone forms a very poor aquifer yielding limited quantity of water in the southern part of the area. Banerjee et al. (2005) suggested outer to inner shelf deposition in an open marine setting for Rohtas Limestone. Tiwari and Dubey (2006) have studied the limestone exposed around Rewa

* Professor (Zoology) Govt. Girls P.G. Collage, Rewa (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Environment Biology) A.P.S University Rewa (M.P.) INDIA

City for Groundwater point of view. Hydrogeological aspect of Groundwater quality of Rewa region has been studied by Tiwari et.al (2010). Singh, Y (1981, 1984 and 1985) worked on hydrogeological of the karstic area and sources of groundwater possibilities around Rewa district. Chakraborty and Chaudhuri (1990) has discussed about the stratigraphy of the late proterozoic Rewa group and palaeogeography of Vindhyan basin in Central India. Age of Lower Vindhyan was studied mainly by Sarangi et al. (2004) and Ray (2006). Banerjee, S. et. al. (2005) have done pioneer work on Rohtas Limestone (Vindhyan Super group) in the Sone Valley area. Tiwari, et. al.(2008) have done Petrography and Diagenetic Changes in the Rohtas Limestone of Semri Group, Vindhyan Super group, Sidhi Area, M.P. and interpreted them shallow marine origin. Singh and Dubey (1998) discussed pumping test data from the Vindhyan aquifer of Rewa area. Tiwari et.al. (2010) studied the quality of groundwater of Rewa region.

Depth To Water Level And Yield Of Wells - In all, 42 observation wells were selected and monitored in the study area since January 2010. During January 2010 the depth to water level ranged from 4.40 m bgl at observation well no. 17 (Budgaona) to 13.7 m bgl at observation well no. 18 (Suhila). The open wells are generally shallow having a depth ranging from 10 to 20 m bgl and mostly operated by electrically driven pumps or diesel engines. The yield of the wells generally ranges between 100 to 120 m^3/day. In case of tubewells tapping limestone and sandstone as aquifer down to the depth of 80 to 100 m, the yield ranges from 15 to 25 m^3/hour. The range of depth to water level in the study area has been given below Table-1)

Table:1 (see in last page)

Water Level Fluctuations - The water level data for pre- & post-monsoon period show that the fluctuation ranges between (-) 1.3 m at well no. 39 (Dhobhat) to (+) 9.55 m at well no. 20 (Jhina) during the year 2010 whereas it ranges from (+) 0.14 m at well no. 2 (Hinauti) to (+) 11.6 m at well no. 20 (Jhina) during the year 2011. The water level fluctuation in different formations has been shown in Table below(Table 2)

Table:2 (see in last page)

Hydrological Parameters - The hydrological parameters(Fig.1-4) for all the 42 observation wells showing water levels from January 2010 onwards were observed. Out of 42 wells, 37 observation wells show rising trend in water levels whereas, 5 observation wells show decline in water level.

Fig :1 (see in last page)

Fig :2 (see in last page)

Fig :3 (see in last page)

Fig :4 (see in last page)

Chemical Quality Of Water In The Study Area - A total number of fourteen water samples have been collected from hand pumps, Dug wells and tube wells to represent ground water quality in the study area. These water samples were collected from selected villages & plant site and analyzed for various parameters. The range of chemical constituents in water samples for parameters analyzed are given under.

Comparison between Pre-monsoon & Post-monsoon Quality of Water Samples - The concentration of various parameters in water samples collected from study area during the month of June 2010 & 2011 and November, 2010 & 2011 has been summarised in(Fig1-4)given above. A perusal of the data shows that there is no major change in concentration of parameters analysed except due to the dilution of constituents in water during the post-monsoon season. Interpretation of water level data shows that there has been no significant change in water levels except for the seasonal fluctuations. Thus it can be concluded that industrial activities in Baghwar region has not imposed any impacts on the groundwater regime, Interpretation of water level data shows that there has been no significant change in water levels except for the seasonal fluctuations. Thus it can be concluded that industrial activities in Baghwar region has not imposed any impacts on the groundwater regime probably due to geological status of the region and establishment of Bansagar Multipurpose Valley Project on River Sone in Vindhya region .

Conclusions - The water level data recorded for the pre- & post-monsoon period 2010 and 2011 has shown that in most of the observation wells, trend line depicts a rising trend, whereas only five of the observation wells show declining trend in water level. The declining trend in certain wells may be attributed to excessive pumping for irrigation as these are far away from the active industrial zone. Some of the observation wells become dry at the onset of summer for the above mentioned reasons. The water quality data shows that the values of various parameters are mostly within desirable limits, however at some places they fall in permissible limits of IS: 10500. A perusal of water quality data suggests that there is no significant change in quality of water during the period of monitoring i.e. pre- & post-monsoon 2010 and 2011.

The above remarks suggest that no change has been observed in groundwater levels and its quality within the study area. At present no significant impacts have been observed on groundwater regime of study area due to industrial activity. However, in future, the industrial activity in the region is likely to increase. Therefore, further studies for surface and groundwater may be taken up and suggestions implemented in order to combat the probable service impacts.

References :-

1. Adyalkar,P.G. and Radhakkrishna,T.S.,(1972), Karstic phenomenon in the carbonate rocks of the Indravati Series of M.P. with their groundwater possibilities, Proc. Ind. Nat. Sci. Acad.Vol.38,Pt.A. No5 and 6, pp,133-141
2. Aller, L.,Petty.,R.Lehar,J.H.,Bennett.,T.(1987)Drastic-A standard system toevaluate groundwater pollution potential using hydrogeologic setting .J.Geo.Soc.India,29,pp.23-57
3. Banerjee, S. Bhattacharya, S.K. and Sarkar, S(2005) Facies, dissolution seams and stable isotope compositions of the Rohtas Limestone(Vindhyan

Supergroup) in the Son valley area, Central India,J.Earth syst. Sci. v.114(1),pp.87-96
4. Chakraborty, T. and Chaudhuri, a(1990) Stratigraphy of the Late Proterozoic Rewa Group and Palacogeography of Vindhyan basin in Central India, Jour. Soc. India,V.36,pp.383-402
5. Chequette,P.W. and Sarkar,S. Chaudhuri,A and Das Gupta, S.(1996) Depositional Environment of Vindhyan and other Purana Basins: A Reappraisal in the light of recent findings, Mem.Geol. Sur. India, No.6, pp.101-126
6. OWREC(1997) Ground water resources estimation methodology. Ministry of water resource. Govt of India.pp.105
7. Ray, J.N.(2006) Age of the Vindhyan Supergroup : A review of recent finding. J.Earth Syst. Sc. V.115 No.1 pp.149-160
8. Sarangi. S. Gopalan , K. and Kumar, S(2004) Pb-Pb age of earliest megascopic eukaryotic alga bearing Rohtas formation, Vindhyan Supergroup, India: Implication for Precambrian atmospheric oxygen evolution, Precamb. Res. V.132,pp.107-121
9. Singh, Y. and Dubey, D.P.(1998) Analysis Test Data from Vindhyan aquifers in Rewa, Central India and its implications for groundwater. Jour.Ind. Acad. Geosciences. V.41(1), pp.57-66
10. Singh, Y. (1981)As a source of groundwater around Rewa distric, MP., National Seminar, Rewa University, Rewa,M.P
11. Tiwari,R.N.,dubey D.P.and Mishra,B.(2006)Karastic features associated with Bhander Limestone (Vindhyan Supergroup) of Rewa area,Madhya Pradesh Geo.Int.(1),pp.18-20.
12. Tiwari,R.N.,Dubey, D.P.and Bharati, S.L.(2010) Hydrochemistry and groundwater quality in the Beeher River Basin,Rewa,District Madhya Pradesh ,India Proc.

Table:1

Hydrogeol-ogical For-mation	Range of Depth to Water Level, 2010 (bgl)				Range of Depth to Water Level, 2011 (bgl)			
	N of Water Divide		S of Water Divide		N of Water Divide		S of Water Divide	
	May 2010	Nov 2010	May 2010	Nov 2010	May 2011	Nov 2011	May 2011	Nov 2011
Alluvium	-	-	7.48 m well no. 5 (Pipron ,school gate) **to** 10.9 m well no. 8 Bharatpur	6.17 m well no.6(Pipron ,Madarsa) **to** 9.45 m well no. 8 Bharatpur	-	-	7.55 m well 0. 5 (Pipron school gate) **to** 10.58 m well no. 8 Bharatpur	5.55 m well no. 6 (Pipron , Madarsa) **to** 9.2 m well no. 8 Bharatpur
Shales and Sandstone	6.1 m well no. 38 (Tikar) well no. 40 (Mukundpur)	4.95 m well no. 38 (Tikar) **to** 13.55 m well no. 30 (Amilika)	5.65 m well no. 13 (Shik arganj) **to** 19.6 m well no.20 (Jhina)	0.5 m well no. 30 (Jig na)**to** 10.05 m well no. 20 (Jhina)	6.03 m well no. 38 (Tikar) **to** 10.83 m well no. 40 (Mukundpur)	4.2 m well no. 32 (Govi ndgarh) **to** 12.7 m well no.30(Amilika)	5.62 m well no. 13 (Shik arganj) **to** 19.45 m well no. 20(Jhina)	2.1 m well no. 13 (Shika rganj) **to** 7.85m well no. 20 (Jhina
Limestone	-	-	4.35 m well no. 17 (Budh gaona) **to** 14. 8 m well no. 23 (Argat)	3.07 m well no. 17 (Budh gaona)**to**13. 36 well no. 23 (Argat)	-	-	4.5 m well no. 17 (Budh gaona) **to** 14 .36 m well no.23(Argat)	3.25 m well no. 17 (Budh gaona) **to** 13 .1 m well no. 23 (Argat)

Table:2

Hydrogeol -ogical mation	Seasonal Water Level Fluctuation, 2010				Seasonal Water Level Fluctuation, 2011			
	N of Water Divide		S of Water Divide		N of Water Divide		S of Water Divide	
	Minimum	Maximum	Minimum	Maximum	Minimum	Maximum	Minimum	Maximum
Alluvium	-	-	(+)0.78well no.5(Pipron, schoo gate)	(+)2.93well no.6(Pipron, Madarsa)	-	-	(+)1.3well no.5(Pipron schoolgate)	(+) 3.62 well no.6(Pipron , Madarsa)
Shales and Sandstone	(-) 1.3 well no. 39 (Dab	(+)2.72well no. 43 (Papra)	(+)0.25well no. 15 (Garhara)	(+)9.55well no. 20 (Jhina)	(+)0.6well no. 42 (Anandgarh)	(+)3.85well ohat)no.33 (Bansa)	(+)0.14well no. 2 (Hinauti)	(+)11.6 well no. 20 (Jhina)
Limestone	-	-	(+) 0.9 well no. 12 (Murtola)	+)6.6well no. 24 (Chirhai)	-	-	(+)1.13well no. 12 (Murtola)	+) 7.8 well no. 24 (Chirhai)

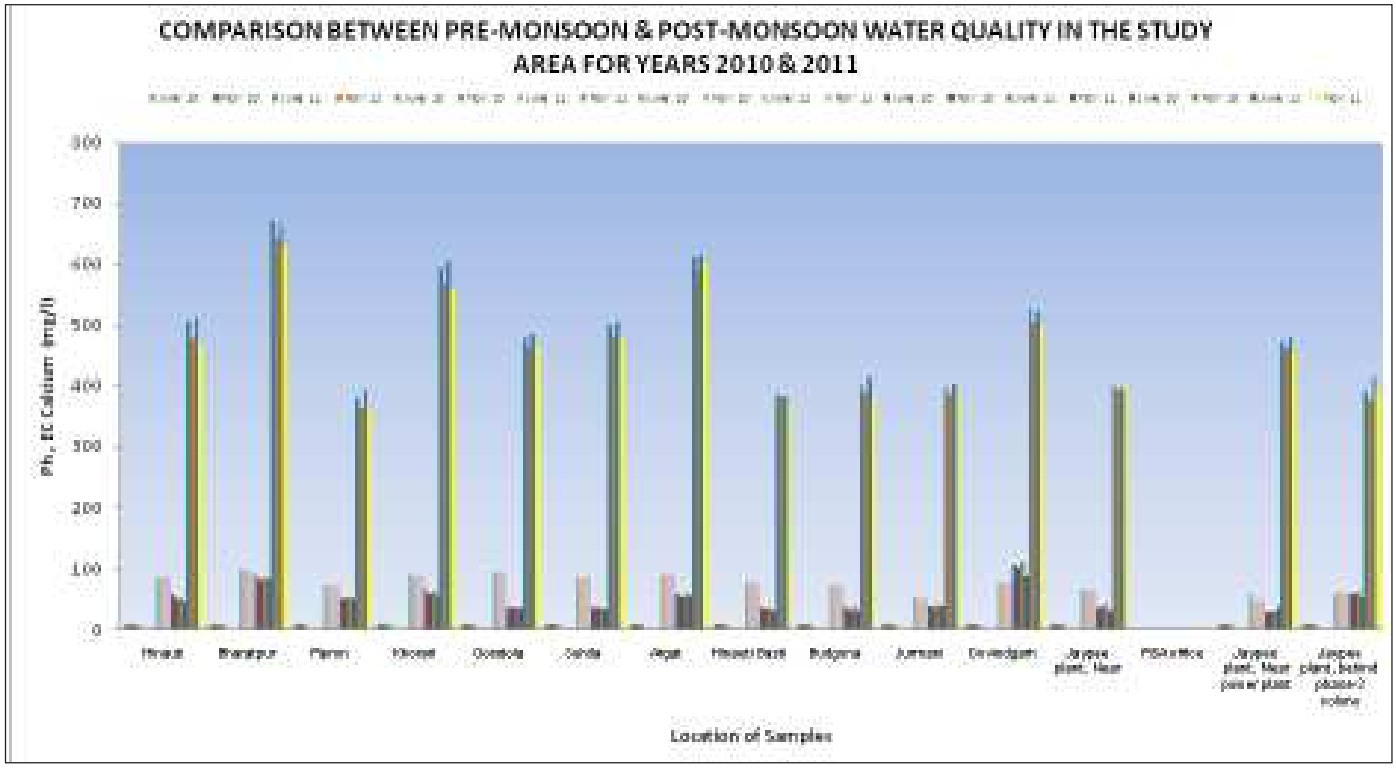
COMPARISON BETWEEN PRE-MONSOON & POST-MONSOON WATER QUALITY IN THE STUDY AREA FOR YEARS 2010 & 2011
Ph., EC Calcium (mg/l)
Location of Samples

Fig:1

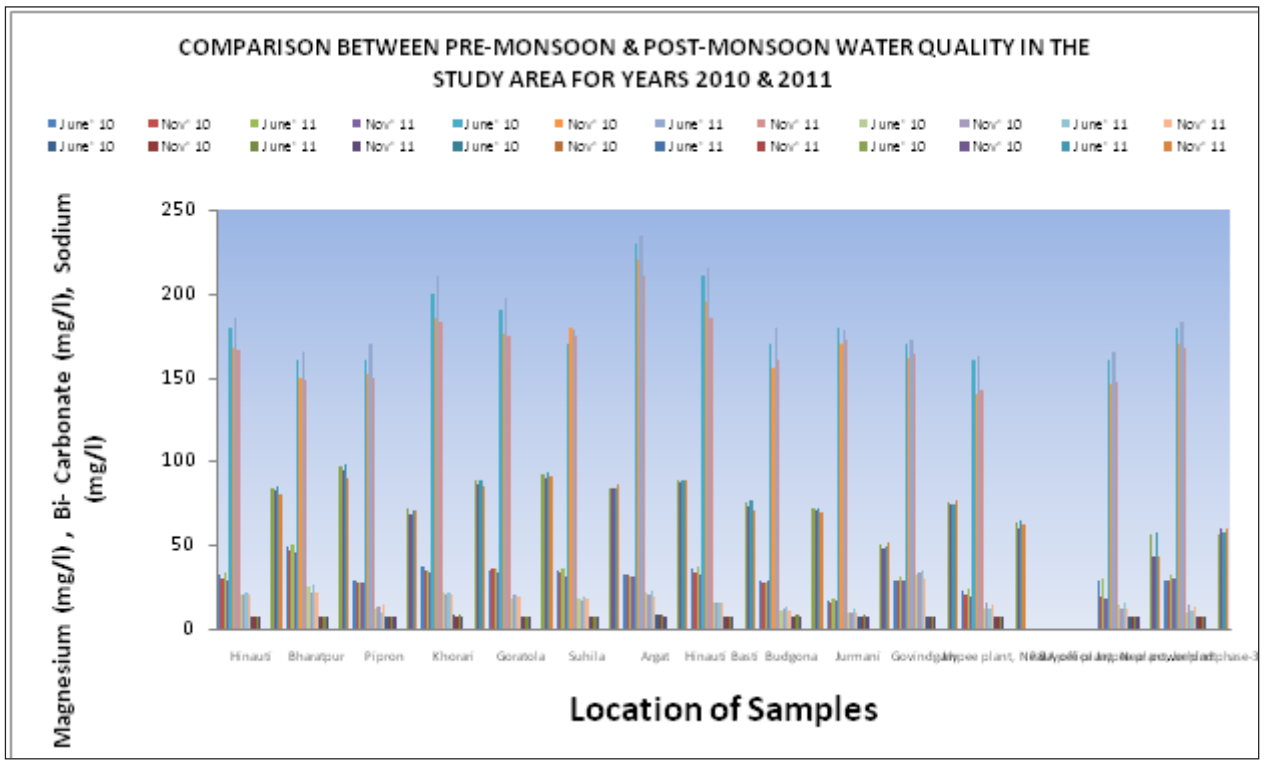
COMPARISON BETWEEN PRE-MONSOON & POST-MONSOON WATER QUALITY IN THE STUDY AREA FOR YEARS 2010 & 2011
Magnesium (mg/l) , Bi- Carbonate (mg/l), Sodium (mg/l)
Location of Samples

Fig:2

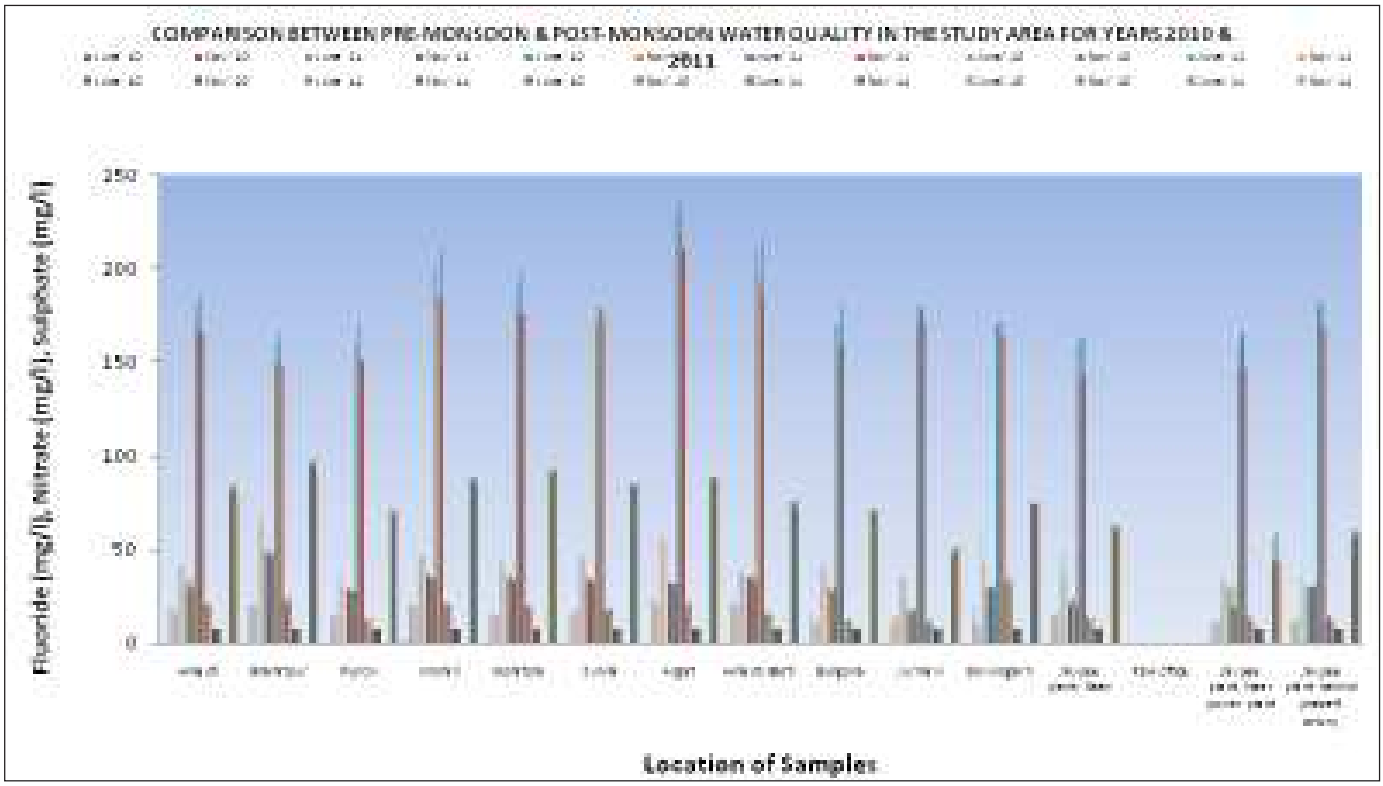
COMPARISON BETWEEN PRE-MONSOON & POST-MONSOON WATER QUALITY IN THE STUDY AREA FOR YEARS 2010 &
2011
Fluoride (mg/l), Nitrate (mg/l), Sulphate (mg/l)
250
200
150
100
50
0
Location of Samples

Fig:3

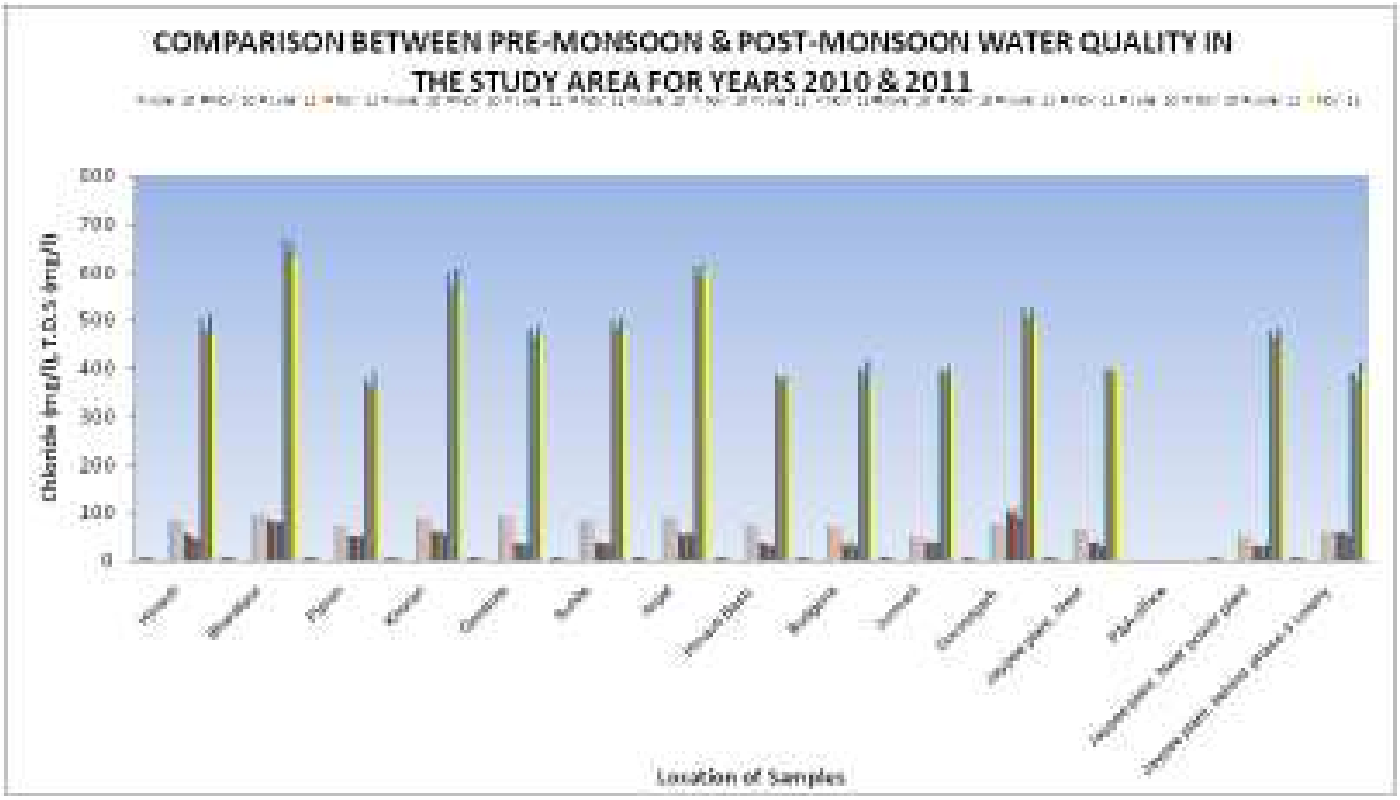
COMPARISON BETWEEN PRE-MONSOON & POST-MONSOON WATER QUALITY IN
THE STUDY AREA FOR YEARS 2010 & 2011
Chloride (mg/l), T.D.S (mg/l)
800
700
600
500
400
300
200
100
0
Location of Samples

Fig:4

****

Phytochemical And Antimicrobial Study Of Bridelia Retusa (L) Spreng (Ekdania)

Pooja Gupta *

Abstract - The Medicinal plant has always been the principal source of medicine for tribes in India. The Tribes of Chitrakoot District Satna is also using a number of medicinal plant for remedies of diseases. The Allopathic medical treatment has adverse effect on human health. The drugs obtained from medicinal plants are safe, cheaper, easily available and with no fear of any side effects. Phytochemical and antimicrobial study of the extract ofBrideliaretusa (l) spreng (ekdania) family Euphorbiaceae was studied against 3 gram-positive bacteria, 5 gram-negative and 5 fungi strain. The result showed that minimum inhibitory zone (MIZ) increases on increasing the ethanolic and water extract of B. retusa leaves. Phytochemical study of B. Retusa leaf was carried out using different Reagents for analysing its various constituents.

Keywords - Phytochemical, Antimicrobial, Brideliaretusa, Medicinal Plants, Euphorbiaceae.

Introduction - Nature has gifted a lot of plants having medicinal properties. The use of plants as medicine dated back to 1500BC in India. Ayurveda is one of the treatment methods which use medicinal plants for different diseases. Medicinal plant contains active constituents that are used in treatment of many human diseases (Stary and Hans, 1998). In most developing countries including India new drugs are often not affordable. Approximately 50-60 % of Indian rural population still depends on traditional medicines for treatment of common diseases. Medicinal plants can provide drugs which can be used for treatment of serious diseases. Euphorbiaceae the spurge family is a large family of flowering plant with about 300 genera and 7500 species most plants are herb but in the tropics most are shrub and tree. B. Retusa is a Euphorbiaceae plant vernacular name ekdania deciduous tree 8-10 m tall, spinous when young, bark greyish-brown. Leaves 6-15X3-6 cm. Elliptic , oblong, apex obtuse, base usually rounded and bright green above, glaucous and finally tomentose beneath flowers greenish yellow, sessile or shortly pedicilled in axillary clusters long axillary or terminal spikes with male and female flower, intermixed. Male flowers – Tepals 5, Spathulate, style 2, stigma 2 fid – Drupes $\pm$ 8mm across, purple-black, supported by persistent calyx.

Flrs and Frts- July – February

Thus this study aims at determining the antibacterial and antifungal effect of B. retusa of Euphorbiaceae plants.

Material and Methods

Collection of Medicinal Plants - The present investigation is based on personal interview with the tribal people in the vicinity of Chitrakoot District Satna. The fresh plant samples were collected from local area. The plants were identified with the help of various regional floras and that of Flora of British India (Hooker 1985, Shah 1978 and Sokanki 1984).

Soxhlet Extraction apparatus is used for extraction of active substance from 100gm of dried plants using 500ml of each of P.ether, Benzene, chloroform, Acetone and Ethanol (95%)Successiveisolation is done by Column Chromatography using silica gel. And Puritywas done Using Thin layer Chromatography.

Antimicrobial Testing - The Cultures of bacteria & fungi have been obtained from Microbial Type Culture Collection & Gene Bank Chandigarh. The name & culture number of bacteria & fungi are as per Table No 1, 2 & 3.

Table No 1: Bacterial Strains used Gram – Positive Bacteria

1.	Staphylococcus aureus	ATCC 9144
2.	Streptococcus Sp.	ATCC 12449
3.	Bacillus subtilis	ATCC 6633

Table No 2: Bacterial Strains used Gram – Negative Bacteria

1.	Escherichia coli	MTCC	739(NCTC 10418, NCIB8879ATCC 10536)
2.	Shigelladysenterae	Locally	Isolated
3.	Salmonella typhi	ATCC	10749
4.	Pseudomonas aeruginosa	ATCC	25668
5.	Klebsiellapneumnoniae	ATCC	33495

TableNo 3: Fungi Strains used :

1.	Aspergillus Sp.	ATCC	9029
2.	Penicillum Sp.	1147	
3.	Fusarium Sp.	ATCC	1009
4.	Collectotrichum Sp.	ATCC	381
5.	Rhizoctonia Sp.	ATCC	2162

Phytochemical Screening Test - The extract thus obtained is then subjected to qualitative test (Table No 4) for identification of various plant constituents by method suggested by Finar (1962), Farnsworth (1966) and Horborne et al. (1979).

* Department of Botany, Govt. Lal Bahadur Shastri P.G. College, Sironj, Distt. Vidisha (M. P.) INDIA

Table No 4: Phytochemical constituents and their detecting reagents

	Plant constituents		Test/Reagent applied
1.	Alkaloids	1	Mayer's Reagent
		2	Dragendraff Reagent
2.	Carbohydrates	1	Molish's Test
		2	Fehling Solution Test
3.	Glycosides	1	Borntgrager's Test.
		2	Legal Test.
4.	Phytosterol	1	Liebermann's Burhard's Test.
		2	Liebermann's Test
5.	Phenolic Compounds	1	Ferric Chloride Test.
		2	Liberman Test
6.	Proteins	1	Xanthoproteic Test.
		2	Biuret Test.
7.	Tannins	1	Lead acetate solution.
8.	Flavonoids	1	Conc. H2SO4 & Magnesium turning.5% alcoholic aluminum chloride.
9.	Amino acids	1	Ninhydrin Test.
10.	Saponin	1	Foam Test.
11.	Gum & Mucilage	1	Molish Test.
12.	Fixed oil & Fats	1	Spot Test.
		2	Saponification Test

Preparation of Culture Medium - Antibacterial testing is done by nutrient agar medium & for antifungal testing Martin Rose Bengal Agar (MRBA) medium is used.

Preparation of Bacterial Suspension of test bacteria - Small bacterial colonies were picked up from 24 hours old culture plate by sterile wire loop & suspended in 20 ml of nutrient broth. Then, nutrient broth was placed in shaker for 24 hours at 37°C.

Turbidity (opacity) Standard - This is a barium chloride standard against which the turbidity of the test and control inocula can be compared. When matched with standard, the inocula should give semi-confluent growth. The turbidity of the standard is equal to the overnight broth culture.

Cup Borer Method - The surface on the nutrient agar plate was inoculated with the help of sterile cotton swab after expressing excess culture from the swab by pressing or rotating the tube above the culture level. The surface of nutrient agar plate was covered evenly by swabbing in three directions. A final sweep was made on the agar rim with the swab.The well was prepared with the help of sterile cup borer having a diameter 8 mm. and at equal distance from the wall of the Petridis.The well was labelled with the conc. extract & different quantities of the extract were poured in each well.Plates were incubated at 37°C for 24 hours. After incubation period, the antimicrobial activity of plant extract was measured in terms of inhibition zones appearing around the well.

Antimicrobial Discs - Discs of 5-6 mm. in diameter were punched out from whatman no. 1 filter paper. They were placed in petri dishes allowing a distance of 2-4 mm. between each disc. Petri dishes were then sterilised in a hot air oven at 160°C for 1 hour.After allowing the discs to cool, 20ìl (0.02ml) of the plant extract was pipetted on the each disc.The discs were dried at 35-37°C in incubator for 1 hour. Each sample was tested for antimicrobial activity against pathogenic fungi & human pathogenic bacteria by Cup Borer Method. Then again each separated fraction was subjected for testing the antibacterial activity by "Disc diffusion method" (Kirby – Bauer method)

Spectral Studies - Exact chemical nature of active fraction of B.retusawas obtained by spectral studies, carried out by I.R. NMR & Mass Spectroscopy.

Result - Antimicrobial studies of B. retusa extracts (P. ether, Benzene, Chloroform, Ethanol and water) are performed which includes various diseases causing gram positive and gram negative organisms. Table No. 5 and 6 shows that ethanolic and water extract are having strong antibacterial activity against gram positive bacteria viz S. aureus and B.subtilis , while extract shows no response against streptococcus sp. In case gram negative organisms extract shows strong antibacterial activity against E.coli, Salmonella typhi and Pseudomonas aeruginosa while extract shows positive response against Shigelladysenterae. At .05 ml quantity of extract there was no zone of inhibition found in case of Shigelladysenterae and Pseudomonas aeruginosa but at higher quantity of extract shows strong antibacterial activity. Extract shows no response against K.pneumoniae.

Antimicrobial testing of P. ether, Benzene and chloroform extract were also performed but there was no zone of inhibition found.

It is observed that ethanolic extract is the most effective as compared to the extract of water.

Table No. 5 (See in last page)

Table No. 6 (See in last page)

Table No. 7 (See in last page)

The IR & NMR of the compound extracted from *Brideliaretusa*

Shows compound was found as Isoflavones

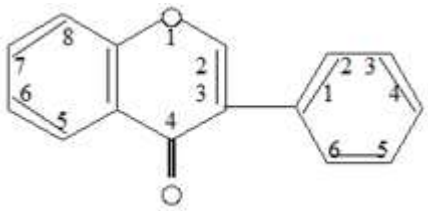

Conclusion -

The results of antimicrobial screening of Brideliaretusa showed a good deal of correlation with the ethnobotanical observations.B. retusa is found effective in the treatment of Urinary Tract Infections, Rheumatism & Inflammation, hemiplegia, diarrhoea and dysentery. B. retusa is abundant in Chitrakoot District Satna (MP) and holds a good promise for further study.

The present investigation thus leads creditability and support to the uses of this plant by the tribal.

Isoflavone,determined by I.R. & NMR spectroscopy,

isolated and identified as a part of this investigation, shows strong antimicrobial activity against gram positive bacteria viz. S. aureus & B. subtilis. It is also active against gram negative bacteria viz E. coli, S. typhi, S. dysenterae and P. aeruginosa.

Thus, the result correlates the claims of Ayurveda and that of the tribals. Thus, we may safely assume that, Isoflavone would prove very effective as antimicrobial agent only after subjecting it to "in vivo" studies to establish doses, duration and the possible side effect on human being.

References :-

1. Agarwal, K.C. (1974). Antibiotic Sensitivity test by disc Diffusion method standardization & Interpretation. Indian J. Pathol. Bact. 17 149-159.
2. Ahmad, Iqbal.,Mehmood, Zafar, Mohammad, Faiz, (1998). Screening of some Indian medicinal plants for their antimicrobial properties. Journal of Ethnopharmacology. 62 : 183-193.
3. Awoyinka, O.A., Balogun, I.O. and Ogunnowo, A.A. (2007). Phytochemical screening and in vitro bioactivity of Cnidoscolusaconitifolius (Euphorbiaceae). Journal of Medicinal Plants Research Vol. 1(3): 063-065.
4. Bauer, A.W., Kirby W.M.N.; Sherris, J.S. &Turek, M. (1966). Antibiolic Susceptibility Testing by Standardized Single disc method. Am. J. Clin. Pathol 45 (1966) 493.
5. Bayati, Al. A Firas.,Mola, Al. F. Hassan, (2008). Antibacterial and Antifungal activities of different parts of Tribulusterrestris L. growing in Iraq. Journal of Zhejiang University Science B. pp. 154-159.
6. Chika, C., Ogueke, Jude, N. Ogbulie, Ifeanyi, C. Okoli and Beatrice, N. Anyanwu (2007). Antibacterial activities and Toxicological Potentials of crude ethanolic extracts of Euphorbia hirta. Journal of Americann Science, 3(3).
7. Constable, E. (1990). Medicinal plant biotechnology. Planta Med. 56 : 425-426.
8. Dahlberg, Annika C.;Trygger, Sophie B. (2009). "Indigenous Medicine and Primary Health Care: The Importance of Lay Knowledge and Use of Medicinal Plants in Rural South Africa". Human Ecology 37: 79–94.
9. Dey, A.C.(1980). Indian Medicinal Plants used in Ayurvedicpreparation. Bischen Singh &Mahendrapal Singh, Dehradun.
10. Duke, James, A. (1992). Phytochemical Data base, USDA-ARS-NGRL Beltsville Agricultural Research Centre, Beltville Maryland.
11. Fanswarth, N.F. (1966). Biological & Phytochemical Screening of plants. J.Pharm, SC. 55-225-276
12. Hassawi, Dhia and Kharma, Abeer (2006). Antimicrobial activity of some medicinal plants against Candida albicans, J. Biological Sci., 6: 109-114.
13. Jain, S.K. (1981). Observation on ethnobotany of the tribals of Central India, Glimes of India, Ethnobotany Oxfored and SBH Publishers New Delhi.
14. Jain, S.K. (1996). Medicinal plants, sixth edition National Book Trust, New Delhi, India.
15. Kapoor, L.D., Singh, A., Kapoort, S.L., Strivastava, S.N. (1969). Survey of Indian Medicinal Plants for Saponins, Alkaloids and Flavonoids. Lioydia 32: 297-302.
16. Kirtikar and Basu (1984). Indian Medicinal plants Vol. III Sec. Edition Bishen Singh, Mahendra Pal Singh, Dehra Dub, India. P. 2213, 2227, 2228, 2278-2279.
17. Klushnichenko, V.E., Yakimov, S.A., Tuzova, T.P., Syagailo, Y.V., Kuzovkina, I.N., Wulfson, A.N. and Miroshnikov, A.I. (1995). Determination of indole alkaloids from R. serpentina and R. vamitoria by high-performance liquid chromatography and high-performance thin-layer chromatography. J. Chromatogr. A, 704 : 357-362.
18. Leeja, L., Thoppil, J.E. (2007). Antimicrobial activity of methanol extract of Origanummajorana L. Journal of Environmental Biology. 28(1): 145-146.
19. Malaiya, S. (1993). Antimicrobial evaluation of certain medicinal plants of Ethnobotanical Importance. Ph.D. Thesis, H.S. Gour University, Sagar.
20. Mujumdar, A.M.(1998).Indian Drugs,V.35 (7);P. 417-420.
21. Mukherjee,P.K.;Mukherjee,K.; Bhattacharya,S.;Pal, M.; Saha,B.P..Natural Product Sciences,V. 4(2):P.91-94.
22. Nair, R. and Chanda, S. (2006). Activity of some medicinal plants against certain pathogenic bacterial strains.Indian J. Pharmacol., 38: 142-144.
23. Nandgopal, S. and Ranjitha, Kumari, B.D. (2007). Phytochemical and Antibacterial studies of Chicory (Cichoriumintybus L.) – a Multipurpose medicinal plant. Advances in biological research. 1(1-2) : 17-21.
24. Nascimento, G.G.F., Locatelli, J., Freitas, P.C. and Silva, G.L. (2000). Antibacterial activity of plant extracts and phytochemicals on antibiotic-resistant bacteria. Braz. J. Microbiol., 31: 247-256.
25. Okeniyi, S.O.; Adedoyin, B.J. and Garba, S. (2013). Phytochemical Screening, Cytotoxicity, Antioxidant and Antimicrobial Activities of Stem and Leave Extracts of Euphorbia Heterophylla. Journal of Biology and Life Science Vol. 4, No. 1.
26. Osadebe, P.O. and Ukwueze, S.E. (2004). A Comparative Study of the Phytochemical and Antimicrobial Properties of the Eastern Nigerian Species of African Mistletoe (Loranthusmicranthus) sourced from different host trees. Journal of Biological Research and Biotechnology.2(1): 18-23.
27. Parekh, Jigna and Chanda, Sumitra V. (2007). In vitro Antimicrobial activity and phytochemical analysis of some Indian medicinal plants. Turk. J. Biol. 31 : 53-58.
28. Ramchandani, M.; Jolly, C.I. (1988). Indian J. Pharm. Sci.; 50 : 276-277, 5, (1988).
29. Rastogi, Ram, P. and Mehrotra, B.N. (1970-1979). Compendium of Indian Medicinal Plants Vol. 2 Central Drug Research Institute, Lucknow, India.
30. Sankawa, V. (1992). In proceedings of the seventh Asian symposium on medicinal plants spices and other natural products (eds.Cruz,L.T.,Concepeion, G.P., Mendigo, M.A. S. and Guevara, B.Q.), University of the Philippines, Monila 1992 p. 143.
31. Satyanarayana, S.; Srinivas, G. (1998). Indian Drugs V. 35(6) P. 330-335.

Table No. 5: Antimicrobial testing of each extracts of Brideliaretusa (Leaves) against Gram Positive Bacteria

S. NO.	Exract Used	Quantity of extract	S. aureus (mm)	Streptococcus Sp. (mm)	Bacillus subtilis (mm)
1.	Ethanolic	0.05 ml	20	No zone	21
		0.08 ml	23	No zone	23
		0.11 ml	25	No zone	26
		0.13 ml	30	No zone	29
		0.16 ml	33	No zone	32
	R	-	0.99	-	0.99
		Zone Colour – Brown			
2.	Water	0.05 ml	14	No zone	No zone
		0.08 ml	17	No zone	20
		0.11 ml	20	No zone	23
		0.15 ml	22	No zone	26
		0.16 ml	26	No zone	30
	R	-	1.00	-	0.98
		Zone Colour – Light Brown			

Table No. 6: Antimicrobial testing of each extracts of B. retusa (Leaves) against Gram Negative Bacteria

S. No.	Exract Used	Quantity of extract used	E.coli (mm)	Shigelladys-enterae (mm)	Salmonella typhi (mm)	Psecudomonas aeruginosa (mm)	K.pneumoniae (mm)
1.	Ethanolic	0.05 ml	19	No zone	19	No zone	No zone
		0.08 ml	25	No zone	22	14	No zone
		0.11 ml	31	No zone	24	18	No zone
		0.13 ml	34	19	27	27	No zone
		0.16 ml	35	22	30	32	No zone
	R	-	0.99	0.93	0.99	0.98	-
		Zone Colour Brown					
2.	Water	0.05 ml	15	No zone	18	No zone	No zone
		0.08 ml	17	No zone	20	20	No zone
		0.11 ml	19	No zone	22	23	No zone
		0.13 ml	22	18	25	26	No zone
		0.16 ml	25	20	27	30	No zone
	R	-	0.97	0.94	1.00	0.97	-
		Zone Colour Light Brown					

sp.

Note : * Antimicrobial testing of P. ether, Benzene, Chloroform & Acetone extract were also performed but there was no zone of inhibition found.

* r = Correlation coefficient

Table No. 7: Antifungal testing of each extract of Brideliaretusa (leaves) against various fungi

S.	Extract used	Quantity of extract used (ml)	Aspergillus sp.(mm/ zone)	Penicillum sp. (zone/mm)	Helmintho-sporium sp.(mm)	Fusarium sp. (mm)	Collectotri-chum sp. (mm)	Rhizoctonia sp.(zone/mm)
1.	Ethanolic	0.05	No zone	No zone	24	22	20	No zone
		0.08	No zone	No zone	28	25	2	No zone
		0.11	15	25	30	27	25	18
		0.13	18	27	32	29	28	22
		0.16	24	35	35	32	30	26
	r	No zone	0.97	0.92	0.98	0.93	0.96	0.92
2.	Water	0.05	No zone	No zone	20	13	15	No zone
		0.08	No zone	No zone	22	15	17	No zone
		0.11	12	15	25	17	19	14
		0.13	15	18	28	19	21	16
		0.16	19	20	30	21	25	18
	r	No zone	0.93	0.96	0.96	0.91	0.96	0.96

Note : * Antifungal testing of P.ether, benzene, chloroform and acetone extract were also performed but there was no zone of inhibition found.

* r = Correlation coefficient

Hardness Of Water

Prof. B. K. Rawat * Prof. Shailendra Sisodiya **

Introduction - A tub faucet with built-up calcification from hard water in Southern Arizona.

Hard water is water that has high mineral content (in contrast with "soft water"). Hard water is formed when water percolates through deposits of calcium and magnesium-containing minerals such as limestone, chalk and dolomite.The main natural sources of hardness in water are dissolved polyvalent metallic ions from sedimentary rocks2, seepage and run off from soil. Calcium and magnesium, the two main ions are present in many sedimentary rocks, the most common being limestone and chalk. As mentioned above, a minor contribution to the total hardness of the water is also made by other polyvalent ions. aluminium, barium, iron, manganese and zinc. The degree of corrosion and solubilization of metals occur also depend on the pH, alkalinity and dissolve oxygen concentration.

Hard drinking water is generally not harmful to one's health. but can pose serious problems in industrial settings, where water hardness is monitored to avoid costly breakdowns in boilers, cooling towers, and other equipment that handles water. In domestic settings, hard water is often indicated by a lack of suds formation when soap is agitated in water, and by the formation of limescale in kettles and water heaters. Wherever water hardness is a concern, water softening is commonly used to reduce hard water's adverse effects.

Sources of hardness - Water's hardness is determined by the concentration of multivalent cations in the water. Multivalent cations are cations (positively charged metal complexes) with a charge greater than 1+. Usually, the cations have the charge of 2+. Common cations found in hard water include Ca2+ and Mg2+. These ions enter a water supply by leaching from minerals within an aquifer. Common calcium-containing minerals are calcite and gypsum. A common magnesium mineral is dolomite (which also contains calcium). Rainwater and distilled water are soft, because they contain few ions.

The following equilibrium reaction describes the dissolving and formation of calcium carbonate :-

$CaCO_3 (s) + CO_2 (aq) + H_2O (l) \rightleftharpoons Ca^{2+} (aq) + 2HCO_3^- (aq)$

The reaction can go in either direction. Rain containing dissolved carbon dioxide can react with calcium carbonate and carry calcium ions away with it. The calcium carbonate may be re-deposited as calcite as the carbon dioxide is lost to atmosphere, sometimes forming stalactites and stalagmites.

Calcium and magnesium ions can sometimes be removed by water softeners.

Temporary hardness -Temporary hardness is a type of water hardness caused by the presence of dissolved bicarbonate minerals (calcium bicarbonate and magnesium bicarbonate). When dissolved, these minerals yield calcium and magnesium cations (Ca2+, Mg2+) and carbonate and bicarbonate anions (CO32-, HCO3-). The presence of the metal cations makes the water hard. However, unlike the permanent hardness caused by sulfate and chloride compounds, this "temporary" hardness can be reduced either by boiling the water, or by the addition of lime (calcium hydroxide) through the softening process of lime softening.[4] Boiling promotes the formation of carbonate from the bicarbonate and precipitates calcium carbonate out of solution, leaving water that is softer upon cooling.

Permanent hardness - Permanent hardness is hardness (mineral content) that cannot be removed by boiling. When this is the case, it is usually caused by the presence of calcium sulfate and/or magnesium sulfates in the water, which do not precipitate out as the temperature increases. Ions causing permanent hardness of water can be removed using a water softener, or ion exchange column.

Total Permanent Hardness = Calcium Hardness + Magnesium Hardness

The calcium and magnesium hardness is the concentration of calcium and magnesium ions expressed as equivalent of calcium carbonate.

Total permanent water hardness expressed as equivalent of CaCO3 can be calculated with the following formula: Total Permanent Hardness (CaCO3) = 2.5(Ca2+) + 4.1(Mg2+).[citation needed]

Effects of hard water andSoftening - With hard water, soap solutions form a white precipitate (soap scum) instead of producing lather, because the 2+ ions destroy the

* Prof. (Zoology) Govt. P.G. College, Sendhwa (M.P.) INDIA
** Prof. (Botany) Govt. P.G. College, Sendhwa (M.P.) INDIA

surfactant properties of the soap by forming a solid precipitate (the soap scum). A major component of such scum is calcium stearate, which arises from sodium stearate, the main component of soap.

2 C17H35COO- (aq) + Ca2+ (aq) '! (C17H35COO)2Ca (s)

Hardness can thus be defined as the soap-consuming capacity of a water sample, or the capacity of precipitation of soap as a characteristic property of water that prevents the lathering of soap. Synthetic detergents do not form such scums.

A portion of the ancient Roman Eifel aqueduct in Germany. In service for about 180 years, a deposit of scale up to 20cm thick built up within it.

Hard water also forms deposits that clog plumbing. These deposits, called "scale", are composed mainly of calcium carbonate (CaCO3), magnesium hydroxide (Mg(OH)2), and calcium sulfate (CaSO4). Calcium and magnesium carbonates tend to be deposited as off-white solids on the inside surfaces of pipes and heat exchangers. This precipitation (formation of an insoluble solid) is principally caused by thermal decomposition of bicarbonate ions but also happens in cases where the carbonate ion is at saturation concentration. The resulting build-up of scale restricts the flow of water in pipes. In boilers, the deposits impair the flow of heat into water, reducing the heating efficiency and allowing the metal boiler components to overheat. In a pressurized system, this overheating can lead to failure of the boiler.

The presence of ions in an electrolyte, in this case, hard water, can also lead to galvanic corrosion, in which one metal will preferentially corrode when in contact with another type of metal, when both are in contact with an electrolyte. The softening of hard water by ion exchange does not increase its corrosivity per se. Similarly, where lead plumbing is in use, softened water does not substantially increase plumbo-solvency.

In swimming pools, hard water is manifested by a turbid, or cloudy (milky), appearance to the water. Calcium and magnesium hydroxides are both soluble in water. The solubility of the hydroxides of the alkaline-earth metals to which calcium and magnesium belong (group 2 of the periodic table) increases moving down the column. Aqueous solutions of these metal hydroxides absorb carbon dioxide from the air, forming the insoluble carbonates, giving rise to the turbidity. This often results from the pH being excessively high (pH > 7.6). Hence, a common solution to the problem is, while maintaining the chlorine concentration at the proper level, to lower the pH by the addition of hydrochloric acid, the optimum value being in the range of 7.2 to 7.6.

It is often desirable to soften hard water. Most detergents contain ingredients that counteract the effects of hard water on the surfactants. For this reason, water softening is often unnecessary. Where softening is practised, it is often recommended to soften only[why?] the water sent to domestic hot water systems so as to prevent or delay inefficiencies and damage due to scale formation in water heaters. A common method for water softening involves the use of ion exchange resins, which replace ions like Ca2+ by twice the number of monocations such as sodium or potassium ions.

Washing soda (sodium carbonate - Na2CO3) is easily obtained and has long been used as a water softener for domestic laundry, in conjunction with the usual soap or detergent.

Health considerationsMeasurement - The World Health Organization says that "there does not appear to be any convincing evidence that water hardness causes adverse health effects in humans". In fact, the United States National Research Council has found that hard water can actually serve as a dietary supplement for calcium and magnesium. me studies have shown a weak inverse relationship between water hardness and cardiovascular disease in men, up to a level of 170 mg calcium carbonate per litre of water. The World Health Organization has reviewed the evidence and concluded the data was inadequate to allow for a recommendation for a level of hardness.

Recommendations have been made for the maximum and minimum levels of calcium (40–80 ppm) and magnesium (20–30 ppm) in drinking water, and a total hardness expressed as the sum of the calcium and magnesium concentrations of 2–4 mmol/L.

Other studies have shown weak correlations between cardiovascular health and water hardness.

Some studies correlate domestic hard water usage with increased eczema in children.The Softened-Water Eczema Trial (SWET), a multicenter randomized controlled trial of ion-exchange softeners for treating childhood eczema, was undertaken in 2008. However, no meaningful difference in symptom relief was found between children with access to a home water softener and those without.

Hardness can be quantified by instrumental analysis. The total water hardness is the sum of the molar concentrations of Ca2+ and Mg2+, in mol/L or mmol/L units. Although water hardness usually measures only the total concentrations of calcium and magnesium (the two most prevalent divalent metal ions), iron, aluminium, and manganese can also be present at elevated levels in some locations. The presence of iron characteristically confers a brownish (rust-like) colour to the calcification, instead of white (the color of most of the other compounds).

Water hardness is often not expressed as a molar concentration, but rather in various units, such as degrees of general hardness (dGH), German degrees (°dH), parts per million (ppm, mg/L, or American degrees), grains per gallon (gpg), English degrees (°e, e, or °Clark), or French degrees (°fH, °F or °F; lowercase f is used to prevent confusion with degrees Fahrenheit). The table below shows conversion factors between the various units.

Hardness unit conversion - (Table see the next page)

The various alternative units represent an equivalent mass of calcium oxide (CaO) or calcium carbonate (CaCO3) that, when dissolved in a unit volume of pure water, would result

in the same total molar concentration of Mg2+ and Ca2+. The different conversion factors arise from the fact that equivalent masses of calcium oxide and calcium carbonates differ, and that different mass and volume units are used. The units are as follows.

Parts per million (ppm) is usually defined as 1 mg/L CaCO3 (the definition used below). It is equivalent to mg/L without chemical compound specified, and to American degree.Grains per Gallon (gpg) is defined as 1 grain (64.8 mg) of calcium carbonate per U.S. gallon (3.79 litres), or 17.118 ppm. a mmol/L is equivalent to 100.09 mg/L CaCO3 or 40.08 mg/L Ca2+.

A degree of General Hardness (dGH or 'German degree (°dH, deutsche Härte))' is defined as 10 mg/L CaO or 17.848 ppm.

A Clark degree (°Clark) or English degrees (°e or e) is defined as one grain (64.8 mg) of CaCO3 per Imperial gallon (4.55 litres) of water, equivalent to 14.254 ppm.

A French degree (°fH or °f) is defined as 10 mg/L CaCO3, equivalent to 10 ppm.

Hard/soft classification - Because it is the precise mixture of minerals dissolved in the water, together with the water's pH and temperature, that determine the behavior of the hardness, a single-number scale does not adequately describe hardness. However, the United States Geological Survey uses the following classification into hard and soft water, **(Table See)**

Seawater is considered to be very hard due to various dissolved salts. Typically seawater's hardness is in the range of 6630 ppm. In contrast, freshwater has hardness in the range of 15 - 375 ppm.

Toxicity in humans - Because it would take a very large amount of heavy water to replace 25% to 50% of a human being's body water (water being in turn 50% - 75% of body weight with heavy water, accidental or intentional poisoning with heavy water is unlikely to the point of practical disregard. Poisoning would require that the victim ingest large amounts of heavy water without significant normal water intake for many days to produce any noticeable toxic effects.

Oral doses of heavy water in the range of several grams, as well as heavy oxygen 18O, are routinely used in human metabolic experiments. See doubly labeled water testing. Since one in about every 6400 hydrogen atoms is deuterium, a 50 kg human containing 32 kg of body water would normally contain enough deuterium (about 1.1 gram) to make 5.5 grams of pure heavy water, so roughly this dose is required to double the amount of deuterium in the body.

The American patent U.S. Patent 5,223,269 is for the use of heavy water to treat hypertension (high blood pressure). A loss of blood pressure may partially explain the reported incidence of dizziness upon ingestion of heavy water. However, it is more likely that this symptom can be attributed to altered vestibular function.

References :-

1. H. A. Schroeder, Relation Between Mortality form Cardiovascular Disease and Treated Water Supplies, J. American Med. Association, 172, 1902 (1960).
2. P. C. Jain and Jain Jain and Jain Engneering Chemistry, 13th Ed., Dhanpat Rai Publication, New Delhi(1990).
3. Anonymous Guideline Drinking Water Quality, WHO, 2, 231 (1996).
4. W. C. Smith and I. K. Crombie, Coronary Heart Disease and Water Hardness in Scottland, J.Epidemiol. Commun. Health, 41, 227 (1987).
5. J. P. Bound, J. Epidemiology and Community Health, 35(2), 102 (1981). World Health Organization Hardness in Drinking-Water, 2003
6. Jump up to: a b Hermann Weingärtner, "Water" in Ullmann's Encyclopedia of Industrial Chemistry, 2006.
7. Christian Nitsch, Hans-Joachim Heitland, Horst Marsen, Hans-Joachim Schlüussler, "Cleansing Agents" in Ullmann's Encyclopedia of Industrial Chemistry 2005.
8. PP Coetzee (1998)."Scale reduction and scale modification effects induced by Zn". Retrieved 2010-03-29.

Hardness unit conversion

mmol/L	ppm,	mg/L	dGH, °dH	gpg	°e, °Clark	°fH
mmol/L	1	0.009991	0.1783	0.171	0.1424	0.09991
ppm, mg/L	100.1	1	17.85	17.12	14.25	10
dGH, °dH	5.608	0.05603	1	0.9591	0.7986	0.5603
gpg	5.847	0.05842	1.043	1	0.8327	0.5842
°e, °Clark	7.022	0.07016	1.252	1.201	1	0.7016
°fH	10.01	0.1	1.785	1.712	1.425	1

For example: 1 mmol/L = 100.1 ppm and 1 ppm = 0.056 dGH.

Hard / Soft classification

Classification	hardness in mg/L	hardness in mmol/L	hardness in dGH/°dH	hardness in gpg	hardness in ppm
Soft	0–60	0–0.60	0-10.7	0-3.50	less than 60
Moderately hard	61–120	0.61–1.20	10.8-21.4	3.56-7.01	60-120
Hard	121–180	1.21–1.80	21.5–32.1	7.06-10.51	120-180
Very hard	≥181	≥ 1.81	≥ 32.1	≥ 10.57	> 180

****

Metallic Pollutants Removal Through Phytoremediation "A Study With Crop Plants"

Dr. Kumud Dubey * Dr. Avinash Dube **

Abstract - Vegetation based remediation shows potential for accumulating, immobilizing and transforming contaminants. In natural ecosystem plants acts as filters and metabolize substances generated by nature. Phytoremediation takes advantage of the natural properties of plants. Plant roots and plant bodies act as filters to absorb the compounds or to concentrate them up to many times.

The present study shows the efforts of removal of heavy metals from the land and water environment using green plants. As such type of technique involves specific application of green plants in management of environment.

Key Words : phytoremediation ,biorestoration

Introduction - Environmental pollution poses the serious problem of effluents contaminating the natural resources and also causes release of waste materials. Dumping unwanted things into the surrounding environment has reached an alarming proportion.

Remediation of such contaminated resources is one of the major problems. Bioremediation is a biological method for clean up of contaminated soil and ground water. It is also referred as biorestoration. . Plant roots and plant bodies act as filters to absorb the compounds or to concentrate them upto several times. Using plants to store, remove, degrade and metabolize environmental contaminants is the phytoremediation , which include the methods of rhizofilteration, phytoextraction, phytotransformation, phytostimulation and phytostabilization

The present study is made to see the removal of heavy metals from the land or water environment using green plants. As such type of techniques involves specific applications of green plants to the management of environment and related socio-economic and developmental issues keeping in view the concept of sustainable development.

Methodology - Seeds of legume crop(*Phaseolus aureus* Roxb. cv.pusa baisakhi)were taken from certified seed company. The experiment was performed in polythene bags. Soil in the polythene bags was treated with three different concentration of copper oxychloride (a pesticide) i.e. 1 ppm,10 ppm and 25 ppm (w/w) . For each concentration, three replicates were taken and the soil without pesticide treatment was considered as control. The plants were irrigated with regular intervals.The samples were collected on 15th and 30th day(DAS). The content of copper in the plants were estimated by AAS.

Result and Discussion -

Observation Table 1 – **Accumulated copper in plant body**

S. No.	Conc. of pesticide (ppm)	Accumulated Metal(mg)	
		15th day	30th day
1	0	0.06 ± 0.002	0.06 ± 0.002
2	1	0.684 ± 0.034	1.091 ± 0.091
3	10	0.723 ± 0.021	1.162 ± 0.035
4	25	0.737 ± 0.028	1.663 ± 0.053

Using plants to store, remove, degrade and metabolize environmental contaminants is the phytoremediation, which includes the methods of rhizofiteration, phytoextraction, phytotransformation,phytostimulation and phytostabilization. Phytoremediation takes advantage of natural properties of plants. In the experiment increased heavy metal content was seen in plant body. After long duration of time accumulated copper metal also noted with increased amount. The amount of the heavy metal present in the soil may be considered to the amount potentially available to the plants. Out of the quantity of heavy metals taken up by plants, only a small amount is translocated to the aerial parts and maximum is retained in the below ground parts.

Most of the heavy metals are persistent in soil because of their immobile nature, and some plant species have been demonstrated to accumulate high metal concentrations. A suitable plant selection is therefore crucial for the success of the technology.

For this technique macrophytes may be grown in natural or constructed systems. For degradation of contaminants, proper site design and management techniques are necessary. Plants native to contaminated sites and plants capable of moving water fast in their system are useful. Aquatic treatment system may use one species of plant or a variety of plants in combination.

Plants which are capable of accumulating very high concentrations of metal in their stems and leaves are expected to solve the problem of contaminated soil in future.

* Asst. Professor (Botany) S. N. Govt. P.G. College, Khandwa (M.P.) INDIA
** Asst. Professor (Physics) S. N. Govt. P.G. College, Khandwa (M.P.) INDIA

Table 2 - List of plants used for phytoremediation

S. No.	Plant species	Remedy for
1	Arabidopsis	Mercury
2	Bamboo	Silica
3	Mustard	Lead, nickel, copper, Zink
4	Fern (Pteris)	Arsenic
5	Cottonwood	Mercury
6	Tomato	Zink, Cadmium

References :-

1. Jogdand S. N. (2010), Env. Biotechnology, Himalaya Pub. House, pp 239-248
2. Nagesh A.(2013). UGC CSIR NET tutor- Life science, pp 1066-1068.
3. Patterson J. W. , 91985), " Industrial Waste water treatment technology", Butter worth pub., London.

****

Importance Of Biological Spectrum In The Ecological Consideration Of The Vegetation

Dr. Mukta Shrivastava *

Abstract - Knowledge of life form classes of the vegetation developed on the study sites is prerequisite to the understanding of species diversity; classification of the flora in to various life form classes showsthe plant climate of the sites and also the effect of the biotic interference. The period during which the different species are added to the plant community through their active growth and seed germination, flowering, fruiting etc. are revealed through the study of phenology of the constituent species. The performance of the therophytes for the present study site may be regarded due to strongly periodic climate and biotic interference.

Introduction - Clements (1898) modified the system of Drude in their study of American vegetation. The most compact and consisted system of life forms classification based upon the principles of protection and buds during unfavourable season, were however, proposed by Raunikiaer (1934) who gave definite nomenclature for all the types and conceived the importance of biological spectrum in the ecological consideration of the vegetation. Further Raunkiaer defined the plant climate as " The climate as a condition for a certain type of vegetation type of vegetation expressed by the statical proportion between the life forms of all the species determined by the adaptation to survive the unfavourable season". Pandiya (1953) while working on grasslands of Madhya Pradesh found that the percentage of geophytes and therophytesis four times higher than Raunkiaer's normal spectrum. According to Cain (1950) also over grazing tends to increase the percentage of therophytes. Bharuchaand Dave, 1944 found a grass land association in Bombayarea. According to Jones (1936) Raunkiaer's biological spectrum is valuable in expressing similarities and differences among communities.

Material and Method - The present study is mainly concerned with the study of life form classes in relation to biotic interference of the region. The place of study was located about 10 km & 5 km from sssssPanna (M.P.) The forest were situated between 24°-25° north latitude and 80° to 80'45°east longitude on Vindhyan plateau. Two study sites were selected.

Observation And Result - List of species occurring on the two study sites in the different season are given in the **Table - 1**

Conclusion - Percentage of hemi cryptophytes is fairly comparable and therophytes and cryptophytesis higher on the present study site. From a comparison of biological spectrum from the present study site with those of Raunkiaer normal spectrum, the following points emerge:

1. The percentage of cryptophytes and therophytes is higher on present sites
2. The percentage of hemi cryptophytes is little lower on study site I & II.

The preponderance of therophytes for the present study site may be regarded to be due to strongly periodic climate and biotic interference as suggested by Barauche and Dave (1944). Higher percentage of cryptophytes (of normal spectrum) may show the effect of harvage removal through grazing and scraping under which conditions the plants having there perinnating buds hidden in the soil stand better chance of survival.

References :-

1. Bharucha, F.R. and R.N. Dev 1944. The biological spectrum of grass land association. J.University, Bombay, 13, 16-16.
2. Cain S, A, 1950. Life forms and phytoclimate, Bot Riv. 16: 1-32
3. Clements, F.E. (1898) Peculiazonal formation of the great plains Ann. Mat, 31: 968-970
4. Jones, M.G. 1936. In Milthorps (1961)
5. Pandaya, S.C. 1953. Ecological studies of grasslands of Sagar, PhD thesis, Sagar University, Sagar
6. Raunkiaer, C (1934) – The life terms of plants and statistical plants. Plants geography OxfordUniversity Press.

Table 1: **List Of Species Occuring On The Two Study Sites In The Different Season**

Species	*Rainy Season*		*Winter Season*		*Life Form*
	I	*II*	*I*	*II*	
Chrysopogonmontanus	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Heteropogoncontortus	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Apludaaristata	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Apludamutica	*P*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Themedaquadrivalvis	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*

* **Asst. Prof. (Botany) Govt. M.L.B. Girls P.G. (Auto) College, Bhopal (M.P.) INDIA**

IseilenalaxamHack	*P*	*A*	*P*	*A*	*Th.*
Cynondondectylon	*A*	*P*	*A*	*P*	*Ch.*
Dichanthiumsannulatum	*P*	*P*	*P*	*P*	*He.*
Imperatacylindrica	*P*	*A*	*P*	*A*	*Cr.*
Eragrostristenelea	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Sacharumspontanum	*A*	*P*	*A*	*P*	*Th.*
Symbopogonmartinwals	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Zorniadiphylla	*P*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Xanthium strumarium	*A*	*P*	*A*	*P*	*Th.*
Volunterellaramosa	*A*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Vernoneacinarea	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Vandelliacrustaceau	*P*	*P*	*A*	*A*	*He.*
Urochloapanicoydes	*A*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Var.Povrescns					
Tricodesmaindicum	*A*	*A*	*P*	*A*	*Th.*
Sporobolousdiander	*P*	*P*	*P*	*P*	*He.*
Sidaveronicaefolia	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Seteriaglauca	*P*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Scopariadulcis	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Rungiapectinata	*A*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Rhynachosia minima	*P*	*A*	*P*	*A*	*Th.*
Phyllanthus simplex	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Phyllanthusniruri	*A*	*A*	*A*	*P*	*Th.*
Paspalumscrobiculatium	*P*	*A*	*A*	*A*	*Th.*
Paspalumroyneanum	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Paspalidumflavidiom	*P*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Panicumpsilobodium	*P*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Panicumhumile	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Kyllinga triceps	*A*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Ischaemumrugosum	*P*	*A*	*A*	*A*	*He.*
Heylandialatebrasa	*A*	*P*	*A*	*P*	*He.*
Evolvulusnumularious	*P*	*P*	*P*	*P*	*Ch.*
Evolvulusalainoides	*P*	*P*	*P*	*P*	*Ch.*
Euphorbia thymifoli	*A*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Euphorbia hypercifolia	*P*	*A*	*P*	*A*	*Th.*
Euphorbia nirta	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Eleusineindica	*P*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Digitariamarginate	*P*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Digitariagrandularis	*P*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Desmodiumtriflorum	*P*	*P*	*P*	*P*	*He.*
Dactyloctenuimaegyptium	*P*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Cyperusrodundus	*P*	*P*	*P*	*P*	*Cr.*
Cypersuscompressus	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
Crotalaria medecaginea	*P*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Convolvulus pluricaulia	*A*	*P*	*A*	*P*	*He.*
Convolvulus arbensis	*P*	*A*	*A*	*A*	*He.*
Cassia tora	*A*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Cassia kleinii	*A*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Boerhaviadiffusa	*P*	*P*	*A*	*P*	*He.*
Bonnayabrachiata	*P*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Bluneaoxyodonta	*P*	*P*	*P*	*P*	*He.*
Aristataobscemcionis	*P*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Anisoneles species	*A*	*A*	*P*	*A*	*Th.*
Anelenanidiflorum	*P*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Alysicarpusmonolifer	*P*	*P*	*P*	*P*	*He.*
Alysicarpuslongifolius	*P*	*P*	*P*	*P*	*Th.*
AlletIropsiscimicina	*A*	*P*	*A*	*A*	*Th.*
Bothrichloaspertusa	*P*	*P*	*P*	*P*	*Cr.*

P = Presents A = Absent
Th = Therophytes Ch = Chamalphytes
He = Hemicrptophytes Cr = Cryptophytes

Nutritional Status And Obesity In Working And Non-Working Married Sikh Women [25-40 Yrs] In Jodhpur City

Arti Soni * Prof. Neelam Wason **

Abstract - **Background** - Obesity is increasing at an alarming rate throughout the world. Today it is estimated that there are more than 1.4 billion adults, 20 and older, were overweight (WHO 2008)[1]. Obesity has reached epidemic proportions in India in the 21st century with morbid obesity affecting 5% of the country's populationt . According to Third National Health Survey 2007 12.1 percent males and 16 percent females were obese or overweight. In the list of states Punjab ranks 1st with the percentage 30.3 and 37.5 for male and female respectivelyu .

Objective - To find the prevalence of obesity among working and non-working married Sikh women aged 25-40 year, in Jodhpur city.

Material and methods - A cross sectional study was carried out on 120 working and non-working married Sikh women aged 25-40 year. The subjects were selected from Gurudwaras, schools, clinics and beauty parlors involving teachers, doctors and house wives in Jodhpur. To calculate the BMI (Kg/m^2) height and weight were measured. To find out the central obesity waist and hip circumferences were taken and waist-hip ratio was calculated.

Result - From the 120 samples, 16(13.3%) were found obese and 38(31.7%) overweight, 56(46.7%) normal and only 10(8.3%) underweight. The obesity prevalence was 15 % (9) among working group while 11.7% (7) in non-working group according to BMI. According to waist-hip ratio, 7(17.5%) subjects were found obese out of 40, 3 subjects (15%) among working and 4 subjects (20%) among non-working group were obese.

Conclusion - From this study, it is found that the prevalence of obesity was slightly higher in the group of working women according to BMI whereas central obesity is higher in the group of non working women.

Key words - Nutritional status, Obesity, Working women, Married Sikh women.

Introduction - Obesity is increasing at an alarming rate throughout the world. Today it is estimated that there are more than 1.4 billion adults, 20 and older, were overweight. Of these over 200 million men and nearly 300 million women were obese. 35% of adults aged 20 and over were overweight in 2008, and 11% were obese. 500 million obese people worldwide, equivalent to eleven percent of the adult population (WHO 2008)[1]**.** Across OECD countries, one in 2 adults is currently overweight and 1 in 6 is obese[2]. Obesity ranks as one of the most common and serious nutritional disease in many affluent societies and its association with many other common diseases may enhance morbidity and mortality. The incidences of obesity are rising rapidly in many parts of the world, the disorder being increasingly recognized as a global health problem[2]. In the Asian region, while the prevalence of overweight and obesity is lower than that evident in North America and Europe. In several countries in Asian region, obesity and overweight co-exist with under nutrition and underweight[3].

Obesity has reached epidemic proportions in India in the 21st century with morbid obesity affecting 5% of the country's populationt . According to Third National Health Survey 2007 12.1 percent males and 16 percent females were obese or overweight. In the list of states Punjab ranks 1st with the percentage 30.3 and 37.5 for male and female respectivelyu.

Moreover as the problems appear to be increasing rapidly in children as well as in adult, but obesity is more common among women than men in all countries. In increasing proportion of fat and increased energy density of the diet, together with reduction in the level of physical activity and the rise in that of sedentary behavior, are thought to be major contributing factors to the rise of average body weight of the population. It is associated with the increasing urbanization with change in the trends of dietary consumption patterns and life style in the level of physical activity- both occupational and leisure time. In industrialized societies, an increasing number of women are entering the job, they are away from domestic chores generally using servant, and for it they are prone to be obese[2].

The women are prone to develop obesity especially after marriage. Marriage and pregnancy are critical period to gain weight. This is a period when women are good eater and few are conscious about their health. The Sikkh community in India is very prosperous and their food is also rich. Their diet mainly contains fat, meat, dairy products and whole grains. Another reason is busy schedule with lack of exercise. Many of them are engaged in job which may be positive factor in gaining weight, because for house hold chore they depend

* Research Scholar (Home Science) Jai Narayan Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA
** Retd. Professor (Home Science) Jai Narayan Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA

on their servant and also in working hours they are not much active.

In the present study, the prevalence of obesity has been investigated in working and nonworking married Sikh women with the following objectives:

- To find out the prevalence of obesity in married Sikh women.
- To compare the prevalence of obesity among the working and non-working women.

Methodology - The study was conducted on married Sikh women aged 25-40 yrs. Subject consisted of 120 women out of them 60 women were engaged in job and another 60 were housewives. The subjects were selected from Gurudwaras, schools, clinics and beauty parlors involving teachers, doctors and house wives in Jodhpur, belonging to middle and higher socioeconomic group from Sikh families. The suitable income scale was considered for economic statusw.

The Height, Weight, Waist and Hip circumference has been measured. Waist-hip circumference ratio and Body Mass Index (BMI), a recent and valid index of health status, has been calculated.

On the basis of percentage excess of ideal body weight the subjects were categorized as normal, overweight and obese. 10 subjects (3 in working and 7 in non-working) were found underweight out of 120 subjects and were excluded for data analysis. The total sample thus comprised of 57 working and 53 non-working subjects. A subsample of 20 subjects from each group (working and non-working) was drawn using the random sampling technique, for the study of central adiposity. Anthropometric measurements of height, waist and hip circumference were made according to standard procedures using non stretchable measuring tape. Weight was measured using calibrated Libra bathroom scale with 500 g sensitivity, which was standardized prior to the study and checked repeatedly. The data were subjected to suitable statistical analysis.

Result and discussion

Prevalence of Obesity - A prevalence of 16 percent was observed for obesity and 38 percent was for overweight in the overall subjects, where only 8.33 percent subjects were under weight.

TABLE- 1Prevalence of Obesity and BMI

(See in next page)

Out of 120 subjects 9(15%) subjects were found obese and 21(35%) were overweight the in group of working women where 27(46%) subjects were having normal weight, while among the group of Non-working women 7(11.6%) subjects were obese, 17 (28.3%) overweight and 29(48.3%) were normal weight according to BMI. In the group of working women 3(5%) subjects and Non-working group 7(11.7%) subjects were found under weight.

According to weight (in Kg) upon height (in m^2) BMI (Quetelet's) was calculated (Table no. 1). The difference in BMI among working and non-working was not significant. The mean BMI in the group of working women was found 22.7 for normal, 26.9 for overweight and 33 for obese. In the obese group, 7 had class I grade and 2 had class II grade obesity.

Among the group of non working women BMI was 22.3 in normal weight, 26.8 in overweight women and 33.03 in obese women. In the group of obese women 5 had class I grade of obesity and 2 had class II grade of obesity.

These results are in accordance with the prevalence rate of 50% overweight in women observed by NFI (2003) in Urban Delhi. The prevalence of obesity (BMI >30)is about 3% in males and 14% in females above 40 years.

TABLE- 2 Mean Height, Weight and BMI

(See in next page)

Among the group of working women mean height and weight was 159.2 c.m. and 58 Kg, 161.6c.m. and 70.6 Kg., 156.3 c.m. and 77 Kg. for Normal weight , Overweight and Obese women respectively range as 152.8 -167.5 c.m. and 46-65 Kg for normal weight, 150-170 c.m. and 60-85 Kg for overweight and 151-165 c.m. and 73-88 Kg for obese; whereas the mean height and weight in the group of Non-working women was 160.3c.m. and 57Kg; 161.7c.m. and 69.2Kg; 156c.m. and 80 Kg for normal weight, overweight and obese women respectively, the range was 152.5-173 c.m. and 42-68 Kg for normal weight 155-172.5 c.m. and 60-76Kg for over- weight and 140-165c.m. and 60-90Kg for obese women.

Waist-Hip circumference ratio (WHR):

TABLE-3 Waist-Hip circumference ratio (WHR)

(See in next page)

For WHR 40 subjects (20-20 from both groups) were selected randomly, out of which 15 percent and 20%percent women were found obese in working and non-working group respectively. Rest of all subjects were overweight but no women was classified having normal (<0.7) WHR.

The similar study was done in urban Delhi by NFI (2003) observed abdominal adiposity in 49.7 percent of males and 34.9 percent of females. In these subjects greater the grade of BMI, the greater was the abdominal adiposity but some normal weight subjects also showed abdominal adiposity[8].

Summary and conclusion - The present study reveals a prevalence of 15 percent obesity in working and 11.7 percent in non-working married Sikh women (25-40 yrs) in Jodhpur city, including teachers, doctors and house wives according to BMI (Kg/m^2). When waist hip ratio used for measuring the central obesity, 7(17.5%) subjects were found obese out of 40, 3 subjects (15%) among working and 4 subjects (20%) among non-working group.

References :-

1. http://www.who.int/mediacentre/factsheets/fs311/en/ (access on 26-11-2014)
2. www.hivehealthmedia.com/worldobesity-stats-2010
3. WHO Consultation on Obesity (2000: Geneva). Obesity : preventing and managing the global epidemic: Report of WHO consultation WHO technical report series : 894
4. Symposia (2003)

5. The Hindu (2007). India facing obesity epidemic: experts; 2007-10-12.
6. Third national health survey (2006). International Institute for Population Sciences, Mumbai.
7. Rajasthan Housing Board (2002)
8. Nutrition Foundation of India Org.com (2003). Research project completed project (3/22/2004).

Table- 1 - Prevalence of Obesity and BMI

	Working women:				Nonworking women:				Overall:			
Weight status	Under weight	Normal weight	Over weight	Obese	Under weight	Normal weight	Over weight	Obese	Under weight	Normal weight	Over weight	Obese
Number of subjects	3	27	21	9	7	29	17	9	10	56	38	16
Percentage	5	45	35	15	11.7	48.3	28.3	11.7	8.33	46.66	31.66	13.33
BMI range (Kg/m²)	<18.5	18.5-24.9	25-29.9	30 & above	<18.5	18.5-24.9	25-29.9	30 & above	<18.5	18.5-24.9	25-29.9	30 & above

Table- 2 - Mean Height, Weight and BMI

	Working women			**Non-working women**		
Weight status	Normal weight	Over weight	Obese	Normal weight	Over weight	Obese
Height(cm)	159.2	161.64	156.28	160.33	161.65	156
S.D.	3.90	5.66	4.86	6.12	4.70	8.46
Weight(Kg)	58.18	70.61	80.33	57	69.24	80
S.D.	4.65	6.09	5.02	6.57	5.11	10.40
BMI(Kg/m²)	22.65	26.9	33.0	22.3	26.8	33.3
S.D.	1.62	1.54	1.72	1.68	1.62	3.09

Table - 3 - Waist-Hip circumference ratio (WHR)

Groups	**Workingwomen**			**Non-working women**		
Weight status	Normal weight	Over weight	Obese	Normal weight	Over weight	Obese
No. of subjects	-	17	3	-	16	4
Percentage	-	85	15	-	80	20
Mean	-	0.795294	0.943333	-	0.791875	0.925
S. D.	-	0.035376	0.015275	-	0.039025	0.005774

****

शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का एक साधन

डॉ. अर्चना मैथ्यू *

प्रस्तावना – Education of not only an aspect of development thereby an aim in itself but more significantly it is a premier instrument for the achievement of other aspects of awareness that is vital for the accelerated and affective participation of women. Infect more and more of the development efforts for women adopted all over the world face the obstacle of women not being equal and affective partners of both national development as well as women's development.

शिक्षा वह प्रकाशपुंज है जो संपूर्ण समाज को अपने प्रकाश से प्रकाशित करता है। मानव द्धारा आदिकाल से ही ज्ञान का संचय किया जाता रहा है। प्रत्येक नई पीढ़ी को पुरानी पीढ़ी द्धारा कुछ ज्ञान सामाजिक विरासत में प्राप्त होता है और कुछ वह अर्जित करता है। शिक्षा के बिना जीवन में अंधेरा है। भारतीय मनीषियों ने शिक्षा को संस्कार माना है। भारतीय राष्ट्रीय नेताओं ने यह महसूस किया है कि सबके लिये शिक्षा पूरे देश की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक प्रगति के लिये जरूरी है।

शिक्षा एक स्वाभाविक और सहज प्रक्रिया है जो जन्म से मृत्युपर्यन्त चलती रहती है। शिक्षा और समाज का एक दूसरे से घनिष्ठ संबंध है। एक की प्रगति पर दूसरे की प्रगति निर्भर है, एक की अवनति दूसरे के नाश का कारण भी बन सकती है। व्यक्ति के विभिन्न पक्षों का सर्वांगीण विकास करने में शिक्षा का सर्वोपरि स्थान है। शिक्षा व्यक्ति के जीवन में रात्रि से उत्पन्न अंधकार को दूर कर देती है और चाँद सितारों को प्रज्जवलित करती है। शिक्षा सामाजिक जीवन में पर्याप्त परिवर्तनों को प्रोत्साहन देती है। 'मनुष्य का संपूर्ण ज्ञान शिक्षा का पर्याय है और ज्ञान को मनुष्य का तीसरा नेत्र कहा गया है।'

प्रसिद्ध विचारक, दार्शनिक और शिक्षाविद् जॉनलॉक ने शिक्षा को बच्चे के स्वभाव के भीतर कर्म माना है। शिक्षा को लॉक सदगुणों और अच्छे पालन पोषण का सिद्धांत और व्यवहार दोनों मानता है। लॉक शिक्षा को किसी भी व्यक्ति के विकास का जीवन्त माध्यम मानता है, उसके पर्यावरण को, जिसमें सीखने की सुविधा भी उपलब्ध हो और प्रतिभा के प्रस्फुटन के अवसर भी। लॉक मानता है कि दुनिया में ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जिसके अंदर कोई विचार निहित न हो और इस निहित विचार को खोजना ही ज्ञान, विज्ञान और शिक्षा का काम है।

शिक्षा और हमारी आस्था या निष्ठा इस विषय पर ब्रेंडा वॉटसन की पुस्तक 'एज्युकेशन एंड बिलीफ' में आज समूची शिक्षा को ही संकटग्रस्त माना गया है। हर जगह एक ही प्रश्न उठाया जा रहा है 'या शिक्षा विफल हो गई है, निरर्थक हो गई है? हम जिसे स्कूल कहते हैं, वह आखिर क्या है, चार तत्व – संचालक, पालक, शिक्षक और बालक ये सब मिलकर स्कूल की रचना रचते है, जिनमें संचालक सबसे कम होते हैं, मगर वे सबसे अधिक शक्तिशाली और प्रभावशाली होते हैं। पालक और शिक्षक भी बालक की तुलना में कम होते है, मगर वे बालक से अधिक प्रभावशाली होते हैं, ब्रेंडा ने माना है कि शिक्षा वह है जो लोगों को सोचना सिखाए। सोचना अपने आप से शुरू हो, जैसा कि पुरानी कहावत में कहा गया है 'अपने आप को जानों।' ब्रेंडा ने शिक्षा की कल्पना एक ऐसे वृक्ष से की है, जिसकी जड़ों में सत्य, सुन्दरता, पर्यावरण, मनुष्य और स्वयं के प्रति आदर हो और जिसकी शाखा–प्रशाखाओं से खुलापन, एकात्मकता, सुन्दरता, निष्पक्षता, आनन्द और सोच के आयामों की एक सुखद छाया पैदा होती है।

आज 'शिक्षा' शब्द को भी दर्शन का दर्जा नहीं दिया जा रहा है। शिक्षा को महज सीखने–सिखाने की प्रक्रिया माना गया है। शिक्षा को लेकर एक रूसी लेखक मार्कोव ने हमारे दृष्टिकोणों और मतभेदों को प्रस्तुत किया है। मार्कोव का कहना है कि, शिक्षा का मतलब यह है कि एक पीढ़ी को दूसरी पीढ़ी की शिक्षा में हस्तक्षेप का अधिकार है। हम यह मान लेते है कि उच्च वर्ग को सार्वजनिक शिक्षा में हस्तक्षेप का अधिकार है।

शिक्षा हमारा एक संपूर्ण या समग्र जीवन दर्शन न होकर हमारी आवश्यकताओं के अनुरूप सीखने और सिखाने की व्यवस्था है। मार्कोव के लिये यह एक परिकल्पित व्यवस्था है, तो टॉल्सटाय इसी के अंदर कुछ जीवनदर्शन से जुड़े तत्व भी देखते है। टॉल्सटाय मानतेहै कि ज्ञान अर्जित करने का मुख्य साधन और जीवन की घटनाओं का प्रत्यक्ष संबंध है। चीनी संत कनफ्यूसियस ने कहा था, अज्ञानता एक ऐसी रात्रि के समान है,जिसमें न चांद है न तारे । फिलिप्स कहते है, शिक्षा वह संस्था है जिसका केन्द्रीय तत्व ज्ञान का संग्रह है ।

भारत में 1991 में साक्षरता प्रतिशत 52.21 था जो अब 2011 में बढ़कर 74.04 प्रतिशत हो गया। इंग्लैण्ड, रूस तथा जापान में लगभग शत प्रतिशत जनसंख्या साक्षर है। यूरोप व अमेरिका में साक्षरता का प्रतिशत 90 से 100 के बीच है। इससे स्पष्ट है कि भारत में अन्य देशों की तुलना में साक्षरता बहुत कम है। 1951 से भारत में शिक्षा का प्रसार लगातार बढ़ रहा है तथा प्राथमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक की शिक्षा का विस्तार हो रहा है। 1951 में भारत में साक्षरता का प्रतिशत 166 था जो बढ़कर 2001 में 65.38 और 2011 में 74 प्रतिशत हो गया। पुरूषों में साक्षरता का प्रतिशत 82.14 तथा स्त्रियों में 65.5 प्रतिशत पाया गया। जनसंख्या में तेजी से वृद्धि के कारण सबसे अधिक निरक्षरता गांवों में है और यह निरक्षरता ही परिवर्तन के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा है।

यद्यपि स्वतंत्रता प्राप्ति के 67 वर्ष बाद साक्षरता का प्रतिशत और साक्षरों की संख्या काफी बढ़ चुकी है, परंतु आज भी 10 भारतवासियों में से 5 एवं 5

* प्राध्यापक (गृहविज्ञान) राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

स्त्रियों में से 3 तथा 10 अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लोगों में से 8 पढ़ या लिख नहीं सकते है। स्पष्ट है कि भारत साक्षरता की दृष्टि से काफी पिछड़ा हुआ है। इसका प्रमुख कारण यहां कुल वार्षिक बजट का 1.9 प्रतिशत शिक्षा पर खर्च होता है जबकि अमेरिका, जापान एवं फ्रांस में क्रमश: 19.9, 19.6 तथा 19.8 प्रतिशत बजट राशि शिक्षा पर खर्च होती है।

वर्तमान युग में शिक्षा वह सबसे महत्वपूर्ण संस्था है जो व्यक्ति का सामाजिकरण करने के साथ ही सामाजिक परिवर्तन को एक नयी दिशा देती है। वर्तमान शिक्षा ने विशेषीकरण और- श्रम-विभाजन के रूप में न केवल औद्योगिक विकास में योगदान किया है, बल्कि सामाजिक तथा आर्थिक विकास की आवश्यकताओं को पूरा करने में भी इसकी एक उपयोगी भूमिका है।

व्यक्ति का विकास अधिगम पर आधारित है। वह जीवन के प्रारंभ से ही सीखना शुरू कर देता है तथा सीखने की यह प्रक्रिया चलती रहती है। शिक्षण एक क्रमिक एवं व्यवस्थित प्रक्रिया है। साक्षात्कार के दौरान मैंने पाया कि अधिकांश पिता अशिक्षित थे जो शिक्षित थे उनकी शैक्षणिक योग्यता किस प्रकार की है इसका विश्लेषण सारणी क्रमांक-1 में किया गया है।

सारणी क्रमांक-1 पिता के शिक्षा स्तर के आधार पर परिवारों का वर्गीकरण

क्र.	पिता का शिक्षा स्तर	छिंदवाड़ा		नागपुर	
		N = 457		N = 497	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	अशिक्षित	197	43.11	105	21.13
2	प्राथमिक	019	04.15	050	10.06
3	माध्यमिक	069	15.09	079	15.89
4	हाईस्कूल	093	20.36	188	37.82
5	हायर सेकेण्डरी	050	10.91	056	11.26
6	स्नातक + स्नातकोत्तर	029	06.34	019	03.82

X2 = 75.58

(X2 Values at 0.05 = 11.07 and 0.01 = 15.08)

सारणी क्रमांक 1 में परिवारों का वर्गीकरण पिता की शिक्षा के अनुसार किया गया है। उक्त सारणी का अवलोकन करें तो यह विदित होता है कि नागपुर झोपड़पट्टी क्षेत्र के परिवारों में पिता छिंदवाड़ा तहसील क्षेत्र की तुलना में अधिक शिक्षित पाये गये। छिंदवाड़ा तहसील क्षेत्र में अशिक्षित पिता की संख्या 197 पायी गयी जबकि नागपुर झोपड़पट्टी क्षेत्र में यह संख्या सिर्फ 105 थी। हाईस्कूल तक शिक्षित पिता, छिंदवाड़ा तहसील में 93 जबकि नागपुर झोपड़पट्टी क्षेत्र में 188 पाये गये। दोनों क्षेत्रों में प्राथमिक, माध्यमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त पिता 4.15 प्रतिशत से 15.89 प्रतिशत के मध्य पाये गये। छिंदवाड़ा तहसील के 50 व नागपुर झोपड़पट्टी क्षेत्र के 56 पिता हायर सेकेण्डरी स्तर तक शिक्षित पाये गये। स्नातक व स्नातकोत्तर पिता का प्रतिशत छिंदवाड़ा तहसील 6.34 प्रतिशत व नागपुर क्षेत्र 3.82 प्रतिशत पाया गया। Chi Square से दोनों क्षेत्रों के पिता के शिक्षा स्तर में सार्थक अंतर भी पाया गया। छिंदवाड़ा क्षेत्र की अपेक्षा नागपुर क्षेत्र के पिता अधिक शिक्षित पाये गये क्योंकि शहरीकरण का प्रभाव उनके शिक्षा के स्तर पर पड़ता है, और ये उनके जीवन स्तर को प्रभावित कर रही है।

माता का शैक्षणिक स्तर -माता की शिक्षा का भी शिशु के पालन पोषण पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है अत: सर्वेक्षण में माता के शैक्षणिक स्तर को भी ज्ञात किया गया है, इसे सारणी क्रमांक-2 में प्रदर्शित किया गया है।

सारणी क्रमांक-माता के शिक्षा स्तर के आधार पर परिवारों का वर्गीकरण

क्र.	पिता का शिक्षा स्तर	छिंदवाड़ा		नागपुर	
		N = 457		N = 497	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	अशिक्षित	258	56.25	126	25.36
2	प्राथमिक	015	03.28	055	11.06
3	माध्यमिक	082	17.95	062	12.47
4	हाईस्कूल	074	16.19	193	38.84
5	हायर सेकेण्डरी	018	03.93	047	09.45
6	स्नातक + स्नातकोत्तर	011	02.40	014	02.81

X2 = 135.05

(X2 Values at 0.05 = 11.07 and 0.01 = 15.08)

जिस प्रकार पिता का शैक्षणिक स्तर नागपुर झोपड़पट्टी क्षेत्र में बेहतर पाया गया उसी तरह माता का भी शिक्षा स्तर नागपुर झोपड़पट्टी क्षेत्र में अच्छा पाया गया। अशिक्षित माताओं की संख्या छिंदवाड़ा तहसील क्षेत्र में 257 (56.25%) पायी गयी जबकि नागपुर झोपड़पट्टी क्षेत्र में यह केवल 126 (25.36%) थी। माध्यमिक व हाईस्कूल तक शिक्षित माताओं की संख्या छिंदवाड़ा तहसील के ग्रामीण क्षेत्र में क्रमश: 82 व 74 पायी गई जबकि नागपुर झोपड़पट्टी क्षेत्र में क्रमश: 62 व 193 पायी गयी। प्राथमिक शिक्षा प्राप्त माताओं की संख्या छिंदवाड़ा तहसील के ग्रामीण क्षेत्र में सिर्फ 3.28 प्रतिशत रही जबकि नागपुर झोपड़पट्टी क्षेत्र में 11.06 प्रतिशत पायी गयी। हायर सेकेण्डरी तथा उच्च शिक्षा प्राप्त माताओं का प्रतिशत दोनों क्षेत्रों में 3.93 से 9.45 प्रतिशत के मध्य पाया गया। दोनों क्षेत्रों की माताओं के शिक्षा स्तर का सांख्यिकीय विश्लेषण यह दर्शाता है कि नागपुर क्षेत्र की माताएं छिंदवाड़ा क्षेत्र की माताओं की अपेक्षा ज्यादा शिक्षित थी व इसमें सार्थक अंतर भी पाया गया। अर्थात् अध्ययन के आधार पर हम कह सकते है कि शहरीकरण का प्रभाव माता-पिता दोनों के शैक्षणिक स्तर पर पड़ता है।

वास्तव में शिक्षा के बहुआयामी लाभप्रद प्रभाव को ध्यान में रखकर जीवन में इसे वरदान के रूप में लिया जाना चाहिये, क्योंकि शिक्षा समाज में परिवर्तन और विकास का एक सशक्त माध्यम है, यह ग्रामीणों के अज्ञान व अंधविश्वास से मुक्ति दिलाकर उनमें नई चेतना का संचार करता है। जिससे उनके अधिकार, कर्तव्य और जिम्मेदारी की भावना का उदय होता है। सत्य तो यह है कि जितना हम शिक्षित होंगे तो गांवों के पिछड़ेपन के साथ-साथ बहुत सी समस्याएं स्वत: ही समाप्त हो जायेंगी। भारत में आमतौर पर यह महसूस किया जाता है कि शिक्षा के क्षेत्र में संख्या और गुणवत्ता के बीच संघर्ष है। आज हम देखते है कि कुपोषण का एक प्रमुख कारण अज्ञानता व अशिक्षा भी है।

शिक्षा मानवता की वह कसौटी है जिसमें सर्वांगीण विकास के विभिन्न आयामों को तराशने, निखारने एवं बहुउपयोगी बनाने में सफलता मिलती है। शिक्षा शून्यता में नहीं वह सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक आयामों की परिधि है। आज आवश्यकता है मानसिकता बदलने की उनमें संस्कारों को जीवित करने की, बेईमानी, नैतिक मूल्यों के पतन को रोकने की तभी उन्नज समाज विकसित हो सकता है। आज शिक्षा की समाज में आवश्यकता महसूस की जा रही है क्योंकि इससे ही सामाजिक आदर्शो का निर्माण एवं सामूहिक कल्याण की भावना का विकास संभव है।

अत: हमें राष्ट्र हित को ध्यान में रखकर देश के बच्चों को शिक्षित बनाये और उन्नति के पथ पर अग्रसर करे और शिक्षा के माध्यम से समाज को

विकास की मुख्य धारा से जोड़ना, समस्याओं की पहचना करना एवं उनका निराकरण करना आसान हो सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ.पी.डी. हजेला - उच्च शिक्षा के बदलते हुये पहलू, योजना जनवरी 1994
2. गुप्ता एवं शर्मा 1996 यूनीफाइड समाजशास्त्र शिक्षा परिवर्तन के स्त्रोत के रूप में साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा पृ.सं. 309,312
3. अग्रवाल जी.के.1996 यूनीफाइड समाजशास्त्र 'नगरीकरण' शिक्षा परिवर्तन के स्त्रोत के रूप में, साहित्य भवन पब्लिकेशन एंड ड्रिस्टीब्यूटर्स पृ.5,6,42
4. पंत 2002 जैन एससी, गोयल अनुपम यूनीफाइड अर्थशास्त्र साहित्य पब्लिकेशन आगरा पृ.32-34
5. जे.वी.विलानिलम भारत में शिक्षा व्यवस्था - योजना अगस्त 2012

****

महिला सशक्तिकरण की दिशा में बढ़ते कदम - महिला अधिकार के संदर्भ में

डॉ. भावना रमैया *

शोध सारांश – 'महिलाओं को पुरूषों के बराबर वैधानिक, राजनीतिक, शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों, में अपने परिवार, समुदाय, समाज एवं राष्ट्र की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में निर्णय लेने की स्वायत्तता है।' आधुनिक स्वत्रंत भारत में स्त्री का परिवार से बाहर संस्थानों में पर्दापर्ण होना प्रारंभ हुआ यह एक ऐसा संक्रमण काल है जिसमें स्त्री दोहरी जिम्मेदारी से उन्मुख हो रही है इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए महिला सशक्तिकरण की दिशा में बढ़ते हुए कदमों में महिलाओं को प्राप्त अधिकार सार्थक साबित हो रहे हैं। संविधान के अनुछेद 14, 15 व 16, 17, 19, 21, 22, 23, 24, 39, 42, 51, 325, 326, 20 सूत्रीय महिला कार्यक्रम 1980, महिला पुरूष समानता के लिए 11वीं योजना महिलाओं से संबंधित कानून, शासन की अन्य योजनाएं आती हैं, महिलाओं में कानूनों की जानकारी एवं महिलाओं को मानसिक रूप से इसे लागू करने हेतु एवं अन्याय के खिलाफ आवाज उठाने के आत्मविश्वास विकसित करना आवश्यक है।

शब्दकुंजी – महिला सशक्तिकरण संवैधानिक उपाय महिला कानून, शासन योजनाऐं।

प्रस्तावना – महिला सशक्तिकरण सतत् रूप से चलने वाली एक ऐसी सामाजिक प्रक्रिया है जिसमें महिलाओं को सर्वसम्पन्न एवं विकसित होने हेतु पर्याप्त अवसर मिल सके। भारत में महिलाओं की संख्या 49 करोड़ 60 लाख (वर्ष 2001 जनगणना) है, जो देश की कुल जनसंख्या का 482 प्रतिशत है। वे देश की महत्वपूर्ण मानव संसाधन है और अर्थव्यवस्था के निरतंर विकास के लिये उनका सामाजिक एवं आर्थिक विकास जरूरी है। उन्हें पुरूषों के बराकर वैधानिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक एवं मानसिक क्षेत्रों में निर्णय लेने के प्रति होने वाले भेदभाव को समाप्त कर उन्हें आत्मनिर्भर एवं स्वावलंबी बनाना आवश्यक है। उन्हें समाज के मुख्य धारा में शाामिल करना ? समान कार्य के लिए समान वेतन, कानून के तहत घर-बाहर दोनों जगह सुरक्षित करना, उन्हें जागरूक एवं शक्तिशाली बनाना आवश्यक है। आज महिलाओं के सशक्तिकरण की चर्चा जगह-जगह हो रही है। **वूमन्स स्टेडी सेंटर** खोले जा रहे है, क्योंकि महिलाऐं अब जागरूक हो चुकी है।

1885 में नैरोबी में सम्पन्न अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन में महिला सशक्तिकरण को परिभाषित किया गया। महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य **'महिलाओं को पुरूषों के बराबर वैधानिक, राजनीतिक, शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों, में अपने परिवार, समुदाय, समाज एवं राष्ट्र की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में निर्णय लेने की स्वायत्तता है।'**

भारतीय समाज में प्राचीन से वर्तमान तक नारी की स्थिति में जितना आरोह और अवरोह होता रहा है। वैदिक युग की समाप्ति के बाद भारत में बाहरी आक्रमणकारी, आतंकियों का प्रवेश प्रारंभ हो गया, जो मंगोलहुण, डच, पुर्तगाली, मुगल और ब्रिटिश काल तक रहा। इस अवधि में बाहरी आक्रमणकारियों के पास स्त्री का अभाव और भारत की स्त्रियों के पास रक्त की शुद्धता को बनाए रखना एक दुरूह कार्य हो गया, जिससे स्त्री की स्वायत्तता स्वतंत्रता, शिक्षा-दीक्षा, रहन-सहन का स्तर गिरने लगा। आजादी के बाद संवैधानिक प्रबंध द्वारा स्त्री को पहली बार समानता एवं शिक्षा का अधिकार दिया गया जिससे एक बार पुन: महिला सशक्तिकरण के मार्ग पर अग्रसर होनी लगी। ब्रिटिश काल में कुछ महत्वपूर्ण समाज सुधारक राजाराम मोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, रानाडे, दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, इनीवेसेंट, मार्गरिट, काजिन्स, महात्मागांधी आदि हुए जिन्होंने महिला सशक्तिकरण की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया।

इस प्रकार प्राचीन से ब्रिटिश काल तक महिला सशक्तिकरण के लिए प्रयास उस वक्त की परिस्थितियों एवं महिलाओं के अधिकारों के लिए जारी थे किन्तु आधुनिक स्वत्रंत भारत में स्त्री का परिवार से बाहर संस्थानों में पर्दापर्ण होना प्रारंभ हुआ यह एक ऐसा संक्रमण काल है जिसमें स्त्री दोहरी जिम्मेदारी से उन्मुख हो रही है जिससे महिलाओं में कई समस्याओं का प्रादुर्भाव हो रहा है।

इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए महिला सशक्तिकरण की दिशा में बढ़ते हुए कदमों में महिलाओं को प्राप्त अधिकार सार्थक साबित हो रहे हैं।

महिलाओं के कल्याण के लिए निम्नलिखित प्रबंध किये जा रहे - महिलाओं के अधिकार के प्राप्ति के क्षेत्र में भारत में स्वतंत्रता के पूर्व ब्रिटिश काल में जहां सती प्रथा निषेद अधिनियम 1928 हिन्दु विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1859-1956 बाल विवाह निरोध अधिनियम 1929 का सम्पत्ति पर अधिकार अधिनियम 1937 एवं स्त्रियों को भरण पोषण का अधिकार 1946 रहा।

इस पश्चात् 1950 में मानव अधिकारों की बात राष्ट्रीय स्तर पर होने लगी एवं महिलाओं के अधिकार संवैधानिक उपाय किये जाने लगें।

संवैधानिक उपाय - संविधान के अनुछेद 14, 15 व 16 - इसमें नागरिकों को समानता का अधिकार देता है इसमें लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता है अनुच्छेद 15 में यह प्रावधान सुनिश्चित किया गया है। इसमें राज्य महिला एवं बच्चों के लिए विशेष व्यवस्था कर सकता है कमजोर वर्ग की महिलाओं को अतिरिक्त सुविधाएं प्रदान की जा सकती है। **अनुच्छेद 16** में स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि हर वयस्क लड़की व हर महिला को कामकाज के बदले वेतन प्राप्त करने का अधिकार पुरूषों के

* सहायक प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला - सागर (म.प्र.) भारत

बराबर है केवल महिला होने के नाते रोजगार से वंचित करना, किसी नौकरी के आयोग्य घोषित करना लैंगिग भेदभाव माना जाएगा।

अनुच्छेद 17 में यह दलित को भी महिलाओं के अधिकार की रक्षा के लिए बनाया गया जिसमें किसी लड़की व महिला से उसकी जाति, बिरादरी या धर्म के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता। स्कूल, कॉलेजो काम व पूजा की जगह, रेल, बस जैसे सार्वजनिक स्थानों पर किसी को अस्पृश्य मनाना असंवैधानिक है इस अधिकार की सुरक्षा के लिए सिविल अधिकार, संरक्षण अधिनियम, 1955 एवं अनुसूचित जातिजनजाति अधिनियम 1989 बनाया गया।

अनुच्छेद 19 – यह महिलाओं को यह अधिकार देता है कि वह देश के किसी भी हिस्से में नागरिको की हैसियत से स्वत्रंता के साथ आ जा सकती है व्यवसाय का चुनाव भी स्वत्रंत रूप से कर सकती हैं

अनुच्छेद 21 और 22 – यह प्राणदेहिक स्वत्रंता और संरक्षण के अधिकार की व्यवस्था करता है इसमें स्त्री एवं पुरूष को इज्जत से जीने का मौलिक अधिकार संविधान द्वारा दिया जाता है।

अनुच्छेद 23– शोषण के विरूद्ध मौलिक अधिकार के अंतर्गत मनुष्यों में अनैतिक व्यापार पर प्रतिबंध लगाया गया है। यह नारी की गरिमा की रक्षा करता है महिला को खरीदना–बेचना डरा धमका कर वैश्या वृत्ति कराना, भीख मंगवाना आदि दंडनीय अपराध है।

अनुच्छेद 24 – इसमें 14 साल से कम उम्र के लड़के व लड़कियों को जोखिम पूर्ण कार्य में लगाना अपराध है।

अनुच्छेद 39 – राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत के खंड में कहा गया है कि राज्य स्त्री और पुरूष के समान कार्य के लिए समान वेतन की नीति निर्धारित करें आर्थिक क्षमता और विकास की सीमाओं के अनुसार सबको काम और शिक्षा पाने का समान अधिकार है।

अनुच्छेद 42– महिला श्रमकों के लिए प्रसुति सहायता का निर्देश और वित्तीय सहायता देना।

अनुच्छेद 51– प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य होगा की वह ऐसी प्रथाओं का त्याग करें जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध है।

अनुच्छेद 325, 326– निर्वाचक नामावली में महिलाओं और पुरूष को समान रूप से मत देने और चुने जाने का अधिकार देता है।

20 सूत्रीय महिला कार्यक्रम 1980

(क) परिवार नियोजन को ऐच्छिक आधार पर प्रोत्साहन।

(ख) महिला कल्याण तथा गर्भवती महिलाओं एवं धात्री माताओं के पोषाहार कार्यक्रम को गति।

(ग) 6–14 आयु वर्ग में विशेषकर लड़कियों में प्राथमिक शिक्षा का प्रसार करना।

पंचवर्षीय योजनाओं में विशेष कार्यक्रम – ग्रामीण विकास पोषाहार स्वास्थ, शिक्षा एवं साक्षरता परिवार कल्याण, प्रशिक्षण, निर्धनता, बेरोजगारी, उन्मूलन, सामाजिक सुरक्षा में महिला हित पर विशेष ध्यान।

शिक्षा और साक्षरता से संबंध कार्यक्रम – लड़कियों के लिए विद्यालय व महाविद्यालय की स्थापना व्यवसायिक तकनीकी एवं उच्च शिक्षण संस्थानों में आरक्षण, नामांकन के अंको में छूट छात्रावासों का निर्माण, छात्रवृत्ति की व्यवस्था, शिक्षिकाओं का प्रशिक्षण यातायात की सुविधा।

महिला पुरूष समानता के लिए 11वीं योजना में पांच सूत्रीय कार्यसूची

1. आर्थिक सशक्तिकरण सुनिश्चित करना।
2. सामाजिक सशक्तिकरण को साकार करना।
3. राजनैतिक सशक्तिकरण में सहायता करना।
4. महिलाओं से संबंधित कानूनों का कार्यगार कार्यान्वयन करना।
5. महिलाओं को मुख्यधारा में लाना तथा सेवा प्रदायगी व्यवस्था में सुधार करने के लिए संवैधानिक व्यवस्थाएं करना।

(स्त्रोत – ग्याहरवीं पंचवर्षीय योजना 2007–12, वाल्यूम–2)

महिलाओं से संबंधित कानून –

1. **विशेष विवाह अधिनियम 1954–** इस अधिनियम द्वारा दो भारतीयों को चाहे वे किसी धर्म या जाति के हो न्यायालय की सहायता से विवाह कर सकते है।
2. **हिन्दू विवाह अधिनियम 1955–** इस अधिनियम द्वारा जम्मू कश्मीर को छोड़कर सभी जातियों के स्त्री एवं पुरूषों को विवाह एवं तलाक का अधिकार दिया गया।
3. **हिन्दू विधवा विवाह अधिनियम 1956**
4. **हिन्दू उतराअधिकार अधिनियम 1956** – इस में स्त्री पुरूषों की सम्पत्ति में समान उत्तराधिकार प्रदान किये गए।
5. **हिन्दू नाबालिग तथा संरक्षण अधिनियम 1956 –** पिता की मृत्यु के उपरांत माता को संरक्षक बनने का अधिकार दिया गया।
6. **हिन्दू दत्तक ग्रहण भरण पोषण अधिनियम 1955–** इसमें गोद लेने और स्त्रियों तथा उनके अश्रितों के भरण पोषण की व्यवस्था है।

अनैतिक व्यापार निरोधक अधिनियम 1956 – एक व्यवसायिक यौन शोषण के उद्देश्य से अवैध व्यापार की रोकथाम के लिए यह अधिनियम 1956 प्रमुख कानून बना इसमें अवैध व्यापारियों को कठोर सजा का प्रावधान है एवं भारतीय दंड सहिंता की धारा 361, 363, 366, 367, 370, 372, 373, के अनुसार ऐसे अपराधी को 7 साल से लेकर 10 साल तक की कैद और जुर्माने की सजा भुगतनी पड़ती है।

दहेज निरोधक अधिनियम 1961– दहेज प्रथा रोकने के लिए इसे पारित किया गया 1984 और 1986 में दहेज निरोधक अधिनियम 1961 में संशोधन कर कठोर बनाया गया है दहेज के विरूद्ध अपराध संज्ञेय गैर जमानती है तथा अभियुक्त को ही यह प्रमाण देना होता है कि वह निर्दोष है।

औषधियों द्वारा गर्भ गिराने से संबंधित अधिनियम 1971– कुछ ऐसी परिस्थितियां होती जिसमें स्त्री का गर्भपात कराया जाना उसके अहित में नहीं होकर उसके हित में रहता है। जैसे ऐसी किसी स्त्री का गर्भपात करवाना जो उसकी इच्छा के विरूद्ध बलात्कार का परिणाम हो अथवा ऐसी स्थिति हो जिसमें महिला की शारीरिक स्थिति को गर्भपात नहीं करने की स्थिति में नुकसान या हानि पहुँच सकती है या परिवार सीमित रखने का उद्देश्य हो इस बात को ध्यान में रखते हुए ही सन् 1971 में एक अधिनियम पारित किया गया जिसे **गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम 1971** नाम दिया गया।

समान परिश्रमिक अधिनियम 1976– इसके अंतर्गत समान कार्य हेतु महिलाओं को भी पुरूषों के समान परिश्रमिक देने का प्रावधान है।

स्त्री अवशिष्ट रूपण (प्रतिबंध) अधिनियम 1986– इस अधिनियम के अंतर्गत किसी भी महिला को इस प्रकार चित्रित नहीं किया जायेगा जिससें उस महिला की सार्वजनिक नैतिकता हो आघात पहुँचे।

इस अधिनियम में फिल्म सेन्सर बोर्ड के गठन का प्रावधान किया गया जो ऐसी फिल्मों पर रोक लगाएगा जिनमें महिलाओं की मर्यादा भंग होती है इस अधिनियम में संशोधन के प्रस्ताव मंत्री मंडल के विचार कर संशोधन हेतु व्यापक स्तर पर परामर्श किये जाने का निर्देश दिया।

सतीकृत्य निवारण अधिनियम 1987 –

परिवार न्यायालय अधिनियम 1984 –

प्रसवपूर्ण निदान तकनीकी अधिनियम 1994 – इसमें गर्भावस्था में बालिका भ्रूण की पहचान कराने पर रोक लगाई गई है।

73वां एवं 74वां संविधान संशोधन 1993 – इस अधिनियम के द्वारा महिलाओं को त्रिस्तरीय पंचायतों में एक तिहाई आरक्षण प्रदान करने का आरक्षण है महिला आरक्षण विधेयक 2008 विगत् वर्ष 9 मार्च 2010 को 14 वर्ष के लंबे अंतराल के बाद राज्य सभा में 186–1 के मंतातर से पास हो गया जिसमें महिलाओं को लोक सभा तथा राज्य विधान सभाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण मिला है।

राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम 1990– इसमें महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के लिए उपचारात्मक कार्यवाही करना, लोक अदालतें आयोजित करना महिला कैदियों को न्याय दिलाना, चुनाव प्रक्रियाओं में महिलाओं की भागीदारी महिला की प्रौद्योगिकीय शक्ति सम्पन्नता के लिए कदम उठाना, विधवाओं के पुनर्वास के लिए प्रयास करना। अल्पसंख्यक महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करना, वैश्याओं तथा उनके बच्चों के पुनार्वास खोलना।, संचेतना कार्यक्रम लाना।

(डेबिड मुर्म्2010 : 26–10)

सार्वजनिक सामाजिक सुरक्षा अधिनियम 1945 –

यौन उत्पीड़न रोकथाम अधिनियम 1997 (अगस्त) – महिलाओं के कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से संरक्षण का अधिकार प्रदान करने लिए विधेयक का प्रारूप राष्ट्रीय महिला आयोग और इस क्षेत्र में कार्य कर रहे सुप्रतिष्ठित महिला संगठनों के परामर्श से तैयार किया गया है जिसमें कार्यस्थल पर महिलाओं के साथ अपमान जनक व्यवहार आशोभनीय कृत्य आते हैं।

बालिका दशक 1991–2000 –

- पिता की जायदाद में बराबरी का अधिकार 2005 सितम्बर
- **घरेलू हिंसा रोकथाम अधिनियम 2005 –** यह अधिनियम 13 सितम्बर 2005 को पारित किया गया एवं 26 अक्टूबर 2006 में लागू किया गया हैं। इस के अंतर्गत महिलाओं के साथ शारीरिक हिंसा, लैगिंग हिंसा, मौखिक और भावनात्मक हिंसा, आर्थिक हिंसा आदि पर रोकथाम हेतु यह अधिनियम लागू किया गया।
- मातृत्व अवकाश 120 दिन से बढ़कर 180 दिन कर दिया गया है यह सितम्बर 2008 से लागू किया गया।
- वायु सेना में महिलाओं को स्थाई कमीशन 2010 मार्च।
- लिव इन रिलेशनशिप मार्च 2010
- यदि तलाक बिल बना तो पत्नि को भी पति की सम्पत्ति में आधा हिस्सा 2012 मई।
- महिला सुरक्षा के लिए 1000 करोड़ का निर्भया फंड और एक महिला बैंक बनाने की पेशकश 2013 फरवरी।
- बच्चों की देखभाल का अवकाश – इसमें बच्चें की 18 वर्ष की आयु तक कभी भी 2 वर्ष तक का अवकाश दिया जा सकता है। यह अभी केन्द्रीय कर्मचारियों के लिए है।

शासन की अन्य योजनाएं –

- महिलाओं तथा लड़कियों के लिए अल्पावास गृह 1969
- कामकाजी महिला छात्रावास योजना 1972।
- समेकित बाल विकास सेवाएं 1975 – इस में किशोरी शक्ति योजना किशोरी के प्रति पोषण कार्यक्रम गर्भवती महिलाओं की पोषण एवं टीकाकरण कार्यक्रम
- महिलाओं पर अत्याचार रोकने के लिए प्रशिक्षण 1982
- ग्रामीण क्षेत्रीय महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम 1982–83
- रोजगार प्रशिक्षण कार्यक्रम 1987
- महिला समृद्धि योजना 1993
- इंद्रिरा महिला योजना 1995

निष्कर्ष – इस प्रकार महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के लिए संवैधानिक तरीक एवं कानून लागू करना प्रर्याप्त नही बल्कि उसकी जानकारी एवं उचित रूप से उसे उपयोग करना आवश्यक है महिलाओं में, समाज में जागरूकता लाना , शिक्षित करना आवश्यक है तो कानून की जानकारी का अभाव का प्रतिशत महिलाओं में ज्यादा है यदि कानून की जानकारी भी है तो महिलाओं में मानसिक रूप से इतनी समर्थ नहीं होती है कि वे अधिकारों का उचित उपयोग कर सके। अत: महिलाओं में कानूनों की जानकारी एवं महिलाओं को मानसिक रूप से इसे लागू करने हेतु एवं अन्याय के खिलाफ आवाज उठाने के आत्मविश्वास विकसित करना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मुर्मू, डेविड (2010) महिला एवं कानून सं डॉ.ए.पी.साहू, जर्नल फॉर सोशल डेवलपमेंट, रॉची, वोल्यूम–2 संख्या जनवरी–मार्च
2. त्रिपाठी डॉ.रेणु (2008)– महिला सशक्तिकरण: वायदे और, हकीकत, रोहित पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्रथम संस्करण
3. गुप्ता एम.एल.एवं शर्मा डी.डी.2001 सामाजिक मानवशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा।

****

वृद्धजनों की सामाजिक समस्याऐं

डॉ. मंजुला अलान्से *

प्रस्तावना – विगत कुछ दशकों में प्रत्येक राष्ट्र की जनसंख्या में वृद्धजनों की संख्या में काफी वृद्धि हुई है, और साथ ही उनके प्रति समाज का दायित्व भी बढ़ा है। अब वृद्धावस्था को विश्वस्तर का एक सामाजिक तथा मानवीय मामला समझा जाने लगा है। असल में वृद्धावस्था मानव विकास की ऐसी अवस्था है, जिसमें शारीरिक क्षमतायें घट जाती है। परिणाम स्वरूप शारीरिक, मानसिक, पारिवारिक एवं आर्थिक समस्याओं का जाल चारों ओर बिछ जाता है। वृद्धों की इन समस्याओं को संयुक्त राष्ट्र में सबसे पहले 1948 में उठाया गया। 1982 में वियना में विश्व वृद्ध सम्मेलन आयोजित किया गया। वर्ष 1999 में बुजुर्गों के सम्मान में 'अन्तर्राष्ट्रीय वृद्ध वर्ष' घोषित किया गया। भारत में बुजुर्गो के हित में सन् 1999 में राष्ट्रीय नीति बनाई गई तथा उनके सम्मान हेतु राष्ट्रीय वृद्ध वर्ष मनाने का निश्चत किया ताकि वृद्धावस्था की समस्याओं के प्रति जनता में जागरूकता पैदा हो तथा स्वस्थ समाज निर्मित हो। स्वतंत्रता के पश्चात बुजुर्गो की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। 1901 में 1.2 करोड़ थे जो 1951 में 5.1 करोड़ हो गए। सन् 2000 में इनकी आबादी 7.57 थी। तथा 2025 तक 14.61 करोड़ हो जाने का अनुमान है। देश में 80 वर्ष से अधिक आयु वाले लोगों की संख्या 36.3 लाख है। करीब 80% तक वृद्ध ग्रामीण क्षेत्रों में निवास कर रहे हैं। करीब 38% गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन कर रहे है। देश में हर दिन करीब 17 हजार लोग 60 वर्ष की उम्र के हो जाते है, हर दिन करीब 6500 बुजुर्गो की मृत्यु हो जाती है, लेकिन फिर भी 10500 बुजुर्ग भारत में रोज बढ़ रहे हैं। लेकिन आमदनी का कोई नियमित साधन नहीं है और न ही कोई पारिवारिक या सामाजिक सुरक्षा। भारतीय सामाजिक परम्परा व इतिहास में 'वृद्धों' की समाज में उच्च स्थिति थी, बड़े बूढ़ो के उपदेशों और निर्देशों से ही संयुक्त परिवार संचालित होता था, किन्तु तेजी से बदलते परिवेश के साथ ही 'वृद्धावस्था' अपने आप में एक जटिल समस्या बन गई।

वृद्धजन के लिए बने कानून–

1. द मेंटनेंस एंड वेलफेयर ऑफ पेरेंटस एण्ड सीनियर एक्ट 2007।
2. पेंशन योजना 1999
3. द केयर सेन्टर
4. वृद्ध आश्रम
5. वृद्धो हेतु कल्याणकारी योजना 1992।
6. विभिन्न समाजसेवी संस्थाएँ।

वास्तव में इन्हें कानून नहीं संवेदना की जरूरत है।

वृद्धजन की समस्यायें – 'जिंदगी की ढलती सांझ में थकती काया और कम होती क्षमताओं के बीच हमारी बुजुर्ग पीढ़ी का सबसे बड़ा रोग असुरक्षा व अकेलेपन की भावना है।' वैश्वीकरण के इस दौर में वैज्ञानिक, आर्थिक व तकनीकी का बहुत विकास हुआ है, जिसका प्रभाव हमारी समाज व्यवस्था के आधार स्तम्भ, मूलभूत संस्था 'परिवार' पर पड़ा। टूटते परिवारों का प्रभाव बुजुर्गो पर ज्यादा पड़ा। उनकी सामाजिक व आर्थिक समस्याऐं बढ़ने लगी तथा कोई भी वर्ग इससे अछूता नहीं रहा। जवानी में जरूरतों की परवाह किये बिना, पेट काटकर अपने बच्चों को बड़ा किया, बुढ़ापे में वे ही उन्हें बेसहारा छोड़ रहे है। बच्चों के स्वार्थ लालच, दगाबाजी व खुदगर्जी ने बुजुर्गो को अकेला और निराश कर दिया है। जीने की आरजू तक इनके मन से निकल गई है। और अब प्रतीक्षा कर रहे है, अपने मरने की।

आज हमारे जन्मदाता ही एक विकट सामाजिक समस्या के रूप में चिंतनीय हो गये है–इससे बड़ी विडम्बना और क्या हो सकती है, जिस देश में राम और श्रवणकुमार जैसे मातृ–पितृ भक्त बेटों की गाथा बडे ग़ौरव से बार–बार दोहराई जाती रही हो, वही माता–पिता अपने बच्चों के लिए एक समस्या बनकर रह गए है।

कुछ ही वर्ष पूर्व तक इस तरह की समस्या की चर्चा मात्र अशोभनीय समझी जाती थी, लेकिन पिछले कुछ वर्षो से यह समस्या जटिल रूप में सामने आई है। लगभग सभी परिवारों में वृद्धों के लिए कुछ न कुछ सूनने को मिल ही जाता है। कुछ असहाय वृद्ध अपने ही घर में अपनापन नहीं पाते है, दुत्कार झेलते हुए, अपमान का कड़वा घूंट पीते हुए किसी तरह दिन काटने को मजबूर है और कोने में पड़े–पड़े तरस–तरसकर जिंदगी काट रहे है। अपनी पीड़ा भी जाहिर नहीं कर पाते हैं, क्योंकि बहू–बेटों का डर बना रहता है। यदि वृद्धों को कोई व्यसन हो तो खर्च मिलना मुश्किल होता है। बीमार होने पर तत्काल उनको डॉक्टर को नहीं दिखाया जाता। ज्यादातर मामलों में उनके साथ उपेक्षा बरती जाती है।

ऐसे कुछ उदाहरण देखने को मिले है, जहाँ वृद्धों के पुत्र सही समय पर अपने बलबूते पर आर्थिक उपार्जन में कमजोर निकले या बेरोजगार रह गए हो, ऐसे वृद्धों का बुढ़ापा बहुत सकंटग्रस्त रहता है। पुत्र ही बार–बार अपनी समस्याओं का बोझ वृद्ध पिताओं पर डालकर उनसे ही अधिकाधिक सहयोग की अपेक्षा करते है। ऐसे वृद्धदम्पत्ति जो अपने जीवनसाथी को खो चुके है उन्हें बहुत दु:खी पाया गया। शहरी जीवन की आपाधापी तथा परिवारों के घटते आकार तथा बिखराव ने समाज में बुजुर्गो की तमाम समस्याओं को बढ़ा दिया है। भावनात्मक असुरक्षा के कारण ही बुजुर्गो में तनाव व चिड़चिड़ापन, उदासी व बैचेनी जैसी समस्याऐं उत्पन्न होती है और बेटे–बहू की दया पर जीने के अलावा उनके पास कोई विकल्प नहीं होता। वृद्धों को संभालने की जिम्मेदारी भी पुत्र एक–दूसरे पर डालने का प्रयास करते रहते हैं, ऐसी स्थितियां वृद्धों को मानसिक यंत्रणाओं के अतिरिक्त कुछ नहीं देती।

पीढ़ियों का अंतराल – वास्तव में पिछले कुछ वर्षो में न जाने कहां से ऐसा जलजला सा आ गया, जिसने चारपाई–पीढ़ा तो क्या, उनके पांवो तले की धरती तक छीन ली गई है। देखते ही देखते आयु का गौरव लुप्त हो गया, यह

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) भगतसिंह शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जावरा, जिला – रतलाम (म.प्र.) भारत

गौरव अब लांछन सा बन गया है। वृद्धजन व्यक्ति न रहकर विकराल महामारी बन गया है। जैसे यह समस्या प्रकृति ने बरबस ही समाज पर थोप दी है। .....बेकार वस्तु की तरह।

समाज की नवपीढ़ी ने खींच तानकर इसको इतनी विकट समस्या बना लिया है, कि हम बहुत संवेदनहींन हो गए है, हमारे भीतर से ममत्व, अपनेपन और आस्था के संस्कार ही लुप्त होते जा रहे हैं। अनास्था, तिरस्कार और उनको सिर पर बरबस थोपा हुआ बोझ मानने की यह प्रवृत्ति आज युवा वर्ग को बड़ी तेजी से जकड़ती जा रही है। पीढ़ियों का अन्तराल एक स्वाभाविक स्थिति है। नई पीढ़ियों के आचरण, व्यवहार, मान्यताऐं और विचारों में भिन्नताएँ होती है, क्योंकि समय व परिस्थितियों में काफी परिवर्तन आ गया है। पुरानी पीढ़ी अपने समय के सिद्धांतो से प्रतिबद्ध है, और उन सिद्धांतो से हटकर किसी भी आचरण से सहमत नहीं रहती। जबकि नई पीढ़ी को उन सिद्धांतो के प्रति विशेष आस्था नहीं रहती। अत: पीढ़ियों में मतभेद उत्पन्न होना स्वाभाविक है। अनेक ऐसे प्रकरण इस संबंध में विवाद का कारण बनते है। नई पीढ़ी अपने में ही जीती है। इन स्थितियों का मूल कारण है, वर्तमान परिस्थितियों का प्रभाव। टी.वी., मोबाईल, इन्टरनेट, गाड़ियां, नये ढंग के रहन-सहन, भौतिक वस्तुएँ, बच्चों की शिक्षा, उपभोग के आधुनिक संसाधन जैसी अनेक जरूरतें बढ़ रही है, जिस पर आय का अधिकतम हिस्सा खर्च करना पड़ता है।

वृद्धजन की हठधर्मिता- देखने में आता है, कि वृद्ध अपना वश चलते अपने अधिकारों की मुठ्ठी को जरा भी ढीली छोड़ने को तैयार नहीं होते, विशेषकर आर्थिक स्तर पर तो कदापि नहीं। वृद्धजन समाज की घटित-अघटित घटनाओं या स्थितियों को आधार बनाकर सहसा ही उल्टे सीधे ढंग से सोचने लगता है, ऐसे में वह बच्चों को तो क्या, वह स्वयं अपना विश्वास ही खोने लगता है। अक्सर रिटायर होते ही वे कहने लगते है-अब तो अपने लिए कोई आश्रय खोजना ही होगा....। कहीं न कहीं ठोर-ठिकाने की जुगाड़ करना पड़ेगा .....बच्चे तो कुछ करने से रहे....आज कल के छोकरों का क्या भरोसा।

ऐसे नकारात्मक वक्तव्य बच्चों के मन में उनके प्रति कर्त्तव्यनिष्ठा का भाव जगाने की जगह अविश्वास व नफरत के बीज बो देता है। पूर्वाग्रहों से ग्रस्त और मानसिक कुंठाओं से जकड़े वृद्धजन भी कम जिद्दी नहीं होते। अपने सारे दु:खों व तकलीफों के जिम्मेदार वे स्वयं होते है, उनका दंभी स्वभाव, अड़ियलपन, अधिकार का अहम्, क्रोध, चिढ़चिढ़ापन व जिद बच्चों के लिए कठिन परीक्षा वाली स्थिति पैदा कर देती है।

वृद्धजन तलाशे सकारात्मक सोच- बुजुर्गों के लिए काम करने वाली संस्था हेल्प एज इंडिया के कम्यूनिकेशन एण्ड पब्लिकेशन विभाग की ज्वाइंट डायरेक्टर सोनाली कुलकर्णी कहती हैं, 'बुजुर्गों' को किसी काम के साथ जोड़ने की आवश्यकता है। वृद्धजनों के लिए जमाना नहीं बदलेगा, उन्हें खुद को अपने लिए कुछ करना होगा। अगर व स्वेच्छा से किसी काम में जुड़ते है, तो वे सक्रिय रहेंगे और जीने का मकसद मिलेगा। इस तरह उनकी दूसरों पर निर्भरता भी खत्म होगी। आवश्यकता इस बात की है, कि वृद्ध अपना नजरिया बदलें और नवीन परिस्थितियों के साथ ताल मेल बैठायें।

चाहे जो भी हो हम इस बात से इंकार नहीं कर सकते कि बुजुर्गों की सुरक्षा हमारा दायित्व है। राष्ट्रीय नीतियां कितनी ही क्यों न बनें अंतत: उनका पालन व देखरेख हमारा दायित्व है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वृद्धावस्था का सच-विमला लाल, कल्याण शिक्षा परिषद जटवाड़ा, दरियागंज नईदिल्ली।
2. भारतीय सामाजिक समस्याऐं-डॉ.ए.आर.एन. श्रीवास्तव।
3. ओल्ड ऐज-सिमोन द बउवा।
4. नटराज सार्थक संकेत-नटराज समाज विज्ञान शोध संस्थान बड़वानी अंक- अक्टुबर 2013
5. नईदुनियाँ-29 सितम्बर 2013

****

शिक्षक - शिक्षण एक विचार

डॉ. मधु गौतम *

प्रस्तावना – वर्तमान में जो शिक्षण, शिक्षक द्वारा दिया जा रहा है वह पूर्णत: व्यवसाय स्वरुप है जिसके द्वारा आदमी ढाले जा रहे है। शिक्षक वह है जो पुरानी अर्जित सूचनाओं को नई पीढ़ी तक पहुंचाने का कार्य कर रहा है। पहले कभी गुरु हुआ करते थे शिक्षक तक आते आते उनकी हैसियत कम हो गई, और फिर आज संभावनाएँ भी बदल गई है क्योंकि 15-20 वर्ष पहले जो शिक्षित हुआ था वे अपने विद्यार्थियों से पीछे रह जाता है क्योंकि नित नया कुछ हो रहा है। लगता है शिक्षक का आश्वस्त रुप अब ज्यादा दिनों का नहीं है।

परिस्थितियां बिल्कुल बदल गई हैं अब विद्यार्थी केन्द्र में और शिक्षक परिधि पर होगा, ऐसे में स्वयं को पुनरायोजित करना आवश्यक है जिसमें शिक्षक और विद्यार्थी के बीच की खाई बड़ी न हो। शिक्षक को अपना पूरा चेहरा, अपने पूरे व्यक्तित्व की परिकल्पना को ही बदल देने की जरुरत आ गई है। अन्यथा दो वर्गो के बीच का संघर्ष बढ़ता ही जाएगा। सही अर्थो में युवक का होना भी एक नई घटना है, क्योंकि युवक पहले था ही नहीं। पुरानी व्यवस्था में बच्चों को सीधा वृद्धावस्था में प्रवेश करा देते थे। बीच का अन्तराल जिसमें वह युवा होता विकृत हो जाता था। इसलिए बगावत होने का प्रश्न ही समाप्त हुआ। किन्तु आज के युवा विद्यार्थी के लिए शिक्षक को उसका मित्र होना होगा, उसे पुरानी जो सारी परिकल्पनाऐं है शिक्षक के आस पास वह छोड़नी और नई परिकल्पनाऐं विकसित करनी है जो अब तक नहीं थी।

आज तक हमने 'यसमैन' पैदा किये है, उसमें एक फायदा होता था कि समाज की जो व्यवस्था थी वह इन हॉ कहने वालो की वजह से कभी बदलती नहीं थी लेकिन नुकसान बड़ा था कि समाज विकसित नहीं होता था। इस दुनिया में जितना विकास हुआ है वह ना कहने वालों की वजह से हुआ है। दिशा चाहे कोई भी रही हो चाहे वह विज्ञान हो, गणित हो, दर्शन हो। नये शिक्षक का महत्वपूर्ण कार्य सिर्फ ज्ञान देना नहीं होगा बल्कि अज्ञात का बोध देना भी होगा क्योंकि बच्चे कल वहाँ होंगे जहाँ हम कभी भी नहीं रहें। अंग्रेजी में शब्द है एजुकेशन, जिसका मतलब होता है 'टू ड्रा आउट' यानी भीतर कुछ है उसे बाहर निकाल लेना लेकिन आज की शिक्षा वह जो भीतर है उसे बाहर नहीं निकालती बल्कि बाहर जो है उसे भीतर डालती है 'टू पुश इन' इस तरह विद्यार्थी सूचनाएँ एकत्रित करने का यंत्र भर बनकर रह जाते है।

हमारे शिक्षण संस्थान सिवाय स्मृति के, परीक्षा में और कुछ भी नहीं जांच पाते और स्मृति का अच्छा होना बुद्धि के अच्छे होने का जरुरी लक्षण नहीं है। अक्सर बहुत अच्छी स्मृति वाले लोग बहुत गहरी बुद्धि वाले नहीं होते क्योंकि स्मृति बिल्कुल मैकेनिकल है। स्मृति का संबंध अतीत से है जब कि बुद्धि का भविष्य से। वर्तमान शिक्षक के सामने प्रश्न होगा कि वह विद्यार्थियों को स्मृति का पांडित्य न दे क्योंकि अब युग कम्प्यूटर का है जो जमाने भर की स्मृतियों को संजोकर रख सकता है।

आप क्या सीखा रहे है ? आप सीखा रहे हैं कि प्रशंसा करो, प्रतिस्पर्धा करो, स्तुति भी करो, तुम आगे आओ अर्थात् आप अंहकार सीखा रहे हैं कि जो आगे है वह बड़ा है और जो पीछे है वह छोटा है। उधर किताबों में आप कह रहे है कि विनीत बनो, विनम्र बनो, सभी से स्नेह करो और व्यवस्था सीखा रही है कि घृणा करो, ईर्ष्या करो और आगे निकलो, दूसरे को पीछे हटाओ और यहां तक कि आपकी पूरी व्यवस्था उनको पुरस्कृत कर रही है । जो आगे आ रहा है उनको गोल्ड मेडल दे रही है और जो पीछे खड़े है उन्हे अपमानित कर रही है। अपमानित व्यक्ति गलत तरीकों से आगे बढेगा। समाज में विकृतियां आएगी।

आप क्या शिक्षण दे रहे है। आप उदारता, सहानुभूति का पाठ पढ़ाते है लेकिन प्रतियोगी मन कैसे उदार हो सकता है, कैसे सहानुभूतिपूर्ण हो सकता है। अगर प्रतियोगी मन सहानुभूतिपूर्ण हो जाए तो प्रतियोगिता कैसे चलेगी? प्रतियोगी मन कठोर होगा, हिंसक होगा, अनुदार होगा-होना ही पड़ेगा। हमारी व्यवस्था ऐसी है कि कोई व्यक्ति सारी भीड़ को हटा कर आगे जा रहा है उस हिंसक आदमी को हम और तैयार किये जा रहे है। फैक्ट्रियां बढ़ती जा रही है इस तरह की शिक्षा की जिन्हें हम स्कूल कहते है। ये सब बीमार आदमी तैयार कर रही है। हिंसा बढ़ती जाती है प्रतिस्पर्धा बढ़ती जाती है। यह एटम और हाईड्रोजन बम कहां से पैदा हो रहे है ? प्रतियोगिता से प्रतिस्पर्धा से, वह चाहे दो व्यक्तियों की हो या दो राष्ट्रों की।

अनुशासन सीखाने के नाम पर जो वर्षो से चलता आया है वह यह कि हम (शिक्षक) जो कहें उसे ठीक मानों हम ऊपर बैठे तो तुम नीचे बैठो। हम जब निकले तो हाथ जोड़कर प्रणाम करो और ज्यादा हो तो पैर छुऐं। हम कहे बैठो तो बैठ जाओ और हम कहे तो उठो तो उठ जाओ। अनुशासन के नाम पर व्यक्ति को मारने की करतूत है। अब इस सब के बाद उसके भीतर कोई होश रह जाएगा, कोई चैतन्य रह जाएगा क्या। अनुशासन मिलिट्री वाला नहीं, उसकी आत्मा से जागता है, दिल से, मन से जागता है उसे थोपा नहीं जाता उसके भीतर से आता है। उसके विवेक को जगाओ, उसके विचार को जगाओ, बुद्धिहीन मत बनाओ।

आधुनिक शिक्षक में वो क्षमता होनी चाहिये वह उसे अज्ञात में प्रवेश करा सके और यह कार्य निश्चित ही संदेह से हो विश्वास से नहीं, निश्चित ही यह विचार से होगा आस्था से नहीं।

'डिनायल' और 'डाउट' आने वाले शिक्षक के बुनियादी शब्द होंगे। मरे हुए उत्तर नहीं चाहिए। नये शिक्षक का शिक्षण जिज्ञासा की यात्राओं पर निकलने का माध्यम बनना चाहिए, अतीत के उत्तर हाथ में दे देने वाला नहीं। आज के शिक्षक से अपेक्षा कि वह विद्यार्थियों के भीतर सिर्फ बेचैनी, अशांति और तनाव की दुनिया न खड़ी करे, उसके भीतर एक शान्ति, आनन्द और प्रकाश के फूल खिलाने में भी सहयोगी हो जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रचना - पृष्ठ क्र. 51 भारतीय युवा।
2. रचना - पृष्ठ क्र. 58 बदलता परिवेश और उच्च शिक्षा।
3. शिक्षा में क्रांति - ओशो इन्टरनेशनल फाउण्डेशन
4. दैनिक भास्कर - पृष्ठ क्र. 5 दिनांक 11.01.2015

* सहायक प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

A study on Service Quality & Customer Satisfaction on Telecom Service Providers

Dr. Pradeep Kumar Sharma * **Vishwas Sharma** **

Abstract - **Customer satisfaction** is a person's feeling of pleasure or disappointment resulting from comparing a product perceived performance in relation to his experience. A satisfied customer is an asset for any industry whereas a complaining customer if can be satisfied will continue with the organization. The paper is intended to provide information about **Service Quality & Customer Satisfaction On Telecom Service Provider.** There are various successful brand both national as well as foreign brands and again it has been realize that brands are sustaining power to stay in the competitions.

Introduction - India's telecom sector has been doing exceptionally well in the past decades. Its structural and institutional reforms have provided tremendous growth opportunity to this sector. India has more than 600 millions subscribers making it the third largest network in the world after China and the USA. With a growth rate of 45%, Indian telecom industry has the highest growth rate in the world. The first reform in Indian telecommunications sector began in 1980s when the private sector was allowed in telecommunications equipment manufacturing. In 1985, Department of Telecommunications (DoT) was established.

The study mainly purpose at assessing the service quality and customer satisfaction on telecom service provider. It focuses mainly on the strategies as regards products i.e. various products offered by telecom service provider. The strategies pertaining to promotion, pricing and distribution have also been focused. The study also examines assessment of Consumers and Retailers as regards level of satisfaction with product strategies, promotion strategies, pricing strategies and distribution strategies of telecom service provider.

Telecom Industry in India - The telecom industry is one of the fastest growing industries in India. India has nearly200 million telephone lines making it the third largest network in the world after China and USA. With a growth rate of 45%, Indian telecom industry has the highest growth rate in the world. Much of the growth in Asia Pacific Wireless Telecommunication Market is spurred by the growth in demand in countries like India and China.

- India's mobile phone subscriber base is growing at a rate of 82.2%.
- China is the biggest market in Asia Pacific with a subscriber base of 48% of the total subscribers in Asia Pacific.
- Compared to that India's share in Asia Pacific Mobile Phone market is 6.4%.
- Considering the fact that India and China have almost comparable populations, India' slow mobile penetration offers huge scope for growth.

Review of Literature - Debnath (2008) This study explain that the prime focus of the service providers is to create a loyal customer base by benchmarking their performances and retaining existing customers in order to benefit from their loyalty. With the commencement of the economic liberalization in 1991, and with a view to expand and improve telecom infrastructure through the participation of the private sector, the Government of India permitted foreign companies holding 51 percent equity stake in joint ventures to manufacture telecom equipment in India. The Indian Government has announced a new policy, which allows private firms to provide basic telephone services. There had been a monopoly of the state-owned department of telecommunications. However, several companies are expected to benefit from the policy change.

Bhatt (2008), in his study titled "A Study of Mobile Phone Usage Among the Post Graduate Students" analyzed that it is important for mobile carriers, service providers, content developers, equipment manufacturers, as well as for parents and young people alike that the key characteristics of mobile technology is well understood so that the risks associated with its potentially damaging or disruptive aspects can be mitigated. This paper has tried to compare the usage difference by gender with respect to the difference manufacturing and service provider companies.

Kalavani (2006) in their study analyzed that majority of the respondents have given favourable opinion towards the services but some problems exist that deserve the attention of the service providers. They need to bridge the gap between the services promised and services offered. The overall customers' attitude towards cell phone services is that they are satisfied with the existing services but still they want more services to be provided.

* **Prof. (commerce) Govt. Hamidia Arts and Commerce College, Bhopal (M.P.) INDIA**
** **Research Scholar, B. U., Bhopal (M.P.) INDIA**

Seth et al (2008), in their study titled "**Managing the Customer Perceived Service Quality for Cellular Mobile Telephone**: an Empirical Investigation" analyzed that there is relative importance of service quality attributes and showed that responsiveness is the most importance dimension followed by reliability, customer perceived network quality, assurance, convenience, empathy and tangibles. This would enable the service providers to focus their resources in the areas of importance. The research resulted in the development of a reliable and valid instrument for assessing customer perceived service quality for cellular mobile services.

Objectives of the study

1. To study the customer satisfaction towards mobile service providers.
2. To assess the needs, requirements and expectations of the customers in order to assess their current satisfaction levels.
3. To know the attitude, enthusiasm regarding the service provided to customers.
4. To understand the performance of different brands in the market on various parameters like product quality, performance of the customer relationship officer (CRO), service quality, range and selection of products available.

Research Methodology

Data collection - The data is collected randomly irrespective of the category of the people in the form of questionnaire and the sample size is 100 respondents. Because it is a pilot study and due to time constraint the sample size is small.

Sampling - The design for this study is Exploratory and Random sampling

1. Method: - The type of research is explorative. The respondents are selected by adopting a method of random sampling.
2. Size: - The sample size is 200 respondents.
3. Area: - The questionnaires have been distributed among consumers in various area of Indore city.

Tools used for Data Analysis - Analysis has been made on the basis of the responses of the respondents. To arrive at the objectives, statistical tools are used for analyzing the data and information that are percentage, average, Charts, tables, bar diagram, etc.

Results

- 38% of respondents are using Airtel as compared to other service providers.
- 85 % of peoples used prepaid service and only 15 % of people used post paid service.
- Airtel is the most preferred service provider.
- Airtel is being preferred because of its best network service and Brand image as well.
- Airtel is being preferred because of its internet service.
- Airtel has the highest rating of Value for money.
- Most of the users of telecommunication contact to their customers care for activation and deactivation of various services.
- Airtel has been rated as the best service provider for getting queries resolved.

Scope For The Future Studies -

1. The study is done in Indore city. It can be done in other cities also to know the behavior of customers of telecom sectors in other cities.
2. The study can be done with a big sample size for more valid results.
3. In future studies, statistical tools can also be applied to test the hypothesis.

Conclusion - Quality of service and the capability to attract and retain customers utter the success or failure of next-generation communications service providers. In today's competitive environment, customers are swift to abandon services that do not meet expectations. The ease with which customers can change from their current service to another, demands that providers deliver the best possible levels of service quality and performance. To be successful, communications service providers must deliver optimistic customer experiences with rich, value-added services supported by comprehensive service quality management.

References :-

1. Jallet, Frederic, "Yield management, Dynamic pricing and CRM in telecommunications",(http://www.emeraldinsight.com/Insight/view ContentItem.do ; jsessionid=236E2B6B45CF101465D540 FD4401AEB9 ?contentType=Article&hdAction=lnkhtm l&contentId = 1747102&history=true>)
2. Debnath,Roma Mitra, "Benchmarking telecommunication service in India", 2008 (http://www.emeraldinsight.com/Insight/viewContentItem.do;jsessionid=236E2B6B45CF101465D540FD4401AEB9?content Type = Article&hdAction=lnkhtml&contentId=1742535 & history=true>)
3. Robins, Fread, "The marketing of 3G", vol 21, no 6, 2008

Journal -

1. The Indian Telecom Industry, IIM Calutta, Vatsal Goyal, 2007.
2. Investment Surge in the Indian Telecom Space, Times Global, Issue 2, 2008.
3. A multiple-perspective model for technology assessment, vol 3, 2008.

Tables, Graphs and Charts - No. of respondents

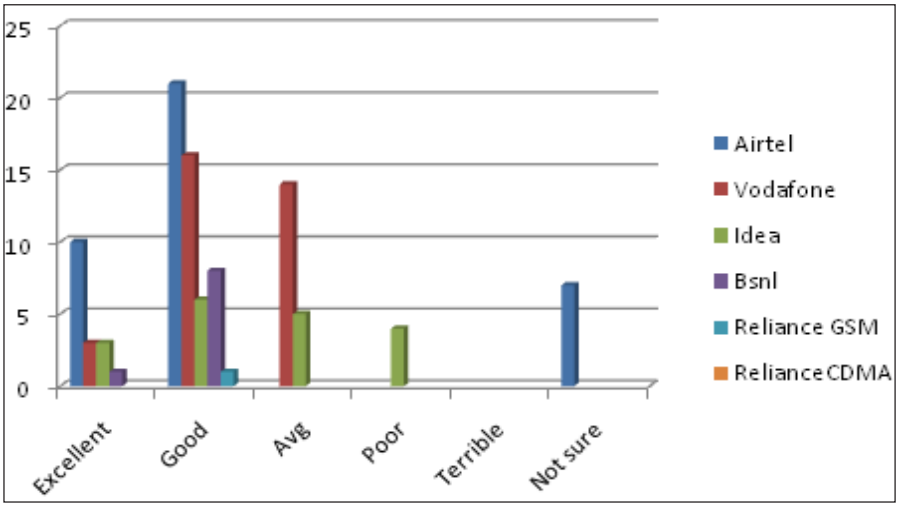
25
20
15
10
5
0
Excellent
Good
Avg
Poor
Terrible
Not sure
Airtel
Vodafone
Idea
Bsnl
Reliance GSM
Reliance CDMA

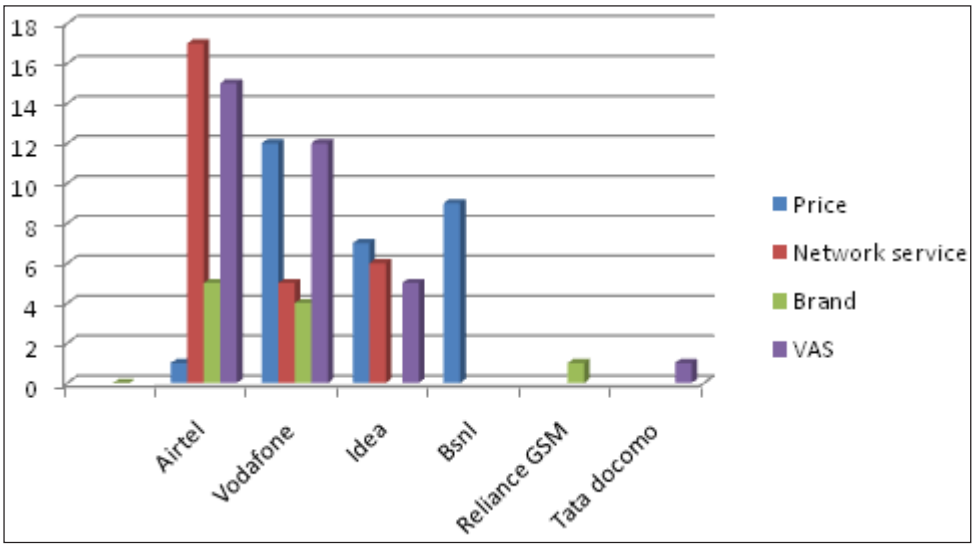
18
16
14
12
10
8
6
4
2
0
Airtel
Vodafone
Idea
Bsnl
Reliance GSM
Tata docomo
Price
Network service
Brand
VAS

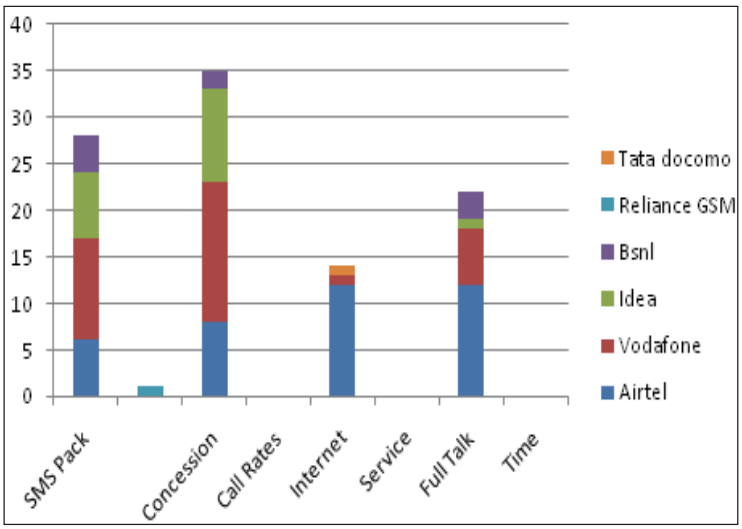
40
35
30
25
20
15
10
5
0
SMS Pack
Concession
Call Rates
Internet
Service
Full Talk
Time
Tata docomo
Reliance GSM
Bsnl
Idea
Vodafone
Airtel

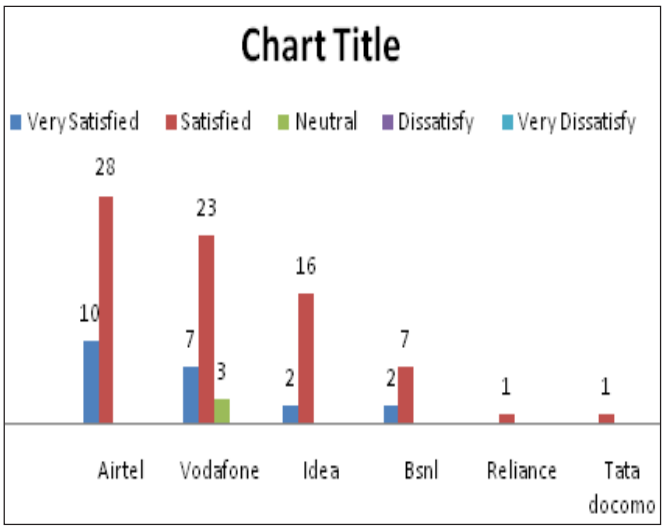
Chart Title
Very Satisfied
Satisfied
Neutral
Dissatisfy
Very Dissatisfy
28
10
23
7
3
16
2
7
2
1
1
Airtel
Vodafone
Idea
Bsnl
Reliance
Tata docomo

FDI In Indian Retail Sector : Issues And Challenges

Dr. Vandana K. Mishra *

Abstract - The impressive and extraordinary growth of FDI in the global economic scenery over the last two decades has made it an essential part of the development strategy of both the developed and developing nations. FDI in retail sector will boost the Indian economy, creating job opportunities in the next few years. Driven by an increasing disposable income, purchasing power and now the much awaited FDI, retail has emerged as one of the fastest growing sectors in India. Moving towards modernization, India's retail sector, currently growing at 30%, and is expected to generate 54,000 jobs over the next five years.

The paper includes growth of retail sector in India, current scenario of Indian retail market & the issues of FDI**.** This paper concludes with the likely impact of the entry of global players into the Indian retailing industry. It also highlights the challenges faced by the industry in near future.

Keywords - FDI, Retail Sector, Single Brand and Multi-Brand Retail Sectors.

Introduction - India is the second fastest growing economy in the world. It is third largest economy in the world in terms of GDP and fourth largest economy in terms of Purchasing Power Parity. India presents a huge opportunity to the world at age, to use as a hub. Standing on the threshold of a retail revolution and witnessing a fast changing retail landscape, India is all set to experience the phenomenon of global village. India is the "promised land" for global brands and Indian retailers A "Vibrant economy". India tops in the list of emerging market for global retailer and India's retail sector is expanding and modernizing rapidly in line with India's economic growth.

On 20th September, 2012 the Government of India has approved 51% FDI in Multi brand retail and 100% (revised) in Single Brand retail sector through Government Route with some riders. There is a mixed response about FDI in retail sector. Still some of the states are either not in favour of the FDI or indecisive on the issue as they feel that FDI in retail is harmful to local retailers in India. Everyone has the reasons for supporting or opposing the issue. Retail is one of the largest sectors of Indian economy the unorganized retail sector in India occupies 97% of the retail business and the rest 3% is contributed by the organized sector. The unorganized retail sector contributes about 13% to the GDP and absorbs 6% of our labour force. Hence the issue of displacement of labour consequent to FDI Retail Sector is of primal importance in India.

Objectives Of The Study

1. To Know and discuss the meaning of FDI & Retail**.**
2. To study the emerging issues in FDI in Indian Retail Sector.
3. To find out the challenges in FDI in Indian Retail Sector.

Research Methodology

Data Collection - This is a descriptive research paper based on secondary data. Data have been collected through the Books, Magazines, Journals, Research Papers and Websites.

Foreign Direct Investment - Foreign Direct Investment refers to capital inflows from abroad that is invested in or to enhance the production capacity of the economy. It can be a subsidiary, joint venture or merger or acquisition and includes Greenfield and Brownfield projects. So, Foreign Direct Investment is an investment made by a foreign company or entity into a company or entity based in another country.

Open economies with skilled workforces and good growth prospects tend to attract larger amounts of foreign direct investment than closed, highly regulated economies. OECD has defined FDI as investment by a foreign investor in at least 10% or more of the voting stock or ordinary shares of the investee company.

Meaning Of Retail - The word retail is derived from the French word retailer, meaning to cut a piece off or to break bulk. In simple terms, it implies a first-hand transaction with the customer.

Retailing can be defined as the buying and selling of goods and services. It can also be defined as the timely delivery of goods and services demanded by consumers at prices that are competitive and affordable.

Indian Retail Sector: An Overview - India represents an economic opportunity both as a global base and as a domestic market. The real GDP is expected to grow at 8-10 percent per annum in the next five years and consuming class with annual Household incomes above Rs. 90,000 is expected to rise from about 370 million in 2006-07 to 620 million in 2011-12. India's vast middle class and its almost untapped retail industry are key attractions for global retail giants wanting to enter newer markets.

* **Assistant Professor, Smt. L.R.T. College of Commerce, Akola (Maharashtra) INDIA**

Current Scenario Of Indian Retail Market - The size of Indian retail industry is more than US $350 billion but it is highly unorganized. The organized sector has started developing in the past few years. Many International brands have entered the market. With the growth in organized retailing, unorganized retailers are fast changing their business models.

According to study conducted by ICRIER, total retail business in India will grow at 13% annually, from US $322 billion in 2006-07 to US $590 billion in 2011-12 and further US $1 trillion by 2016-17.

Chart -1 Size of Indian Retail (in US$ bn)

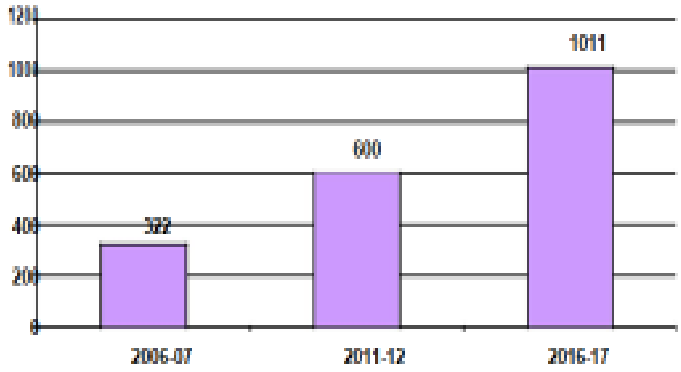

Source: Technopak Analysis, CSO and other sources.

FDI Norms Regulatory controls on FDI have been relaxed considerably in recent years. Currently the government allows 51% FDI in single brand retailing and 100% in cash-n-carry business. However, the government's plan to further open up the retail sector has hit the roadblock after facing strong political opposition and nationwide protests by small traders against the proposal to allow FDI in multi brand retailing.

Division Of Indian Retail Industry -The Indian retail industry is generally divided into two major segments – organized retailing and unorganized retailing.

(a) Organized Retailing - refers to trading activities undertaken by licensed retailers, that is, those who are registered for sales tax, income tax, etc. These include the corporate-backed hypermarkets and retail chains, and also the privately owned large retail businesses.

(b) Unorganized Retailing - refers to the traditional formats of low-cost retailing, for example, the local kirana shops, owner manned general stores, paan/beedi shops, convenience stores, hand cart and pavement vendors etc.

Types Of Retailing In India - In Indian retail Industry there are generally two types of retailing

(A) Single Brand - FDI in Single brand is increased up to 100% in 2011-12. Single Brand implies that foreign companies would be allowed to sell goods sold internationally under a single brand as it is subject to Foreign Investment Promotion Board (FIPB) approval and subject to the conditions mentioned in press note 3 that,

a) Only single brand product would be sold
b) Products should be sold under the same brand internationally.
c) Single-brand product retail would only cover products which are branded during manufacturing.
d) Any addition to product categories to be sold under "single-brand" would require fresh approval from the government.

(B) Multi Brand - The Government has also not defined the term Multi Brand. FDI in Multi Brand implies that a retail store with a foreign investment can sell multiple brands under one roof. FDI up to 51% is now permitted in multi brand retail trading (RBI Notification dated 21/09/12). FDI in Multi Brand retail implies that a retail store with a foreign investment can sell multiple brands under one roof. Opening up FDI in Multi- Brand retail will mean that global retailers including Wal-Mart, Carrefour and Tesco can open stores offering a range of household items and grocery directly to consumers in the same way as the ubiquitous kirana store.

Factors Driving The Growth Or Retail Sector - Indian economy is growing at the rate of 8%, indicating a prosperous future. The consistent economic growth resulted in a decent rise in income level of the middle class. The thickening of the pocket of the consumer resulted in a revolution of the retail industry. Many International brands have entered the market. With the growth in organized retailing, unorganized retailers have brought drastic changes in their business models, many factor are responsible for the growth of retail sector. These are:

1) Increasing disposable income
2) Increasing no. of dual income nuclear families
3) Changing lifestyle and consumer behavior
4) Experimentation with formats
5) Store design

Emerging Issues Of Fdi In Indian Retailing Sector - India is a nation of shopkeepers. The country has around 12 million stores, which means one store for every 100 customers. Retailing in India is at a very interesting era as various factors are bringing about the big bang effect to retail.

- The creation of malls across the country and new high-streets had suddenly urged traditional retailers to modernize themselves.
- Development of retail is happening across tier 1, 2 and 3 cities and this makes chain store retail interesting.
- Now with FDI in retail likely to become a reality, the shopkeepers' landscape will change even further. It's only imperative that the Indian retail has benchmarks

of excellence that will catapult the industry into the global arena.

- The main fear of FDI in retail trade is that it will certainly disrupt the livelihood of the poor people engaged in this trade. The opening up of big markets to foreign-sponsored departmental outlets will not necessarily absorb them; rather they may try to establish the monopoly power in the country.
- The 51% foreign direct investment (FDI) will obviously have a negative impact on small retailers, but it will benefit the consumers as they will have wider choices competitive prices. It will accelerate the retail market growth and provide more employment opportunities.

Challenges - The major challenges which Indian retail sector would face include shortage of skilled manpower, lack of industry status, Policy induced barriers, challenges resulting from Inappropriate planning and forecasting and financial risk due to high and substantial leverage etc. presents a brief elaboration of these challenges.

1. Talent shortage & lack of trained manpower.
2. Supply chains are not yet so efficient and the kind of quality that customers demand is not beingprovided yet.
3. There are too many intermediaries. These long intermediaries' chains are in turn driving up their costs.
4. A plethora of clearances are required for setting up retail outlet. It limits the expansion of retail outlets at a faster pace.
5. Organized sector does not have industry status. It is further making it difficult for the players to raise funds for their expansion plans.
6. Government restrictions on FDI limit are resulting in limited exposure to international best practices.

Conclusion - Debates, discussions and conflicting views exit among policy makers, economists and social thinkers on the issue of estimating the costs and benefits of allowing FDI in both single and multi-brand retail in India. It can be safely concluded that allowing healthy FDI in the retail sector would not only lead to a substantial surge in the country's GDP and overall economic development.

There is need of balanced approach to retail & govt. has to play a very vital role in shaping the future course. Though tradition retail has been performing a vital function in the economy, but it has to shed off its shortcomings and inefficiencies and this is actually happening. Thus, the organized sector is not only impacting the other sectors positively but also it has benefited its own competition i.e. unorganized sector. So, organized sector becomes the growth mantra of Retail sector.

References :-

1. Chandan Chakraborty, Peter Nunnenkamp – Economic Reforms, Foreign Direct Investment and its effects in India, March, 2006.
2. Dr. R. S. Tiwari, (2009), Retail Management ,Retail Concepts and Practices, Himalaya Publication House Pvt.Ltd., Mumbai-400004.
3. Krafft M and Mantrala, Murali K (eds), (2010), Retailing in the 21st Century: Current and Future Trends, US
4. A.T. Kearney's Report on Indian Retail, 2008
5. www.rbi.org.in

****

A Study of Performance Management and Performance Appraisal

Ram Kumar Lodha * Dr. Ummed Singh **

Abstract - Performance management is an integrated process a set for improving performance of organization & it helps the organization to achieve its business goals and performance itself related that how will something is done. In this globalization age to sustain competitive advantage, an organization needs continuous development of people along with better recruitment i.e. every organization need "best performance through better recruited People". Organizations expend a considerable amount of efforts, time and money for motivation and utilization of the employee's talents optimally in the name of performance management as performance management is the backbone of HRM practice in any organization and performance management practice have the capability to determine the motivational level of employees and it is a power instrument to convert employee's potential into performance, and Performance appraisal is the process of estimating or evaluating the quality of employee's performance on the job.

Key word - Performance management, performance appraisal, Review, performance management system (PMS), managers, employees.

Introduction - As per Oxford English Dictionary the definition of performance is given as "The accomplishment, execution, carrying out, and working out of anything ordered or undertaken, means doing the work along with achieving of result.

As per Bernadin et *al* (1995) and Kane (1996) performance was defined as simply the outcomes of work; But within this completive and rapidly changing environment. Human Resource & performance of theirs are seen as being the key to success of an organization.

According Hendry et *al* (1997), Performance management is a systematic approach to improving individual and team performance in order to achieve organizational goals. It is owned and driven by line management

As per Brumbach (1988) Performance means both behaviors and results. Behaviors come from the performer and transform performance from abstraction to action Not just an tool for results, behaviors are also outcome in their own right, the product of mental, physical effort applied to task and can be judged apart from result.

As per Michael Armstrong (2012) performance management is a systematic process for improving organizational performance by developing the performance of individuals and team. It is a mean of getting better results by understanding and managing performance within an agreed framework of planned goals,standards,and competency requirements. It focuses people on doing the right thing by clarifying their goals.

Whereas performance management; a set of process to improve the performance of organization & its employees .It facilitates performance improvement, career development & training. Performance appraisal is an integral part of the performance management which is a comprehensive approach to ensure a link between efforts of individual employee with vision and the goals of the organization.

Objectives

- To compare between performance appraisal and performance management
- To find out the benefits of performance management
- To discover the opportunities for improvement, in individual employee.
- To study the performance management

Concept of performance management - The performance management is a process of establishing performance standards and evaluating performance in order to arrive at objective employee's decision.

Suppose if you are a manager and you have to evaluate your employee's performance then you have to use a careful appraisal process that can help to improve an employee's performance and when you apply effective process in your organization the result will come surely. But when you have to keep in mind that the delivering critical feedback during a review of performance can demotivate the people in question instead of motivating them. So it is to, some extent, difficult to evaluate the employee's performance accurately and judging between star and slacker employees. So it is important to customize performance review for top talent, average contributor and poor performers. That's why it is important that managers will have to try traditional review along with modern innovative techniques with 360 degree feedback.

Aim and benefits of performance management -

* Research Scholar, Career Point University, Kota (Raj.) INDIA

** Research Supervisor & Ex. Sr. Faculty Member (B.Adm.) Govt. Commerce College, Kota (Raj.) INDIA

- It aligns individual's objectives to organizational objectives and always encourage employees.
- It provides direct linkage between Employee and employer.
- It adopts a systematic approach which is holistic and integrated business wide.
- It provide opportunities for employee to identify his goal and to develop his skills and competencies.
- It adds value to the business and to relationship within the business.
- It establishes a high performance culture in which individuals and team take responsibility for the continuous improvement of business processes.
- It emphasizes upon the resource based view of an organization.
- It empowers, motivates and rewards employees to do their best.
- It reflects a concepts of TQM in it. Deming agreed that an employee's performance is more a function of thing lime training, communication, tools, and supervision.
- It is driven by corporate purpose and value.
- It obtains solutions that work.
- It focuses on changing behavior rather than paperwork, It also focuses on future performance planning and improvement.
- It is based on accepted principles but operates flexibly.
- It is what managers do, a natural process of management.
- It provides the basis for regular and frequent dialogues between managers and individuals about performance and development needs.
- It develops appropriate reward and punishment strategies to modify behavior.
- As per shields (2007) a performance management system has a fourfold purpose.
- Strategic communication- Always convey to employees what a good job is being done.
- Relationship building –Always try to create a better work relationship.
- Employee development –Always provide performance feedback as a basis for the joint analysis of strengths, weakness and area for improvement.
- Employee evaluation- Always do assess the performance appraisal as a basis for making decision on job reassignment, promotion or performance related reward.

Performance management system - The development of a performance management system (PMS) involves selecting and describing the components of the system i.e. pms. As per Michael Armstrong (2012) following are the components of PMS.

- Performance Planning and agreement.
- Goal setting personnel development planning.
- Feedback and performance review.
- Performance analysis, assessment and rating link to performance pay, coaching, and administration.

Performance appraisal - Performance appraisal is the process of evaluating the employee's performance on the job in term of the requirement of the job. It may be called merit rating or employees evaluation. It is used as basis for a placement decision involving promotion, demotion, transfer, retention in the job and it may be used in policy of training and development. It is a significant tools of effective performance management.

As per P. Jayapraksh Reddy (2013) following are the guiding principles which will enhance the utility of performance appraisal.

- A good rating programme should include all levels and categories of human resource.
- Raters should be trained and selected carefully and instructed thoroughly.
- All factors and terms should be understood by the raters adequately and evaluation should be viewed in its psychological, sociological and technical framework with proper accuracy.
- A reward should always follow good performance and there should be clear cut relationship between appraisal plan and the organization's policies relating to training, promotion, transfer etc.

Performance Review - As per Oxford Advance Learner's Dictionary, Review is a carefully examination of something, with the intention of changing it, if necessary.

It may be surprising that one review, an average employee may be working hard whereas, and other known best may be slacker. So always conducting good performance review as an ongoing process, it should not be one time event.

In effective feedback, managers always rely on direct observation and objective data instead of hearsay. It should be provided individual resource of training, developmental counseling, job replacement etc. to fix any problem that managers have identified.

Type of review

There are three type of review for poor, average and top performers.

- Handling the poor performer-always be as specific as rater can about what is wrong and how it can be fixed. Managers will have established objective criteria if you have to fire the employee next time.
- Coping with for the average performer-In this world max population are of average people. Not everyone become star so always motivate the average to improve and let him know how he can improve his performance and what the reward will be for improvement. Watch out personal pleading, because many times people have a genuine and temporary crisis in their life.
- Recognizing Excellence- To reinforce the star performance always commend the excellent performer in detail. Make the rewards for star performer and let them know they have gratitude and full support from managers' side. Make the review an opportunity to draw the person out

on how they can contribute to the firm more efficiently and effectively.

But there are some limitations of performance appraisal. Some appraisers evaluate not only employees but the job as well and such appraisals become faulty on account of some personal bias

An Important Limitation of Such appraisals relates to the possibility of halo effect, where the person to be rated has some previous impressions upon the appraiser that effect the current judgments. It is operated a top down formal process and is largely a bureaucratic system having superficial nature.

Conclusion - It is some time assumed that performance appraisal is same as performance management, but there are significant differences. Performance Appraisal is a formal assessment and rating of individuals by the managers, whereas performance management is a continuous and very wide, more natural and also more comprehensive process of management that clarifies mutual expectations and support from management.

A comparison is given below in a tabulated form to justify above conclusion.

Table 1: Comparison between performance appraisal and performance management

S.N.	Performance Appraisal	Performance Management
1	Top down assessment	Joint process through dialogue
2	Annual appraisal meeting	Continuous review
3	Use of rating	Rating less common
4	Monolithic system	Flexible process
5	Focus on quantified objectives	Focus on values and behaviors as well as objectives
6	Open link to pay	Less likely to be direct link to pay
7	Bureaucratic complex paper work	Documentation kept to a minimum
8	Owned by the HR Department	Owned by line mangers

References :-

1. Armstrong Michael (2012), Armstrong's Handbook of HRM Practice, Kogan Page Ltd., London
2. Bhattacharyya Dipak Kumar, (2012), HR Research Methods, Oxford University Press, New Delhi.
3. Devendra Agochiya, (2014), Every Trainer's Handbook, SAGE publications India Pvt. Ltd., New Delhi.
4. Harvard Business School Press (2007), Managing Performance to maximize Results, HBSP, Boston.
5. Joshi Manmohan, (2013), Human Resource Management, Downloaded free eBook at bookboon.com
6. Reddy R. Jayaprakash, (2013), personnel management, APH Publishing Corporation New Delhi.
7. Stephen P. Robbins, David A. DeCenzo, Sanghmitra Bhattacharyya, Madhushree Nanda Agarwal, (2011), Essentials of Management, Dorling Kindersley (India) Pvt. Ltd., New Delhi.
8. Sudha G.S. (2009), Human resource management, MBA Edition, RBD, Jaipur
9. www.en.wikipedia.org
10. www.improsys.in
11. www.istd.co.in
12. www.nssresearchjournal.com

****

Impact Of Ethics In Human Resource Management

Deepika Shrivastava *

Abstract - HRM is a business function that is concerned with managing relations between groups of people in their capacity as employees, employers and managers. Inevitably this process may raise questions about what the respective responsibilities and rights of each party are in this relationship and about what constitutes fair treatment. These questions are ethical in nature and this paper will focus on debates about the ethical basis of HRM.
Keywords - Ethics, HRM ,organization goals

Introduction - HRM can be understood in simple terms as employing people, developing their resources, utilising, maintaining and compensating their services in tune with the job and organizational requirements with the view to contribute to the goals of the organization, individuals and the society. 'OR' HRM is the process of planning, organizing, directing and controlling human activities to achieve the organizational goal and individual goals.

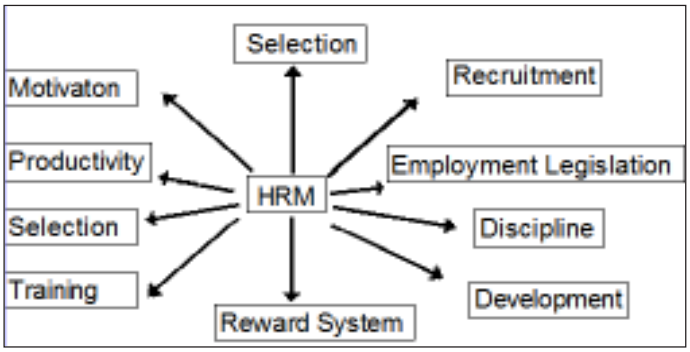

Objective -

- To understand the concept of HRM.
- To understand the ethics in HRM
- To Identify the HR ethical issues
- To suggest some future advantage to promote the fairness and justice in an organisation.

Meaning Of Ethics - Ethics are those values, which Ins been imbibed within an individual on reinforced externally that help him to distinguish between right and wrong and to act accordingly. There can be several sources of ethics like religion, organizational culture, legal obligations etc.

Ethics In Hrm - Ethics in HRM indicates the treatment of employees with ordinary decency and distributive justice. The ethical business contributes to the business goals as the employees will feel motivated and they will work with efficiency and effectiveness. Ethics in HRM basically deals with the affirmative moral obligations of the employer towards employees to maintain equality and equity justice.

Areas of HRM Ethics -

- Basic human rights, civil and employment ûght. (E.g. Job security, feedback from tests.
- Safety in the workplace;
- Privacy:
- Justifiable treatment to employees. (E. g. Equity and equal opportunity):
- Respect, fairness and honesty based process in the workplace.

Importance Of Ethics In HRM -

- Legal Consideration
- Company reputation & Brand awareness
- Employee Loyalty
- Promoting Ethics
- Social behavior & Expectations.

Role Of HR In Promoting Ethics -

- Improve recruitment and selection tests
- Follow the recruitment policy that is identification of the recruitment needs, monetary aspects, criteria of selection and preference etc.;
- Follow the situational factors such as economic factors, social factors, technological factors etc.;
- Selection must be in planned manner;
- Avoid illegal questions.

2. Conduct Ethics Training - It is a short term process of training given to the I-IR of the organization to do their work in adherence to the ethical code of conduct. The main advantages are increased productivity, higher employee morale, less supervision, less wastage, etc.

3. Ensure that there are no pitfalls in performance appraisal - Performance appraisal should be factual and there should not be any partially or bias in the attitude towards the employees.

4. Rewards and disciplinary system
5. Improve and facilitate two way communication
6. Avoid any kind of discrimination among the employees based on certain factors like caste, colour, culture, religion, appearances etc.
7. Equal opportunities must be given to every employee for his advancement and development.
8. Measures should be taken for employee safety while working in the organization.

*Asst. Professor (Commerce & Management) Career College, Bhopal (M.P.) INDIA

Unethical Practices of HRM

1. Employers -

- Creating split in union leaders;
- Biased attitude in selection, transfer, promotion etc.;
- Off-shoring and exploiting 'cheap' labour markets;
- Child labour;
- Reneging on company pension agreements;
- Physical violence;
- Coercion;
- Longer and inflexible working hours;
- Putting on more stress on employees for increasing the productivity;
- The use of disputed and dubious practices in hiring and firing of personnel.

The perception of consumers' about the company '5 based upon the ethics of the company.

Eventually, based upon the perception about the company, the investors will affect its' share price. Similarly, it has been suggested that poor standards of conduct emanating from the top management affect employee motivation and commitment to organisational goals.

2. Employees - Some of the common problems are-

- False claim of personal details like age, qualification etc.
- Producing false certificates.
- Taking decisions as per their convenience.

3. Government -

- Announcing the vacancies and not taking any action further.
- Functioning of government offices is not transparent and reliable.
- Selection committers will be excessively cautious of reservation quotas and possible court cases rather than gaining through the responsibilities.

Hr Ethical Issues - Ethical issues abound in HR activities. Areas of ethical misconduct in the personnel function include employment, remuneration and benefits, labour relations, health and safety, training and development, and HRIS (hr ethical issues)

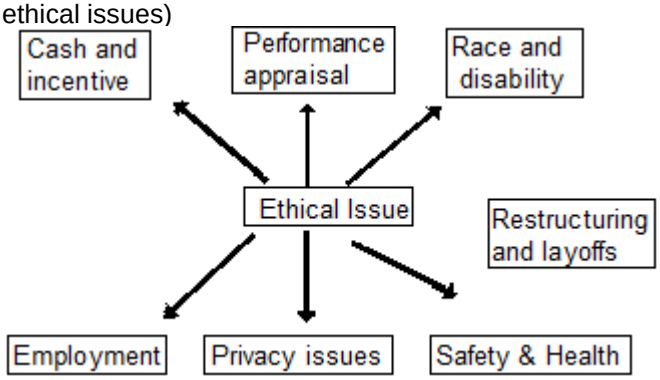

Cash and incentives plans - This includes base salaries, annual incentive plans, long term incentive plans, executive perquisites, and separation agreements.

Base salaries - The HR function is often presumed to justify a higher level of base salaries, or a higher percentage increase than what competitive practice calls for.

In some cases, pressure is exerted to re-evaluate the position to a higher grade for the purpose of justifying a larger than normal increase.

Annual incentive plan- The HR manager is often forced to design and administer top-management incentive plans, at higher raters than what the individuals deserve. A common rationale presented to the HR executive for bending the rules is the fear of losing the outstanding executives, if higher incentives are not paid.

Long-term incentive plan- Just as with annual incentive plan, many HR executives have the responsibility of designing and administering the firm's long term incentive plans, but in consultation with CEO and an external consultant. Ethical issues arise when the HR executive is put to pressure to favor top management interests over those of other employees an investors

Executive perquisites- Executive perquisites make the ethical standard of the HR executive difficult because their cost is often out of proportion to the value added.

For example a story relates to Bangalore -based ,losing making public sector undertaking whose CEO spend 20 lakh to get swimming pool built at his residence.

Performance Appraisal - Performance appraisal lends itself to ethical issues. Assessment of an individual's performance is based on observation and judgment. HR manager are expected to observe the performance in order to judge its effectiveness. Ethics should be the cornerstone of performance evaluation, and the overall objective of high ethical performance reviews should to provide an honest assessment of the performance and mutually develops a plan to improve the ratee's effectiveness.

Race, Gender, Age, and Disability - The practice of treatment of employees according to their race, ethnic origin, sex, or disability has largely been stopped. A framework of laws and regulations has evolved that has signiûcantly improved work place behavior. No enterprise today dare to publicly state it denies minorities, woman, and the disable opportunities for employment, remuneration, and growth prospects different from those given to others.

In this environment the role of HR function is to:

- Monitor the principles and norms of the enterprise to ensure that they reflect the values of the society as expressed in its law.
- Monitor the selection, rewards, development and, the appraisal system to ensure that they are consistent with the principles and norms.
- Vigorously pursue violations and, when necessary, vigorously work to defend the enterprise against unfounded allegations.

Employment Issues - While discrimination and harassment situation receives mort publicity, HR practitioners are more likely to face ethical dilemmas in the areas of employee hiring. One challenge commonly encountered is pressure to hire a relative o a friend of a highly placed executive.

Another area related to employment is that of faked credentials submitted by a job applicant. While discovery of

this kind of fabrication usually leads to termination of the employment, the choice becomes difficult when the applicant has a blend of skills set and a proven track record with his or her previous employers.

Privacy issues - Privacy issues to protecting a person's private life from intrusive and unwarranted actions. The employee believes that his or her religious, political, and social believes as well as personal life style are private matters and should be safe guarded from being snooped or analysed. Exceptions are permitted grudgingly only when job involvement is clearly involved. For example, it may not be inappropriate to intrude into an employee's private matter if it is suspected that he or she discusses with competitor, through email messages, the specification of newly developed product not yet launched into the market.

Safety and health - Much of the industrial work is hazardous. This is because of the extensive use of high speed and noisy machinery, production processes requiring high temperature, an increasing reliance on chemical compounds .Accidents, injuries and illnesses are likely to occur under these circumstances. Over past decade, new categories of accident and illness have emerged, including the fast growing job safety problem of office injuries.

Restructuring and Layoffs - Restructuring and consequent layoffs have become relevant because of poor management, but incompetence does not become unethical. There are ethical implications in the process by which termination decisions are made and actions taken. For example if restructuring requires closing a plant , the process by which that plant is chosen ,how the news will be communicated ,and the time frame for completing the layoffs are ethically important .If conducted in an atmosphere of fairness and equity and with dignity of the affected individuals in mind, the action is ethical.

Ethical Dilemmas - Several ethical dilemmas comfort an HR manager. The ethical dilemmas arise from three sources-faces to face ethics, policy ethics, and functional area ethics.

Face to face ethics - These arise mainly because there is a human element in most business transactions. Business is composed of this human transaction; it should not be surprising that face to face ethical dilemmas arise often. It is likely that the quality assurance man overlooks minor defects and approves a lot delivered by a supplier because of the personal relationship that the two enjoy.

Corporate policy ethics - Companies are often faced with ethical dilemmas that affect their operations across all departments and divisions. The consequences of employment contraction in labour intensive basic industries because of the improved methods of production .Modern technology has replaced older methods of production which has in turn resulted in hundreds being jobless. The ethical burden of deciding corporate policy matters normally rests upon a company's HR management. The Hr manager and directors are responsible for making policies and implementing them too. The ethical content of their policies can have enormous impact throughout the company. It can set an ethical tone and send right signals to all employees as well as external stakeholder.

Functional area Ethics - Functional area of a business is likely to comfort ethical issues. Accounting is a critical function of any business. Accounting statements reveals to the manager and owner the ûnancial soundness of a company. Managers, investors, regulating agencies, tax collectors and trade unions rely on accounting data to make decisions. Honesty, integrity accuracy are absolute requirements of the accounting functions. Account standard ensure a high level of honest an ethical accounting disclosure. Ethical dilemmas crop up in purchasing departments where strong pressure is to obtain the lowest possible prizes from suppliers and where too felt similar need it bag lucrative contracts. Bribes, kickbacks, and discriminating pricing are temptation to both parties.

Conclusion - The HR manager who is a member of the top management team can influence and sometimes bring about changes in the ethical culture of the organisation.

As an HR Manager we are ethically responsible for promoting and fostering fairness and justice for all employees and their organizations. Following points must be considered to promote the fairness and justice in an organization:

l. The organisation must realize the intrinsic value of its employees.
2. Treat people with dignity, respect and compassion to foster a trusting work environment free of harassment, intimidation and unlawful discrimination.
3. Giving opportunities to the employees equally to develop their competency skills.
4. Bring in the feeling of owning the organization, within employees so that the employees would be committed towards the organization.
5. Laying down such policies and procedure which will ensure equitable treatment for all.
6. The individual goals on an employee must be streamlined with the organizational goals. Individual goal of an employee should not obstruct him to achieve the organisational goals.
7. The organization must be fair and honest to its staff. Decision taken by the management must be ethical and legal.

References :-

1. Resource Management Institute. [n.d.). Ethics. Ethics.Retrieved November21, 2013,from http://www.hrmi.org/ethics:.html
2. Rose, A. [n.d.). Ethics and Human Resource Management. Mc-Grow Hill Higher Education.
3. November 21,2013,from http://highered. mcgrawhill.com/sites/free/0077111028/536508/EHR CO2.pdf
4. S, K. (n.d.). Ethics in Hr. Iosdoumats web site. Retrieved November 21, 2013, from http://www.iosrjournals.org/osr-jbm/papers/ncibppte-volume-1/2003
5. Sternberg, E.(2000) Just business: Business ethics In action. Oxford University Press Great Britain.

Role of Information Technology in Insurance Industry

Dr. Rakhi Saxena *

Abstract - Insurance industry is facing a major economic and competitive challenge. To succeed in the rapidly developing business climate insurers are forced to investigate ways by which they can improve end product efficiency and drive top-line growth, and still meet and go beyond the expectations of their customers. The use and application of information technology in insurer's operations has a direct impact on the productivity of resources, and huge impact on reducing the cost of various activites,this paper focus on the uses of Information technology in Insurance Industry.
Keywords - Information Technology,organisation,Resources

Introduction - In the current scenario as we know very well that the volume of transaction is very large in insurance organization .The data and information are to be stored for a longer period because insurance contracts are long term . The insurance organization have the network all over . The countries even in The foreign countries . Moreover the transactions are of recitative nature . Therefore it has become necessary to seek the help of machines to process the data .

Objectives -

- Explain the application of information technology in insurance Industry
- Describe the need for information technology in insurance Industry
- Discuss the role of information technology insurance Industry.

Application of Information Technology in Insurance Industry - Today, information technology is applied in almost all the sectors, such as, engineering, medicines, and soon. One such sector is the insurance sector.

The evolutionary technological changes in the last decade has revolutionised the entire insurance sector. With greater competition among insurers, providing a better service has become a matter of concern Additionally, customers are getting more and more sophisticated and inclined towards technology, so they do not want to accept the current value proposals, and prefer personalised interactions and better service.

Managing the customer intelligently is extremely significant for the insurer, especially in the competitive environment of today. Different set of rules and strategies need to be applied by the companies for different customer segments. insurers need to capture customer information in an integrated system, for enhancing personalised interactions. With the increased use of internet and better access to direct policy information, better techniques need to be developed to provide customers a truly personalised experience. Personalisation facilitates organisations in producing new revenue through cross selling and up selling activities, and in reaching their customers with more impact. Many organisations incorporate knowledge database-repositories of content to ensure that the customers receive personalised information. This is done by installing a search engine. Which helps the customers to locate all document and information related to their queries. Customers use the database to mange their products or the company information, clam records, and histories of the service inquiry These products also use the customer's information, when determining the significance of the customer's search request. Information technology enhances the speed and competence with which underwriters assess new applicants, and analyse aspects of their lives affecting the carrier's proposed financial risk.

Need for Information Technology in Insurance Industry- Today insurance industry is heading towards an exciting phase. Liberalisation and globalisation started allowing international players in the insurance sector. As many private and international players enter the insurance business, customers have a wide choice of insurance companies to do business with. Fundamental changes taking place in customer profile, is changing the life style of brand loyalty. In order to survive in insurance industry, modern insurers are focusing mainly on customer-centric relationship.

The insurance sector which was nationalised in 1950s was also liberalised in 1999, by Malhotra committee. After Insurance Regulatory and Development Authority (IRDA) Act in 1999, the first private sector business was started in 2001. Currently 15 players are ruling life insurance sectors, and 11 players are ruling non life insurance sectors. This expansion is mainly due to the technological enhancements in insurance sector. In 1985, information technology represented 52 percent of the total capital investments made by insurance sectors.

Effective utilisation of information technology is very important for the success of insurance sector. Insurers adopt technology for information revolution. Customers can choose from a wide range of innovative products The insurance companies use the applications of information technology for better customer service, cost reduction, product design and development New technology offers insured persons, a faster access to products Insurance sectors are being modernized by new technologies. Computing technology and network technology together form today's information technology. Advanced computer devices provide multimedia facilities in this sector. The need of information technology in insurance business is growing day by day. Insurers need

*Asst. Professor (Commerce & Management) Career College, Bhopal (M.P.) INDIA

to use information technology for the following reasons -

Developing New Products - Insurers must develop new products, which are based on forward-looking designs. Insurers must address their challenges by introducing innovative products. Companies must constantly develop products, in order to meet the upcoming changes in consumer requirements. Understanding the customer better enables the insurance organisations to develop the correct products, determine the rates correctly, and increase the profits. Presently, life insurers are focusing on the new pension plans, and non-life insurers are trying to enrich the market shares.

Management of Client Data - Insurance companies need to use new technologies to maintain accurate client information records. They need to use information technology to store and retrieve client personal details, policy details, claim details and

Marketing of Policies - Insurance companies can market their policies using new technology like the mobile phone and internet. They can describe the salient futures of their products and enables customers to choose products they need. They can expand their customer base using information technology.

Claims Management - for any company ,paying recording claim's data is a crucial responsibility for maintaining its financial stability .Information technology plays a critical role in insurance ,for recording claim's particulars and sharing information with claims inspectors and beneficiares.Advanced computer devices ensure that significant data remains reachable and updated.

Payment of Premiums - Insurance companies can use information technology like internet and ECS system to collect premiums from their customers.

Improve the efficiency of their operations - By using information technology, insurance companies can quickly process proposals and dispatch policy documents .Computerisation of payment related modules
pertaining to loans and claims can help to reduce time -lag and ensure accuracy.

Role of Information Technology in Insurance Industry-
The rapid development in information technology are posing serious challenges for insurance organisations.The use of information technology in insurance industry has an impact on the efficiency of the organisation as it reduces the operational costs. After many private players entered the insurance industry the competition in the insurance sector has become immense .Information technology has helped in enhancing the insurance business. Insurance industry uses information technology for internal administration, accounting, financial management, reports and so on.

Indian insurance organisations are rapidly growing as 'technology -driven' organisations, by replacing billions of files with folders of information. Insurers are heading towards the technological enhancements, in order to focus on the key areas of insurance business. Apart form this the role of IT in different fields of insurance like:

Actuarial Investigation - Insurers depend on the rates of actuarial models to decide the quantity of risks which create loss, Insurance organisations are using new technology to analyse the claims and policyholder's data for providing connection between risk characteristics and claims .Development in technology allow actuaries to examine risk more precisely.

Policy Management - Most of the insurance policies are printed and conveyed to policy owners through mail every year. The method of creating documents is accomplished by technicians and typists .In most of the cases, this task is generally completed by using new technology. Customer data is accessed by computer systems and maintained in huge folders in order to renew each policy .To assemble the policies complex software packages are used and to print policies high speed printers are utilised.

Underwriting - Underwriters can use knowledge based expert systems to make underwriting decisions .By using automated systems, underwriters can compare an individual's risk profile with their data and customise policies according to the individual's risk profile.

Front and Operations - CRM (Customer Relationship Management) Package are used to integrate the different function processes of the insurance company and provide information to the personnel dealing with the front end operations.CRM facilities easy retrieval of customer data .LIC is using CRM packages to handle its front end operations.

Conclusion - IT is playing important role in insurance sector and not only this the developments in telecommunication, have enable networking of various computer systems .The computers have been interlinked same office through Local Area Network (LAN) .As the company has many offices all over the country and to facilitate the customers in network called Metro Area Network(MAN) is installed .Through this networking all the branches located in large cities have been interlinked. It is generally done branches. This system has enabled the data policy irrespective of the branch where the policy is underwritten. In this way policyholder is enable to make the payment of premium in any branch to get the receipt immediately.

As the technology is developing very fast the crime rate IT is also increasing and to protect the public interest the Govt. has implemented Indian Information Technology Act 2000 to avoid any crime in IT sector.

References:-

1. Arumuga Vijaykumar (2009), Indian Insurance Sector in 21ST Century: An outlook, Kalpaz Publication India
2. Geroge E Rejda (2009), Risk Management and insurance, Dorling Kindersley, NewDelhi, India
3. Gupta PK. Insurance and Risk management, Himalaya Publishing House, India
4. Sethi Jyostna, Bhatiya Nishwan (2007), Elements of Banking and Insurance, First edition, PHIL earning Private Ltd. NewDelhi
5. Palande.P.S. ShahR.S. Lunawat.M.L. (2003), Insurance in India :Changing Policies and Emerging opportunities, NewDelhi.

E-References :-

1. http://www.objectwin.com/insurance.aspx
2. http://www.icai.org/resource-file13528Module-IV.pdf
3. http://www.objectwin.com/Insurance.aspxRetrivedon8th november,2010
4. http://www.referenceforbusiness.com/encyclopedia/Cos-Des/DatabaseManagementSystem.html

Opportunities And Challenges In Indian Retail Banking Sector

Dr. M. L. Gupta * Dr. R. K. Gupta **

Introduction - "Retail banking is emblematic mass-market banking where individual customers use local branches of bigger commercial banks. Services offered include: savings and checking accounts, mortgages, personal loans, debit cards, credit cards, and so"

A developed banking system is vital for sustained economic development. Banking sector development and growth has gone through numerous twists and turns in the post independence era. Retail banking has always been important in India where banks were nationalized with the objective of reaching the grassroots. Retail banking has been made easy by growth in banking technology and computerization of the banking process. Technological development has been extremely responsible for the rapid growth and spread of retail banking. Retail banking has vast opportunity and challenges in a developing country like India. A.T. Kearney (a global management- consulting firm) recently identifies India as the second most attractive retail destination of 30 developing markets.

Retail banking plays an significant role in mobilizing economic surpluses from consumers and small business firms. With the coming of era of revolution the retail banking has expanded its field of operation; using the means of internet by familiarizing a range of IT related services, telecommunication and electronic data processing.

Furthermore it is one of the fastest and dynamically growing banking services in India contributing 7% to total workforce and 14% to GDP.

Retail banking in india - India is one of the eye-catching destinations for the banking revolution and banks all around the world want to have their banking operations to confine this niche market. This is due to the steady rise in the high income earning middle class and growing purchasing power. The curiosity of literate population towards retail banking has led to many innovations. Introduction and adoption of computer technology in the banking sector has altered the nature of the traditional banking in India. Money can now be transferred in a much faster and easier way. The core banking facility allows us to operate our account by any branch of the same bank. Credit Cards help us to purchase anything without carrying money in our pockets.

The influencing drivers of retail business in india: Following are the major drivers of retail Business in India.

1. Growing number of affluent and protruding middle class people - Approximately 320 million people will be added in the middle-income group in next 15 years.

2. India is a country having youngest and talented population in the world - 70% of Indian population is below 35 years of age which means that there is unbelievable opportunity of 130 million people being added to working population.

3. Literacy levels in india is growing rapidly.

4. New technological advancement - Technological innovations relating to increasing use of credit / debit card, ATMs, direct debits and phone banking have contributed to the growth of retail banking in India.

5. Increasing rate of urbanization - Increasing Urbanization of Indian population is also an important trait influencing the retail banking.

6. Changing consumption tendency - Indian consumers are now shifting from the tendency of purchasing more and enhanced quality to new services and products.

7. Declining treasury income of the banks - The Treasury income of the banks has been on the decline during the last two years. In such a scenario, retail business provides a decent vehicle of yield maximization.

8. Continuously decreasing interest rates - Decreasing interest rates has also contributed to the expansion of retail credit by generating the demand for such credit.

Opportunities and challenges of retail banking in india

1. Retail banking in India has considerable opportunities and challenges. The growth of the middle class is an important contributory factor.
2. Increase in purchasing power of the Indian population would give an enormous opportunity to the retail banking sector.
3. The SEZs will also provide growth chances for retail banking.
4. Retention of customers is going to be a major challenge. Therefore, banks need to highlight retaining customers and increasing market share.

***Professor (Commerce) Govt. P.G. College,Rajgarh- Baiora (M.P.) INDIA**
**** Professor (Commerce) Govt. P.G. College, Baiora Distt. Rajgarh (M.P.) INDIA**

5. Information technology has both opportunities and challenges. Technology has made it possible to deliver services throughout the branch bank network, providing instant updates to checking accounts and swift movement of money for stock transfers. But, this dependency on the network has brought IT department's added responsibilities and challenges in managing, maintaining and optimizing the performance of retail banking networks.
6. KYC issues and money laundering risks in retail banking is yet another important issue.
7. The most remarkable challenge is to develop appropriate pricing mechanism. This issue will be gaining more importance in the near future.

Conclusion - Retail banking is one of the most implausible areas these days to be looked after by the banking industry as it contributes 7% to our GDP and 14% to employment. The increasing population and increase in the middle class earning higher incomes has increased its scope many folds.

References :-

1. Dinesh B. Raghuwanshi, (2009) International Referred Research Journal, January, 2012. ISSN- 0974-2832, RNI-RAJBIL 2009/29954;VoL.III ISSUE-36
2. Gopinath shyamala (2005), Retail Banking Opportunities and Challenges, IBA
3. K. Phanindra Kumar and B. Parashuramulu, (2013) Asian Journal of Multidimensional Research,Vol.2 Issue 5, May 2013, ISSN 2278-4853
4. Madhvi Julka (2013), International Journal of Data & Network Security, Volume 2 No. 1, Feb10, 2013, ISSN 2319-1236
5. Mishra, R. and Prabhu, D. (2010) „Introduction of Retail Banking in India , 1st Edition, New Delhi, India: Tata McGraw Hill.

****

मध्य प्रदेश में नियमित मण्डी का विकास

डॉ. रीतू राजपूत *

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश में लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। भारतीय कृषि की तरह मध्यप्रदेश की कृषि व्यवस्था का अधिकतर भाग मानसून पर निर्भर है। समय के साथ–साथ कृषि सुधार के लिये संसाधन एवं नीति सुधार के कार्यक्रमों को आगे बढ़ाते रहे है। परिणामस्वरूप खाद्यान्न उत्पादन तथा कृषि आधारित उद्योगों के लिये अवसर की संभावना बढ़ी है। इस प्रकार मध्यप्रदेश में स्थापित कृषि उपज मण्डी के नियमन की विवेचना तालिका क्रमांक 1 के अनुसार की गई है।

तालिका 1 – म. प्र. में नियमित मण्डी की स्थिति

वर्ष	नियमित मण्डी की संख्या
1941 – 1950	06
1951 – 1960	85
1961 – 1970	92
1971 – 1980	22
1981 – 1990	17
1991 – 2000	15
2001 – 2010	02

स्त्रोत – कृषि विपणन आर्थिक सांख्यिकी संचालनालय भोपाल

जीवन के एक ढंग के रूप में प्रतिष्ठित है, यह भी स्पष्ट है कि यदि भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाना है तो कृषि विकास को प्राथमिकता देनी होगी।

प्राचीन काल में राज्य उत्पादन के साधनों पर केवल आंशिक नियन्त्रण और सीमित हस्तक्षेप ही रखता था। उस समय लोगों की यह मान्यता थी कि राजा व्यापार करेगा तो राज्य नष्ट हो जायेगा।

समय के परिवर्तन एवं सभ्यता के क्रमिक विकास के फलस्वरूप राज्य को उत्पादन साधनों में अनिवार्य रूप से हस्तक्षेप करना पड़ा। राज्य का कार्य केवल बाह्य आक्रमणों से सुरक्षा करना ही नहीं वरन् देशवासियों का कल्याण करना भी है। इसलिये राज्य उत्पादन के साधनों को विशेष कर कृषि उत्पादन को व्यक्तिगत एवं बड़े कृषकों या व्यापारियों के हाथों में नहीं छोड़ सकता अत: सरकार को कृषि क्षेत्र में हस्तक्षेप करना पड़ता है।

भारत में सन् 1920 के पूर्व कृषकों की स्थिति अत्यंत दयनीय थी कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य प्राप्त नहीं होता था। परिणामस्वरूप कृषि उत्पाद में कमी होने लगी। राष्ट्र के समक्ष एक प्रश्न था कि किस तरह से कृषकों को शोषण से बचाया जाये और उन्हें उनका उचित हक दिया जाये। उस समय की कृषि बाजार व्यवस्था अत्यंत ही दोषपूर्ण थी। कृषकों के शोषण के विभिन्न द्वारा खुले हुये थे। कृषक भयाक्रान्त एवं निरीह प्राणी के समान था। कृषि बाजार में मध्यस्थों की प्रभुसत्ता भी दोषपूर्ण नाप तौल अनुचित ब्याज दर, ऋण वसूली का निकृष्ट तरीका, फसल भुगतान की दोषपूर्ण प्रणाली एवं विवाद की स्थिति में कृषक का पक्ष हमेशा निर्बल रहता था, ऐसी दोषपूर्ण व्यवस्था हमारे भारतीय कृषि के बाजारों मे प्रचलित थी इनके प्रचलित रहने न तो कृषक का नैतिक और आर्थिक स्तर ही ऊँचा उठ सकता था और न ही वह शोषण की गिरफ्त से ही निकल सकता था।

भारतीय कृषि की दयनीय स्थिति के कारण यह महसूस किया गया कि ऐसी व्यवस्था की जाये कृषि एवं कृषक दोनों का उत्थान हो। अत: भारत में नियन्त्रित मंडियों कि आवश्यकता महसूस की गई।

भारत में सर्वप्रथम विपणन संगठन की स्थापना के लिए 1928 में कृषि शाही आयोग एवं केन्द्रीय जाँच करने के लिए समिति ने 1931 में सिफारिश की थी, परिणाम स्वरूप ब्रिटिश सरकार ने केन्द्रीय सरकार को कृषक विपणन सलाहकार नियुक्त किया था। जिसके अथक प्रयत्नों के पश्चात जनवरी 1935 को भारत को विपणन संगठन की स्थापना की गई इस प्रकार भारत वर्ष में नियन्त्रित मण्डियों का प्रादुर्भाव विपणन प्रणाली में उचित सामंजस्य एवं सहयोग की भावना के आधार पर हुआ और इसी आधार पर विपणन प्रणाली में कुशलता प्राप्त की जावें यही नियन्त्रित मंडियों का लक्ष्य रहा है।

मण्डी (नियमित बाजार) का अर्थ – नियमित बाजार को नियमित मंडी कहा जाता है। ये मण्डियाँ राज्य सरकार के विशेष विधान के अन्तर्गत स्थापित होती है। इन विधानों में वर्णित नियमों के अनुसार ही इन मण्डियों में कार्य किया जाता है। कभी–कभी मंडियों की स्थापना स्वायत्त सरकार जैसे – चुंगी, नगरपालिका परिषद, जिला परिषद गाँव के द्वारा भी की जाती है। या उन्हीं के द्वारा भी की जाती है या उन्हीं के द्वारा बनाये गये नियमों के अनुसार ही इन मण्डियों में कार्य किया जाता है।

नियन्त्रित मंडी से तात्पर्य – उस मंडी से है जो सरकार द्वारा पारित कानून के तहत व्यापार के संचालन के लिए स्थापित की जाती है। इनकी स्थापना का प्रमुख उद्देश्य विपणन व्यवस्था में पाये जाने वाली कुरीतियों को दूर करना, विपणन लागत को कम करना, एवं उत्पादक कृषकों को विपणन काल में सभी आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध कराना होता है। ये मंडियाँ पारित अधिनियम के अनुसार कार्य करती है। स्पष्ट है कि वह बाजार जिस पर राज्य सरकार या स्वायत्त सरकार का नियन्त्रण रहता है तथा जिसकी कार्यविधि किसी विशेष विधान से नियमित होती है नियमित बाजार या मंडी कहलाता है।

भारत में नियमित मंडियों का इतिहास – इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्राचीन काल में मनुष्य जंगलों में रहता था और उसे सभ्यता का कोई भी भान नहीं था परन्तु धीरे–धीरे सभ्यता का विकास हुआ और मनुष्य ने खेती करना सीखकर विकास की सीढ़ी पर पांव रखा। इस प्रकार से कृषि ही सभ्यता के विकास की प्रथम सीढ़ी थी। इसके बाद सभ्यता का विकास होता गया और अदल बदल या वस्तु विनिमय का आरम्भ हुआ। इसके बाद मुद्रा के विभिन्न प्रचलित स्वरूपों के क्रमिक विकास के साथ आधुनिक सभ्यता का

* अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, सतवास, जिला–देवास (म.प्र.) भारत

प्रारम्भ और विकास हुआ जिसमें कृषि के विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता देना स्वीकार किया गया और इसके लिए विभिन्न प्रयत्न किये गये क्योंकि सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था और विकास का सर्वोच्च आधार तो कृषि ही है। कृषि के विकास के विभिन्न शुरू किये गये चरणों में एक चरण मंडियों और कृषि बाजारों की स्थापना के साथ प्रारम्भ हुआ और आज की नियमित मंडियों इन्हीं पुरानी मंडियों और कृषि बाजारों के सुधरे हुए रूप में सामने है।

नियमित मंडियों की स्थापना – देश में नियन्त्रित मंडियों की स्थापना की आवश्यकता सर्वप्रथम ब्रिटिश काल में इंग्लैण्ड की कपड़ा मिलों को उचित कीमत पर कपास की पूर्ति हेतु महसूस हुई वर्ष 1986 में प्रथम नियन्त्रित 'कंराजिया कपास मंडी' की स्थापना की गई। सर्वप्रथम अधिनियम 'काटन एण्ड ग्रेन मार्केट लॉ ' 1897 तात्कालीन बरार प्रदेश में नियन्त्रित मंडियों की स्थापना हेतु पारित

मध्यप्रदेश में सबसे कम विदिशा जिले की सिरोज कृषि उपज मण्डी का नियमन वर्ष 1941 में हुआ तत्पश्चात होशंगाबाद जिले की पिपरिया मण्डी का नियमन वर्ष 1942 में हुआ। जबकि वर्ष 2000 के दशक में खण्डवा जिले की पंधाना विकासखण्ड की मण्डी का नियमन वर्ष 2002 में किया गया। वर्ष 1941–50 से 2001–2010 के दौरान कुल 239 कृषि उपज मण्डी की नियमन किया गया है। जबकि सर्वाधिक मण्डियों का नियमन वर्ष 1961–70 के दौरान 92 कृषि उपज मण्डी का नियमन किया गया है। अध्ययन से यह ज्ञात हुआ है कि शासन स्तर पर प्रत्येक तहसील स्तर पर 1 कृषि उपज मण्डी का नियमन किया गया है। जिसमें कुल 239 कृषि उपज मण्डियों में कार्यरत लाइसेंसधारी स्टाकिस्टों की संख्या 26479 कुल दलालों की संख्या 891 तथा तौलने वालों की संख्या 6500 रही है।

सहकारी विपणन – कृषि बाजार संबंधी कठिनाइयों को सहकारी विपणन व्यवस्था द्वारा दूर किये जाने का प्रयास किया गया है। शाही कृषि आयोग के सुझावों के बाद भी ब्रिटिश सरकार ने सहकारी बिक्री को प्रोत्साहन देने के लिये प्रयास नहीं किया। 1954 में ग्रामीण साख सर्वे कमेटी ने पहली बार साख व बिक्री के एकीकरण की विस्तुत रूपरेखा प्रस्तुत की इसके बाद केन्द्र एवं राज्य सरकारों ने सहकारी विपणन को प्रोत्साहन देना प्रांरभ किया है।

भारत में सहकारी विपणन व्यवस्था पिरामिड के आकार का है। राज्य स्तर पर राज्य विपणन संघ, जिला स्तर पर जिला विपणन संघ तथा स्थानीय स्तर पर ग्राम प्राथमिक विपणन समितियाँ है। परन्तु सहकारी साख की भाँति ये एक दूसरे से संबद्ध नहीं होती है। कुछ वस्तु से संबंधित विशिष्ट सहकारी संस्थाएँ राज्य स्तर पर है तो कुछ संस्थाएँ राष्ट्रव्यापी है। अन्य शब्दों में विभिन्न स्तरों पर विद्यमान विपणन समितियाँ पृथक अस्तित्व है।

प्रथम योजनाकाल में सहाकारी विपणन शैशवावस्था में थी, प्रगति की हैं 'वर्ष 1969 तक विभिन्न स्तरों पर सहकारी संस्थाओं स्थिति इस प्रकार थी।' जिसे तालिका क्रमांक 2 में स्पष्ट किया।

तालिका क्रमांक 2 – भारत में सहकारी विपणन समिति

संस्था	1969	2002
केन्द्रीय वस्तु संघ	01	01
राज्य विपणन समिति	25	36
केन्द्रीय सहकारी विपणन समिति	163	2500
प्राथमिक सहकारी विपणन समिति	3342	46000

स्रोत– सूचना प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, 1971–72

तालिका से स्पष्ट है कि सहकारी के क्षेत्र में काफी प्रगति हुई है। सहकारी समितियों ने 1972–73 में 900 करोड़ रूपये की कृषि उपज का विपणन किया इनकी मात्रा बढ़कर 1995–96 में 11500 करोड़ रूपये हो गई। पंजाब, महाराष्ट्र, और गुजरात आदि द्वारा 75 उपज के विपणन में योगदान दिया। राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम कृषि उपज वस्तुओं का उत्पादन, विधायन, संग्रहण एवं विपणन का कार्य सहकारी समितियों द्वारा कराया जाता था। अब यह निगम अपने कार्यक्षेत्र का विस्तार करके इसमें सहकारी डेरी, पशुपालन, मत्स्यपालन और छोटी वनोपज को भी शामिल कर लिया गया है। मूलत: समाज के पश्चात इस निगम ने मार्च 1996 तक 2800 करोड़ रूपये का वित्तीय सहायता उपलब्ध कराया है जो वर्ष 2008–09 में 3300 करोड़ रूपये अनुमानित व्यय रहा है।

मध्यप्रदेश में सहकारिता विपणन – राष्ट्रीय स्तर के साथ–साथ राज्य स्तर पर भी समाज के सभी वर्गो की समान सहभागिता के आधार पर आर्थिक एवं समाजिक विकास करना रहा है।

शासकीय क्रय – सरकार द्वारा सार्वजनिक प्रणाली के अंतर्गत चुनिंदा उपजों के लिये न्यूनतम समर्थन मूल्य तयकर विपणन क्रिया में हिस्सा लिया जाता है। चावल, गेहूँ, तथा मोटे अनाजों के लिये केन्द्रीय वितरण मूल्य की घोषणा को शामिल किया जाता है। बाजार, में एजेंसियों के माध्यम से सरकार का सीधा प्रवेश होता है। चावल और गेहूँ के स्टॉक राज्य शासन द्वारा रखे जाते है। जिनका वितरण सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा किया जाता है। और महत्वपूर्ण कृषि उपजों की व्यवस्थित मूल्य वृद्धि सुनिश्चित करने के लिये सरकारी एजेंसियों द्वारा खुले बाजार में विपणन क्रिया किये जाते है। जिसमें भारतीय कपास निगम, भारतीय राष्ट्रीय कृषि सहकारिता विपणन संघ, भारतीय जूट निगम, ट्रायफेड तथा राज्य स्तरीय संध खुले बाजार का कार्य करते है। इसके अतिरिक्त सरकार किसानों की ओर से विपणन कार्य करने हेतु सहकारिता संघटनों को भी प्रोत्साहित किया जाता है। जिन उपजों पर न्यूनतम समर्थन मूल्य के अंतर्गत शामिल नहीं किया गया उनके लिये बाजार हस्तक्षेप योजना के अंतर्गत हस्तक्षेप करती है। कृषि विपणन के अतिरिक्त कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं पर भी ध्यान दिया है जैसे – श्रेणीयन प्रसंस्करण, भण्डागार, परिवहन तथा वितरण प्रणाली आदि व वर्तमान मध्यप्रदेश में लगभग 28 खरीदी केन्द्र संचालित हो रहे है।

चौपाल – विनियमित बाजार के माध्यम से एक पूर्व निर्धारित मूल्य पर बिक्री को बढ़ावा दिया जाता है। जिसमें बिक्री की बाध्यता के बिना अच्छी गुणवत्ता की उपज उपलब्ध कराया जाता है। सही किसानों को मण्डी के अतिरिक्त वैकल्पिक सुविधा दी जाती है। इसके अंतर्गत 'भारत में 5050 चौपाल के माध्यम 29000 से अधिक के 3.1 मिलियन किसान शामिल है। आई. टी. सी. की 2010 तथा 10000 करोड़ रूपये के विक्रय करोबार के साथ 10 मिलियन किसानों और 11 लाख गावों को शामिल करने की महत्वकांक्षी योजना है।' चौपाल मण्डियों की विद्यमान मूल्यों के साथ–साथ संस्थाओं के मूल्य भी प्रसारित करता है। जैसे स्थानीय ग्रामीण व्यक्ति द्वारा संचालित एवं प्रबंधित मूल्य भी प्रसारित करता है। जैसे स्थानीय ग्रामीण व्यक्ति द्वारा संचालित एवं प्रबंधित इंटरनेट से मौसम फार्म पद्धतियों, जोखिम प्रबंधन, निवेश मूल्य, कृषि उपज के लिये उद्धरित मूल्य तथा विनियमित बाजार के द्वारा सूचना एंव प्रसारण किया जाता है। माँग एवं पूर्ति की बाजार द्वारा मूल्यों का प्रारंभिक निर्धारण किया जाता है।

इसी प्रकार ई–चौपाल सूचना का तीव्र माध्यम है। जिसमें कृषक अपनी उपज के विपणन में श्रम व्यय, बिचौलियों के कमीशन अनाधिकृत व्यय की बचत करता है अर्थात ऐसे व्यय जो नियमित बाजार में करना होता है। साथ ही इलेक्ट्रोनिक तराजू के उपयोग में विश्वसनीयता पाई जाती है तथा भुगतान

तुरंत होता है। 'आई,टी. सी. ने वर्ष 2001-02 में ई-चौपाल के माध्यम से 60000 टन फसल की खरीदी की। जो वर्ष 2004-05 में 180000 टन की खरीदी की गई।'4 इनव्यवस्थाओं के अंतर्गत किसान उपज के आई. टी. सी. के वेयर हाउस या कारखाने में ला सकते है और परिवहन लागत की प्रतिपूर्ति प्राप्त करते है या संग्रहण केन्द्र या संचालक को सौंप सकते है। प्रमुख रूप से सोयाबीन, गेहूँ आदि फसलों को शामिल किया है।

निष्कर्ष - कृषि विपणन के विविधीकरण एवं वाणिज्यकरण के संबंध में रूकावट एवं बाधायें आती है। कृषकों का मानना है कि जो उपज विक्रयार्थ बाजार या मण्डी में जाता हैं। इच्छित मूल्य की अपेक्षा करते है। क्योंकि बाजार के ज्ञान के अभाव के कारण किसानों को निराशा आती है। जबकि वर्तमान बाजार पद्धति विकास पर आधारित न होकर विनियमन पर केन्द्रित है।

कृषि क्षेत्र के विकास के लिए नियमित बाजारों के नेटवर्क संगठित विपणन को बढ़ावा दिया गया। नियमित बाजारों का उद्देश्य किसानों के हितों का संरक्षण और व्यापारियों की विभिन्न कुप्रथाओं को समाप्त करना रहा है। इन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर नियमित मंडियों की स्थापना की गई।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. अहमद सिद्दीकी सादाब, मध्यप्रदेश सम्पूर्ण अध्ययन, 1993, उपकार प्रकाशन आगरा।
2. मित्तल, एच. सी., कृषि अर्थशास्त्र, 1995, साहित्य भवन आगरा.
3. डॉ. शर्मा, दिनेश एवं डॉ. बंजल विष्णु मोहन, विपणन प्रबंध, किताब महल, इलाहाबाद।
4. स्वामीनाथन एस. राष्ट्रीय किसान आयोग, 2005, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार।
5. यादव, सत्यभान, कृषि विपणन प्रभावी व्यवस्था की आवश्यकता, 2001, नई दिल्ली।

****

संगठनों में औद्योगिक संघर्ष के कारण एवं समाधान

डॉ. एस. सी. मूणत * सविता वर्मा ** विनिता तिवारी ***

शोध सारांश – उत्पादन की संपूर्ण प्रक्रिया में कर्मचारी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते है। जब तक कर्मचारी स्वेच्छा से कार्य करने के लिए अभिप्रेरत नहीं होते है, तब तक संगठन अपने लक्ष्यो को प्राप्त नहीं कर सकता है। अत: संगठन में अच्छे औद्योगिक संबंध न हो तो औद्योगिक संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। संगठन को सुचारु रुप से संचालित करने के लिए इसका समाधान आवश्यक हो जाता है।

शब्द कुंजी– औद्योगिक संघर्ष, श्रमिक, नियोक्ता ।

प्रस्तावना – औद्योगिक संघर्ष से तात्पर्य संगठन में कार्य करने वाले श्रमिकों में कार्य के प्रति असन्तोष का होना है। जिसे औद्योगिक अशान्ति तथा औद्योगिक विवाद के नाम से भी जाना जाता है। रिचर्ड ए लेस्टर के अनुसार – उद्योग के अन्तर्गत मानव की चार महान इच्छाएं होती है –स्थायी नियोजन से आर्थिक सुरक्षा, अपने उज्जवल भविष्य की चिन्ता, अच्छा बर्ताव तथा सामुदायिक मान्यता का दृष्टिकोण ।

यदि इन मानवीय इच्छाओं पर जब किसी भी प्रकार से आघात पहुंचता है तो उस स्थिति में मतभेद उत्पन्न होता है। यदि इसे शीघ्र ही दूर करने का प्रयास नहीं किया जाए तो यह स्थिति औद्योगिक संघर्ष का रुप ले लेती है।

शोध का उद्देश्य – शोध का उद्देश्य संगठनों में उत्पन्न औद्योगिक संघर्षो के कारण एवं समाधान का अध्ययन करना है।

शोध की विधि – शोध की विधि दो प्रकार के संमको पर आधारित होती है। प्राथमिक संमक एवं द्वितीयक संमक। इस शोध लेख में द्वितीयक संमको का प्रयोग किया गया है। जिसमें जर्नल, पत्र–पत्रिकाएं तथा इन्टरनेट वेबसाइट शामिल हैं।

शोध परिकल्पना– किसी भी शोध कार्य में पूर्णता एवं सिद्धि के लिये परिकल्पना के महत्व को नकारा नहीं जा सकता है। इस विषय पर निम्न परिकल्पना की गई है। औद्योगिक विकास के साथ ही औद्योगिक संघर्ष में वृद्धि हुई है।

औद्योगिक संघर्ष के कारण–औद्योगिकरण के पूर्व उत्पादन छोटे पैमाने पर होता था ,और एक स्थान पर कार्य करने वाले श्रमिकों की संख्या कम होती थी। इसमें मालिकों एवं श्रमिकों के संबंध बड़े निकट के रहते थे तथा उनमें आपस में मतभेद नहीं पाए जाते थे। आधुनिक औद्योगिककरण ने बड़े उद्योगों को जन्म दिया जिसमें श्रमिकों की संख्या अधिक हो गई और उद्योगो में श्रम –विभाजन अपनाये जाने लगा। मालिकों तथा श्रमिकों के बीच प्रबंधक आ गए जिससे श्रमिकों तथा नियोजकों के दूरी बढ़ गई। श्रमिक और पूंजी दोनों उत्पादन के महत्त्वपूर्ण साधन होते हुए भी दोनों के हित परस्पर विरोधी है। श्रमिक अधिक मजदूरी तथा स्वस्थ जीवन स्तर की इच्छा रखते है तथा पूंजीपति अधिक लाभ प्राप्त करना चाहते है। इसमें दोनों पक्षो में संघर्ष होता है इसके फलस्वरुप औद्योगिक संघर्ष उत्पन्न होता है।

औद्योगिक संघर्ष के मुख्य रुप से दो कारण होते है।

1.आर्थिक कारण 2.गैर आर्थिक कारण

आर्थिक कारण – वे कारण जिससे श्रमिक वर्ग की आर्थिक स्थिति प्रभावित होती है, जैसे मजदूरी, कार्य के घंटे, बोनस ,महंगाई भत्ता, आदि की मांग के कारण उत्पन्न होते है।

1. **मजदूरी –** मजदूरी भुगतान की पद्धित के कारण संगठन में औद्योगिक विवाद की स्थिति निर्मित होती है। जिसमें मजदूरी में कटौती, वेतन भुगतान के समय मासिक या साप्ताहिक तथा दैनिक आदि से संबंधित विवाद शामिल होते है।

2. **मजदूरी की मात्रा –** जब से औद्योगिकरण हुआ है, तब से श्रमिकों की मांगे अधिकांशत: आर्थिक हो गई है। वे अपने जीवन स्तर में सुधार करने के के लिए मजदूरी की मात्रा में वृद्धि की आशा रखते है। न्यूनतम मजदूरी, उचित मजदूरी या वास्तविक मजदूरी , मजदूरी में अंतर मजदूरी के निर्धारण आदि को लेकर श्रमिकों तथा प्रबंधको के बीच विवाद की स्थिति उत्पन्न होती रहती है।

3. **बोनस –** विभिन्न अवसरो पर श्रमिक बोनस की मांग करते है। बोनस के अन्तर्गत बोनस की गणना, बोनस की दर, बोनस की मात्रा, उत्पादकता बोनस, प्रोत्साहन बोनस उपस्थिति बोनस अथवा समय पर बोनस के भुगतान आदि से संबंधित विवाद इसमें उत्पन्न होते है।

4. **कार्य के घंटे–** कारखाना अधिनियम के पूर्व श्रमिको से 16–18 घंटे से अधिक कार्य लिया जाता था। जो औद्योगिक संघर्ष कारणो में से प्रमुख था। कारखाना अधिनियम बनने के बाद कार्य के घंटे में कमी आई है।

5. **अन्य भत्ते–** मंहगाई भत्ते एवं मूल वेतन के अतिरिक्त श्रमिक अन्य सुविधाएं चाहता है। यदि नियोक्ता द्वारा ये सुविधाए श्रमिको को नहीं प्रदान की जाती तो व अन्य भत्तो जैसे चिकित्सा भत्ता, आवासीय भत्ता, शैक्षणिक भत्ता, यात्रा भत्ता आदि की मांग करते है। ये मांगे पूर्ण न होने पर औद्योगिक विवाद की स्थिति उत्पन्न होती है।

6.कार्य की भौतिक दशाएं– श्रमिक जिस वातारण में कार्य करता है, उसका प्रभाव भी उसके ऊपर पड़ता है। यदि कार्यस्थल का वातावरण दूषित होता है तो श्रमिको के स्वास्थय पर बुरा असर पड़ता है तथा उनकी कार्यक्षमता

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
*** शोधार्थी, शहीद पद्यधर सिंह शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

में कमी आ जाती है। कार्य की भौतिक दशाओ में सफाई, प्रकाश, तापमान, खतरनाक मशीनों पर कार्य की सुरक्षा ,स्वास्थ्य की रक्षा जैसे विषयो पर विवाद होते रहते है।

7. कल्याण कारी सुविधाएं– कारखाने के अन्तगर्त विश्राम गृह,शिशु गृह, प्राथमिक चिकित्सा सुविधा, कैंटीन व्यवस्था श्रम कल्याण केन्द्र आदि की व्यवस्थाओं को लेकर भी कई बार संघर्ष होते है।

गैर आर्थिक कारण– श्रम उत्पादन का एक सा नहीं अपितु वह मानव भी है। श्रमिक की अपनी आवश्यकताएं ,इच्छाएं, भावनाएं और विवेक आदि होते हैं। यदि उनके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया जाता है तो श्रमिको के मन पर कार्य एवं नियोक्ता के प्रति विपरीत प्रभाव पड़ता है और उनकी कार्यक्षता में भी कमी आ जाती हैं और यदि उनके साथ उचित मानवीय व्यवहार किया जाए तो उनकी कार्य के प्रति रुचि बढ़ती है और वे पूर्ण लगन एवं मेहनत से अपना कार्य करते है। ऐसे निम्न गैर आर्थिक कारण है जिनसे औद्योगिक विवाद की स्थिति उत्पन्न होती है–

1. सामाजिक कारण – मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज में जन्म लेता है तथा समाज में जीवनयापन करते हुए वही उसकी मृत्यु हो जाती है। औद्योगिक प्रंबधन सामाजिक प्रंबधन का ही एक रुप होता है। अत: समाज में घटित होने वाली प्रत्येक गतिविधियों का प्रभाव श्रमिकों पर पड़ता है। जिससे औद्योगिक वातावरण प्रभावित होता है।

2. मनोवैज्ञानिक कारण– नियोक्ता द्वारा श्रमिको के साथ किया गया बर्ताव, कड़ा अनुशासन, समूहो में संघर्ष ,दोषपूर्ण नेतृत्व आदि ऐसे कारण है जो औद्योगिक विवाद को बढ़ाते है।

3. राजनीतिक कारण– आज जहां एक ओर औद्योगिकरण को बढ़ावा मिला है, वही दूसरी ओर श्रमिक भी राजनीति का सहारा लेकर अपने हितों को सुरक्षित करना चाहते है, वे अनकूल श्रम कानून, श्रमिको के हितो के संरक्षण के लिए नियम बनाना चाहते है। श्रमिक संघो पर राजनीतिक दबाव एवं प्रभाव के कारण श्रम संघो के बीच आपसी मतभेद होते है, जो औद्योगिक विवादो को जन्म देते है।

4. आर्थिक सुधार– आर्थिक सुधार की नीति सन् 1991 से लागू की गई जिससे भारतीय श्रम बाजार में कई परिवर्तन हुए जिनके कारण अधिक श्रम शक्ति, रोजगार के अवसरो में कमी जैसी स्थिति उत्पन्न हो गई । औद्योगिकरण में नई तकनीको का प्रयोग तथा सूचना तकनीकी विकास के कारण श्रमिको का महत्व घट गया जिससे कई विवाद उत्पन्न हुए। अत: कहा जा सकता है कि आर्थिक नीति में परिवर्तन औद्योगिक विवाद का प्रमुख कारण रहा।

5. अधिकारों का उल्लंघन–अधिकारों के उल्लंघन में स्थायी आदेशों, सामूहिक सौदेबाजी , श्रम कानूनो एवं अधिनियमों के प्रावधानो को नहीं लागू करने के कारण भी औद्योगिक विवाद उत्पन्न होते है।

भारत में औद्योगिक विवाद की स्थिति–औद्योगिक विवाद प्रत्येक देश के आर्थिक विकास में बाधक होता है। किसी भी देश का आर्थिक विकास उस देश के औद्योगिक विकास पर निर्भर करता है। इसके लिए आवश्यक है, कि औद्योगिक व्यवस्था सुचारु रुप से चलती रहे और औद्योगिक संबंध बने रहे।

भारत में प्रथम विश्वयुद्ध से पूर्व औद्योगिक संघर्ष नाममात्र थे, परन्तु युद्धकाल में मूल्य वृद्धि, अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ की स्थापना एवं रुस की क्रान्ति ने भारतीय श्रमिकों में चेतना पैदा कर दी जिससे सन्1918 से विवादों व संघर्षो की शुरुआत हो गयी। जो युद्ध के पश्चात् तेजी से बढ़ने लगा। सन्1921 में 396 हड़तालें हुई जिसमें लगभग 6 लाख श्रमिको ने भाग लिया व 70 लाख कार्य दिनों की हानि हुई। उसी प्रकार जब सितम्बर 1939 में द्वितीय विश्वयुद्ध प्रांरभ हुआ उस समय फिर मूल्य वृद्धि तथा हड़तालो की शुरुआत हो गयी। जिसमें 406 हड़ताले हुई जिनमें 5 लाख श्रमिकों ने भाग लिया जिससे 50 लाख कार्य दिनों की हानि हुई।

भारत सुरक्षा अधिनियम सन्1942 में हड़तालों व तालेबन्दियों पर कुछ प्रतिबन्ध लगने से औद्योगिक विवादों में कुछ कमी आई। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् इनमें कमी आ गई, जिसे निम्न तालिका से स्पष्ट रुप से समझा जा सकता है।

तालिका

वर्ष	औद्योगिक विवाद	श्रमिको की संख्या	मानव दिन की हानि
2001	674	687778	23767
2002	579	1079434	26586
2003	552	1815945	30256
2004	477	2072221	23866
2005	456	2913601	29665
2006	430	1810348	20324
2007	389	724574	27167
2008	421	1579298	17434
2009	392	1625305	13365
2010	431	1064846	18068
2011	140	406442	4301

स्त्रोत– Indian labour journal feb 2012

औद्योगिक संघर्ष या विवाद के समाधान के तरीके –उद्योग ही देश के आर्थिक विकास में सहायक होते है, यदि इस समस्या का समाधान नहीं किया जाए तो यह विकराल रुप ले लेती है, जिससे उद्योगों को तो नुकसान होता ही है साथ ही देश की आर्थिक स्थिति भी कमजोर पड़ जाती है। भारत में औद्योगिक संघर्षो के समाधान के लिए दो तरह की पद्धति अपनायी जाती है। प्रथम ऐच्छिक पद्धति तथा द्वितीय वैधानिक पद्धति।

ऐच्छिक पद्धति– इस पद्धति के अन्तगर्त औद्योगिक विवाद के समाधान के लिए वे पद्धतिया अपनाई जाती है, जो श्रमिकों,नियोक्ताओं तथा सरकार के द्वारा स्वेच्छा से स्थापित की गई है। जिनमें निम्न पद्धति शामिल है,– सामूहिक सौदेबाजी, जाचं पड़ताल, मध्यस्थता, समझौता, द्विपक्षीय एवं त्रिपक्षीय समितियां

वैधानिक पद्धति – इसमें ऐसी पद्धतियों को शामिल किया जाता है जिनकी व्यवस्था औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अन्तर्गत की गई है। जैसे कार्य समितियां, सुलह पदाधिकारी, सुलह बोर्ड, न्यायालय जांच, न्यायाधिकरण।

सुझाव–औद्योगिक शान्ति बनाये रखने के लिए औद्योगिक संगठनों को निम्न बातों पर भी ध्यान देना चाहिए।

1. प्रभावी उत्पादन हेतु यदि व्यक्ति, मशीन तथा माल के पूर्ण रुप से उपयोग नहीं हो पा रहा है तो उसके उचित प्रयोग के लिए समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए।
2. नियोक्ताओं की ओर से की गई किसी भी प्रकार की कार्यवाही जिससे श्रमिकों सुरक्षा को हानि होती है उसका बहिष्कार किया जाना चाहिए।
3. कर्मचारियों द्वारा कार्य के प्रति लापरवाही, संपत्ति की हानि तथा कार्यप्रणाली में गतिरोध उत्पन्न करने के प्रयास पर रोक लगाना चाहिए।

4. कर्मचारियों के कार्य हित तथा स्वास्थ्य का ध्यान संगठन द्वारा रखा जाना चाहिए।
5. तकनीकी एवं कुशल कर्मचारियों को उनकी रुचि के अनुसार कार्य प्रदान किया जाना चाहिए।
6. अतिरिक्त कार्य के लिए अतिरिक्त वेतन या मजदूरी की व्यवस्था होनी चाहिए।

निष्कर्ष – निष्कर्ष के रुप में कहा जा सकता है। कर्मचारी एवं नियोक्ता दोनों ही संवेदनशील होते है। यदि दोनों के मध्य मधुर संबंध है, तो औद्योगिक विवाद उत्पन्न होने की संभावना कम हो जाती है। इसके साथ ही औद्योगिक वातावरण, कर्मचारियों की स्वास्थ्य संबंधी सुविधाएं, व वेतन, पदोन्नित आदि बातो को भी प्राथमिकता दी जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. "Industrial Realation and Trade union Novelty & co".Patana. pandit ,k(2009)
2. "Industrial Realation ,Trade union and Labour Legislation,"Pearson,New Delhi. Sinha, P.R.M. (2004).
3. "Industrial Realation and Labour law," Vikas publishing home,pvt ltd. S.C. Shriwastav(2003)
4. Indian Labour Journal 2012.

****

प्राकृतिक आपदाओं में कमी हेतु विकास व पर्यावरण प्रबंधन की आवश्यकता - एक अध्ययन

डॉ. रश्मि शर्मा * डॉ. पी.एस. पटेल * *

शोध सारांश – प्राकृतिक आपदाओं के लिए माना जाता है कि ये प्राकृतिक या मानवजनित कारणों से उत्पन्न होती हैं तथा इन्हें मानवीय प्रयासों द्वारा पूरी तरह से नहीं रोका जा सकता है लेकिन उन्हें उद्धेलित करने एवं बढ़ाने वाली मानवीय गतिविधियों को रोक कर कम किया जा सकता है। वास्तव में प्राकृतिक आपदाऐं मनुष्य व अन्य जीवों के साथ पर्यावरण को भी नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। अत: आज आवश्यकता इस बात की है कि संपूर्ण मानव समुदाय द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करते हुए सुनियोजित उपयोग किया जाये और विकास के नाम पर पर्यावरण से खिलवाड़ न किया जाये। पर्यावरण संतुलन हेतु अद्यतन एवं प्रासंगिक नीति का निर्माण कर उसके समुचित क्रियान्वयन द्वारा प्राकृतिक आपदाओं की बारम्बारता एवं तीव्रता में न्यूनता के साथ संभावित क्षति को कम किया जा सकता है।

शब्द कुंजी – आपदा-प्रबंधन, पर्यावरण संतुलन, विकास।

प्रस्तावना – भारत में पर्यावरण के प्रति जागरूकता तो बढ़ी है लेकिन वास्तविक धरातल पर उसका क्रियान्वयन होता दिखाई नहीं दे रहा है।वर्तमान में 'अनियोजित विकास मॉडल' को अपनाकर विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों के अनियोजित विदोहन किया जा रहा है, जिससे प्रकृति का संतुलन बिगड़ रहा है। पर्यावरणीय असंतुलन के कारण प्रकृति में समय से पूर्व बदलाव आ रहे हैं जैसे ऋतु परिवर्तन, मानसून का समय के पूर्व आ जाना अथवा मानसून में देरी होना, बादल फटना जिससे भूस्खलन एवं बाढ़ का खतरा होना आदि घटनाओं का दुष्प्रभाव मानव जीवन पर पड़ रहा है। लेकिन पर्यावरणीय असंतुलन को कम करने की कोशिशें उतनी प्रभावपूर्ण नहीं है, जितनी अपेक्षित और आवश्यक है।

आपदाएं प्राकृतिक या मानवजनित कारणों से उत्पन्न होती है और प्राकृतिक आपदाओं को मनुष्यों द्वारा पूरी तरह नहीं रोका जा सकता है लेकिन उन्हें उत्तेजित करने एवं बढ़ाने में निश्चित ही मानव की भागीदारी रही है। प्राकृतिक आपदाएँ- बाढ़, भूकम्प, चक्रवात, अकाल और महामारी ने धरती पर कुछ क्षेत्रों में तो कई बार ऐसे क्रूर कहर ढ़ाए हैं, जिनमें विश्व की बहुत बड़ी आबादी समाप्त हो चुकी **जिनेवा से प्रकाशित रिपोर्ट (24 जनवरी 2011)** में बताया गया कि प्राकृतिक आपदाओं में भारत दुनिया भर में दूसरे स्थान पर है। इस सूची में चीन प्रथम स्थान पर है। जहाँ चीन में 22 प्राकृतिक आपदाएं सामने आई, वहीं भारत में यह संख्या 16 है। **स्वीडिश रेडक्रॉस ने प्रिवेंशन इज बेटर देन 'योर' नामक अपनी रिपोर्ट** कुछ देशों में वर्ष 1960 से 1981 के बीच अर्थात् 20 वर्ष में प्राकृतिक आपदाओं से हुई जनहानि के आंकड़े प्रस्तुत किए थे, जिसमें बताया गया था कि इस दौरान सिर्फ बंगाल में ही 6 लाख 33 हजार लोगों की जाने गई। भारत में इस दौरान 60 हजार लोगों की मौत हुई व पिछले वर्ष 2013 में केदारनाथ हादसे में कई परिवार तबाह हो गए।

शोध का उद्देश्य – वर्तमान समय में प्राकृतिक विपदाओं और उनसे प्रभावितों की बढ़ती संख्या में कमी हेतु आपदा प्रबंधन के लिए समुचित व अद्यतन प्रासंगिक नीति नियमन एवं क्रियान्वयन की आवश्यकता का अध्ययन करना प्रस्तुत शोध का उद्देश्य है।

अध्ययन की उपयोगिता :– प्रस्तुत अध्ययन द्वारा प्राकृतिक आपदाओं से पर्यावरण पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभाव से बचाव के लिए पर्यावरण संतुलन हेतु उपर्युक्त नीति निर्माण व क्रियान्वयन की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित होगा तथा सुझावों के क्रियान्वयन द्वारा आपदाजनित जन-धन हानि में न्यूनता आ सकेगी।

शोध का अपेक्षित परिणाम – पुष्टि की प्रत्याशा में परिकल्पना की जाती है कि विकास के वर्तमान दौर में प्राकृतिक आपदाओं से पर्यावरण पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभाव से बचाव हेतु सरकार द्वारा प्राकृतिक संसाधन दोहन की समुचित प्रबन्ध नीति का निर्माण एवं क्रियान्वयन करने की आवश्यकता है।

शोध प्रविधि – सन्दर्भित अध्ययन एवं लेखकगणों का स्वअनुभव ही प्रस्तुति का आधार है।

विषय-विस्तार एवं पल्लवन –प्राकृतिक आपदा को परिभाषित करते हुए कहा जा सकता है कि एक ऐसी प्राकृतिक घटना जिसमें एक हजार से लेकर दस लाख लोग तक प्रभावित हो और उनका जीवन खतरे में हो तो वो प्राकृतिक आपदा कहलाती है।

प्राकृतिक आपदा के उत्पन्न होने के प्रमुख कारण –

1. अनियोजित विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध विदोहन से,
2. वैश्विक ऊष्मन, औद्योगिक क्रियाकलाप और जनसंख्या वृद्धि से,
3. बढ़ती मानवीय आवश्यकताएं तथा उपभोक्तावृत्ति से
4. पेड़ों के कटने से,
5. भूमि के खनन से,
6. जल के दुरूपयोग से ,
6. वायुमण्डल के प्रदूषण से इत्यादि।

* 18, राजेन्द्र मार्ग महिदपुर, जिला-उज्जैन (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय महिदपुर, जिला - उज्जैन (म.प्र.) भारत

भारत में कुछ बड़ी प्राकृतिक आपदाएँ –

1. **गुजरात में विनाशकारी भूकंप –**भारत में सबसे विनाशकारी भूकंप 26 जनवरी 2001 को गुजरात में आया था। भूकंप इतना तेज था कि नदियों ने अपने रास्ते बदल दिये। इतना ही नहीं भूमि के उभार में स्थाई तौर पर परिवर्तन आ गया और पत्थर ऊपर की ओर उठ गए।
2. **बिहार में कोसी की बाढ़ –**बिहार में कोसी नदी में कई बार आई बाढ़ की भयावहता ने इस प्रदेश को बर्बादी के कगार पर ला खड़ा किया है।
3. **उड़ीसा में समुद्री तूफान –**उड़ीसा के समुद्र तटीय तटीय 12 जिले अभूतपूर्व समुद्री तूफान से बुरी तरह नष्ट भ्रष्ट हो गए हैं। गत वर्ष सरकारी आंकड़ों के अनुसार 12 जिलों के 101 विकासखण्डों तथा 26 नगर पंचायतों में भीषण तबाही मची है। लगभग 10 हजार लोग और साढ़े तीन लाख पशु मारे गए हैं। साढ़े बारह लाख से अधिक मकान पूरी तरह ध्वस्त हो गए है। सवा करोड़ से अधिक लोग इस भीषण समुद्री तूफान से बुरी तरह प्रभावित हुए हैं। अनुमान है कि 20 लाख से अधिक पेड़ धराशायी हो गए और 16 लाख हेक्टेयर से अधिक कृषि भूमि फसल सहित नष्ट हो गई है।
4. **हिन्दमहासागर में सुनामी –**26 दिसम्बर, 2004 को 9.3 तीव्रता के भूकंप के चलते हिंदमहासागर का सीना सुनामी से दहल गया। सुमात्रा इस भूकंप का केन्द्र था। 30 मीटर तक ऊँची उठी लहरों ने विनाश का ऐसा ताण्डव मचाया कि मानवता कांप उठी। इस सुनामी के कारण 14 देश प्रभावित हुए। सर्वाधिक प्रभावित होने वाले देशों में भारत, इण्डोनेशिया, श्रीलंका और थाईलैण्ड आदि प्रमुख थे और इसमें मरने वालों की संख्या करीब ढ़ाई लाख थी।
5. **उत्तराखण्ड में प्राकृतिक आपदा –** 16 एवं 17 जून, 2013 में आई प्राकृतिक आपदा की त्रासदी इतनी भयंकर एवं व्यापक थी कि इससे उत्तराखण्ड सहित देश के लगभग 22 राज्यों के लोग और कई विदेशी नागरिकों को इस त्रासदी के कारण अपनी जान से हाथ धोना पड़ा और कई लोगों के घर–बार उजड़ गए हैं।

प्राकृतिक आपदा का पर्यावरण पर प्रभाव – प्राकृतिक आपदा से प्रभावित क्षेत्र का पर्यावरण बुरी तरह प्रभावित होता है। जन–धन की काफी हानि होती है। पेड़–पौधे नष्ट हो जाते हैं, जिसके कारण उसकी मिट्टी को बांधे रखने, वर्षा की तीक्ष्ण बूंदों से मिट्टी को बचाने, हवा को शुद्ध करने और वर्षा जल को भूमि में रिसाने की शक्ति लगातार क्षीण होती जाती है, इसका दुष्परिणाम यह होता है कि भूक्षरण, भूस्खलन और भूमि का कटाव बढ़ रहा है जिससे मिट्टी अनियंत्रित होकर बह रही है। इससे पहाड़ों और ऊँचाई वाले इलाकों की उर्वरता समाप्त हो रही है तथा मैदानों में यह मिट्टी पानी का घनत्व बढ़ाकर और नदी तल को ऊपर उठाकर बाढ़ की विभीषिका को बढ़ा रही है।

यदि हिमालय क्षेत्र के साथ ही उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में प्राकृतिक आपदाओं की घटनाओं का विश्लेषण किया जाए तो भूस्खलन एवं भूचाल आदि घटनाओं के कारण उत्पन्न स्थिति से ही यहां प्राकृतिक आपदाएं आती हैं, जो मानव जीवन के लिए बहुत बड़ी त्रासदी साबित हो जाती है। हिमालय क्षेत्र में इसके लिए हमारी विकास की अवधारणाएँ और क्रियाकलाप भी दोषी हैं। विकास के नाम पर नाजुक क्षेत्रों में भी सड़क मार्ग तथअन्य निर्माण कार्य किए गए, जिनमें भारी विस्फोटकों का उपयोग किया गया। मिट्टी बेतरतीब ढंग से काटी गई और जंगलों का बेहताशा कटाव किया गया। इस कारण बड़ी संख्या में नए–नए भूस्खलन और नदियों में बाढ़ देखने को मिले, जिसका दुष्प्रभाव न केवल हिमालयवासियों पर पड़ रहा है बल्कि मैदानी प्रदेश भी बाढ़ की विभीषिका से बुरी तरह त्रस्त है। बांध का कारोबार और खनन कार्य बहुत ज्यादा हुआ है। जल विद्युत परियोजनाओं के लिए भी पेड़ काटे गए हैं स्टोन क्रशर ने भी पर्यावरण बिगाड़ा है। नदियों के किनारे अनियोजित तरीके से घर बन रहे हैं, इस पर प्रशासन का उचित नियंत्रण नहीं है। सरकार पहाड़ों पर भवन निर्माण के सख्त नियम क्यों नही बनाती है? अत: आज आवश्यकता इस बात की है कि क्षेत्र विशेष की भौगोलिक परिस्थितियों के अनुकूल विकास होना चाहिए ताकि पर्यावरण और विकास के मध्य संतुलन बना रहे।

शोध के अपेक्षित परिणाम का सत्यापन – पुष्टि की प्रत्याशा में परिकल्पना की जाती है कि विकास के वर्तमान दौर में प्राकृतिक आपदाओं से पर्यावरण पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभाव से बचाव हेतु सरकार द्वारा प्राकृतिक संसाधन दोहन की समुचित प्रबन्ध नीति का निर्माण एवं क्रियान्वयन करने की आवश्यकता है। इस परिकल्पना का सत्यापन हो रहा है। यहां यह भी कहा जा सकता है कि हमारे विकास संबन्धीक्रियाकलाप एवं नियमन–प्रबंधन व्यवस्था भी पर्यावरण के अनुकूल होना आवश्यक है।

प्राकृतिक आपदा से निपटने के लिए आवश्यक सुझाव – अमेरिका और जापान जैसे देश भी प्राकृतिक आपदा के शिकार होते रहते है लेकिन वहां पर जान–माल का नुकसान बहुत कम होता है और शीघ्र ही सब कुछ सामान्य हो जाता है, क्योंकि इन देशों ने प्राकृतिक आपदाओं से निपटने हेतु बेहतर प्रबंधन व्यवस्था की है। हमारे देश में आपदा प्रबन्धन प्रणाली सुविकसित नहीं है। वर्ष 2005 में आपदा प्रबन्धन अधिनियम पारित होने के बाद राष्ट्रीय आपदा प्रबन्धन प्राधिकरण का गठन तो किया गया पर उसका उद्देश्य और कार्य क्या है ? यह अभी तक सुनिश्चित नहीं हो सका है। प्राकृतिक आपदा के प्रबंधन हेतु कुछ आवश्यक सुझाव प्रस्तुत है –

1. प्राकृतिक आपदाओं से संबंधित संवेदनशील क्षेत्रों को चिन्हित किया जाये।
2. ग्राम से लेकर ब्लॉक, जिला, प्रदेश तथा देश के स्तर पर आपदा प्रबंधन समितियां बनाकर उन्हें आपदा प्रबंधन का प्रशिक्षण दिया जाये।
3. ऐसी तकनीके विकसित की जाए जिनके द्वारा आपदा पूर्व भविष्यवाणी की जा सके। कुछ क्षेत्रों में तो सफलता भी मिली है, जैसे – मौसम विभाग के सटीक पूर्वानुमानों एवं NDMA की बेहतर प्रबंध व्यवस्था से अक्टूम्बर 2014 में आंध्र एवं ओडिसा समुद्री तट पर आये हुद–हुद तूफान में जानमाल की क्षति को न्यूनतम किया जाना संभव हो सका। राष्ट्रीय आपदा राहत बल (NDRF) के जवानों ने इस राहत कार्य को 'ऑपरेशन लहर' नाम दिया इसी प्रकार भूकंप व सुनामी के क्षेत्रों में भी प्रयास करना आवश्यक है।
4. आपदा प्रबंधन में संचार साधनों के उपयोग का विस्तार किया जाये। विशेष रूप से लंबे समय तक डिस्चार्ज न होने वाली अर्थात अधिक बैकअॅप वाली बैटरी युक्त संचार उपकरणों का पर्याप्त नैटवर्क बनाया जाये।
5. आपदा प्रबंधन तथा प्रशिक्षण एक विषय के रूप में शिक्षा के सभी स्तरों के पाठ्यक्रमों में सम्मिलित किया जाये।
6. बड़े पैमाने पर हरियाली लाने और उद्यानों तथा वनों की पुनर्स्थापना के एक अग्रगामी कार्यक्रम शीघ्र बनाकर लागू किया जाये।
7. आपदा प्रभावित क्षेत्रों में शिक्षा स्वास्थ्य, भोजन, रोजगार और पुनर्वास व पुनर्निर्माण हेतु एक व्यापक अभियान तंत्र स्थापित किया जाये।
8. आपदा प्रबंधन पर बजट राशि को बढ़ाया जाये।

9. नदियों के किनारे या पहाड़ों में भवन-निर्माण हेतु सरकार को कठोर नियम बनाना चाहिए।
10. पर्यावरण संतुलन एवं आपदा प्रबंधन हेतु समुचित एवं अद्यतन प्रासंगिक नीति का निर्माण व क्रियान्वयन किया जाये ताकि आपदाओं की तीव्रता व पुनरावृत्तियों में न्यूनता के साथ संभावी क्षति को कम किया जा सके।

निष्कर्ष – संपूर्ण मानव समुदाय द्वारा यदि प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण किया जाये और विकास व पर्यावरण के मध्य संतुलन स्थापित किया जाये तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि प्राकृतिक आपदा से हो रही जन-धन की हानि को बहुत सीमा तक कम करने में सहायता मिलना संभव है। अतः कहा जा सकता है कि प्राकृतिक आपदाएं एवं पर्यावरण संतुलन एक दूसरे को प्रभावित कर रहे है, जिनका नीति-नियमन एवं समुचित प्रणाली के विकास के द्वारा उचित प्रबंधन किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूंची :-

1. Thomas D. Schneid & Larry Collins, (2000) "DISASTER MANAGEMENT AND REPAREDNESS", CRC Press LLC, Florida(U.S.), ISBN NO. 1-56670-524-X
2. पर्यावरण विकास – राष्ट्रीय मासिक पत्रिका।
3. प्रतियोगिता दर्पण, फरवरी 2014।
4. दैनिक भास्कर -समाचार पत्र।
5. नई दुनिया – समाचार पत्र।
6. wwww.wikipedia.com
7. 'आपदा प्रबंधन'(सरल ज्ञान कानूनी माला-46), उत्तराखण्ड राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण, उत्तराखण्ड

****

उज्जैन जिले में कृषि उपज मण्डी समितियों की स्थापना, मापदण्ड एवं वर्गीकरण

डॉ. मोईन खान * डॉ. एम.एस. मन्सूरी **

प्रस्तावना – स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व से भारत में कृषि एवं कृषकों की स्थिति अत्यन्त दयनीय थी, फसल उत्पादन की अधिकांश मात्रा का विक्रय साहूकारों, व्यापारियों एवं आढ़तियों को गाँवों में ही कर देते थे। कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य प्राप्त नहीं होता था। कृषि विपणन व्यवस्था अत्यन्त दोषपूर्ण थी। कृषि बाजार में मध्यस्थों की प्रभुसत्ता थी, दोषपूर्ण नापतौल व्यवस्था, अनुचित ब्याज दर, ऋण वसूली का निकृष्ट तरीका, फसल भुगतान की दोषपूर्ण प्रणाली एवं विवाद की स्थिति में कृषक का पक्ष हमेशा निर्बल रहता था।

कृषि एवं कृषक की दयनीय स्थिति के कारण यह महसूस किया गया कि नियंत्रित विपणन प्रणाली का विकास किया जाऐं जिसके अन्तर्गत कृषि उत्पादनों का क्रय–विक्रय अधिनियमों के आधीन प्रावधानों के माध्यम से हो। अत: भारत में नियंत्रित मण्डी समितियों की स्थापना की गई।

'भारत में नियंत्रित मण्डियों की स्थापना की आवश्यकता सर्वप्रथम ब्रिटिश शासनकाल में इंग्लैण्ड की कपड़ा मिलों को उचित कीमत पर कपास की पूर्ति के लिए महसूस हुई। वर्ष 1886 में पहली नियंत्रित मण्डी करंजीया कपास मण्डी की स्थापना की गई। सर्वप्रथम अधिनियम कॉटन एण्ड ग्रेन मार्केट लॉ 1897 तत्कालीन बरार प्रदेश में नियंत्रित मण्डियों की स्थापना के लिए बनाया गया था। अन्य राज्यों में नियंत्रित मण्डियों की स्थापना के लिए यह अधिनियम बाद में आदर्श कानून माना गया। वर्ष 1917 में भारत सरकार द्वारा स्थापित इण्डियन कॉटन कमेटी ने भी बरार अधिनियम के अनुसार कपास मण्डियों को नियंत्रित करने का सुझाव दिया। इसके पश्चात् वर्ष 1927 में बम्बई सरकार ने बम्बई कॉटन मार्केट लॉ लागू किया। देश का यह पहला विस्तृत अधिनियम था, जो स्वस्थ्य मण्डी प्रणाली की स्थापना की दृष्टि से बनाया गया था। इसका मुख्य उद्देश्य कृषि उत्पादनों के क्रय–विक्रय में उत्पादक एवं उपभोक्ता के हितों की रक्षा करना था।'

'वर्ष 1928 में ब्रिटिश सरकार के तत्कालीन वायसराय लॉर्ड लिनलिथगो की अध्यक्षता में नियुक्त कृषि रॉयल कमीशन ने भी कृषि विपणन में व्याप्त अव्यवस्थित परिस्थितियों के कारण भारत में नियंत्रित मण्डियों की स्थापना की सिफारिश की थी। भारत सरकार ने वर्ष 1935 में कृषि विपणन समस्याओं को हल करने के लिए विपणन एवं निरीक्षण निदेशालय की स्थापना की गई। इस निदेशालय द्वारा राज्य सरकारों को कृषकों के हितों की रक्षा करने के उद्देश्य से राज्यों में नियंत्रित मण्डियों की स्थापना की सिफारिश की। वर्ष 1938 में निदेशालय ने राज्यों में नियंत्रित मण्डियों की स्थापना के लिए एक आदर्श अधिनियम तैयार किया, जिसके आधार पर अनेक राज्यों में मण्डियों के नियमन हेतु कानून पारित किये गये, जैसे – हैदाराबाद, कृषि विपणन अधिनियम 1930, मद्रास वाणिज्यिक फसल विपणन अधिनियम 1935, बम्बई कृषि उपज विपणन अधिनियम 1939, पंजाब कृषि उपज विपणन अधिनियम 1939, मैसूर कृषि उपज विपणन अधिनियम 1939, केरल कृषि उपज विपणन अधिनियम 1957, म.प्र. कृषि उपज विपणन अधिनियम 1960, राजस्थान कृषि उपज विपणन 1961 आदि। विभिन्न राज्यों में पारित कृषि उपज विपणन अधिनियमों में समय–समय पर उनमें व्याप्त कमियों को दूर करने के लिए संशोधन किये गये है।'

मध्यप्रदेश में कृषि उत्पादनों के क्रय–विक्रय को व्यवस्थित व नियमित करने एवं मण्डियों की स्थापना तथा उनमें एकरूपता लाने के उद्देश्य से राज्य शासन ने सन् 1960 में एक बिल प्रस्तुत किया जो अगस्त 1960 में मध्यप्रदेश कृषि उपज अधिनियम 1960 के नाम से पारित हुआ। इस अधिनियम में अनेक प्रकार की कमियाँ होने के कारण तथा इन कमियों को दूर करने के उद्देश्य से सन् 1972 में व्यापक संशोधन किये गये तथा नवीन कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972 लागू किया गया। इस अधिनियम को वर्ष 1973 में राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त हुई। 1972 के अधिनियम में मध्यप्रदेश शासन ने 1979 मे पुन: परिवर्तन व संशोधन करके अधिनियम क्रमांक 18 बनकर इसे और अधिक स्पष्ट एवं सरल कर दिया। इसके पश्चात् शासन ने परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए इस अधिनियम में वर्ष 1984, 1985 तथा 1986 में व्यापक संशोधन किये। इसके अतिरिक्त इस अधिनियम में वर्ष 1997, 1999, 2000, 2001, 2002, 2003, 2005 एवं 2009 में पुन: कुछ संशोधन किये गये है। राज्य की समस्त मण्डी समितियाँ मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972 के प्रावधानों के अनुसार नियंत्रित, गठित एवं शासित होती है। वर्तमान में मध्यप्रदेश में 246 मण्डी समितियाँ एवं 278 उपमण्डियाँ कार्यरत है।

मण्डी समितियों का आधारभूत स्वरूप – राज्य शासन द्वारा किसी भी क्षेत्र में मण्डी की स्थापना कृषकों एवं जनप्रतिनिधियों की मांग पर की जाती है। इसके लिए राज्य शासन अधिसूचना का प्रकाशन गजट में करती है। तत्पश्चात् आवश्यक जानकारी एकत्रित करके मण्डी का क्षेत्र निर्धारित किया जाता है तथा इसके सम्बन्ध में एक माह के अंदर प्राप्त आपत्तियों एवं सुझावों पर राज्य शासन द्वारा आवश्यक कार्यवाही कर गजट में मण्डी की स्थापना एवं क्षेत्र सम्बन्धी अधिसूचना जारी कर दी जाती है।

मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972 के अनुसार –

1. 'किसी ऐसे क्षेत्र में जिसके लिए मण्डी का स्थापित किया जाना प्रस्तावित हो, स्थानीय प्राधिकारी द्वारा या किसी कृषि उपज पैदावार करने वालों द्वारा किये गये अभ्यावेदन पर या अन्यथा, राज्य शासन अधिसूचना द्वारा तथा ऐसी अन्य रीति में जो कि विहित की जाय (कृषि उपज के क्रय– का ऐसे क्षेत्र में विनियमन करने के लिए) जो कि अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किया

* वाणिज्य विभाग, यश महाविद्यालय, बदनावर (म.प्र.) भारत
** वाणिज्य विभाग, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

जाय, मण्डी स्थापित करने के अपने आशय की घोषणा कर सकेगी।'

2. 'उपधारा (1) के अधीन अधिसूचना में यह कथित होगा किसी भी ऐसी आपत्ति या सुझाव पर राज्य शासन द्वारा विचार किया जायेगा जो कि राज्य शासन को अधिसूचना विनिर्दिष्ट की जाने वाले कालावधि के जो एक मास से कम न हो भीतर प्राप्त हो।'

मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972 की धारा 5 के अनुसार प्रत्येक मण्डी क्षेत्र का एक मण्डी प्रांगण होगा परन्तु यह भी प्रावधान किया गया है कि आवश्यकतानुसार मण्डी प्रांगण एक से अधिक हो सकते है।

'राज्य शासन किसी विनिर्दिष्ट स्थान को जिसके अन्तर्गत मण्डी क्षेत्र में कोई संरचना, अहामा, खुला स्थान या परिक्षेत्र आता है, यथास्थिति मण्डी प्रांगण या उपमण्डी प्रांगण घोषित करेगी और स्थिति के अनुसार मण्डी क्षेत्र में किसी विनिर्दिष्ट स्थान को मूल मण्डी घोषित करेगी।'

मण्डी अधिनियम के अनुसार प्रत्येक मण्डी का एक प्रांगण से तात्पर्य उस स्थान विशेष से होता है जहाँ पर कृषक अपनी उपज को विक्रय के लिए प्रस्तुत करना है तथा क्रेता व्यापारी नियमानुसार उस उपज का क्रय करते है।

मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम की धारा 7 के अनुसार –

1. 'प्रत्येक मण्डी क्षेत्र के लिए एक मण्डी समिति होगी जिसकी अधिकारिता सम्पूर्ण मण्डी क्षेत्र पर होगी।'

2. 'प्रत्येक मण्डी समिति उस नाम से जो कि ऐसी मण्डी के लिए धारा 4 के अधीन अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किया गया हो एक निगमित निकाय होगी। उसका शाश्वत उत्तराधिकार होगा तथा उसकी एक सामान्य मुद्रा होगी वह अपने निगमित नाम से वाद चला सकेगी तथा उक्त नाम से उसके विरूद्ध वाद चलाया जा सकेगा और ऐसे निर्बन्धनों के जो कि इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन अधिरोपित किये जाये, अध्यधीन रहते हुए वह संविदा करने के लिए तथा किसी की सम्पत्ति को अर्जित करने, धारणा करने, पट्टे पर देने, बेचने या अन्यथा अंतरित करने क लिए सक्षम होगी।'

अत: यहाँ स्पष्ट होता है कि मण्डी समिति को एक नियमित निकाय की संज्ञा दी गई है, जिसकी सामान्य मुद्रा होगी, जो किसी पर वाद चला सकेगी तथा इस पर अन्य द्वारा वाद चलाया जा सकेगा। मण्डी समिति को सम्पत्ति बेचने, खरीदने, हस्तांतरण करने तथा पट्टे पर देने का अधिकार होगा अर्थात् मण्डी को स्वायत्ता प्रदान कर उसे अनेक अधिकार मण्डी अधिनियम द्वारा दिये गये है।

प्रदेश में नवीन कृषि उपज मण्डी एवं उपमण्डी समिति की स्थापना के लिए मध्यप्रदेश शासन द्वारा मापदण्ड निर्धारित किये गये है जो निम्नानुसार है–

तालिका क्रमांक – 1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट है कि सामान्य क्षेत्र में नई मण्डी समिति की स्थापना के लिए मण्डी के पास 15 एकड भूमि, 15 लाख रूपये की वार्षिक आय एवं 10 थोक व्यापारियों की संख्या होना आवश्यक है। इसी प्रकार आदिवासी क्षेत्र में नई मण्डी की स्थापना के लिए 10 एकड़ भूमि 15 लाख रूपये की न्यूनतम् वार्षिक आय एवं 15 थोक व्यापारियों की होना आवश्यक है।

मण्डी समितियों का वर्गीकरण – मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी (मण्डी समिति वर्गीकरण) नियम 1981 के नियम 3 के अधीन विहित मानकों के आधार पर मण्डी समितियों की विगत् तीन वित्तीय वर्षो की औसत आय के आधार पर उनका वर्गीकरण करने का प्रावधान है। इस नियम में दिनांक 18 दिसम्बर 2009 को राज्य शासन द्वारा संशोधन किया गया है। तदोपरान्त म.प्र. कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972 की धारा 25 (क) की उपधारा (3) तथा सहपठित मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी (मण्डी समिति वर्गीकरण) नियम 1981 के अनुसार मण्डी समितियों का वर्गीकरण वर्ष 2011 में किया गया है, जो निम्नानुसार है :–

तालिका क्रमांक – 2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका की विवेचना से ज्ञात होता है कि, प्रदेश में 'अ' वर्ग में 51 मण्डियाँ कार्यरत् है। 'ब' वर्ग की मण्डियों की संख्या 44 है। जबकि 'स' एवं 'द' वर्ग की मण्डियों की संख्या क्रमश: 55 एवं 98 है।

मण्डी अधिनियम के विहित मानकों के आधार पर मण्डी समितियों की विगत् तीन वर्षो की औसत आय के आधार पर इस अधिनियम के उपबन्धों के समस्त आशयों के लिए उज्जैन जिले की मण्डी समितियों को निम्नानुसार वर्गीकृत किया गया है :–

1. **'अ' वर्ग की मण्डी – उज्जैन, बड़नगर, महिदपुर**
2. **'ब' वर्ग की मण्डी – तराना, खाचरौद**
3. **'स' वर्ग की मण्डी – नागदा, उन्हेल**

वस्तुत: कृषक वर्ग बड़ी मण्डियों की ओर अपनी उपज विक्रय हेतु लाने का प्रयास करते है। प्रत्यक्ष सर्वेक्षण में यह तथ्य प्रकट हुआ है कि 40 से 50 कि.मी. की दूरी तय करके भी कृषक प्रथम वर्ग की मण्डियों में अपनी उपज लाते है क्योंकि उनके मध्य यह अवधारणा विद्यमान है कि इन मण्डियों में उन्हें उचित मूल्य प्राप्त होगा। इस कारण से भी उज्जैन मण्डी में फसलों की आवक अधिक रहती है।

निष्कर्ष – उक्त आलेख से मण्डियों की स्थितियाँ, संक्षिप्त इतिहास एवं आधारभूत स्वरूप को दर्शाया गया है। मण्डियों का वर्गीकरण बताते हुए उज्जैन जिले में मण्डियों के वर्ग को भी दर्शाया गया है और यह उल्लेखित किया गया है कि किस मण्डी में किसान अधिक उपज बेचना पसन्द करता है और क्यों पसन्द करता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय कृषि का अर्थतन्त्र, डॉ. एन.एल.अग्रवाल,
2. मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम एवं नियम, डॉ. राधेश्याम द्विवेदी
3. कार्यालय,मध्यप्रदेश राज्य कृषि विपणन बोर्ड, उज्जैन।
4. www.mpmandiborad.com

तालिका क्रमांक – 1
नवीन कृषि उपज मण्डी एवं उपमण्डी की स्थापना के लिए निर्धारित मापदण्ड

क्र	मण्डी	भूमि (एकड़ में)	न्यूनतम् वार्षिक आय (लाख रू.मे)	व्यापारियों की संख्या
1	सामान्य क्षेत्र में नवीन मण्डी की स्थापना	15.00	15.00	15 थोक व्यापारी
2	सामान्य क्षेत्र में नवीन उपमण्डी की स्थापना	5.00	10.00	10 थोक व्यापारी
3	आदिवासी क्षेत्र में नवीन मण्डी की स्थापना	10.00	15.00	15 थोक व्यापारी
4	आदिवासी क्षेत्र में नवीन उपमण्डी की स्थापना	5.00	10.00	10 थोक व्यापारी

स्त्रोत – 1. कार्यालय,मध्यप्रदेश राज्य कृषि विपणन बोर्ड, उज्जैन।
2. www.mpmandiborad.com

तालिका क्रमांक – 2
कृषि उपज मण्डी समितियों का वर्गीकरण
(वर्ष 2011 के अनुसार)

क्र.	मण्डी का वर्ग	आय का मापदण्ड (विगत 3 वर्षों मे मण्डी शुल्क एक अनुज्ञप्ति शुल्क में प्राप्त औसत आय) (प्रतिवर्ष में)	मण्डियों की संख्या
1	अ	1 करोड़ 50 लाख रूपये से अधिक	51
2	ब	75 लाख रूपये से 1 करोड़ 50 लाख रूपये तक	42
3	स	40 लाख रूपये से 75 लाख रूपये तक	55
4	द	40 लाख रूपये तक	98
		योग	**246**

स्त्रोत – 1. कार्यालय, मध्यप्रदेश राज्य कृषि विपणन बोर्ड, उज्जैन।
2. www.mpmandiboard.com

****

स्वरोजगार योजनाओं के संचालन में बैंको की भूमिका

नीतिन बिल्लौरे *

प्रस्तावना – संसार के सभी विकसित एवं विकासोन्मुख,समाजवादी एवं पूँजीवादी राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था में स्वरोजगार योजनाओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। भारत में भी स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश के सम्मुख कई प्रकार की समस्याएं खड़ी हुई, जिनमें बेरोजगारी भी सम्मिलित थी। मध्यप्रदेश की स्थापना के समय भी यह समस्या थी। क्योंकि शासकीय क्षेत्र एवं निजी क्षेत्र में रोजगार के अवसर लगातार घट रहे थे, क्योंकि ये क्षेत्र प्रारंभिक दौर में इतने विकसित नहीं थे। स्वरोजगार योजनाएं शिक्षित बेरोजगारी से लडने का एक अचूक हथियार है। शासन द्वारा हितग्राही को वित्तीय सहायता उपलब्ध करवाकर उसे रोजगार का अवसर प्रदान किया जाता है। युवाओं में उद्यमशीलता को विकसित करके उन्हें इस योग्य बनाना कि वे स्वंय के साथ अन्य लोगों को भी रोजगार के अवसर उपलब्ध करा सके।

स्वरोजगार योजनाओं के संचालन के लिए जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्रो की स्थापना सन् 1977 की औद्योगिक नीति के तहत की गई। यह जिला स्तर की केन्द्रीय संस्था है जो जिले के उद्यमियों को वित्त एवं साख,तकनीकी परामर्श, विपणन सुविधायें एवं समस्त सरकारी सुविधाएं एक ही स्थान पर उपलब्ध करवाती है। इसे एकल खिड़की विचारधारा की संज्ञा दी जाती है। विकास से आशय उन्नति से होता है और आर्थिक विकास से आशय स्वंय की आर्थिक रुप से उन्नति करना है। इसके साथ शैक्षणिक विकास, वित्तीय संस्थाओ का विकास और अन्य आधारभूत सुविधाओं का विकास आता है जिससे व्यक्ति स्वंय का रोजगार स्थापित करके आर्थिक विकास के पथ पर अग्रसर होता है।

प्रकल्पना, अध्ययन का उद्देश्य एवं क्षेत्र – प्रस्तुत अध्ययन में जिला व्यापार एवं उद्योग केंद्र द्वारा संचालित विभिन्न स्वरोजगार योजनाओं को सम्मिलित किया गया है। आर्थिक हित संवर्धन में योजनाओं की प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रुप से महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। शासन द्वारा इन योजनाओं के माध्यम से स्वरोजगार के विकास के दावे समय-समय पर किये जाते रहें है। यद्यपि यह सामान्य धारणा रही है कि इनमें अनेक कमियां विद्यमान है। योजनाओं में व्यवसाय का चयन, व्यवसाय का संचालन एवं ऋण वापसी जैसे महत्वपूर्ण मामलो पर ध्यान नहीं दिया गया है। पर्याप्त प्रचार प्रसार के अभाव से कई हितग्राही योजनाओं का लाभ नहीं उठा पाते है। अध्ययन में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र भी इस कड़ी में सम्मिलित है। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य स्वरोजगार योजनाओं के प्रभाव का अध्ययन करके उसमें परिलक्षित कमियों को दूर करना है।

योजनान्तर्गत प्राप्त लक्ष्य,स्वीकृत एवं वितरित प्रकरण एवं राशि ।

दीनदयाल स्वरोजगार योजना **(तालिका नं.1 देखें अगले पृष्ठ पर)**

तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता हैं कि दीनदयाल स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत वर्ष 2005-06 से 2009-10 तक राज्य शासन द्वारा प्रदत्त लक्ष्य की संख्या में असमानता रही है। सर्वाधिक लक्ष्य वर्ष 2005-06 में 155 रहा है, तथा सबसे कम 84 वर्ष 2008-09 में रहा। कुल स्वीकृत प्रकरण 565 और कुल स्वीकृत राशि 733.65 एवं कुल वितरित प्रकरण 395 एवं कुल वितरित राशि 470.04 रुपये थी। जो लक्ष्य से कम है, अत: यह कहा जा सकता है कि इस जिले के आर्थिक विकास में योगदान कम है।

रानी दुर्गावती अनु.जाति/जनजाति स्वरोजगार योजना (तालिका नं.2 देखें अगले पृष्ठ पर)

तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि वर्ष 2005-06 में लक्ष्य 53 प्रकरण का था तथा स्वीकृत 73 एवं वितरित 107 प्रकरण थे। आगामी वर्षो में स्वीकृत प्रकरण लक्ष्य से कम रहे है। वर्ष 2005-06 में ही लक्ष्यानुरुप ऋण वितरण किया गया। आगामी वर्षो में लक्ष्य से कम ऋण वितरित किया गया। अत: रानी दुर्गावती अनु.जाति/जनजाति स्वरोजगार योजना का योगदान अपेक्षाकृत कम है। अत: आगामी वर्षो में अधिकाधिक ऋण वितरित किया जा सकेगा।

प्रधानमंत्री रोजगार योजना (तालिका नं.3 देखें अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि वर्ष 2005-06 में लक्ष्य 1305 प्रकरण का था तथा स्वीकृत 1441 एवं वितरित 1309 प्रकरण थे जो लक्ष्य के 100 प्रतिशत से अधिक है। किन्तु आगामी वर्षो में स्वीकृत प्रकरण लक्ष्य से कम रहे है। वर्ष 2005-06 में ही लक्ष्यानुरुप ऋण वितरण किया गया आगामी वर्षो में लक्ष्य से कम ऋण वितरण किया गया। योजना वर्ष 2008-09 से बंद कर दी गई है , प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम प्रारंभ किया गया है।

प्रधानमंत्री रोजगार योजना (तालिका नं.4 देखें अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि अन्य स्वरोजगार योजनाओं की तरह प्रधानमंत्री रोजगार योजना में प्राप्त प्रकरणों में से अधिकतर प्रकरण प्रेषित किये जाते है। किन्तु विभिन्न औपचारिकताओं की पूर्ति नहीं होने के कारण अधिकतर प्रकरण लम्बित ही रह जाते है। जिससे कम लोगों को ऋण प्राप्त होता है।

रानी दुर्गावती अनुसूचित जाति जनजाति स्वरोजगार योजना (तालिका नं.5 देखें अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि हर वर्ष लक्ष्य से अधिक हितग्राही ऋण के लिए आवेदन करते है जिसमें अधिकतर आवेदन पत्र

* शोधार्थी, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रेषित भी किये जाते है किन्तु कम प्रकरण स्वीकृत हो पाते है तथा अधिकतर प्रकरण लम्बित रह जाते है।

दीनदयाल स्वरोजगार योजना (तालिका नं.6 देखें अगले पृष्ठ पर)

तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि प्रतिवर्ष लक्ष्य से अधिक आवेदन पत्र प्राप्त होते है, अधिकतर ऋण के प्रकरण प्रेषित भी किए जाते है आवेदन पत्र में त्रुटियां रह जाने या निर्धारित मापदण्डो को पालन नहीं होने से जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र के माध्यम से पुन: हितग्राही को वापस कर दिया जाता है।

निष्कर्ष – स्वरोजगार योजनाओं के संचालन में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र के अतिरिक्त बैंको की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है। बैंको के सहयोग के अभाव में स्वरोजगार योजनाओं का संचालन नहीं किया जा सकता है। टास्क फोर्स द्वारा प्रेषित प्रकरणों को बैंक द्वारा वित्त पोषण किया जाता है। टास्क फोर्स ही समस्त बैंको के वार्षिक लक्ष्य तय करती है। प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले उद्यमी को ऋण प्रदान किया जाता है।

बैंक एक वाणिज्यिक प्रतिष्ठान है, इसका प्रमुख कार्य वित्त पोषण करना है। किसी भी उद्यमी को ऋण प्रदान करने से पहले बैंक यह सुनिश्चित करता है कि उद्यमी को ऋण सुविधा प्रदान करने पर ऋण वापसी संभव है या नहीं। बैंक यर्थाथ में स्वरोजगार योजनाओं के लिए हितग्राहियो की क्षमता व अन्य पहलू को ध्यान में रखकर ऋण स्वीकृत करते है। जिले का लीड बैंक **बैंक ऑफ इण्डिया** है। जिला स्तरीय समिति द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को पूर्ण करने व ऋण वसूली समिति मे बैंक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

तालिका नं.1 – दीनदयाल स्वरोजगार योजना

वर्ष	लक्ष्य	स्वीकृत प्रकरण	स्वीकृत राशि	वितरित प्रकरण	वितरित राशि
2005-06	155	145	169.3	104	116.80
2006-07	138	111	159.86	89	96.97
2007-08	95	92	116.57	74	80.68
2008-09	84	105	131.98	40	63.03
2009-10	84	112	155.94	88	112.92
योग	556	565	733.65	395	470.04

राशि लाखों में

स्त्रोत – जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, उज्जैन

तालिका नं. 2 – रानी दुर्गावती अनु.जाति/जनजाति स्वरोजगार योजना

वर्ष	लक्ष्य	स्वीकृत प्रकरण	स्वीकृत राशि	वितरित प्रकरण	वितरित राशि
2005-06	53	73	47.07	107	182.15
2006-07	155	143	358.11	21	37.94
2007-08	95	104	325	20	36.4
2008-09	131	140	526.36	14	156.7
2009-10	103	94	627.59	32	317.92
योग	537	554	1884.13	194	731.11

राशि लाखों में

स्त्रोत-जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, उज्जैन

तालिका नं. 3 – प्रधानमंत्री रोजगार योजना

वर्ष	लक्ष्य	स्वीकृत प्रकरण	स्वीकृत राशि	वितरित प्रकरण	वितरित राशि
2005-06	1305	1441	986.87	1309	759.83
2006-07	1300	1343	851.05	1139	698.05
2007-08	650	651	467.76	543	333.85
योग	3255	3435	2305.68	2991	1791.73

राशि लाखों में

स्त्रोत –जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, उज्जैन

तालिका नं. 4– प्रधानमंत्री रोजगार योजना

वर्ष	लक्ष्य	प्राप्त प्रकरण	प्रेषित प्रकरण	स्वीकृत प्रकरण	लम्बित प्रकरण
2005-06	1305	3405	3310	1439	1871
2006-07	1300	3144	2946	1351	1595
2007-08	650	1731	1653	357	1296
योग	3255	8280	7909	3147	4762

राशि लाखों में

स्त्रोत – जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, उज्जैन

तालिका नं. 5 – रानी दुर्गावती अनुसूचित जाति जनजाति स्वरोजगार योजना

वर्ष	लक्ष्य	प्राप्त प्रकरण	प्रेषित प्रकरण	स्वीकृत प्रकरण	लम्बित प्रकरण
2005-06	53	256	147	73	74
2006-07	154	372	329	143	186
2007-08	95	267	215	104	111
2008-09	131	432	409	140	269
2009-10	103	322	243	94	149
योग	536	1649	1343	554	789

राशि लाखों में

स्त्रोत – जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, उज्जैन

तालिका नं.6 – दीनदयाल स्वरोजगार योजना

वर्ष	लक्ष्य	प्राप्त प्रकरण	प्रेषित प्रकरण	स्वीकृत प्रकरण	लम्बित प्रकरण
2005-06	155	389	156	145	11
2006-07	138	414	329	111	218
2007-08	95	252	159	92	67
2008-09	84	524	483	105	378
2009-10	84	390	374	112	262
योग	556	1969	1501	565	936

राशि लाखों में

स्त्रोत – जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, उज्जैन

****

भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल में कर्मचारी विकास कार्यक्रमों एवं अनुषंगी लाभों का मूल्यांकन

डॉ. इफ्फत खान *

प्रस्तावना – किसी भी उपक्रम में कर्मचारियों की भर्ती के बाद विशिष्ट कार्यों में योग्य बनाने के लिए कर्मचारी विकास कार्यक्रमों का महत्वपूर्ण स्थान है। कर्मचारियों के सामूहिक प्रयासों से संगठन को सफलता मिलती है। सार्वजनिक उपक्रमों में कर्मचारी विकास कार्यक्रमों का और भी अधिक महत्व इसलिए हैं क्योंकि यह उपक्रम राष्ट्रीय महत्व के होते हैं। सार्वजनिक उपक्रमों के कुशल संचालन पर भारतीय अर्थव्यवस्था का विकास निहित है। 'यदि हम अपने अनुभवों से कोई पाठ सीखना चाहते हैं तो वह यह है कि सार्वजनिक उद्योगों की सफलता–योजनाओं, विनियोगों, तकनीक, स्वायत्ता, नियंत्रण और संगठन के प्रारूप पर ही नहीं वरन् उस कार्य– कुशलता पर निर्भर करती है। जिस कुशलता के साथ प्रशासक और प्रबंधक उनका संचालन करते हैं।'[1]

उच्च उत्पादकता कुशलता से प्राप्त की जाती है। कुशलता प्राप्त करने के लिए कर्मचारी विकास कार्यक्रमों एवं अनुषंगी लाभ अधिक कार्य करने हेतु प्रेरित करते हैं। इन कार्यक्रमों से गुणवत्ता में सुधार होता है। 'प्रबंध विकास को व्यवस्थित प्रशिक्षण व नियोजित सेवीवर्गीय विकास के रूप में परिभाषित किया जा सकता है ताकि उनके द्वारा प्राप्त किया गया ज्ञान को प्रभावशीलता हेतु उपयोग कर सके।'[2]

शोध परिकल्पनाएं –भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल में विद्यमान विकास कार्यक्रम एवं अनुषंगी लाभों के विभिन्न पहलुओं के मूल्यांकन हेतु परिपकल्पनाएं निम्नानुसार हैं –

1. बी.एच.ई.एल. की सफलता में कर्मचारी विकास कार्यक्रमों एवं अनुषंगी लाभों का योगदान है।
2. विकास कार्यक्रमों द्वारा कई पहलुओं को उजागर किया जा सकता है।
3. अनुषंगी लाभों से कर्मचारी एवं उनके परिवार लाभान्वित होते हैं।
4. कर्मचारी विकास कार्यक्रमों एवं अनुषंगी लाभों से कर्मचारियों में उद्योग के प्रति लगाव की भावना उत्पन्न होती है।
5. कर्मचारी विकास कार्यक्रम एवं अनुषंगी लाभ कर्मचारियों को निष्ठा एवं कुशलता से कार्य करने हेतु प्रेरित करते हैं एवं मधुर श्रम संबंधों के विकास में योगदान देते हैं।

शोध अध्ययन हेतु सूचनाएं एवं समंक प्राप्त करने हेतु सांख्यिकी विधियों का प्रयोग किया गया। द्वितीय समंक प्राप्त करने हेतु भेल के प्रकाशनों, वार्षिक प्रतिवेदनों एवं अधिकारिक वेबसाइट का उपयोग किया गया।

भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल में कर्मचारी विकास कार्यक्रम– भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल में कर्मचारी विकास हेतु निम्न कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है –

औपचारिक शैक्षणिक कार्यक्रम – यहां के कर्मचारियों को लगातार औपचारिक शिक्षा हेतु प्रेरित किया जाता है। शिक्षा पर होने वाले व्ययों की प्रतिपूर्ति भेल द्वारा की जाती है।

अभ्यास सत्रों का आयोजन – भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल अपने कर्मचारियों के विकास हेतु अभ्यास सत्र आयोजित करता है। इन अभ्यास सत्रों में कर्मचारियों के विकास हेतु आवश्यक सुझाव दिये जाते हैं ताकि कर्मचारी सही भूमिका निभा सके।

मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षणो का आयोजन – भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल अपने कर्मचारियों को वर्तमान प्रतिस्पर्धा के युग में तनाव का सामना करने हेतु मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षण सत्र आयोजित करता है। इन आयोजनों में तनाव प्रबंधन, समय प्रबंधन को मनोवैज्ञानिक रूप से कर्मचारियों को सक्षम बनाने के प्रयास किये जाते हैं।

कार्य अनुभवों को साझा करना – कर्मचारियों के विकास कार्यक्रमों में कर्मचारी अपने अनुभवों को एक दूसरे के साथ साझा करते हैं एवं सीखने का प्रयत्न करते हैं ताकि त्रुटियों की संभावना कम हो जाए।

कार्य व विभाग परिवर्तन – भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल अपने कर्मचारियों को भोपाल इकाई में अन्य विभागों में स्थानांतरित करके अन्य कार्यों से परिचित कराता है। इससे कर्मचारियों का चहुमुखी विकास होता है।

अन्य संगठनों में भेजकर – भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल अपने कर्मचारियों को अन्य प्रशिक्षित संगठन जैसे सेल, गेल, ओ.एन.जी.सी. में भेजकर उनको तकनीकी रूप से अधिक सक्षम बनाने में सहायता करता है। भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल इकाई में मानव संसाधन विकास केन्द्र स्थापित किया गया है। इस केन्द्र में कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है।

भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल में कर्मचारियों की संख्या निम्न तालिका में दर्शायी गई है।

तालिका–1 भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल में कर्मचारियों की संख्या 2003–04 से 2010–11

वर्ष	कर्मचारियों की संख्या
2003–04	8310
2004–05	8024
2005–06	7667
2006–07	7667
2007–08	7524
2008–09	7655
2009–10	7570
2010–11	7522

स्त्रोत – वार्षिक प्रतिवेदन।

भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल द्वारा अपने कर्मचारियों के विकास के लिए इकाई स्तर एवं कारपोरेट स्तर पर मानव विकास संस्थानों एवं केन्द्रों की स्थापना की है। यहां कर्मचारियों के लिए कार्यदशायें अनुकूल हैं। इन कार्यक्रमों द्वारा कर्मचारियों के कैरियर विकास को बढ़ावा मिला है एवं ऐसे कर्मचारियों

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

की पहचान हो सकी है जिन्हें पदोन्नति दी जाए। कर्मचारी विकास कार्यक्रमों द्वारा संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायता मिली है। इससे कर्मचारियों को अपनी शक्ति एवं कमजोरियों का पता चलता है। वे अधिक उत्पादन करने में योगदान दे रहे हैं। कर्मचारियों के विकास कार्यक्रमों पर अभिमत निम्न तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका–2

भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल द्वारा कर्मचारियों के विकास कार्यक्रमों पर अभिमत 2014

	प्रतिशत
पूर्णत: सहमत	35
सहमत	45
असहमत	15
पूर्णत: असहमत	05
	100

स्त्रोत – व्यक्तिगत अनुसंधान

उपरोक्त प्रतिशत स्वीकार योग्य है एवं विकास प्रयासों के प्रति कर्मचारियों की सहमति दर्शाता है।

भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल में अनुषंगी लाभ – प्रत्यक्ष वेतन के अतिरिक्त, कर्मचारियों को दी जाने वाली सुविधाएं अथवा लाभ अनुषंगी लाभ कहलाते हैं। अनुषंगी लाभ सामाजिक मूल्यों की पूर्ति करने हेतु प्रदान किये जाते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार 'अनुषंगी लाभों से आशय ऐसी सेवाओं, सुविधाओं तथा आरामो की व्यवस्था करने से हैं जो कारखानों के अन्दर काम करने वाले श्रमिक स्वास्थ्य और शांतिपूर्ण परिस्थितियों में अपना कार्य कर सके तथा अपने स्वास्थ्य और नैतिक स्तर को ऊँचा उठाने वाली सुविधाओं का लाभ उठा सके।[3] अनुषंगी लाभ के अन्तर्गत किन–किन लाभों एवं सेवाओं को सम्मिलित किया जाए इस संबंध में फिशर एवं चेपमेन ने निम्न चार प्रकार के लाभों का वर्णन किया है[4] –

1. कार्य किये गये समय के लिए प्राब्याजि
2. छुट्टियां एवं अवकाश के समय दिया गया वेतन
3. कर्मचारी लाभ 4. कर्मचारी क्रियाएं

अनुषंगी लाभ एवं सेवाएं उपलब्ध कराने का मुख्य उद्देश्य अपने कर्मचारियों की आर्थिक, सामाजिक तथा मनौवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना है ताकि वह अधिक प्रभावी ढंग से कार्य कर सके। इससे श्रमिकों की मजदूरी एवं वेतन का वास्तविक मूल्य बढ़ जाता है। यह प्रेरणाओं को आधारशिला प्रदान करते हैं। कर्मचारियों में संतुष्टि की भावना उत्पन्न करते हैं जिसके फलस्वरूप उनका कारखाने के प्रति लगाव बढ़ जाता है। भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल में विभिन्न प्रकार के अनुषंगी लाभ प्रदान किये जाते हैं जो निम्नानुसार हैं –

भेल उद्योग नगरी – भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स उद्योग नगरी 19.56 वर्ग किलोमीटर में रायसेन रोड़ पर बसी हुई है। यह भोपाल शहर से 7 कि.मी. दूर है। उद्योग नगरी में लगभग दो लाख से ऊपर जनसंख्या निवास करती है। भेल अपने कर्मचारियों को भवन उपलब्ध कराता है। उद्योग नगर में प्रत्येक सेक्टर में शॉपिंग केन्द्र हैं। सुपर बाजारों की स्थापना कम्पनी द्वारा की गई है। उद्योग नगरी में सभी क्षेत्रों में कर्मचारियों एवं उनके आश्रितों के लिए सामुदायिक केन्द्र उपलब्ध हैं। इन केन्द्रों में वाचनालय, पुस्तकालय, रेडियो, टी.वी. और खेलकूद की सुविधाएं उपलब्ध हैं। उद्योग नगरी में देश के विभिन्न भागों के लोग निवास करते हैं इसलिए इसे मिनी भारत भी कहा जाता है। कर्मचारियों एवं उनके परिवार के स्वास्थ्य एवं मनोरंजन के लिए कई उद्यान हैं।

यायायात सुविधाएं – भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल द्वारा अपने कर्मचारियों को घर से कारखाने एवं वापसी हेतु बस सुविधाएं उपलब्ध करायी जाती हैं। इसके अतिरिक्त कर्मचारियों के बच्चों को भोपाल के स्कूल एवं महाविद्यालय में आने जाने के लिए बसों को कम किराये पर उपलब्ध कराया जाता है।

चिकित्सा सुविधाएं – भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल के कर्मचारियों एवं उनके परिवार के सदस्यों के लिए आधुनिक अस्पताल एवं डिस्पेंसरी की सुविधा उपलब्ध कराई जाती है। यहां के अस्पताल आधुनिक उपकरणों से सुसज्जित हैं। यहां इन्टेंसिव केयर वार्ड भी है। आकस्मिक चिकित्सा कक्ष 24 घंटे कार्यशील रहता है। भेल चिकित्सालय में परिवार नियोजन व कल्याण कक्ष भी जनसंख्या नियंत्रण हेतु कार्य कर रहा है। उद्योग नगरी के विभिन्न क्षेत्रों में औषधालय कार्य कर रहे हैं जो उद्योग नगरी के किसी भी जगह से डेढ़ किलो मीटर से अधिक दूरी पर नहीं है। कर्मचारियों एवं उनके आश्रितों को कम्पनी के अस्पतालों से दवाईयां निशुल्क दी जाती हैं। जिन जटिल रोगों की चिकित्सा भेल के अस्पतालों में नहीं होती उन्हें विशेष अस्पतालों में चिकित्सा पर हुए व्यय की प्रतिपूर्ति की जाती है।

शिक्षा सुविधाएं – भेल उद्योग नगरी में कर्मचारियों के बच्चों के लिए हिन्दी तथा अँग्रेजी माध्यमों की शिक्षा सुविधाएं उपलब्ध हैं। भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स शिक्षा समिति उद्योग नगरी में शिक्षा के प्रयास हेतु कार्यशील है। यह शिक्षा संस्थाओं को हर संभव सहायता प्रदान कर रही है। भेल उद्योग नगरी में पर्याप्त संख्या में महाविद्यालय, हायर सेकेण्डरी विद्यालय, मिडिल एवं प्रायमरी स्कूल हैं। अहिन्दी भाषी कर्मचारियों को हिन्दी सिखाने हेतु हिन्दी शिक्षा योजना अक्टूबर 1962 से कार्यशील है।

समूह बीमा योजना – भेल के सभी कर्मचारियों का समूह बीमा योजना के अन्तर्गत बीमा करवाया जाता है। इस योजना के अन्तर्गत अगर दुर्घटना के कारण कर्मचारी की मृत्यु होने पर उसके आश्रितों को निम्न आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है:–

तालिका–3 –भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल में समूह बीमा योजना में देय रकम 2014

कर्मचारियों की श्रेणी	देय रकम (राशि रूपयों में)
ए2/बी1 से ए 6/बी 6 तक वेतनमान	10000
अन्य गैर कार्यपालिक वेतनमान	20000
ई–1 से ई–4 तक कार्यपालक वेतनमान	35000
ई–5 से ऊपर के कार्यपालक वेतनमान	50000

स्त्रोत – भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल

श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम के अन्तर्गत जो क्षतिपूर्ति मृतक के आश्रितों को मिलती है उसके अतिरिक्त उपरोक्त योजना के अन्तर्गत क्षतिपूर्ति दी जाती है। भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स भोपाल में कर्मचारी विकास कार्यक्रमों के फलस्वरूप गुणवत्ता में सुधार, तनावों एवं विश्वव्यापी प्रतिस्पर्धा का सामना करने, कर्मचारियों को सक्षम बना दिया है। भेल में अनुषंगी लाभ– उद्योग नगरी, शिक्षा, चिकित्सा, यातायात सुविधाएं वेतन एवं मजदूरी के अतिरिक्त प्रदान किये जाते हैं जिसके फलस्वरूप तैयार उत्पादन जो 1963–64 में 4.7 करोड़ था वर्ष 2013–14 में बढ़कर 4345.08 करोड़ रूपये हो गया एवं मधुर श्रम संबंधों को बनाये रखने में योगदान दिया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. Mallya, N.N., Public Enterprises in India, p. 176
2. Sanjay H.C. & Kumar, Human Resource Management & Development, 1998, p. 119
3. International Labour Organisation.
4. Fisher & Chapman; Big Costs of little fringes, Harward Business Review, p. 488
5. B.H.E.L. Annual Reports 2003-04 to 2012-13.

प्राचीन भारतीय वेदों में करारोपण, औद्योगिक प्रबंधन शब्दावली एवम् राजनीति

डॉ. विम्मी बहल * डॉ. अनिल शिवानी **

शोध सारांश – वेद आर्यजाति के प्राण है ये मानव मात्र के लिए प्रकाश स्तम्भ है। आधुनिक युग को संस्कृति और सभ्यता का ज्ञान देने का श्रेय वेदों को है। वेद ही विश्व बन्धुत्व कल्याण और शांति के प्रभम उद्घोषक है। वेदों में सभी विधाओं के सूत्र विद्यमान है। प्राचीन भारत में वेदों में जहाँ धर्म, विज्ञान, दर्शन, आचारशास्त्र, नीतिशास्त्र, आयुर्वेद, आध्यात्म संबद्धि सामग्री बहुलता से प्राप्त होती है वही समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र, शिक्षाशास्त्र पर सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। हमने अपने इस शोध में अर्थशास्त्र से संबंधित मुख्यरूप से अर्थव्यवस्था, विविध वृत्तियाँ, कोश का महत्व, कोश का संचय, कर के विविध रूप, उत्तराधिकार के नियमों, व्यापार और वाणिज्य के मूलतत्व, आयात–निर्यात आदि विषयों की विवेचना की है। ब्रह्म और क्षत्र (यानि ब्राह्मण और क्षत्रिय को वेदों में इस बात पर बल दिया गया है कि राष्ट्र की उन्नति एवं समृद्धि के लिए दोनों को मिलकर कार्य करना है दोनों के समन्वय से ही राष्ट्र की श्रीवृद्धि होती है।) प्राचीन ग्रंथों में ब्राह्मण को अग्नि और क्षत्रिय को सूर्य की उपाधि दी गई है। ब्राह्मण में क्षत्रिय के अधिकार और कर्तव्य के विषय में कहा गया है कि वह सारे जीवों का राजा है। वह प्रजा से कर प्राप्त करने शत्रुओं को नष्ट करने एवं ब्राह्मण की रक्षा करने का कार्य करता है।

कुंजी शब्द – वेद, संस्कृति, सभ्यता, समन्वय, व्यापार, कर, कोश, संचय आदि ।

प्रस्तावना – वेदो में व्यापार–वाणिज्य से संबंद्ध वृत्तियाँ –

1. **वैश्य –** वस्तुओं के आदान–प्रदान और व्यापार से आजीविका चलाने वाले को वैश्य कहा गया है।[1]
2. **वणिक् (वाणिज) –** व्यापार से आजीविका चलाने वाले को वाणिज कहते है यह तराजू से वस्तुओं को तोलकर क्रय विक्रय करते है।[2]
3. **गणक –** आय–व्यय का हिसाब रखने वाले, गणना करने वाले मुनीम गणम कहलाते है।[3]
4. **वित्तध –** सेठ या साहूकार। सूद पर धन देने वाला।[4]
5. **संग्रहीता –** वस्तुओं का संग्रह, सुरक्षा की व्यवस्था करना। इसे भण्डारी भी कहते है।[5]

व्यापार और वाणिज्य – वेदों में व्यापार और वाणिज्य से संबंधित सामग्री अल्पमात्रा में मिलती है। अथर्ववेद में व्यापारी के लिए 'वाणिक्' शब्द है। यजुर्वेद में 'वाणिक्' के स्थान पर वाणिज शब्द का प्रयोग है। वाणिज् शब्द से ही वाणिज्य शब्द बना है जिसका अर्थ है, व्यापार, वस्तु विनिमय, और आदान प्रदान। वस्तुओं को नाप–तौल कर लेना एवं देना व्यापार का आधार है। व्यापार मानव जीवन का महत्वपूर्ण अंग है। व्यापार ही वह विद्या है, जिससे कृषि, उद्योग आदि से प्राप्त वस्तुओं को बेचकर हम आजीविका चलाते है। अतएव यजुर्वेद का कथन है कि 'मरूदभ्यो वैश्यम्' [6]

अर्थात् वैश्य का कार्य वायु के तुल्य है जिस प्रकार, प्राण वायु शरीर के अंग–प्रत्यंग में जाकर उसे स्वस्थ और हष्ट–पुष्ट बनाती है, उसी प्रकार वैश्य या व्यापार कार्य समाज को हष्ट–पुष्ट और स्वस्थ बनाते है। वस्तुओं का परिवहन (लाना ले जाना) यथास्थान पहुँचना उनका यथा स्थान विनियोग यह व्यापार का अर्थ है। अथर्ववेद में व्यापार के महत्व को बताने के लिए इन्द्र (परमात्मा, धनवान) को वाणिक् के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इन्द्र हमारे मार्गदर्शक और अग्रणी है। वह व्यापार के विघ्नों और शत्रुओं को दूर कर हमें वृद्धि की तरफ बढ़ाता है। इसलिए कहा गया है कि 'व्यापारे श्रीर्वसति' व्यापार में लक्ष्मी का निवास है।

यजुर्वेद के एक महत्वपूर्ण मंत्र में व्यापार का आधार स्पष्ट किया गया है।

'देहि में ददामि ते, निमे धेहि नि ते दधे।[7]
निहारं च हरासि में, निहारं नि हराणि ते ।। यजु 3.50

अर्थात – आदान–प्रदान और विनिमय के लिए (Demand of supply,Buy&sell) बताया गया है कि तुम हमारी आवश्यकता पूर्ण करो और हम तुम्हारी । कहने का तात्पर्य यह है कि क्रय–विक्रय के लिए वस्तु या मूल्य देते है और वस्तु या मूल्य लेते है।

वेदों में क्रय–विक्रय के दो रूपों का उल्लेख है।

(1) वस्तु विनिमय

(2) मूल्य (Cash) से खरीदना और बेचना।

ऋग्वेद में दस गायों से इन्द्र को एक मूर्ति खरीदने का उल्लेख है।[8] अथर्ववेद में कुछ बहुमूल्य औषधियाँ चादर, दुशाला और मृर्गचर्म आदि वस्तुऐं देकर खरीदी जाती थी। खरीदने योग्य वस्तु के लिए 'प्रक्री' शब्द और खरीदने के लिए अपक्रय शब्दों का प्रयोग मिलता है। कुछ गुणकारी औषधियाँ मोल बेची जाती थी, या यजुर्वेद में उल्लेख है कि सोमलता गाय, सुवर्ण आदि देकर खरीदी जाती थी। वस्तु विनिमय के अतिरिक्त दूसरविधि नगद (Cash) वस्तु खरीदने की थी। शुल्क शब्द का भी प्रयोग (Price) से खरीदने के लिए हुआ है इससे ज्ञात होता है कि आधुनिक समय के साथ प्राचीन समय में भी क्रय–विक्रय की ये दोनों विधाएँ प्रचलित थी, परन्तु मुद्रा का प्रचलन कम होने के कारण अधिकांश क्रय–विक्रय वस्तु विआधारित था। अथर्ववेद में वस्तु

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य एवं प्रबंधन) अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** संकाय अध्यक्ष (वाणिज्य एवं प्रबंधन) अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

खरीदने या क्रय के लिए प्रपण शब्द है तथा बेचने या बिक्री के लिए प्रतिपण शब्द है। अथर्ववेद में वर्णन है कि जो वस्तु खरीदी जाती है वह कुछ लाभ अर्जित करने के लिए खरीदी जाती है अत: उस पर लाभांश रखकर वस्तु बेची जाती है जिससे व्यापार लाभप्रद सिद्ध होता है।

प्रपणो विक्र'श्च, प्रतिपण: फलिनं मा कृणोतु।[9] अ.3.17.8

वेदों में व्यापार के मूलभूत तत्वों के विषय में कुछ विचार प्रस्तुत है उनमें कुछ निम्नांकित है–

1. **भूमि या प्राकृतिक संपदा** – भूमि या प्राकृतिक संपदा व्यापार की प्रथम आवश्यकता है अथर्ववेद में सीता को मानव के लिए ईश्वरीय वरदान के रूप में देखा है सीता ही कृषि और अन्न का आधार है अत: अथर्ववेद में भूमि और सीता को आर्थिक समृद्धि के लिए प्रणाम किया है। ऋग्वेद में पृथ्वी, आकाश, वृक्ष–वनस्पतियाँ, नदियाँ और नल स्त्रोत है इसमें अक्षय धन भरा हुआ है। इस प्रकार ज्ञात होता है कि मनुष्य प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कर अनन्त लक्ष्मी प्राप्त कर सकता है।

2. **श्रम और श्रमिक –** प्रकृति भोग्य है, मानव जाति उपभोक्ता है। प्रकृति और मानव के संयोग से उत्पादन (Production) होता है। उद्योगों के लिए कारू(उद्यमी, श्रमिक) का वर्णन है । ऐतरेय ब्राह्मण का कथन है–

'चरैवेति, चरैवेति (यानि श्रम करते रहो, चलते रहो)

श्रमशील को ही श्री मिलती है। इससे ज्ञात होता है कि प्रकृति और मानव का संयोग, उत्पादन और अर्थ समृद्धि का आधार है।

3. **मूलधन या पूंजी –** व्यापार की तीसरी एवम् अत्यन्त आवश्यकता है – मूलधन की व्यवस्था करना। मूलधन के लिए अथर्ववेद में 'धन' शब्द का प्रयोग है मंत्र में कहा है कि व्यापार के लिए जो धन (पूँजी) लगाई है वह निरन्तर बढ़ती रहे, उसमें लाभ ही हो हानि नहीं । मेरा धन कम नहीं होने पाये।[10] इससे ज्ञात होता है कि व्यापार श्रीवृद्धि के लिए किया जाता है। आय की वृद्धि के लिए।

4. **संघ या संगठन** – व्यापार की चतुर्थ आवश्यकता है – संघ या संगठन। संगठन के द्वारा ही व्यापार को शक्ति मिलती है। व्यक्तिगत उद्योग के बदले सामूहिक उद्योग अधिक लाभप्रद होता है। संघ व्यापार की गति–विधि, क्रय–विक्रय के स्वरूप का निधाब हानिकारक तत्वों का निराकरण आदि का नियंत्रण करता है। ऋग्वेद में संघ या संगठन को गण और व्रात शब्द है।

5. **अध्यवसाय, आहसिकता –** यह व्यवसाय की पंचम आवश्यकता है। संस्कृत में एक प्रचलित सुभाषित है कि – 'साहसे श्रीर्वसति' साहस में लक्ष्मी का निवास है। व्यापार में अनेक संकट है जो उन संकटों से लड़ने का साहस करेगा, बड़े से बड़े खतरे से भी नहीं डरेगा, वही सफल व्यापारी हो सकता है। निडर होकर कार्य को प्रारम्भ कर देने का नाम ही अध्यवसाय है। वितरण के संदर्भ में यजुर्वेद का कथन है कि धन का यथायोग्य और यथास्थान वितरण किया जाना चाहिए। लाभांश में स्वामी, श्रमिक और उपभोक्ता तीनों का अधिकार है। अत: यथायोग्य एवं श्रम के अनुरूप वितरण होना चाहिए। जिस प्रकार आधुनिक व्यवसाय जगत में रहस्य गुणों के द्वारा व्यापार में वृद्धि होती है जिसे आज प्रबंधन के रूप में जानते है उसी तरह ऋग्वेद और अथर्ववेद में व्यापार के भी गुर बताये गये है। जिनमें

1. **चरितम्**
2. **उत्थितम्**
3. **उपोह**
4. **सूझबूझ**
5. **अवसर न चूकना्**
6. **अथक परिश्रम**
7. **नवीन खोज**

प्राचीन वेदों में एवं ऋग्वेद में व्यापार–संबंधी एक सुंदर बात कही गई है कि बेचते समय जो मूल्य एक बार तय हो जाता है वही मान्य है बाद में उसमे कमी या वृद्धि नहीं की जा सकती।

वस्तुओं का आयात–निर्यात – विविध उद्योगों से जो वस्तुएँ तैयार होती थी, उन्हें स्थल मार्ग, जल मार्ग और समुद्री मार्ग से इधर से उधर भेजा जाता था।ऋग्वेद और अथर्ववेद से यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन समय में भी समुद्री यात्राएं मनोरंजन के लिए नहीं, अपितु धन–प्राप्ति और व्यापार के लिए होती थी।ऋग्वेद में आकाशीय मार्ग में चलने वाले वायुयानों के लिए भी 'नौ' और 'रथ' शब्दों का प्रयोग हुआ है। ऋग्वेद में अश्विनी के रथ (विमान) को 'वीडुपत्मभि:' (तीव्र उडने वाले) और 'आशुहेमभि:' (तीव्र गति वाले) अश्वशक्ति वाला कहा गया है।[12] उक्त संदर्भो से ज्ञात होता है कि प्राचीन भारत की दे नहीं आयात–निर्यात है जो आज के समय में वैश्वीकरण को बढ़ावा देती है।

वेदो मे ऋण देने और लेने से संबंधित पर्याप्त सामग्री मिलती है ऋण लेने से होने वाली हानियों को उल्लेख करते हुए कहा गया है कि ऋणदाता के बन्धन में पड़ते है, कटुवचन सुनने पड़ते है, झूठी शपथ खानी पड़ती है, ऋण उतारने के लिए दूसरे से ऋण लेना पड़ता है। अपमित्य ऋण उसे कहते है जो धान्य या द्रव्य इस शर्त पर लिया जाता है कि उसे उसी तरह की वस्तु के रूप में लौटाकर ऋण चुकाया जाएगा। अथर्ववेद में ब्याज के विषय में कला और शफ शब्द आए है। ऋण पर कला (सोलहवॉ भाग) या शफ (आठवॉ भाग) सूद लिया जाता है। ऋग्वेद में वर्णन है कि पणि लोग सूद पर धन देते थे और बहुत ब्याज लेते थे। प्राचीन समय में भी सूद लेने वाले केवल वर्तमान को देखते है, भविष्य या परिणाम की चिन्ता नहीं करते है।

अर्थव्यवस्था – प्राचीन भारत में अर्थव्यवस्था पर भी बहुत ध्यान दिया जाता था इसका उल्लेख वेदों, स्मृतियों एवम् प्राचीन गन्थों से हमे मिलता है। सबसे पहले अर्थव्यवस्था में धन के महत्व को बताया गया है। सैकड़ों मंत्रों में प्रार्थना की गई है कि हमे शुभ, अक्षय, निरन्तर वृद्धिशील धन प्राप्त हो।

हम कभी भूखे प्यासे न रहे हमारी समृद्धि सत्य और सात्विकता पर निर्भर है। ऐसे अनेक उदाहरणो से स्पष्ट है कि धन की महिमा ऊपर है जीवन की सभी सुख सुविधाएँ धन पर निर्भर है। दीनता, हीनता, भूखा–प्यासा रहना आदि का मूल कारण अर्थ का अभाव है। इसलिए वेदो में पग–पग पर धन प्राप्ति की कामना की गई है। धन प्राप्ति का साधन पवित्र होना चाहिए क्योंकि अपवित्र साधनो से लक्ष्मी अवश्य प्राप्त होती है परन्तु वह स्थायी नहीं रहती। वेदों में इस बात पर भी ध्यान किया गया है कि धन प्राप्ति के कुछ विशेष अवसर जीवन में आते है उस समय यदि सावधानी रखी जाये तो व्यापार में श्रीवृद्धि होती है।

कोश (कोष) – वेदों के कोश शब्द का अनेक मंत्रो के उल्लेख है। कोश शब्द धन रखने के पात्र, सन्दूक या भण्डार आदि के लिए प्रयुक्त है। अथर्ववेद के एक मंत्र से ज्ञात होता है कि कोश शब्द कोषागार या धन भंडार के लिए बना है। उसमें से धन निकाला जाता था तथा उसमें पुन: भरकर सुरक्षित रखा जाता था। मंत्र में यह भी कहा गया है कि ब्रह्मरूपी अक्षय कोषगार से वेदज्ञानरूपी रत्न (धन) निकाला गया है फिर उसमें ही सुरक्षित रख दिया गया है। [20]

महाभारत शान्तिपर्व में भीष्म पितामाह ने कहा कि राजा और राज्य की जड़ ही कोश है। इसलिए राजा का परम कर्तव्य है कि यत्नपूर्वक कोश की

रक्षा करे। शुक्रनीति में भी कोशवृद्धि के उपायों का वर्णन है। राजा प्रजा से भूमिकर, शुल्क (चुंगी) तथा दण्ड आदि के माध्यम से कोश वृद्धि करे।

तीर्थ स्थानों पर यात्रीकर लगावे । कोश वृद्धिके लिए कर इस प्रकार लगाया जाये जिस प्रकार माली वृक्षों से फूल लेता है, किन्तु उन्हें नष्ट नहीं करता है, इसी प्रकार राजा प्रजा से कर ले। वह प्रजा की रक्षा करके, शत्रुओं को करदाता बनाकर, उनके धन से अपने कोश की वृद्धि करे।

'' मालाकारस्य वृच्येव, स्वप्रजारक्षणेन च।
शत्रु हि करदीकृत्य, तद्धनै; कोशनवर्धनम्।। [21]

उक्त श्लोक से यह स्पष्ट है कि कर का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जिससे प्रजा का उत्पीडन न हो और कर उन्हे भार प्रतीत न हो। वेदो में कोश सचंय के मुख्य दो साधनों का उल्लेख है।

1. बलि 2. शुल्क

1. बलि – राजा प्रजा से राज्य संचालन और राष्ट्र सुरक्षा के लिए जो कर चाहे वह धन (Cash) या धान्य (Kind) के रूप में लेता है तो उसे बलि कहा गया है। क्रय विक्रय, यात्रा आदि पर जो कर लगाया जाता है उसे शुल्क का नाम दिया है। राजा के लिए निर्देश है कि वह कर से धन को जनोपयोगी विभिन्न योजनाओं में व्यय करे। प्रशासन के लिए धन और धान्य दोनों की आवश्यकता होती थी। कर कितना लिया जाये इस पर विद्धवानों मे एक सहमति नहीं है। अथर्ववेद से ज्ञात होता है कि प्रारम्भ मे यह कर आय का सोलवां भाग अर्थात सवा छह प्रतिशत लिया जाता था। इसमें सभी प्रकार के शिल्प, व्यवसाय, कृषि आदि सम्मिलित है। स्मृतियों के काल तक पहुँचते-पहुँचते यह कर सोलवां भाग न रहकर षष्ठ भाग यानि सवा सोलह प्रतिशत हो गया। इससे यह ज्ञात होता है कि समय के परिर्वतन के साथ-साथ राजकीय रक्षा व्यय बढते गए और स्मृतिकाल में यह बढ़कर सवा सोलहा प्रतिशत हो गया।

2. शुल्क – अथर्ववेद से ज्ञात होता है कि शुल्क के रूप में भी कर वसूल किया जाता था। नदी नालों से धन प्राप्त करना यानि नदी पार करने वालो, नहर, नालों आदि से कृषि कार्य तटकर लगाया जाता था। घी दूध की बिक्री पर कुछ कर लगाया जाता था । कर के विविध रूप - मनुस्मृति मे कर के 5 प्रकारों का उल्लेख है - बलि, कर, शुल्क, प्रतिभाग और दंड।

1. **बलि** 2. **कर** 3. **शुल्क** 4. **प्रतिभाग**
5. **दण्ड**

महाभारत में इन करो को एकत्र करने के लिए राजा मण्डियों को अत्यन्त विश्वसनीय व्यक्तियों को नियुक्त करने का आदेश है आचार्य कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में कर संग्रह के विषय में कहा है कि कर संग्रहकर्ता अधिकारी को समाहर्ता (Collecter) नाम दिया है। आय के सभी साधनों को सात भागों में बॉटा गया है

1. **दुर्ग** - शुल्क (चुंगी) दंड (जुर्माना) शिल्पियों, कलाकारों बढ़ई लुहार आदि से लिया जाता है।
2. **राष्ट्र** - इसमें खेती पर कर, उपहार, फल-वृक्ष, बिक्रीकर आदि सम्मिलित है
3. **खनिज –** इसमें खेती पर कर, उपहार, फल-वृक्ष, बिक्रीकर आदि सम्मिलित है।
4. **सेतुकर** - फल-फूल, केला, हल्दी, अदरख, अन्न के खेत पर लगने वाला कर।
5. **वजकर** - पशु-पक्षियों के पाल, वन से लकडी कटाई आदि पर।
6. **व्रजकर** - गोशाला, पशुशाला, धुडसाल पर।
7. **वणिकपथ कर** - स्थलमार्ग, जलमार्ग से किया जाने वाला व्यापार कर (यातायात कर) है।

कर लेने के प्रकार – महाभारत में इस विषय में विस्तृत व्याख्या की है इस विषय के उपाय ये बताए है।

1. महाभारत का कथन है कि कर इस प्रकार लिया जाये, जैसे वाटिका से पके हुए फल लेते है। माली की तरह बनो, पके हुए फलो को लो। जिससे प्रजा क्रोधित नहीं होगी ।
2. जिस प्रकार ग्वाला बछड़े का ध्यान रखते हुए और थनों को हानि न पहुँचाते हुए गाय का दूध दुहता है उसी प्रकार प्रजा के हित का ध्यान रखते हुए कर ले।

महाभारत में कहा गया है कि अनिवार्य परिस्थिति में ही कर को बढ़ाये अन्यथा नहीं। प्रजा का उत्पीड़न करने वाले दुराचारी, अत्याचारी प्रवृति के लोगों पर कड़ा नियंत्रण रखे। ऐसे लोगों के ये नाम है जिनमें शराब के ठेकेदार, वेश्याएँ, वेश्याओं के दलाल, जुआरी, चोर, डाकू और असामाजिक तत्व।

निष्कर्ष – संक्षेप में हम कह सकते है कि वेदों में समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र, कोश का महत्व, व्यापार और वाणिज्य के मूलतत्व, आयात-निर्यात एवम् कर के विभिन्न रूपों की विवेचना करते हुए एवम् विभिन्न सिद्धातों प्रक्रियाओ का अनुसरण आधुनिक समाज में कुशलता पूर्वक करके मानवीय साधनों की कुशलता एवं दक्षता का विकास कर सकते है। अत: भारत वर्ष लम्बी अवधि तक विदेशियों का गुलाम रहते हुए भी अपनी सांस्कृतिक, लौकिक, धार्मिक परंपराओं के द्धारा आज भी विश्व विख्यात है अपने राजनीति एवं अर्थशास्त्रीय सिद्धांतों के लिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मरूद्भ्यो वैश्यम्। यजु.30.5
2. वणिजम्। अ.3.15.1
3. गणकम्। यजु. 30.20
4. वित्तधम्। यजु.30.11
5. संग्रहीता। यजु.16.26.12
6. यजुर्वेद 30.5
7. यजुर्वेद 3.50
8. दशभिर्ममेन्द् क्रीणाति धेनुमि
9. अ. 3.17.8
10. येन धनेन प्रपणं चरामि. तन्मे भूयो भवतु मा कनीय:। अ. 3.15.5
11. शनुं नो अस्तु चरितम् उत्थितं च। अ. 3.15.4
12. ऋग्वेद 1.11.2
13. नवारत्नीन्। अ. 16.57.5
14. एकशतं लक्ष्म्यो मर्त्यस्य। अ. 7.115.3
15. रमन्तां पुण्या लक्ष्मी:। अ. 7.115.4
16. यत् त्वा तुरीयम्। ऋग्. 1.15.10
17. क्रत्वे दक्षाय जीवसे। अ.(6.18.2, 1.111.2)
18. अक्षुध्या अतृष्या स्त। अ. 7.60.4
19. अनृणा अस्मिन् अनृणा: परस्मिन्। अ. 6.117.3
20. यस्मात् कोशाद् उद्भराम वेदं, तस्मिन् उन्तरव दहम एनम्। अ.19.72.1
21. शुक्र 0.4.2.18

प्राचीन भारत के लघु एवं गृह उद्योग

डॉ. सारिका मिश्रा *

शोध सारांश –भारत में स्वरोजगार की परंपरा प्राचीनत रही है इस बात के प्रमाण भारत के संस्कृत साहित्य में प्राप्त होता है। विभिन्न ग्रन्थ जैसे अथर्ववेद, यजुर्वेद, ऋगवेद, विभिन्न स्मृतियॉ कौटिल्य का अर्थशास्त्र के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भारत में लघु एव गृह उद्योग काफी विकसित हुआ करते थे। भारत के उद्योग शिल्प आधारित होते थे इन उद्योगों मे मशीनों का प्रयोग नहीं के बराबर हुआ करता था प्राचीन भारत के उद्योगों में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण होती थी। इस शोध पत्र के माध्यम से प्राचीन भारत के कुछ लघु एवं गृह उद्योगों का वर्णन कर प्राचीन भारतीय अर्थव्यवस्था में उनका योगदान क्या हुआ करता था इसका वर्णन किया जा रहा है। इस शोध पत्र का मुख्य उद्धेश्य प्राचीन भारत के लघु एवं गृह उद्योगों से परिचित कराना है। प्राचीन भारतीय उद्यौगिक संकल्पना जो लघु एवं कुटीर उद्योगों पर आधारित थी। वर्तमान भारत के लिये उपयोगी सिद्ध हो सकती है क्योंकि भारत न केवल प्राकृतिक अपितु जनसंख्यात्मक दृष्टिकोण से बाकी देशों से अलग है। हमारे यहॉ श्रम शक्ति बहुतायत में है। अर्थात् अगर हम शिल्प आधारित लघु एवं कुटीर उद्योगों को महत्ता प्रदान करते है तो हमारे देश में व्याप्त बेरोजगारी की समस्या का काफी हद तक समाधान हो सकता है। हमारे देश की पुरानी शिल्प कलाओं को अगर फिर से महत्व दिया जाए तो इस देश में गॉव से शहरों की ओर रोजगार के लिये आने वाले लोगों की संख्या भी कम हो सकती है। इसके चलते शहरीकरण कम होगा तथा प्रदूषण की समस्या का समाधान हो सकेगा। प्राचीन भारत की शिल्प कलाओं का उन्नयन कर न सिर्फ कौशल उन्नयन होगा अपितु उच्च कोटि की वस्तुओ का निर्माण हो सकेगा। तथा उनका अच्छा मूल्य प्राप्त किया जा सकेगा अत: इस शोध पत्र के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया जा रहा है कि प्राचीन भारतीय उद्योगिक संकल्पना को अपनाकर भारत कई वर्तमान समस्याओं का समाधान कर सकता है।

कुंजी शब्द– वस्त्र, कर्मार, स्थपति, हिरण्यकार, चर्मकार, सौचिक, मणिकार आदि।

प्रस्तावना – प्राचीन भारतीय ज्ञान एवं विज्ञान की परम्परा अत्यंत विकसित एवं उन्नत रही है। भारतीय संस्कृत साहित्य में लगभग सम्पूर्ण विषयों से सम्बन्धित ज्ञान उपलब्ध है। प्राचीन भारतीय संस्कृत के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारत में व्यापार एवं वाणिज्य काफी समृद्ध हुआ करता था। ऋगवेद, अर्थवेद, यजुर्वेद, कौटिल्य के अर्थशास्त्र, ब्रहस्पति नीति आदि प्राचीन ग्रन्थों के अध्ययन उपरान्त कहा जा सकता है कि भारत में व्यापार, उद्योग, मुख्य रुप से गृह उद्योग शिल्पकलायें काफी विकसित अवस्था में थे तथा हमारे यहॉ उच्च कोटी की वस्तुओं का उत्पादन होता था। व्यापार एवं वाणिज्य से सम्बन्धित नियमावली हुआ करती थी जिसके आधार पर क्रय विक्रय किये जाते व्यापारिक मतभेद उत्पन्न होने पर उनके समाधान से सम्बन्धित नियमावली भी हुआ करती थी जिसमें पीड़ित पक्ष को क्षतिपूर्ति की व्यवस्था तथा दोषी के लिए दण्ड के प्रावधान भी हुआ करते थे। भारतीय संस्कृत साहित्य के अध्ययन से पता चलता है कि भारत में बड़े उद्योगों की संकल्पना नहीं हुआ करती थी। भारतीय अर्थव्यवस्था लघु एवं गृह उद्योगों पर आधारित थी। प्राचीन भारत में लगभग हर घर में एक लघु उद्योग हुआ करते थे। जो थोड़ी–थोड़ी मात्राओं में वस्तुओं का उत्पादन कर उनका स्थानीय बाजारों में विक्रय कर आय प्राप्त करते थे तथा अपनी जीविका चलाते थे। इस शोध पत्र के द्वारा मैं प्राचीन भारत में किये जाने वाले गृह उद्योगों का वर्णन कर यह बताना चाहती हॅकि वर्तमान में उन परम्परागत उद्योग की या आवश्यकता है तथा हमारा भारत कालान्तर में भी व्यापार वाणिज्य एवं उद्योगों की दृष्टि से काफी विकसित एवं समृद्ध था। वेदों में बड़े एवं छोटे सैंकड़ो उद्योगों का वर्णन मिलता है। प्राचीन भारत के उद्योगों का आधार शिल्प हुआ करता था। वेदों में शिल्पी के अर्थ में 'कारु' शब्द का प्रयोग किया गया है। ऋगवेद और अथर्ववेद में सात कारुओं का उल्लेख है ये सातो दिनभर परिश्रम करते थे और स्तुतिकर्म करते थे।[1] यजुर्वेद में शिल्प को 'वैऋदेव' कहा है।[2] इसका अभिप्राय यह है कि शिल्प में सभी देवताओं पृथ्वी, जल, अग्नि आदि का समावेश है इसका दूसरा अभिप्राय यह है कि इसका सभी प्रकार के विद्धानों विशेषज्ञों यान्त्रिकों आदि से सम्बन्धित होता था। गोपथ ब्राह्मण में शिल्प की प्रशंसा में कहा गया है कि सभी प्रकार की कला कृतियॉ शिल्प में आती है।[3] हस्तशिल्प, चित्रकला, आभूषण निर्माण, रथनिर्माण आदि का समावेश है इस प्रकार वेदों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारत में शिल्प पर आधारित लघु उद्योग हुआ करते थे। जिनमें से कुछ का वर्णन निम्न प्रकार है–

1. **वस्त्र उद्योग –** वेदों में सूती, ऊनी और रेशमी वस्त्रों का वर्णन किया गया है सूती वस्त्रों के लिए 'वासस् (वासांसि) शब्द तथा ऊनी वस्त्र के लिए 'ऊर्णायु (ऊर्णायुम्) शब्द का प्रयोग किया गया है। ऋग्वेद में सिन्धु प्रदेश को सूती और ऊनी वस्त्र तथा घोड़ों आदि के लिए प्रसिद्ध कहा गया है। (सिन्धु:, सुवासा:, ऊर्णावती)[5] परुष्णी (परुष्ण्याम्ऊर्णा) के किनारे उत्तम ऊनी वस्त्र बनते थे। अथर्ववेद में रेशमी वस्त्र के लिए 'तार्प्य' (तार्प्यम्) शब्द का प्रयोग किया गया है।[6] सायण के अनुसार यह तृष् नामक तृण–विशेष के धागे से बना रेशमी वस्त्र है वस्त्र बुनने वाले को 'वासोवाय' (वासोवाय:) कहा गया है।[7] वस्त्र बुनने वाले स्त्री को 'वय्या' (वय्या:) कहते थे।[8] ऋग्वेद के दो मंत्रों में बुनाई की विधि का उल्लेख है। (इमे वयन्ति)[9]। अथर्ववेद में एक सुन्दर रुपक के द्वारा बुनाई का वर्णन है। (तन्त्रमे के युवती) बुनने का काम

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य एवं प्रबंधन) अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्याल, भोपाल (म.प्र.) भारत

अधिकतर स्त्रियॉ करती थी परन्तु एक मंत्र में स्पष्ट उल्लेख है कि पुरुष भी बुनाई का काम करते थे।[10] (पुमान् एतद्धयति)

2. कर्मार – लोहे के काम करने वाले को कर्मार कहा जाता था। ये लोहे के बर्तन तथा अन्य वस्तुयें बनाते थे। अर्थर्ववेद में इनको 'मनीषिण:' कहा जाता था। (कर्मारा ये मनीषिण)[11] यजुर्वेद में उत्तम शस्त्र बनाने के कारण उन्हें 'मामायै' शब्द के माध्यम से मनोहर वस्तु निर्माण बताया गया है। लोहे को तपाने के कारण इन्हें 'अयस्ताप' भी कहते थे। (अमस्तापम्)[12] इससे ज्ञात होता है कि लोहे को तपाने के लिए बड़ी-बड़ी भट्टियॉ बनाई जाती थी।

3. स्थपति– मकान या भवन बनाने वाला मिस्त्री या राजगीर (स्थपतये)[13] ये उच्च कोटि के महल आदि भी बनाते थे।

4. हिरण्यकार– हिरण्यकार के नाम से सुवर्णकार या सुनार को पुकारा जाता था। (हिरण्यकारम्)[14] यह सोना चॉदी आदि धातुओं को गलाकर विविध आभूषण बनाता था।

5. चर्मकार, चर्मम्न– यजुर्वेद में चर्मकार के लिए चर्मम्न (चर्मम्नम्) शब्द है। ये कच्ची खाल को साफ करके पक्की खाल तैयार करना उसको रंगने का काम करते थे। चमड़े से बने सामान के लिए 'चर्मण्य' (ऐता ब्रा) शब्द है।[16] वेदो में चमड़े के जूते, मशक, ढोल, चाबुक, चमड़े के कवच आदि का उल्लेख है।

6. पेशिता – नक्काशी या कढ़ाई का काम करने वाले पेशिता कहते थे। (पेशितारम्) 17 ये वस्त्रों पर बेल-बूटे काढ़ने या कसीदा काढने का काम करते थे। और विभिन्न धातुओं या लकड़ी पर नक्काशी भी करते थे।

7. सूचीकर्म, सैचिक – सिलाई का काम करने वाले को सूचीकर्म या सौचिक के नाम से जाना जाता था। यह सूती, ऊनी और रेशमी सभी प्रकार के वस्त्रों को सीता था। उस समय मशीने नहीं होती थी। सारा काम हाथों से किया जाता था।

8. मधु निर्माण– मधु निर्माण और शहद की मक्खियों का पालन अच्छा व्यवसाय था। वेदों में शहद की मक्खियों के लिए सरघा शब्द और शहद के लिए सारध मधु कहा जाता था। (मधुन: सारघस्य)[18] अथर्ववेद में शहद की मक्खी के लिए मथ और मधुकृत् शब्द भी आए है। (यथा मक्षा:)

9. चीनी उद्योग– वेदों में चीनी उद्योग का विस्तृत वर्णन न ही मिलता हैं अथर्ववेद में सर्वप्रथम इक्षु (गन्ना) का उल्लेख मिलता है। (इक्षुणा)[19] इस मंत्र में गन्ने की मधुरता का वर्णन है। यजुर्वेद में दो बार 'इक्षव:' का उल्लेख है। (इक्षव:)[20] गन्ने की खेती या गुड़ का स्पष्ट उल्लेख नहीं है परन्तु अपूप आदि मीठी वस्तुओं का उल्लेख ऋगवेद में किया गया हैं।21 (अपूपम्) इससे स्पष्ट होता है कि गन्ने के रस से गुड़ और अन्य मीठी वस्तुओं के बचने का उल्लेख किया गया है।

10. सुराकार– सूरा निर्माण अर्थात् शराब निर्माण एक बड़ा व्यवसाय था। इसमें विभिन्न वस्तुओं का यांत्रिक विधि से अर्क निकाल कर शराब का निर्माण करते थे। सुरा निर्माण को सुराकार (सुराकारम्) कहते थे।[22] यजुर्वेद में सुरा-निर्माण की विधि का उल्लेख है।[23] इसमें सुरा के कतिपय भेदों मासर, नग्नहु आदि का उल्लेख है।

11. मलग (धोबी) अथर्ववेद में धोबी के लिए मलग (मलग इव वस्त्र) शब्द का प्रयोग हुआ है।[24]

12. पेशस्कार्रा – वस्त्रों पर बेल-बूटे काढने के काम को पेशस् कहते थे। इस काम को करने वाली स्त्रियों को पेशरस्कारी (पेशस्कारीम्) कहते थे।[25] यह काम प्राय: स्त्रियॉ करती थी।

13. बिदलकारी– फटे बॉस को बिदल कहते थे। बॉस को फाडकर टोकरी चटाई, पंखा आदि बनाने वाली को बिदलकारी (बिदलकारिम्) कहते थे।[26] यह काम प्राय: स्त्रियॉ करती थी।

14. आंजनीकारी– ऑख के लिए सुरमा बनाने वाली को आंजनकारी (आंजनीकारीम्) कहते थे। यह काम भी स्त्रियॉ करती थी। अथर्ववेद में एक पूरा सूक्त अंजन पर ही है और आंजन के लाभों का इसमें वर्णन है।[27]

15. लाक्षा– अथर्ववेद के एक सूक्त में लाक्षा (लाख) का विस्तृत वर्णन है लाक्षा, चीड़, पीपल, बढ़, प्लक्ष आदि से निकलता था। लाक्षा से अनेक वस्तुऍ बनती थी। लाक्षा का औषधि के रुप में भी प्रयोग होता था।

16. कुलाल– घड़ा आदि मिट्टी के बर्तन बनाने वालो को कुलाल (कुलालेभ्य:) कहते थे।[28]

इस प्रकार कह सकते है कि प्राचीन भारत वाणिज्य व्यापार एवं उद्योगों की दृष्टि से काफी विकसित था। इसलिए भारत को सोने की चिड़िया कहा जाता है जिन शिल्प आधारित उद्योगो का वर्णन इस शोधपत्र में किया गया है वह प्राचीन भारत के उद्योगों का बहुत सूक्ष्म वर्णन है इसके अलावा बहुत से अन्य उद्योगों जिनमें से कुछ के नाम इस प्रकार है रथकार, यान्त्रिक, मणिकार, धनुष्कार, नौकसंचालन, चिकितसाकार्य, चटाई बनाना, बहेलिया (शिकारी) खनिता (खोदने वाला), कोशकारी (बॉस से काम करने वाला), दर्वाहार, लकड़हारा (लकड़ी का काम करने वाला) आदि थे।

निष्कर्ष – इस शोध पत्र के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुॅच सकते है कि प्राचीन भारत में लघु एवं गृह उद्योग का विशेष महत्व था। लोग अपने कौशल से सम्बन्धित वस्तुओं का निर्माण कर अपनी आजीविका चलाते थे। लोगों में हस्थ कौशल होने की वजह से लोग आत्मनिर्भर थे तथा लोगों के पास रोजगार की कभी कमी नहीं थी। वर्तमान भारत में भी अगर प्राचीन उद्यौगिक संकल्पना को अपनाया जाये तो कौशलों को विकसित कर लघु एवं गृह उद्योग को विकसित कर रोजगार की समस्या का समाधान किया जा सकता है। वर्तमान भारत की उद्यौगिक संकल्पना जो मशीन आधारित है उसे कौशल आधारित बनाना होगा। बड़े उद्योगों के स्थान पर लघु एवं कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहित करना होगा। शोधपत्र के माध्यम से एक ओर महत्वपूर्ण तथ्य सामने आया है कि प्राचीन भारत में अधिकांश उद्योगों में महिलायें काम करती थी अर्थात् महिला उदमियों की संख्या वर्तमान भारत से कही अधिक थी। वर्तमान भारत में गृह उद्योगों को महत्व दिया जाये तो महिला उद्योगों की संख्या बढ़ेगी तथा अर्थव्यवस्था में उनके योगदान में वृद्धि होगी तथा वे आत्मनिर्भर होगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. सप्त कारुन। ऋग् । अथर्व.0.
2. शिल्पो वैश्रदेव:। यजु..
3. शिल्पानी शंसति। गोपथ.। .
4. वासांसि। अ.। ऋग् 0.
5. यजु.0। मैत्रा.सं..
6. अ..(7) ऋग् 0.(8) ऋग् .
9. ऋग्.00- (0) अ.0.() अ..
12. यजु.0.() यजु..() यजु.0.
15. यजु 0.(16) ऐत ब्रा..(17) यजु.0.(18) यजु..
19. अथर्व..(20) यजु..(21) ऋग् । 0.
22. यजु.0.(23) यजु..से मंत्र (24) अथर्व..
25. यजु.0.(26) यजु.0.। तैक्ति.ब्रा..
27. यजु.0.(28) यजु..

वाणिज्य शिक्षा के माध्यम से स्थानीय उद्योगों में बढ़ती रोजगार की संभावनाएँ

डॉ. ऋतु पोरवाल * डॉ. सोनी व्यास **

प्रस्तावना – आज का युग विज्ञान के युग के साथ-साथ व्यापार का युग भी है। शिक्षा एक व्यापक शब्द है। हमारे समाज में यह माना जाता है कि शिक्षित के लिए रोजगार की कमी नहीं है। शिक्षा का अर्थ ऐसे ज्ञान से है जिससे हमारे युवा का सर्वांगीण विकास हो अर्थात् उसे किताबी ज्ञान के साथ-साथ व्यवहारिक ज्ञान भी मिले। आज सर्वत्र यह चर्चा हो रही है कि शिक्षा का प्रत्यक्ष संबंध रोजगार से होना चाहिए, अर्थात् ऐसी शिक्षा दी एवं ली जानी चाहिए जो रोजगार दे सके। जबकि प्राचीन समय से ही यह सूत्रवाक्य रहा है कि 'शिक्षा का उद्देश्य रोजगार देना नहीं है।' समूची शिक्षा एवं प्रशिक्षण का उद्देश्य मनुष्य का विकास, उसकी बुद्धिमता का विकास एवं उसके व्यक्तित्व का विकास करना है। जिस संयम के द्वारा इच्छा शक्ति का प्रवाह और विकास वश में लाया जाता है और वह फलदायक होता है, वही शिक्षा कहलाती है। इसलिए मानव की बुद्धिमता को इतना विकसित कर देना चाहिए कि रोजगार स्वयं उसके पास चला आवे। मेरा ग्रामीण परिवेश से काफी जुड़ाव रहा है, वहां एक बुजुर्ग ने ठीक ही कहा था कि 'आजकल का छोरा-छोरी भण्या तो है पर गुणया कोनी' अर्थात् आजकल की पीढ़ी पढीलिखी तो है लेकिन गुणवान नहीं है। यह एकदम प्रासंगिक एंव सार्थक बात है। हमारी वर्तमान वाणिज्य शिक्षा का भी यही कारण है। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग एवं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग भी उच्च शिक्षा में गुणवत्ता लाने के ढेरों सुझाव दे चुके हैं। वाणिज्य का सबसे ज्यादा संबंध उद्योगों, व्यवसायों, बैंकों, बीमा क्षेत्रों एवं इन सभी में काम करवाने वालो एवं करने वालो से होता है। यह बड़ी विडम्बना ही कही जाएगी कि वाणिज्य का स्नातक एवं स्नातकोत्तर छात्र भी आज उस भीड़ में शामिल हो गया है जो रोजगार के लिये दर दर भटक रहे हैं।

व्यापार, व्यवसाय एवं वाणिज्य के प्रत्येक घटक से रोजगार सृजन स्वत: प्रस्फुटित होता है। अत: इनका अध्ययन करने वाले को बेरोजगार होना ही नहीं चाहिए। आज वाणिज्य क्षेत्र के अकादमिक लोगों की चिन्ता यही है कि हमारा उत्पाद बाजार में खप नहीं रहा है तथा स्थानीय व्यवसायी, उद्योगपतियों की चिन्ता यह है कि उन्हें काम करने वाले योग्य व्यक्ति मिल नहीं पा रहे हैं अर्थात् काम देने वाले कह रहे हैं कि काम करने वाले नहीं है। काम चाहने वाले कह रहे हैं कि उन्हें काम मिल नहीं रहा है। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि कहीं न कहीं समस्या है। स्थानीय व्यवसाय, उद्योग एवं व्यापार तथा वाणिज्य शिक्षा इन दोनों के बीच परस्पर एवं निरन्तर संवाद होना चाहिए। इन दोनों में समन्वय बनाया जाना चाहिए, लेकिन ऐसा नहीं हो पा रहा है यही मेरे शोध की प्रमुख जिज्ञासा है

प्रमुख समस्या एवं कारण – वाणिज्य शिक्षा से जुड़े प्रत्येक घटक की चिन्ता तथा उद्योग जगत से जुड़े व्यावसायी, उद्योगपति एवं निगमित क्षेत्र के लोगों की चिन्ता के प्रमुख कारण निम्न हो सकते हैं –

1. व्यापार एवं व्यवसाय का उद्देश्य केवल लाभार्जन रह गया है, ये लाभ कमाने के लिये किसी भी हद तक जाने व कुछ भी उल्टा सीधा करने को उद्धत रहने लगे हैं अत: इन्हें न तो व्यवस्थित लेखांकन की चिन्ता है और न ही सामाजिक जवाब देने की।
2. वाणिज्य शिक्षा के क्षेत्र से जुड़े सभी घटक (शिक्षक, छात्र, पालक, शासन आदि) केवल चिन्ता करते रहते हैं, कोई ठोस कदम उठाने को तैयार नहीं है।
3. ऐसी कोई एजेन्सी, संस्था या पुल उपलब्ध नहीं है जो उद्योगों एवं शिक्षा विदों के मध्य समन्वय स्थापित कर सके।
4. वाणिज्य शिक्षा में कोई प्रायोगिक कार्य नहीं करवाया जाना, जैसे वास्तविक केशबुक लिखवाना, व्हाउचर बनवाना, खाते रखना आदि।
5. वाणिज्य कार्यशाला का नहीं होना, जिसमें वाणिज्य से जुड़े प्रत्येक कार्य का प्रत्यक्ष प्रदर्शन हो ताकि हमारा छात्र पूर्णत: प्रशिक्षित हो सके।
6. स्थानीय उद्योग, व्यापार एवं व्यवसाय के पास यह जानकारी ही उपलब्ध नहीं होती कि उन्हें वास्तव में किस प्रकार के कर्मचारी या कामगारों की आवश्यकताहै।
7. हम नवाचार लाने व पेपरलेस होने या नव सूचना प्रौद्योगिकी को अंगीकार करने के क्षेत्र में केवल प्रयोग कर रहे हैं, इनसे कोई सार्थक परिणाम नहीं निकल पा रहे हैं।

समाधान – स्थानीय व्यापार-व्यवसाय एवं उद्योगों तथा हमारी वाणिज्य शिक्षा के मध्य समन्वय बनाने तथा दोनों के बीच समुचित तालमेल के लिए निम्नलिखित समाधान या सुझाव दिये जा सकते हैं –

1. **उद्योग –** व्यापार एवं वाणिज्य शिक्षा के मध्य इस प्रकार की कोई संस्था या पुल बनाया जाना चाहिए जो इन दोनों क्षेत्र की आवश्यकताओं की जानकारी एक-दूसरे इनमें समन्वय कर सके।
2. वाणिज्य शिक्षा के साथ-साथ प्रायोगिक शिक्षा भी दी जानी चाहिए जिससे हमारा स्नातक या स्नातकोत्तर स्टोरकीपर, लेखापाल, लिपिक, रोकड़िया, अंकेक्षक, मैनेजर या जो भी उसकी योग्यता हो वह कार्य तुरन्त संभाले व उचित रूप से कर सके। वाणिज्य प्रयोगशाला का स्वरूप –

* अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, खाचरौद (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) भारतीय महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

अ) मैन्यूअल प्रयोगशाल – मैन्यूअल वाणिज्य प्रयोगशाला ऐसा प्रकार है जिसमें व्यवहारिक वाणिज्यक विषय संबंधी दस्तावेजप्रपत्र प्रयोगशाला में छात्रों के अध्ययन हेतु रखना चाहिए, जो समस्त विषयों से संबंधित होंगे।

ब) कम्प्यूटरीकृत प्रयोगशाला – आधुनिक तकनीक से ओत–प्रोत ऐसी प्रयोगशाला जिसमें पढ़ाने संबंधी व शोध हेतु अत्याधुनिक संसाधन मौजूद हो ftuesa Projector, VCP, Large Scree, Visulizer, Laptop, TV, SlideProjector, Scanner, Printer , आदि होंगे। सभी फार्मसफोरमेट्स व दस्तावेज उपलब्ध हो ।

3. शिक्षा क्षेत्र में अब नव प्रयोग करते रहने की बजाय वास्तव में मांग के अनुरूप पाठ्यक्रम, परीक्षा, अध्यापन–शिक्षण एवं व्यवहारिक शिक्षा दी जाने के प्रयास करने चाहिए

4. प्रत्येक महाविद्यालय में या विश्वविद्यालय स्तर पर एक वाणिज्य कार्यशाला बनायी जानी चाहिए जिसमें वाणिज्य के शिक्षक एवं विद्यार्थी कार्य कर सके।

5. स्थानीय उद्योगों से प्रत्यक्ष स्थापित करके उनकी आवश्यकता किस प्रकार के रोजगार देने की है ? यह पता लगाया जाना चाहिए तथा उसके अनुसार शिक्षा देकर व्यवहारिक रूप से भी श्रेष्ठ उत्पाद बनाना चाहिए ।

6. वाणिज्य शिक्षा के क्षेत्र में शोध कार्य यथार्थपरक होने चाहिए ताकि हम अपनी कमियों को ढूंढकर उन्हें पूरा कर सकें ।

निष्कर्ष –इस प्रकार वाणिज्य शिक्षा एवं स्थानीय उद्योग–व्यापार के बीच इस प्रकार का समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए कि हमारा छात्र इन उद्योग व्यापार की मांग के अनुरूप पूर्ति करने में सक्षम हो सके । शिक्षा के द्धारा छात्र की बुद्धिमता विकसित की जा सकती है ताकि वह अपनी योग्यता के अनुसार स्वत: रोजगाररत हो सके ।

वाणिज्य शिक्षा तभी सार्थक हो सकेगी और हमारे उद्योगों, व्यवसायों एवं नियमों में प्रत्येक प्रकार के कार्य करने में दक्ष विद्यार्थी हम उपलब्ध करा सकेंगे । हमारा वाणिज्य विभाग ही ऐसा क्षेत्र है जिसका स्नातक चाहे तो भी बेरोजगार नहीं रह सकता केवल उसे व्यवहारिक एवं प्रायोगिक ज्ञान देकर हम योग्य उत्पाद की श्रेणी में ला सकते हैं ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ.शु ला एण्ड कुमावत, औद्योगिक एवं व्यापारिक संनियम ।
2. डॉ.बी.एम.जैन, रिसर्च मेथेडोलॉजी ।
3. प्रतियोगिता साहित्य, वाणिज्य यूजीसी नेट ।
4. कुरूक्षेत्र ।
5. प्रतियोगिता दर्पण ।
6. योजना ।

****

भारत में म्यूचुअल फंड के विकास के संदर्भ में सेबी की भूमिका

डॉ. श्रद्धा काबरा *

प्रस्तावना – निवेश अर्थात् अपने अर्जित धन में से बचत को सही निवेश साधन में विनिवेश करना है। आज बाजार में विभिन्न निवेश माध्यम है, जिनके माध्यम से एक निवेशक निवेश कर लाभ प्राप्त कर सकता है। एक निवेशक अपनी आय को शेयर बाजार, बॉण्ड्स, म्यूचुअल फंड, रियल स्टेट, स्वर्ण, लघु बचत योजना, पी.पी.एफ., फिक्स्ड डिपॉजिट आदि के माध्यम से निवेश कर सकता है। प्रत्येक निवेशक के लिये मुख्य बात यह नहीं है कि वह निवेश के कौन से माध्यम का चयन करता है, अपितु मुख्य लक्ष्य यह है कि वह कितना लाभ अर्जित कर सकता है आज हर व्यक्ति अपनी मेहनत की कमाई को व्यर्थ में गंवाना नहीं चाहता है, बल्कि उसे भविष्य के लिये सुरक्षित रखना चाहता है।

वर्तमान समय में निवेशकों के लिए निवेश के अलग-अलग तरीके उपलब्ध है। उनमें से म्यूचुअल फंड भी एक है। जो निवेशकों को निवेश करने के बेहतर से बेहतर अवसर प्रदान करता है। निवेश करने के लिए इच्छुक व्यक्तियों की अल्प बचतों को एकत्रित कर तकनीकीपूर्ण ढंग से विनियोजित किया जाता है। जिससे निवेशकर्ता को उसके छोटे से निवेश पर सुरक्षा के साथ उचित लाभ प्राप्त होता है। इस प्रकार से कार्य करते हुए म्यूचुअल फंड विकासशील देशों के विकास के लिए सुखद मार्ग प्रशस्त करते है।

म्यूचुअल फंड से तात्पर्य – म्यूचुअल फंड एक ऐसा संग्रहित कोष है, जिसे निवेशकों ने निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सामूहिक निवेश के लिए एकत्रित किया है। म्यूचुअल फंड कम्पनियॉ विभिन्न निवेशकों के धन को बड़ी मात्रा में एकत्रित करती है। एकत्रित किये गये धन को पूर्व में निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु निवेश करती है तथा निवेश से प्राप्त लाभ को निवेशकों में आनुपातिक रूप से बॉट देती है। म्यूचुअल फंड से होने वाले लाभ को देखते हुए आज अधिकांश निवेशक म्यूचुअल फंड में निवेश करना पसंद कर रहे हैं। फिर भी सही ढंग से म्यूचुअल फंड में निवेश करना आज भी निवेशकों के लिए एक चुनौती बना हुआ है।

म्यूचुअल फंड का प्रार्दुभाव – भारत में म्यूचुअल फंड व्यवसाय की शुरूआत सन् 1963 में यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया की रचना के साथ प्रारम्भ हुई। जिसके सूत्रधार भारत सरकार एवं रिजर्व बैंक थे। संसद में पारित अधिनियम के द्वारा यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया की स्थापना सन् 1963 में की गई। भारत में सर्वप्रथम म्यूचुअल फंड का प्रस्ताव यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया के द्वारा ही रखा गया था। अत: म्यूचुअल फंड व्यवसाय में इसका एकाधिकार था। यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया के द्वारा प्रथम बार इस व्यवसाय में यूनिट स्कीम 1964 नामक योजना प्रारम्भ की गई थी। भारत सरकार द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र के बैंको और नवीन संस्थाओं को भी शुरूआत करने के लिए सन् 1990 में म्यूचुअल फंड की अनुमति दी गई। जिससे विकासशील देशो में बचतों में बहुत अधिक वृद्धि हुई। म्यूचुअल फंड संबंधी विनियमन 1993 में भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड (सेबी) द्वारा जारी किए गये।

म्यूचुअल फंड द्वारा निवेशकों के निर्धारित किये गये उद्देश्यों के अनुसार कोषों का निवेश प्रतिभूतियों के नियमानुसार पोर्टफोलियों में किया जाता है। इसके अंतर्गत मुद्रा बाजार के उपकरणों जैसे-वाणिज्यिक प्रपत्र, विनिमय बिल, परिवर्तनीय बॉण्ड्स, सरकारी प्रतिभूतियॉ आदि को शामिल किया जा सकता है। म्यूचुअल फंड में छोटी-छोटी बचतों के निवेश के प्रबंधन हेतु वित्तीय क्षेत्र के विशिष्ट अनुभवी व्यक्तियों को ही नियुक्त किया जाता है, जो लोगों के द्वारा निवेश किये गये धन की सुरक्षा प्रदान करते हुए स्थिर लाभ देना इसका मुख्य कार्य है। आज म्यूचुअल फंड में कई तरह की योजनाएं संचालित होती है। जिसके माध्यम से एक निवेश अपने उद्देश्य के आधार पर किसी भी योजना में निवेश कर लाभ प्राप्त कर सकता है।

भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) की कार्यविधि – एक कुशल एवं स्थिर वित्तीय प्रणाली के अस्तित्व को जीवन्त और प्रभावी बनाने हेतु प्रतिभूति बाजार की आवश्यकता होती है। एक कुशल पूंजी बाजार यह सुनिश्चित करता है कि अर्थव्यवस्था में संसाधनों की कीमत को सही आबंटित किया गया है या नहीं। प्रतिभूति बाजार पर नियन्त्रण हेतु विनियामक ढाँचे का निर्माण किया गया जिसका उद्देश्य प्रतिभूति बाजार में निवेशकों के हितों के संरक्षण हेतु निष्पक्ष, पारदर्शी, कुशल और सुनिश्चित व्यवहार बनाए रखना है। सेबी प्रतिभूति बाजार का शीर्ष नियामक है तथा निवेशकों के हितों की रक्षा और व्यापार के व्यवस्थित विकास की जिम्मेदारी उठाता है।

भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (Securities and Exchange Board of India SEBI) की स्थापना 12 अप्रैल 1888 को वित्त मन्त्रालय द्वारा की गई थी। स्कन्ध विनिमय केन्द्रों की गतिविधियों को नियन्त्रित करने हेतु संसद के दोनों सदनों द्वारा सेबी बिल 1992 को पास किया गया। 4 अप्रैल 1992 से सेबी को व्यापक वैधानिक अधिकार प्राप्त हो गए एवं इसका कार्यक्षेत्र बढ़ गया। सेबी का मुख्यालय मुम्बई में है। सेबी बोर्ड को यह अधिकार है कि वह अन्य स्थानों पर कार्यालय स्थापित कर सकता है। सेबी के दिल्ली, कोलकाता, चेन्नई आदि में क्षेत्रीय कार्यालय स्थापित है।

प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड की स्थापना के उद्देश्य – प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड की स्थापना निम्न उद्देश्यों के लिए की गई थी –

1. प्रतिभूतियों में विनियोक्ता के हितों का संरक्षण करना।
2. प्रतिभूति बाजार का विकास करना।
3. प्रतिभूति बाजार का नियमन करना।

भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड अधिनियम 1992 की प्रस्तावना में स्थापना के उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुए कहा गया है-'निवेशकों के हित संरक्षण हेतु प्रतिभूति बाजार और उससे संबंधित एवं अनुगामी क्रियाओं के नियमन द्वारा प्रवर्तन एवं विकास के लक्ष्य को प्राप्त करना।' सेबी प्रतिभूति बाजार के माध्यम से साधनों को गतिशीलता प्रदान करता है और बाजार विकास के लिये वातावरण तैयार करता है।

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

म्युचूअल फंड के क्षेत्र में सेबी की उपलब्धियाँ – सन् 1992 से ही सेबी पूंजी बाजार के विभिन्न पक्षकारों को प्रभावी रूप में नियन्त्रित एवं नियमित करता रहा है। समय–समय पर सेबी अधिनियम में किए गए संशोधनों से सेबी को ओर अधिक नियामक शक्तियाँ प्राप्त हुई जिसका प्रयोग सेबी ने प्रभावी रूप से किया। स्टॉक एक्सचेन्ज तथा सभी मध्यस्थों के कार्य व्यवहारों को सेबी ने एक दिशा प्रदान की है। जिससे बाजार में व्याप्त कुरीतियों का अंत होकर निवेशक के हित संरक्षण के साथ–साथ प्रतिभूति बाजार का स्वस्थ विकास हो तथा भारत विश्व में उच्च कार्यक्षमता वाले प्रतिभूति बाजार का प्रणेता माना जाए।

म्यूचुअल फंड उद्योग में लगातार वृद्धि को देखते हुए भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड द्वारा निवेशकों की सुविधाओं के लिए कई नियमों में भी संशोधन किया गया है एवं निवेशकों की समस्याओं के समाधान हेतु कई नए अधिनियम भी बनाए गए है। नए नियमों के आधार पर एक निवेशक हेतु निम्न सुविधाऍं उपलब्ध कराई गई है –

- प्रत्येक निवेशक अपनी समस्त म्यूचुअल फंड में अपनी सभी धारिताओं के लिए नि:शुल्क सामान्य लेखा विवरण प्राप्त कर सकता है।
- निवेशक अपने मौजूदा वितरक से अनापत्ति प्रमाण पत्र प्राप्त किए बिना अपना मौजूदा वितरक बदल सकता है।
- वह अपने फण्ड की यूनिटों को अपने डीमैट खाते में रख सकता है।
- वह अपने म्यूचुअल फंड की यूनिटों को स्टॉक दलालों के माध्यम से खरीद/बेच सकता है।
- निवेशक अपने वितरक सहित किसी तीसरे पक्ष को शामिल किए बिना अपनी शिकायत के लिए सीधे म्युचूअल फंड से संपर्क कर सकता है। निवेशक अपनी शिकायत हेतु भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड के कार्यालय जो विभिन्न शहरों में स्थित है पर सम्पर्क कर सकता है।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विषय पर चर्चा के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि वर्तमान में मध्यमवर्गीय निवेशकों द्वारा इस विकल्प का प्रयोग विनियोग के लिए कर रहे हैं। यह विकल्प अल्पबचतों को निवेश का अवसर प्रदान करता है। निम्न आय वर्ग के लोगों के निवेश के लिए यह बेहतर विकल्प साबित होगा। वर्तमान में कई निजी कम्पनियों के भी म्यूचुअल फंड कार्यरत है। इन कम्पनियों पर नियन्त्रण रखने हेतु एवं प्रतिभूति बाजार पर नियन्त्रण हेतु सेबी की स्थापना की गई। फंड का प्रबंध करने वाली संस्था को सेबी द्वारा जारी किये गये नियमों का पालन करना अतिआवश्यक होता है। इसलिए इकाईयों को जारी करने से लेकर उनका आवंटन करने तक हर कार्य नियमानुसार ही होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अग्रवाल, डॉ. वी.पी. – वित्तीय बाजारो की कार्यप्रणाली, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
2. मिश्र, जे.पी. – मुद्रा एवं वित्तीय प्रणालियाँ, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
3. अग्रवाल, ओमप्रकाश, ई.गोर्डन के नटराजन, – भारतीय वित्तीय बाजार एवं सेवाऍं, हिमालय पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई।
4. दत्त, रूद्र एवं सुन्दरम् के.पी.एम. – भारतीय अर्थव्यवस्था, एस. चन्द एण्ड कम्पनी प्रा.लि., नई दिल्ली।
5. कुलश्रेष्ठ, डॉ. आर.एस. – वित्तीय प्रबन्ध, साहित्य भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स प्रा.लि. नई दिल्ली।

पत्र–पत्रिकाएँ –

1. दलाल स्ट्रीट, मुम्बई।
2. नी मंत्र, नई दिल्ली।
3. अर्थनामा, मुम्बई

वेबसाइट –

1. www.mutualfundsindia.com
2. www.sebi.gov.in
3. www.investor.sebi.gov.in

****

डॉ. अम्बेडकर का बौद्धधर्म के विकास में सैद्धान्तिक योगदान

डॉ. मनोज महाजन * डॉ. सुधीर महाजन * *

प्रस्तावना – डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर (14 अप्रेल 1891 – 6 दिसम्बर 1956) ख्याति प्राप्त विधिवेत्ता के साथ साथ भारतीय संविधान के मुख्य शिल्पकार थे साथ ही वे एक बहुजन राजनैतिक नेता और एक बौद्ध पुनरुत्थानवादी भी रहे। निम्न वर्ग में जन्म लेने के कारण अम्बेडकर को हिन्दू जातियों द्वारा उनके साथ अछूत जैसे व्यवहार ने कड़वे एवं विकट अनुभव से परिचय कराया। उन्होंने यह भी देखा कि उनका अनुभव अपूर्व नहीं था वरन् भारत भर में करोड़ों अन्य लोगों के साथ भी ऐसा ही अमानवीय व्यवहार किया जाता था। अनेक वर्षो तक डॉ. अम्बेडकर ने विभिन्न गतिविधियों, आन्दोलनों एवं पत्रिकाओं के माध्यम से सवर्ण हिन्दुओं को अपना व्यवहार बदलने एवं इसमें सुधार लाने के लिए समझाने का प्रयास एवं संघर्ष किया किन्तु अपेक्षित सफलता से वंचित ही रहे। अतंत: वे इस नतीजे पर पहुँचे कि कम से कम व्यवहारिक रूप से हिन्दू धर्म और चतु वर्ण व्यवस्था से उपजी छुआछूत एक दूसरे से अलग होने वाले नहीं है और यदि कोई मनुष्य अपने आप को छुआछूत की दुर्गति व जाति–पाति की लानत से छुटकारा पाना चाहता है तो उसे हिन्दू मत को तिलांजली देनी होगी। अम्बेडकर के मत में **' धर्म मनुष्य के लिए है मनुष्य धर्म के लिए नहीं '** उनके शब्दों में ' लोग और उनके धर्म सामाजिक नैतिकता के आधार पर सामाजिक मानकों द्वारा परखे जाने चाहिए अगर धर्म को लोगों के भले के लिए आवश्यक वस्तु मान लिया जाएगा तो किसी मानक का मतलब नहीं होगा।'

सामाजिक पुनर्निमाण के दृष्टिगत् सन् 1935 में नासिक के निकट येवला की विराट धर्म परिषद में उन्होंने ऐलान किया कि **' यद्यपि मैं हिन्दू जन्मा हूँ , मैं हिन्दू मरूंगा नहीं '**। उन्होंने हिन्दु धर्म की निदां करते हूए कहा था कि ' हिन्दू धर्म सांस्कृतिक रीतियों, कर्मकाण्डों, नियमों एवं निषेधों का मात्र एक संग्रह है एवं कानून के रुप में मात्र वर्ग – आचार है। उन्होंने अपने समर्थक शोषित वर्ग से कोई अन्य धर्म अपनाने का आव्हान किया।

डॉ. अम्बेडकर वास्तव में एक ऐसे धर्म की खोज में थे जो किसी वर्ग / वर्ण विशेष का नही बल्कि सारी मानवता का धर्म हो सके। फलत: 1950 के दशक में अम्बेडकर बौद्ध धर्म के प्रति आकर्षित हुए। चूंकि उनके धर्मोपदेशक आचार्य थेरवादी सम्प्रदाय एवं बरमाई मूल के एक भन्ते थे अतएव वे महाबोधी सोसाईटी ऑफ श्रीलंका से जुड़ गये और बौद्ध भिक्षुओं व विद्वानों के सम्मेलन में भाग लेने के लिए श्रीलंका गए तदुपरान्त उन्होंने बर्मा एवं रंगून आदि देशो की भी इस बाबद् यात्राएं की। कालान्तर में बौद्ध धर्म की गहराईयों से परिचित होकर उन्होंने पाया कि बौद्ध धर्म की अहिंसा ही बुद्धि संगत और व्यवहारिक है। डॉ. अम्बेडकर के विचार में स्वविवेक, बहुमत के हित और बहुजन के सुख को बढ़ाने वाला सामाजिक कर्म बौद्ध धर्म की सबसे प्रमुख नीति है। बौद्ध धर्म की नैतिक व्यवस्था के केन्द्र में आत्मानुभूति एवं आत्मसाक्षात्कार से भरा हुआ स्वतंत्र व्यक्ति है जो निर्वाण में यकीन रखता है तथा जो समाज के सभी सदस्यों को समान समझकर उनके प्रति बन्धुत्व की भावना रखता है एवं इस धर्म में जन्म पर आधारित जाति या छुआछूत के लिये कोई स्थान नहीं है। डॉ. अम्बेडकर की नजर में बौद्ध धर्म सम्पूर्ण मानवता का धर्म है। यही कारण रहा कि डॉ. अम्बेडकर ने 24 मई 1956 को गौतम बुद्ध की 2500 वीं जयन्ती पर अपने बौद्ध धर्म में दीक्षा लेने की घोषणा कर दी। मई 1956 में ही ब्रिटिश ब्रॉडकास्टिंग कॉरपोरेशन लन्दन द्वारा ' Why I like Buddhism and how it is useful to the world in its present circumstances `' विषय पर प्रसारित चर्चा में अम्बेडकर ने कहा था कि 'I prefer Buddhism because it gives three principles in combination, which no other religion does. Buddhism teaches prajna [understanding as against superstition and supernaturalism], Karuna [love] and Samata [equality]. This is what man wants for a good and happy life. Neither god nor soul can save society'

14 अक्टोबर 1956 को दीक्षा भूमि नागपूर में अपने लाखों समर्थकों के साथ पारम्परिक तरीके से तीन रत्नों और पंचशील को अपनाते हुए उन्होंने बौद्ध धर्म ग्रहण किया। यह विश्व का सबसे बड़ा धर्म रुपान्तरण था। उन्होंने इस अवसर पर अपने अनुयायियों के लिए निम्नलिखित 22 प्रतिज्ञाएं निर्धारित की –

1. मैं ब्रम्हा, विष्णु और महेश में कोई विश्वास नहीं करुँगा और न ही मैं उनकी पूजा करुँगा,
2. मैं राम और कृष्ण, जो भगवान के अवतार माने जाते है , में कोई आस्था नही रखूंगा और न ही मैं उनकी पूजा करुँगा,
3. मैं गौरी, गणपति और हिन्दुओं के अन्य देवी–देवताओं में आस्था नहीं रखूंगा और न ही मैं उनकी पूजा करुंगा,
4. मैं भगवान के अवतार में विश्वास नहीं रखता हूँ ,
5. मैं यह नहीं मानता और न कभी मानूंगा कि भगवान बुद्ध विष्णु के अवतार थे, मैं इसे पागलपन और झूठा प्रचार प्रसार मानता हूँ ,
6. मैं श्रद्धा (श्राद्ध) में भाग नहीं लूँगा और न ही पिण्डदान दूँगा ,
7. मैं बुद्ध के सिद्धांतों और उपदेशों का उल्लघंन करने वाले तरीके से कार्य नहीं करुंगा,
8. मैं ब्राहम्णों द्वारा निष्पादित होने वाले किसी भी समारोह को स्वीकार नहीं करुंगा,
9. मैं मनुष्य की समानता में विश्वास करता हूँ ,

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) अ.श.रा.म. शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) अ.श.रा.म. शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ (म.प्र.) भारत

10. मैं समानता स्थापित करने का प्रयास करुंगा,
11. मैं बुद्ध के आष्टांगिक मार्ग का अनुसरण करुंगा,
12. मैं बुद्ध द्वारा निर्धारित परमितों का पालन करुंगा,
13. मैं सभी जीवित प्राणियों के प्रति दया और प्यार भरी दयालुता रखूंगा तथा उनकी रक्षा करुंगा,
14. मैं चोरी नहीं करुंगा,
15. मैं झूठ नहीं बोलूंगा,
16. मैं कामुक पापों को नहीं करुंगा,
17. मैं शराब, ड्रग्स जैसे मादक पदार्थो का सेवन नहीं करुंगा,
18. मैं महान आष्टांगिक मार्ग के पालन का प्रयास करुंगा एवं सहानुभुति और प्यार भरी दयालुता का दैनिक जीवन में अभ्यास करुंगा,
19. मैं हिन्दू धर्म का त्याग करता हूँ जो मानवता के लिये हानिकारक है और उन्नति और मानवता के विकास में बाधक है क्योंकि यह असमानता पर आधारित है, और स्वधर्म के रुप में बौद्ध धर्म को अपनाता हूँ ,
20. मैं दृढ़ता के साथ यह विश्वास करता हूँ कि बुद्ध का धर्म ही सच्चा धर्म है,
21. मुझे विश्वास है कि मैं फिर से जन्म ले रहा हूँ (इस धर्म परिवर्तन के द्वारा)
22. मै गंभीरता एवं दृढता के साथ घोषित करता हूँ कि मै इसके (धर्म परिवर्तन के) बाद अपने जीवन का बुद्ध के सिद्धांतों व शिक्षाओं एवं उनके धम्म के अनुसार मार्गदर्शन करुंगा।

ये प्रतिज्ञाएं व्यक्ति को हिन्दू धर्म के तात्कालिन बन्धनों से पूरी तरह से पृथक करने वाली थी।

डॉ. अम्बेडकर द्वारा रचित 'रिडल्स ऑफ हिन्दूईज्म्' एवं 'बुद्धा एण्ड हिज् धम्म' नामक पूस्तकें उल्लेखनीय रही है। प्रथम पुस्तक में जहॉ हिन्दू समाज व्यवस्था के सामाजिक एवं धार्मिक अन्तर्विरोधों की चर्चा की गई है वहीं दूसरी पुस्तक में गौतम बुद्ध के द्वारा प्रतिपादित बौद्ध धर्म की व्यवस्था की बात कही गई है। उन्होंने गौतम बुद्ध के पाली भाषा में दिए गए उपदेशों का समयानुकुल भाष्य करने के क्रम में इसे धर्म की जगह **'धम्म'** कहने पर जोर दिया है। 'सभी मनुष्य समान है' की अनुभूति इस शब्द में निहित है। धम्म वैयक्तिक नहीं वरन् सामाजिक होकर सदाचार पर बल देता है तथा सामाजिक भेदभावों को दूर कर समानता को विकसित करता है। धर्मानाकुल आचरण के लिये डॉ. अम्बेडकर द्वारा बौद्ध आष्टांगिक मार्ग का विकल्प सुझाया गया। डॉ.अम्बेडकर ने बौद्ध आष्टांगिक मार्ग को ही सक्रिय लौकिक निर्वाण की संज्ञा दी। आष्टांगिक प्रविधि के आठ अंग इस प्रकार है – दृष्टि ,संकल्प, वाचा, कर्म, आजीविका, व्यवसाय, स्मृति एवं समाधि। प्रथम दो अंग प्रज्ञा (बुद्धि एवं विवेक) के, मध्य के तीन अंग वचन व शरीर के तथा अंतिम तीन अंग समाधि के प्रतिनिधिक अवयोग है।

डॉ. अम्बेडकर ने भारत में बौद्ध धर्म को दलितों के संस्कृतिकरण के वैकल्पिक मॉडल के रुप में तो विकसित किया ही साथ ही इसे सहजता की दृष्टि से शास्त्र पक्ष एवं भिक्षु धर्म से पृथक ग्रहस्थ धर्म के रुप में भी समयानुकुल किया। उनका मानना था कि बौद्ध उपदेशानुसार आत्मानुभूति और आत्म साक्षात्कार और निर्वाण की कामना से ही मानवता के धर्म को स्थापित किया जा सकता है तथा व्याप्त अंधविश्वासों, व्यर्थ एवं अर्थहीन रस्मों से स्वतंत्र रहा जा सकता है। इस दिशा में 1955 में डॉ. आम्बेंडकर द्वारा स्थापित 'बौद्ध सोसाईटी ऑफ इण्डिया' द्वारा उनके धर्म सम्बंधी विचारों को गति प्रदान की गई।

फिराक साहब की निम्न पंक्तियॉ अम्बेडकर के मानवतावादी विचारों एवं भावनाओं को सटिक रुप से व्यक्त करती है –

'जिन्हें शक हो वह करे खुदाओं की तलाश
हम तो इन्सानों को दुनिया का खुदा कहते है।'

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. www.en.wikipedia.org -22 Vows of Ambedkar
2. www.drambedkarbooks.com
3. Why Dr. Ambewdkar renounced Hinduism ? Dr.Ramendra
4. भगवान बुद्ध और उनका धम्म – डॉ बाबा साहेब अम्बेडकर (हिन्दी संस्करण)

****

भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश- एक अध्ययन

डॉ. नीरज करारी * डॉ. ओ. एस. मेहता * *

प्रस्तावना – एफ. डी. आई का अर्थ है प्रत्यक्ष विदेशी निवेश किसी एक देश की कंपनी का दूसरे देश में किया गया निवेश प्रत्यक्ष विदेशी निवेश कहलाता है। जिसे FDI (foreign direct investment) भी कहते है आज वैश्वीकरण और उदासीकरण के दौरान में विकासशील देश खुली बाजार व्यवस्था अपनाने हेतु बाध्य हो रहे है। देश में प्रथम औद्योगिक नीति 1948 से ही विदेशी पूँजी निवेश एवं साहस को देश के विकास के लिए महत्त्वपूर्ण माना गया। किन्तु परतंत्रता की लंबी पीड़ा के देखते हुए विदेशी पूँजी का नियंत्रण भारतीय हाथों मे रखे जाने की दृष्टि से प्रबंधन एवं स्वामित्व में पचास प्रतिशत से कम की ही हिस्सेदारी को स्वीकार किया गया। इससे राजनीतिक एवं आर्थिक क्षेत्र में हलचल मच गई कि भारत में एफ. डी. आई. का सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा या नकारात्मक। स्वाभाविक रूप से हर भारतीय यह जानने हेतु उत्सुक है कि देश में एफ. डी. आई की आवश्यकता और प्रासंगिकता क्या है?

उद्देश्य –

1. एफ.डी.आई. के बारे में जानकारी प्राप्त करना।
2. एफ.डी. आई के आने से भारत देश पर पड़ने वाला प्रभाव ।
3. एफ.डी. आई के बिना भारत अन्य देशों से प्रतिस्पर्धा कर सकता है या नहीं ।

क्षेत्र – प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के अंतर्गत विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय कम्पनियों ने भारत के अलग-अलग क्षेत्रों में निवेश किया है इसे दृष्टिगत रखते हुए इस अध्ययन में भारत में किये गये निवेश में वृद्धि तथा सकारात्मक परिवर्तनशीलता को शामिल किया गया है।

अध्ययन की विधि – इस अध्ययन में अनुसंधान की विभिन्न विधियॉ में से विषय की विस्तृता को ध्याान में रखते हुए द्वितीय संमकों के संग्रहण के लिए मूख्य रूप से अवलोकन विधि का प्रयोग किया गया है।

भारत में एफ. डी. आई – भारत में 1990 के दशक में विदेशी का भार बढने, अंतराष्ट्रीय स्तर पर तकनीकी अंतर को कम करने, पूँजी की उपलब्धता प्राप्त करने, प्रतिस्पर्धा का सामना करने, भारतीय व प्राकृतिक संसाधनो का अनुकुलतम प्रयोग करने, निर्यात बाजार खोलने तथा इन सभी के साथ आर्थिक विकास के उच्चस्तर को प्राप्त करने के मद्देनजर एवं जुलाई 1991 को तत्कालीन प्रधानमंत्री पी. वी. नरसिंम्हा राव एवं वाणिज्य उद्योगमंत्री पी. के. कुरियन द्वारा खुली एवं उदार क्रांतिकारी औद्योगिक नीति 1991 की घोषणा की गई इस नीति में विदेशी फर्मो को विशेषकर प्रौद्योगिक प्रस्तुतिकरण, दूरसंचार उपकरण, इलेक्ट्रानिक मदों बीमा क्षेत्र स्वास्थय, पर्यटन परिवहन आदि से संबंधित ऐसे क्षेत्रों में जिनमें देश ने अपने सामर्थ्य के अनुरूप विकास नहीं किया था, में प्रत्यक्ष निवेश की छुट 51 प्रतिशत कर दी गई परिणमस्वरूप अधिक मात्रा में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश भारत की ओर आकर्षित हुआ। सन 1991 से लेकर 2007 – 08 तक कुल 10452 मिलियन अमरीकी डॉलर का निवेश उच्च प्राथमिकता वाले सेवा क्षेत्रों से जुड़े उद्योगो में हुआ।

वर्ष 1991 में जब भारत में अर्थव्यवस्था में उदारीकरण करना प्रारंभ किया गया तब से देश में उद्यमिता तेजी से बढ़ती रही है आज व्यावसायिक समुदाय की कतिपय सबसे अधिक सम्मानित कम्पनियों को उदारीकरण की उपज माना जाता है उदाहरण के लिए सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र की कम्पनी इंफोसिंस जब से उदारीकरण शुरू हुआ तब से 20 कम्पनियॉ बन चुकी है। तथा विश्व स्तर पर पुर्णरूप से स्थापित हो चुकी है भारतीय उद्योगों पर उदारीकरण के प्रभाव का यह लाभ रहा है कि विदेशी कम्पनियॉ अपने साथ उच्च स्तर की विकसित प्रौद्योगिकी लाई जिससे भारतीय उद्योगों का तकनीकी स्तर पर अधिक विकसित करने में सहायता मिली। स्वीड़न की प्रसिद्ध फर्नीचर कम्पनी आइकिया के 10500 करोड़ के विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफ. डी. आई) प्रस्ताव को केन्द्रीय मंत्रिमंडल ने 2 मई 2013 को अपनी स्वीकृति दे दी। इस एफ.डी.आई प्रस्ताव को बिल मंत्रालय की अनुशंगी संस्था विदेशी निवेश संवर्द्धन बोर्ड (एफ. डी. आई.) ने जनवरी 2013 मे ही स्वीकृति दे दी थी।

सिंगल ब्राण्ड रिटेल में 100% प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को संग्रह की स्वीकृति के बाद आइकिया ने सबसे पहले भारत में निवेश की इच्छा प्रकट की थी। प्रस्ताव के अनुसार आइकिया भारत में अपने 0 फर्नीचर एवं होमवेयर स्टोर खोलेगी बाद में 15 और स्टोर खोलने की योजना है विदेशी प्रत्यक्ष निवेश प्रक्रिया के अनुसार रू. 1200 करोड़ से अधिक के निवेश को कैबिनेट की मंजूरी अनिवार्य है इससे कम निवेश पर विदेशी निवेश संवर्द्धन बोर्ड की मंजूरी ही काफी है वित्त मंत्री अरूण जेटली ने अपने पहले बजट में जो सकारात्मक उपायो की घोषणा की है उसका स्वागत किया जाना चाहिए। उन्होंने जिन उपयो की घोषणा की है उनमें कॉपारेशन बाण्ड मार्केट मजबूत होगा, मुद्रा विनिमय सेगमेण्ट पर भी अच्छा प्रभाव पड़ेंगा। हम भी इन्हें विकसिंत करने के लिए प्रतिबद्ध है, विदेशी निवेशको को भारत सरकार की प्रतिभूतियॉ और कॉर्पोरेट बाण्ड पर ब्याज पर टैक्स घटाया गया है इससे एक्सचेंज पर स्थायी आमदनी का एक मजबूत बाजार निर्मित करने में मदद मिलेगी। यह निवेशको का भरोसा बढाने वाला कदम है जो बहुत जरूरी है

भारत में विदेशी निवेश संवर्द्धन बोर्ड (FIBP) – विदेशी निवेश संवर्द्धन बोर्ड (FIBP) का 18 फरवरी 2003 को पुनर्गणन कर इसे वित्त मंत्रालय के आर्थिक कार्य विभाग को हस्तांतरित किया गया । आर्थिक कार्य विभाग में यह बोर्ड प्रत्यक्ष विदेशी पूँजी निवेश के संबंध में सरकार की नीति पर अमल

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातक महाविद्यालय, सनावद (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातक महाविद्यालय, सनावद (म.प्र.) भारत

करने के लिए सचिवालय के रूप मे कार्य कर रहा है। बोर्ड सचिवायलय में प्राप्त सभी प्रस्तावों पर बोर्ड द्वारा विचार किया जाता है और 30 दिन की निर्धारित समय सीमा के भीतर सरकार के निर्णय की जानकारी दे दी जाती है 2008-09 में 27.309 बिलियन अमरीकी डॉलर (1,22,919 करोड़ रूपये) का FDI में का अंतप्रवाह हुआ है जो पूर्व वर्ष 2007 - 2008 में 24.579 अरब डॉलर (98,664 करोड़ रूपये था) अत: 2008 - 2009 मे FIBP में 11 प्रतिशत की वृद्धि हुई है वर्ष 2008 -09 मे देश में कुल 25 अरब डालर के विदेशी प्रत्यक्ष निवेश का लक्ष्य था वर्ष 2009 - 10 (अप्रैल - दिसम्बर) के दौरान FDIअंतप्रवाह 20.9 अरब डॉलर का था वर्ष 2009- 2010 के दौरान क्षेत्रवार FDI अतंप्रवाह का प्रदर्शन निम्न प्रकार किया जाता है।

1.	सेवाक्षेत्र	401
2.	विनिर्माण	35
3.	अद्योसंरचना	18
4.	निर्माण	70

भारत के समक्ष चुनौतियॉ- भारत में मुद्रा व्यापार गॉव से लेकर शहर तक फैला हुआ है इसमें बिचौलिए, छोटे - छोटे दुकानदार, हॉट बाजार आदि शामिल है संगठित क्षेत्र के अंतर्गत खुदरा व्यापार हेतु अपनी आमदनी का बड़ा हिस्सा देना होता है जबकि असंगठित क्षेत्र नहीं देते है। क्योंकि कोल्डस्टोर आवागमन की सुविधा भंडारण की सुविधा इनके पास नहीं होती है साथ ही बाजार की स्थिति व बैंक दर में वृद्धि के कारण भारतीय लोगो की क्रय शक्ति की क्षमता भी प्रभावित हो रही है आज वर्तमान युग भुमण्ड़लीयकरण का युग है यदि हम अपने बाजारो को इस प्रतिस्पर्धा से दूर रखेगे तो हमारी अर्थव्यवस्था के साथ - साथ खुदरा क्षेत्र भी विकसित नहीं होगा। पूँजी के अभाव के कारण भारत में सड़कमार्ग, वायुमार्ग, रेल मार्ग का विकास पर्याप्त नहीं हो पाया है। इसी कारण फलो व सब्जी का 180 मिलियन टन के उत्पादन के बाद भी हम अपने उत्पादो को बाजार तक सही हालत में नहीं पहुचा पाते है।

दूसरी ओर भारतीय उद्योग पर उदारीकरण का बुरा प्रभाव भी पड़ा। भारतीय बाजार में घरेलू कम्पनियों की विदेशी कम्पनियों से प्रतिस्पर्धा बढ़ गई विदेशी उत्पादो का स्तर बेहतर होने के कारण लोग इस ही खरीदना पसंद करते है। इससे भारतीय कम्पनीयों का लाभ घट जाता है यह विषेषता दवा बनाने वाली कम्पनियों, रासायनिक और स्टील कम्पनियों के साथ होते देखा गया है। इसलिए सरकार को ऐसी आर्थिक नीतियॉ बनाने का प्रयास करना चाहिए जो भारतीय उद्योग के लिए लाभकारी हो ओर उसे नुकसान न पहुचाएँ।

निष्कर्ष - 21 वीं सदी के वर्तमान भू-मण्लीकरण के दौर में इससे बचना संभव प्रतीत नहीं होता है साथ ही एफ.डी. आई से उत्पन्न आशंकाओं के भय से भावी संभावित लाभा से देश को वंचित भी नहीं किया जा सकता है। सरकार को छोटे - छोटे दुकानदार, बिचौलिए रेहड़ी वालो को संरक्षण देकर सहयोग करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रतियोगिता दर्पण - अक्टूबर 2014
2. योजना सिम्तबर 2011
3. दैनिक भास्कर जुलाई 2014
4. प्रतियोगिता निर्देशिका ।
5. Techno park research

****

भारत के सर्वांगीण विकास के लिए समर्पित प्रधानमंत्री जन-धन योजना

डॉ. आर.सी. गुप्ता *

प्रस्तावना – 15 अगस्त 2014 को लालकिले की प्राचीर से माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र भाई दामोदर भाई मोदी जी ने देश के अति गरीब से गरीब व्यक्ति का बैंक खाता खोलकर उसे बैंकिंग सुविधाओं से जोड़ने के लिए प्रधानमंत्री जन-धन योजना की घोषणा की। इस महात्वाकांक्षी योजना की 28 अगस्त 2014 से औपचारिक शुरूआत भी कर दी गई है तथा पूरे भारत में एक ही दिन में अर्थात 28 अगस्त 2014 को एक करोड़ 84 लाख से अधिक खाते खोले गये तथा अक्टूबर मध्य तक 7.5 करोड़ बैंक खाते खोले गये। भारत देश में करीब 7.5 करोड़ ऐसे परिवार हैं जो आज दिनॉक तक बैंक सेवाओं से वंचित थे। उनके वित्तीय समावेशन के लिए ही यह महात्वाकांक्षी कार्यक्रम शुरू किया गया है। माननीय प्रधानमंत्री जी ने स्वयं पी.एम.जे.डी.वाई. संबंधी अपनी स्वतंत्रता दिवस घोषणा का जिक्र करते हुए सभी बैंक अधिकारियों को लगभग 7.5 लाख ई-मेल भेजे थे तथा अप्रत्याशित रूप से बैंक में इस योजना के तहत बैंक खाते खुलने पर वित्तीय छुआछूत की समाप्ति का शुभारंभ कहा।

"A bank account for each house hold is a national priority." P.M. Narendra Modi

'आज हमारे देश भारत की वित्तीय स्थिति यह है कि 19.91 करोड़ हाउस होल्ड में से केवल 6.82 करोड़ हाउस होल्डस की पहुँच बैंकिग सुविधाओं तक है जबकि 13.09 करोड़ हाउस होल्डस आज तक भी बैंकिग सुविधाओं से वंचित है। कमोवेश यही स्थिति ग्रामीण हाउस होल्डस की है जिसमें 13.83 करोड़ हाउस होल्डस में से 4.16 करोड़ हाउस होल्डस ही बैंकिग सुविधाओं का उपयोग कर रहे हैं और करीब 11.67 करोड़ ग्रामीण हाउस होल्डस अभी भी वित्तीय संस्थाओं की पहुँच से बाहर हैं।'

प्रधानमंत्री जन-धन योजना के उद्देश्य – इस योजना का मुख्य उद्देश्य देश के गरीब से गरीब व्यक्ति का बैंक खाता खोलकर उसे बैंकिग सेवायें उपलब्ध कराना है ताकि देश के आर्थिक संसाधन गरीबों के काम आ सके। देश भर में करीब 7.5 करोड़ ऐसे परिवार हैं जो अभी तक बैंकों से नहीं जुडे हैं। उनके वित्तीय समावेशन के लिए ही यह महात्वाकांक्षी कार्यक्रम शुरू किया गया है। इस योजना के तहत बिना बैंक खाता वाले परिवार का व्यक्ति यदि बैंक में खाता खोलता है तो उसे 1 लाख रूपये के दुर्घटना बीमा के साथ रूपे डेबिट कार्ड भी दिया जायेगा और 26 जनवरी 2015 तक खोले गये खातों पर 30 हजार रूपये का अतिरिक्त जीवन बीमा कवर भी उपलब्ध कराया जायेगा इस योजना से सबसे बडा लाभ यह होगा कि इससे बैंकिग सेवाओं का ग्रामीण क्षेत्र तक विस्तार होगा जिससे स्थानीय स्तर पर शिक्षित बेरोजगार युवाओं के लिए भी रोजगार के अनेको अवसर सुलभ होगें।

वास्तव में प्रधानमंत्री जन-धन योजना सबका साथ सबका विकास की अवधारणा का महत्वपूर्ण भाग है क्योंकि परिवार का बैंक खाता खुल जाने के बाद परिवार को बैंकिग और कर्ज की सुविधायें सुलभ हो जायेगी इससे उन्हें देशी साहूकारों के चंगुल से बचाने, आपातकालीन परिस्थितियों के दौरान वित्तीय संकटों से स्वयं को बचाने तथा समय समय पर वित्तीय उत्पादों से स्वयं को लाभन्वित होने का मौका मिलेगा। प्रथम चरण में प्रत्येक खाता धारक को एक डेबिट कार्ड और एक लाख रू.का दुर्घटना बीमा कवर दिया जायेगा और उन्हें आगे चलकर बीमा और पेंशन के दायरे में लाया जायेगा।

28 अगस्त 2014 को माननीय प्रधानमंत्री ने स्वयं इस जन-धन योजना का शुभारंभ किया। इस योजना के तहत बैंक खाता रहित परिवार का कोई सदस्य बैंक खाता खोलता है तो उसे एक लाख रू.के दुर्घटना बीमा के साथ रूपे डेबिट कार्ड मिलेगा तथा 26 जनवरी 2015 तक खोले गये खातों के लिए 30 हजार रू का अतिरिक्त जीवन बीमा कवर देने की भी प्रधानमंत्री ने घोषणा की है। तथा ऐसे लाभार्थियों जिनका पहले से बैंक में खाता है वे भी इस योजना के तहत 26 जनवरी 2015 से पहले अपने बैंक की शाखा से जारी रूपे डेबिट कार्ड लेकर एक लाख रूपये का जीवन बीमा लेने के पात्र हो सकते हैं।

प्रधानमंत्री जन-धन योजना को मूर्त रूप देने के लिए केन्द्रीय मंत्रियों, मुख्यमंत्रियों, संसद सदस्यों, विधानसभा सदस्यों तथा अन्य गणमान्य व्यक्तियों की उपस्थिति में 79 मेगा कैम्पों के माध्यम से राज्यों की राजधानियों में तथा जिलों में शुभारंभ समारोह आयोजित किये गये। पूरे देश में 70 हजार से अधिक कैंप आयोजित किये गये तथा केवल 1 दिन में 18468000 खाते खोले गये। बैंकों को निर्देशित किया गया कि वे साप्ताहिक आधार पर हर शनिवार को सुबह 8 बजे से रात 8 बजे तक कैंप आयोजित करेंगे जिसमें उन परिवारों का जिनका खाता किसी बैंक में नहीं है उन्हें बैंकों से जोड़ा जायेगा ताकि निर्धारित लक्ष्य समय पर पूरा कर लिया जाये।

पी.एम.जे.डी.वाई.के तहत वित्तीय साक्षरता को प्राथमिकता दी गयी है इस योजना के प्रति जागरूकता के लिए देशी भाषाओं में एक मानक वित्तीय साक्षरता सामग्री भी तैयार की गयी है। इस योजना के तहत कम से कम एक खाते के साथ 7 करोड़ से ज्यादा को कवर दिये जाने का अनुमान लगाया गया है।

प्रधानमंत्री जन-धन योजना का प्रथम चरण – इस योजना का प्रथम चरण 15 अगस्त 2014 से 14 अगस्त 2015 तक पूरा किया जायेगा जिसमें निम्नलिखित योजनायें शामिल होगी।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

1. **वित्तीय संस्थान की दूरी** – देश में सभी परिवारों को उचित दूरी के अंदर किसी भी बैंक की शाखा या निर्धारित प्वाइंट बिजनिस करसपोन्डेन्ट के माध्यम से बैंकिंग सुविधाओं की वैश्विक पहुँच उपलब्ध करा सुनिश्चित किया जायेगा।
2. **वित्तीय सुविधा एवं सुरक्षा** – खाता धारक सभी परिवारों को एक लाख रू.के दुर्घटना बीमा कवर सहित रूपये डेबिट कार्ड के साथ कम से कम एक मूल बैंकिग खाता उपलब्ध कराना। इसके अलावा खाते का 6 महीने तक सन्तोषजनक परिचालन होने के बाद आधार से जुडे खातों पर 5 हजार रू. तक की ओवरड्राफ्ट सुविधा की अनुमति भी दी जायेगी।
3. **वित्तीय साक्षरता** – देश भर में वित्तीय साक्षरता शुरू करना जिसका उद्देश्य वित्तीय साक्षरता को ग्राम स्तर तक ले जाना होगा।
4. **लाभ हस्तांतरण का विस्तार** – इस योजना में लाभार्थियों के बैंक खातों के माध्यम से विभिन्न सरकारी योजनाओं के अधीन प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण का विस्तार भी शामिल है।
5. **के.सी.सी.कार्ड**– किसान क्रेडिट कार्ड को रूपे डेबिट कार्ड के रूप में जारी करना भी योजना के अधीन प्रस्तावित है।

प्रधानमंत्री जन–धन योजना का द्वितीय चरण – द्वितीय चरण 15 अगस्त 2015 से 14 अगस्त 2018 तक होगा जिसमें निम्न योजना लागू होगी

(1) प्रत्येक खाताधारक को माइक्रो बीमा उपलब्ध कराया जायेगा।
(2) वी सी के माध्यम से स्वावलंबन जैसी गैर संगठित क्षेत्र पेशन योजनायें शुरू की जायेगी।

प्रधानमंत्री जन–धन योजना की प्रमुख बात यह है कि इस योजना के अन्तर्गत ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों को इस बार योजना में कवर किया जा रहा है जबकि पहले केवल ग्रामीण क्षेत्रों को ही लक्ष्य में रखा गया था। इस योजना में वित्तमंत्री के नेतृत्व वाले मिशन द्वारा निगरानी पर विशेष ध्यान देने का प्रावधान भी किया गया है। यह योजना डीवीटी योजनाओं के लिए बुनियादी ढांचा तैयार करती है जो शीघ्र ही शीघ्र शुरू की जायेगी। सिद्धांत रूप से डीवीटी योजना के लिए भुगतान किये जाने वाले दो प्रतिशत कमीशन की स्वीकृति पहले ही दी जा चुकी है वर्तमान में आकस्मिक बीमा योजना रूपे डेबिट कार्ड का हिस्सा है जो एन पी सी आई कार्ड के लेन देन से सृजित राजस्व प्रीमियम की अदायगी करती है इससे बैंको पर कोई अनावश्यक व्यय भार नहीं पडता है साथ ही खाता धारक यदि 6 माह तक खाते का सफल संचालन करता है तो उसे 5 हजार रूपये की ओवरड्राफ्ट सुविधा भी दी जायेगी इस योजना में यह भी परिकल्पना की गयी कि यदि ऐसे खातों में कोई डिफाल्टर है तो इसके लिए क्रेडिट गारण्टी फण्ड की व्यवस्था की जायेगी।

समीक्षात्मक अध्ययन – प्रधानमंत्री जन–धन योजना के कारण लगभग आज हर भारतीय परिवार के पास एक बैंक खाता है। इस योजना के तहत सभी परिवारों के खाते खोलकर उसमें सरकार से मिलने वाली सब्सिडी सीधे जमा कराई जा सके जिससे मध्यस्थ गरीबों का हक न छीन पाये। गरीब परिवार अपनी बचत इन खातों में जमा करा सकें साथ ही यदि इस योजना के तहत खाता धारक अपना खाता 6 माह तक चालू रखता है तो उन्हें 5 हजार की ओवरड्राफ्ट की सुविधा 30 हजार का बीमा एवं 1 लाख का दुर्घटना बीमा की सुविधा भी मिलेगी। इन खातों से एक उद्देश्य यह भी पूरा हो सकता है कि सभी खाता धारियों को डेबिट कार्ड दिये जा रहे हैं तो भविष्य में एक सीमा से उपर के सभी लेनदेन खाते के माध्यम से ही अनिवार्य किये जा सकते है। यदि आपको स्थाई या अस्थायी संपत्ति खरीदना हो तो डेबिट कार्ड से भुगतान कीजिए नकदी का चलन सिर्फ खुदरा भुगतान के लिए आवश्यक रखा जाये जिससे काले धन से भी निजात पाई जा सकती है।

यद्यपि अभी तक मात्र 56 प्रतिशत खाता धारकों के डेबिट कार्ड ही बन पाये हैं खाता खोलने के लिए के वाई सी ने शर्तों में काफी ढील दी है फिर भी डेबिट कार्ड बनवाने के लिए व्यक्ति को बैंक की शाखा तक जाना पडेगा, पहचान पत्र देना पडेगा तथा सरकार इन खातों को आधार नम्बर से जोडेगी तभी केरोसिन, गेहूँ एवं एलपीजी की सब्सिडी उपभोक्ता के खाते में सीधे जमा की जा सकेगी और तब हर खाते में पैसा होगा।

हेल्पलाइन नंबर – पी एम जे डी वाई के अन्तर्गत 22 सितम्बर 2014 तक देश में 4.18 करोड़ खाते खोले जा चुके थे। इस योजना के सन्दर्भ में भारत सरकार द्वारा सूचना देने के लिए एवं पूछताछ करने के लिए दो हेल्पलाइन नंबर स्थापित किये गये हैं ये नंबर हैं 1800–110–001 एवं 1800–180–1111 हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कुरूक्षेत्र अक्टूबर 2014
2. पसूका
3. पत्रिका 2014
4. लक्ष्य

****

Usage Of Polythene Is A Boon Or Curse To Our Environment ? (Substitution Of Polythene Carry Bags With Eco Friendly Bags)

Visarg Mishra *

Abstract - Every responsible citizen considering the black future of ours next generation shall stop using plastic carrier bags used for shopping as much as possible. Plastic bags in general take anywhere from 80 to 1000 years to breakdown in the environment. The natural alternative is jute bag. Decorated jute bags and shopping bags are very much in demand both for domestic and international market. So, it is presumed that there is a good scope for starting of such type of industry with a huge export potential. India is the world's largest producer of jute and second largest exporter of jute products since Bangladesh is in the first position in terms of exports. Indian Jute Industry creates huge employment opportunities as the Indian Jute Industry operates labor intensive technique.This study focuses on finding out how plastic bags could be substituted by jute bags and how it would contribute to the sustainable development.

Keyword - Polyethylene (PE), Jute Bags, (LDPE) Low Density Polythene, (HDPE)High Density Polythene,Eco-friendly, Break Even Point. (MT) Metric Tonne.

Introduction - Polythene isa type ofpolymerthatisclassified asa thermoplastic, meaning that it can bemelted toaliquidandremouldedasitreturnstoa solidstate.As the name implies,Polythene is chemically synthesized frommolecules thatcontain longchainsof ethylene,acarbon-based monomers to form polymers.The first laboratory creation of Polythen eoccurred in 1898 by accident at the hands of "Hansvon Pechmann" while applying heat to another compound the German chemist previously discovered i.e., diazomethane.

Consumption of polythene in india - According to the just-released quarterly, "Platt's Shale to Polyethylene Report – Global Outlook to 2023", India's PE demand is likely to increase by 129%, far surpassing Asia's projected growth rate of 81% and China's 87% for the period."If projections are correct, India will be the second largest importer of polyethylene by 2023, behind China," said Jim Foster, editorial director of petrochemical analysis at Platt's.India's expected polyethylene deficit will be 3.4 million mt by 2023, behind China's likely 12 million mt shortfall and ahead of deficits forecasted for Africa and Europe.

Objectives -

- To concentrateon theavailablesubstitutes of Polythene carry bags.
- To promotesmall scale industries of India.
- To analyse the jute industry project analytically for more reliable understanding.

Research Methodology - This research is constituted in the Eastern India, parts of West Bengal. The research is both analytical and theoretical in nature.Quantitative Analysis is done with the help of the formulas of accounting.This paper concentrates on the quantitative analysis of jute industry only. Quantitative analysis of polythene industry is not shown in the paper. The data used in the research are secondary and collected from internet, articles, news papers.

Suggested Locaton -

Assam - Barpata, Kamrup, Nalbani, Nagaon, Goalpara.
A. P - Itanagar, Daimukh.
Manipur - Imphal, tamenglong.
Tripura - Agartala, Dharmanagar.
Sikkim - Gangtok, Penlang, North Sikkim Area.

Alternate/Substitute of polythene - Because of the drastic effects of Polythene, it is now up to us to look for the other possible substitutes of the Polythene carry bags. The possible alternates of polythene carry bags are fortunately available today, they are jute bags and bamboo bags respectively, also known as 'eco-friendly' carry bags.

Comparison Between Plastic Shopping Bags And Jute Shopping Bags

Plastic Shopping Bags - According to Reuseit.com, about one million plastic bags are used every minute. The Environment impacts of plastic bags are devastating. About 1 percent of all trash in landfills is from plastics bags. Plastic bag do not biodegrade and it is expensive to recycle**.** Scientists estimate that plastic bag can take 400 to 1,000 years to vanish. Some of them are designed to turn into carbon-dioxide, water and compost within a month or two - but only in a composter. If the bag consists chemicals particularly the inks used in printing, can leak and cause poisoning or turn into noxious compounds if burned.

Jute Shopping Bags - Jute is a natural, 100 percent bio-

* **Research Scholar, Pt. Shambhu Nath Shukla Govt. Autonomous P. G. College, Shahdol (M.P.) INDIA**

degradable and recyclable, ecological fibre lant. It is the bark of a slender tropical plant belonging to Tiliaceae family with two species Corchoruscapsularis and Corchorusolitorius. It is called "Golden Fibre in India". It is the cheapest fibre after cotton in terms of usage, global consumption, production, and availability etc. The use of jute product mostly still now in bags and sacks for packing almost all kinds of agricultural products, minerals, cement etc.Bengal delta is the best producing place of jute.

Analysis And Findings -

Jute Bag Making -

Production programme - It has been proposed to make 5 items of jute bags viz. Shopping bag, Ladies bag, School bag, gents hand bag and jute folders at the initial stage because these bags have high demand in the market 42000 Nos. of bags will be produced in 12months and the wholesale price of the products has been calculated to Rs.32,25,000/-. Machinery andEquipment: It has been proposed to buy 5nos. industrial sewing machine of which 3 medium and 2 are heavy duty. Total cost of machinery and equipments has been calculated to Rs.1,58,700/-.

Rawmaterials - Requirement of jute fabric (both laminated and non-laminated) would be 18825 metres bamboo mat 15,000 sq mt. per year. Bag accessories like buckles, hook, runner, chain, lining cloth, eye let, and handle etc. would berequired for making the bags. All accessorieswill not be required for all bags. So, the cost of accessories for bamboo folder has been estimated @Rs.35/- per bag for 6000 bags which comes to Rs.2,10,000 and the cost of accessories of jute bag has been estimated @Rs.12/- per bag on an average which come to Rs.4,50,000 and the total cost of raw materials has been estimated to Rs.20,29,650/- per annum.

Manpower - Total manpower requirement for the unit would be 10 nos. including promoterof which 5nos. will beskilled tailor, 3 nos. helper and 1(one) Accountant. Total amount of wage and salary would be Rs.4,08,000/- per annum.

Miscelaneous Fixed Assets - Total cost of miscellaneous fixed assets has been estimated to Rs.30,000/-

Working capital - It has been assumed that the norms for maintaining the working capital would be 1(one) month for raw materials, wage and salary and utility and 15 days for stock of finished goods. Total requirement of working capital would be Rs.3,11,997/- of which Rs.1,04,624/- would be margin money and Rs. 2,07,373/- would be bank loan for working capital.

Capital cost of the project - Capital cost of the Project has been calculated to Rs.2,52,324/- of which Rs.89,700/- for machinery and equipment, Rs,30,000/- for miscellaneous fixed assets, Rs.20,000/- for the preliminary and pre-operative expenses, Rs 8,000/- for electrical installation and Rs.1,04,624/- towards margin money for working capital.

Means of finance - 65% of the cost project amounting to Rs.1,64,000/- has been expected from Bank as term loan; 25% amounting to Rs.63,080/- from NCJD as interest free loan and the balance 10% amounting to Rs.25,243/- would be contributed by the promoter.

Assumption - The unit will operate 8 hours daily and 25 days in a month. It has been assumed that the capacity utilization will be 80% which will remain constant. Since the project is small the financial calculation has been done for one year only.

Profitability analysis - Total sales proceed has been estimated to be Rs.28,25,000/- per annum, total cost of production Rs.27,94,810 per annum and the operating profit has been calculated to Rs.4,30,190/-.The percentage of profit on sales has been calculated to 13% and the profit on investment to 94%.

Breakeven point - Break Even Point has been calculated to 45% at 80% capacity utilisation.

Financial analysis :

Production programme

S. No.	Items	Qty. (NOS.)	Rate (Rs.)	Total Amount
1.	Shopping Bag	9000	40	3,60,000
2.	Ladies Bag	6000	80	4,80,000
3.	School Bag	7500	70	5,25,000
4.	Gents Hand Bag	9000	90	8,10,000
5.	Jute Bamboo Folder	10500	100	10,50,000
	Total:	**42000**	**-**	**32,25,000**

Machinery/Equipments

S. No.	Items	Qty.	Rate (Rs.)	Total Amount
1.	Industrial Sewing Machine 31K	3	7,500	22,500
2.	Sagar Paduka (Bamboo M/c.)	1	13,500	13,500
3.	Titan	1	18,000	18,000
4.	Misc. tools and equipments	L.S	15,000	15,000
	Sub. Total :	-	-	69,000
5.	Add: 30% towards Freight,tax insurance,etc.	**-**	**-**	20,700
	Grand Total:	**-**	**-**	**1,58,700**

Raw materials

S. No.	Items	Qty.	Rate (Rs.)	Total Amount
1.	Cloth for Shopping Bag	4500m	42	1,89,000
2.	Ladies Bag	3000m	60	1,80,000
3.	School Bag	5625m	42	2,36,250
4.	Gents Hand Bag	4500m	42	1,89,000
5.	Jute Bamboo Folder	1200m	42	50,400
6.	Bamboo mat for Jute Bamboo Folder	15000 sq ft.	35	5,25,000
7.	Jute fabric,Lining adhesive rexin, paper etc. per Bamboo Folder	6000 bag	35	2,10,000
8.	Buckles,hook,runner, chain,lining,handle, eye let, etc.	37,500 m	12	4,50,000
	Total:	**-**	**-**	**20,29,650**

Utilities

S. No.	Items	Annual Requirement (KW)	Rate (Rs.)	Total Amount
1.	Electricity for Lighting Purpose	L.S	-	17,400
2.	M/c. oil, lubricant,etc.	L.S	-	600
	Total:	**-**	**-**	**18,000**

Manpower

S. No.	Items	Nos.	Rate (Rs.)	Total Amount
1.	Master cutter (Promoter)	1	8,000	96,000
2.	Accountant	1	5,000	60,000
3.	Tailor	5	3,000	1,80,000
4.	Helper	3	2,000	72,000
	Grand Total:	**-**	**-**	**4,08,000**

Miscellaneous Fixed Assets

S. No.	Items	Qty.	Rate (Rs.)	Total Amount
1.	Cutting Table	2	2,500	5,000
2.	Stool	10	250	2,500
3.	Table	1	2,000	2,000
4.	Chair	5	500	2,500
5.	Almirah	2	4,500	9,000
6.	Rack	1	3,500	3,500
7.	Misc. Items	L.S	-	5,500
	Total:	**-**	**-**	**30,000**

Working Capital (See in next page)

capital cost of project

S.No	Particulars	Total Amount (Rs.)
1.	Land and Building	Rented
2.	Machinery and Equipment	89,700
3.	Miscellaneous Fixed Assets	30,000
4.	Preliminary and Pre-Operative Expenses	20,000
5.	Electrical Installation, etc.	8,000
6.	Margin Money for Working Capital	1,04,624
	Total:	**2,52,324**

Means of finance

S.No	Particulars	Total Amount (Rs.)
1.	Promoter's Contribution(10%)	25,243
2.	Bank Loan(65%)	1,64,000
3.	NCJD's InterestFree Loan (25%)	63,080
	Total:	**2,52,323**

Profitability analysis

S.No.	Particulars	Value (Rs.)
A.	**Sales Revenue**	**32,25,000**
B.	**Cost of Production**	
	1) Raw Materials	20,29,650
	2) Utilities	18,000
	3) Wages &Salaries	4,08,000
	4) Rent, Insuranceetc.	50,000
	5) Depreciation 10% on Machinery Equipment	8,970
	6) Repair and Maintenance	12,000
	7) Consumables and stores	30,000
	8) Administrative Overheads	30,000
	9) Selling Expenses 5% on sales	1,61,250
	10) Interest on Term Loan @ 12.50%	20,500
	11) Interest on Working Capital Loan@12.75%	26,440
	Total of (B)	**27,94,810**
C.	Operating Profit (**A-B**)	4,30,190
D.	% of Profit on Sales	13%
E.	% of Profit on Investment	94%

Break even point analysis

(80% Capacity Utilisation)

S.No.	Particulars	Value (Rs.)
A.	**Variable Cost:**	
	Raw Materials	20,29,650
	Consumables and Stores	30,000
	Utilities	18,000
	Selling expenses	1,61,250
	Total (A)	**22,38,900**
B.	**Semi-variable and Fixed Costs:**	
	Wages &Salaries	4,08,000
	Repair and maintenance	12,000
	Rent, Insurance etc.	50,000
	Depreciation	8,970
	Administrative Overhead	30,000
	Interest	46,940
	Total (B)	**5,55,910**
C.	**Sales Realisation**	**32,25,000**
D.	**Contribution (C-A)**	**9,86,100**
E.	**B.E.P = B/D X 80**	**45% of Installed Capacity**

Solutions And Suggestions To over come the present crisis Of the jute industry -

Indian Jute industry may cogitate following suggestion:

- Jute isa golden fibre. Being a natural, bio-degradable and eco-friendly fibre, jute can be blended with other compatible fibres for providing better physical, chemical, thermal, comfort and other important properties required for other applications.

- Till today, jute fibre is being considered as a cheap fibre, and its uses are only restricted to the jute granny bags, low-quality house-hold articles. It is the requirement of the whole world for producing value added products out of jute material.
- Marketing and promotion of jute has been a major problem, and so the government and industry should come forward and take adequate steps in this direction like highlighting its eco-friendly and biodegradable characteristics.
- Labour problem is one of the major problems faced by the jute industry. For its solution government and industry should device a tri-party agreement between government, mill owners and the trade unions, so as to overcome loss of work by strikes, lockouts, law off, closure of mill, etc.
- Jute Research Association such as JTRL, IJIRA, Institute of Jute Technology should come forward for better utilisation of resources like jute raw material, manpower and machinery and equipment for the betterment of jute industry.

Conclusion - According to 2014 estimates, most plastic bags are only used an average of 5 minutes and then discarded. Consider that the world uses a staggering 15 million bags a minute and we begin to see how big the problem is. Various cities and even whole countries have taken steps to cut down or eliminate plastic bag usage, but even that can not turn back the clock. As each bag takes centuries to break down, the problem will long outlive the groceries they once held - as well as the humans who filled them.

There is a big scope globally for Indian jute shopping bags as an alternative to plastic bags. Amid increasing awareness against the use of plastic bags, especially in the European countries, Indian jute carry and shopping bags exporters shipped over85 million bags in the fiscal ended March 2013 and the number is likely to cross 100 million in the next three years.The future of jute industry is particularly bright. Due to its eco-friendly character, it might continue to maintain its presence.

References :-

1. Wikipedia.
2. www.indianmirror.com
3. National Centre for Jute Diversification, Kolkata.
4. Indian Jute Industries Research Association, Kolkata.
5. www.reuseit.com
6. "Platt's Shale to Polyethylene Report – Global Outlook to 2023".
7. http://www.jute.com/HTML/Indian_Jute.htm#
8. The Timesof India.
9. The Hindu.
10. The Wall Street Journal.
11. "Ban on plastic generates huge opportunity for paper bags manufacturers in Gurgaon". MamtaSharma, ET Bureau Jan 10, 2013, 05.09PM IST.
12. Innovation Management and New Product Development. 2nd edition. Ashford Color Press Ltd. Gosport.
13. United Nations Framework Convention on Climate Change (UNFCCC)

a. Sustainable Development vs. Global Warming
b. http://unfccc.int/resource/docs/convkp/kpeng.html
c. http://unfccc.int/files/meetings/cop_15/application/pdf/cop15_cph_auv.pdf
d. Retrieved 7July.

14. National Jute board

a. Indian Jute, August 2014.
b. http://www.jute.com/HTML/Indian_Jute.htm# Retrieved 27 August, 2014.

Working Capital

S.NO	Description	Norms	Margin	Total Amount	Margin Money	Bank Loan
1.	Raw Materials	1 month	25%	1,69,138	42,284	1,26,854
2.	Wages and Salaries	1 month	100%	34,000	34,000	-
3.	Utility	1 month	100%	1,500	1,500	-
4.	Stock finished goods	15 days	25%	1,07,359	26,840	80,519
	Total:	-	-	**3,11,997**	**1,04,624**	**2,07,373**

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Effect of Literacy of Women on their Number of Children

Dr. Kamla Gupta *

Introduction - An adequate size of population is an important factor for the economic development of a country. Where a rapid increase in the population limits the resources, makes people struggling for employment and other opportunities but on other side it has its own importance also as it provides manpower for labour force defense purpose etc.

Is the development of the country is related with population, population is directly affected by the number of children. There are too many factors that affect the number of children but we took mainly 2 factors i.e. literacy and employment of women. It must not be ignored that in the process of development women to give their contribution.

Women have an important and unparallel role to play in the country's development there is needed to promote awareness among women the develop and utilize their full potentials.

Here in our research paper we tried to find the relationship between literacy employment and number of children. We want to know how the number of children could be reduced through increasing the literacy rate of the women an diverting them towards some economic activities.

Objective of the present study - Objective of the study are as under

1. To know the position of women's literacy and employment
2. Position of number of children of women
3. Effect of women' literacy on their number of children.
4. Effect of women' employment and income on their number of children.

Hypothesis -

1. Literacy of women reduces their number of children.
2. Employed women prefer less number of children
3. Health of women is affected by no. of children and also working hours.

Area of research & Method - The study area is barkhera in BHEL township Bhopal. In the Bhopal district of M.P. there is Bharat Heavy electrical Limited country pioneering engineering organization which into existence in 1956.

In this BHEL township there are four neighborhood colonie i.e. Piplani, Govindpura, Barkhera and Habibganj. From the above colonies area of research is Barkhera area is 1072 acres or 4.89 sq km in Barkhera c sector there are 600 quarters and population of 3000.

In the present research used probability sampling in the research area we took 100 women, which is 13.8% of the total married women.

Survey work - According to the survey of 100 women in Barkhera Bhopal area, got the following results.

Education Level of women - In the table number of women educated up to secondary level is 40% while present of women who are post graduate are 25%

Number of children and number & percent of working women - We could see that 80 percent of working women have 3 or less children while only 20 percent working women have more than 3 children. Hence we could say the employment of women affects their number of children or control their number of children.

Classification of working women according to their working hours - The percentage of women working hours 3-6 is 24 percent, 56 women are working for 6-9 hours and 20 percent women are working 9-112 hours.

Number of women in Different income Groups and Their Percentage - The information about number of women belonging to different income groups. It also helps us to know the percentage of women in each income group (5000Rs.)

Women belonging to low class are 28 percent while 59 percent women are those who are middle class (5000-10,000 Rs. per month)

Position of Literacy and Number of children - 40 percent women are secondary, 35% graduates and 25% are postgraduates. This shows secondary educated women have 3-4 averages no. Of children, which decrease up to, 2-3 at graduate level and further declines up to 1-2 averages no. of children of post graduates. We could see that as the education load of women increases their number of children declines, because of education, women get aware and motivated towards downsizing their families as they know the need and benefits of a small family. Hence education has proved itself as a tool of controlling the number of children of women.

Education Level and family Planning - We see in percent 67.5% women did family planning at secondary educational level, 69% women did family planning at graduate level and

* Professor (Economics) Sarojini Naidu Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.) INDIA

45.8% women did family planning at post graduated and above level. Because most of the women being to Business class Families,

Average no. of Children of Different Classes of Women - Here we see that women of low class have 3-4 average number of children middle class women have 1-2 average number of children and high class women 2-3 average number of children from this analysis we would know that middle class women have control on their number of children. They do economic planning for giving better future to their children, low class women prefer more children due to the reason that more children mean more income. These women do not worried to give better future to their children. High Class women have average Number of children due to various reason as they know they could give better future to them, to manage their business and sometimes due to emotional or personal reasons.

Position of family Planning Among Different Income Group - Here we could see that 36.35% of low income group people (0-5000 Rs . per Month) adopted family planning the percentage of family planning practice in high income group Rs. 25000 and above per month is the lowest i.e. 7.57%

This is due to the reason that highly qualified couples are normally very busy in the performance of their commitment related with jobs etc. They hardly get time to spend together, that is why no question of family planning arises is such case, In high class itself some people prefer more children their business etc. or sometimes they prefer more children due to some sentiments as they know as they know they could give better life to their children people.

We see that in middle class (Rs10,000-20,000 per month) families adopted more family planning 13.63+13.63+19.36=55.17%. they have highest percent of family planning because they go for family planning when they realize that addition of even one more child in the existing number of children would not be affordable,

Calculation of Correlation Between Literacy and Number of children :

$$r = \frac{-69}{130.5}$$

$$r = -0.53$$

There is moderate degree of negative correlation is between literacy and number of children of women. It means as the level of education of women increases their number of children reduces.

Calculation of Correlation Between Number of children & Employment of women :

$$r = \frac{-27}{4.18 \times 17.98}$$

$$r = \frac{-27}{75.2157}$$

$$r = 0.359$$

There is low degree of negative correlation between number of children and employment women. It means employed women prefer less number of children.

Calculation of Correlation Between Literacy & Employment of women:

$$r = \frac{87}{143.8}$$

$$r = 0.60$$

There is moderate degree of positive correlation between Literacy and employment of women it means both moves in the same direction that means when the illiteracy of women increases then the number of employed women also increases.

Findings -

1. Education directly affects the number of children of women. There is negative degree of correlation between education and number of children. It means the level of education of women increases their number of children declines. This so because educated women get motivated towards down sizing their families as they know the benefits and need of a small family. Hence education has proved itself as a tool of controlling the number of children of women.
2. Income of a family also affected the number of children of women. It is seen that middle class women control their number of children keeping in mind the limited resources theyo have unlike those of high- class women who don't need to control their number of children bothering about their financial resources. But the situation is inverse in case of women of weaker sections. They try to increase their number of children to combat their poverty thinking that they will gat more working hands and high mortality rate, here we could see that the two extremes are alike.
3. Working women are found to be unhealthy and underweight. They have less time to rest and high pressure to work as they look after household work too. The body's anabolic activity occurs while relating. Thus these women lose their health since they have less of tie to rest not allowing their body to make up for losses, which course due to exertion.

References :-

1. "Basu Aika" Family Planning and the emergency, EPW March 9, 1995
2. Berelson Bernard Prospects and programs for number of children Reduction PDR, Vol 4, 1978
3. Basu A.M. Family Planning, Numbers game goes on, EPW April 1981
4. Caldwell Johm –A Theory of Number of children from high Plateau to destabilization – 1978
5. Dhar P.K. Indian Economy – 2001
6. Ghosh G.K. Environment and women ashish publication 1989
7. Shrivastava OS – Demography and Population Studies Vikas Publishing house 1998

कोटा संभाग में पर्यटन की संभावनाऐं

इन्द्रेश पचौरी *

प्रस्तावना – राजस्थान, भारत का क्षेत्रफल की दृष्टि से सबसे बड़ा राज्य है जिसका क्षेत्रफल 3.42 लाख वर्ग किमी. है। इसके अधिकांश क्षेत्रफल में रेगिस्तान है जो अरावली पर्वत श्रृंखलाओं के साथ सन्तुलन बनाये हुए हैं। राजस्थान राज्य की पश्चिम और उत्तर–पश्चिम सीमाऐं पाकिस्तान से जुड़ी हुई है ओर उत्तर–पूर्व सीमाऐं देश के हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश राज्यों से मिलती है। जबकि दक्षिण–पूर्वी सीमाऐं मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश से जुड़ी हुई है तथा दक्षिण–पश्चिम की सीमाऐं गुजरात राज्य से जुड़ी हुई है।

पर्यटन उद्योग राजस्थान राज्य को लम्बे समय से राजस्व प्रदान करने वाला उद्योग है जिसे 1989 में उद्योग का दर्जा दिया गया था। राजस्थान राज्य की प्राकृतिक विशेषताऐं, विविधतापूर्ण संस्कृति और यहां के उत्सव ऐतिहासिक महत्व के स्थान देशी व विदेशी पर्यटकों को अपनी और आकर्षित करते हैं। राजस्थान में भ्रमण का समय सर्दियों में नवम्बर से फरवरी तक है। क्योंकि यह अत्यधिक गर्म प्रदेश है इसलिये गर्मी के मौसम में राजस्थान में भ्रमण करना काफी कष्टदायक होता है।

राजस्थान राज्य का दक्षिणी–पूर्वी हाड़ौती के नाम से जाना जाता है। जो हाड़ा राजपूतों की भूमि है जो चौहान राजपूतों की एक शाखा है। हाड़ौती में 1342 ई.में चौहान वंश का 5ासन स्थापित हुआ। इस की स्थापना देवीसिंह ने की। 1374 ई.में कोटा को इसकी राजधानी बनाया गया। हाड़ौती में वर्तमान में कोटा, बून्दी, झालावाड़, बाराँ क्षेत्र आते है। इस क्षेत्र में महाभारत के समय से मीणा जाति निवास करती थी। मध्यकाल में यहां मीणा जाति का राज्य स्थापित हो गया था। कोटा प्रारम्भ में बूंन्दी रियासत का ही एक भाग था। शाहजहां के समय से बूंदी नरेश राव रतन सिंह के पुत्र माधोसिंह को कोटा का पृथक राज्य देकर उसे बूंदी से स्वतंत्र कर दिया गया। तभी से कोटा स्वतंन्त्र राज्य के रूप में कोटिया भील के नियंत्रण में था, जिसे बूंदी चौहान वंश के संस्थापक देवा के पौत्र जेत्र सिंह ने मारकर अपने अधिकार में कर लिया। कोटिया भील के कारण इस का नाम कोटा पड़ा।

हाड़ौती पर्यटन के क्षेत्र में अग्रणी रहा है। यहां के ऐतिहासिक स्थल, वन्य–जीव अभ्यारण्य, उत्सव, कला व संस्कृति किसी से कम नहीं है। प्रागैतिहासिक काल के अवशष भी यहां देखे जा सकते हैं।

राजस्थान पर्यटन विभाग की ओर से समय–समय पर पर्यटकों के आगमन की सांख्यिकी प्रकाशित की जाती है। यहां कोटा सम्भाग में आये पर्यटकों के आगमन को निम्न तालिका द्वारा देखा जा सकता है:–

गत चार वर्षों में कोटा सम्भाग में आये पर्यटक (तालिका देख)

कोटा सम्भाग में विभिन्न पर्यटन स्थलों पर आये पर्यटकों को प्रतिशत के रूप में तुलनात्मक दृष्टि से इस प्रकार देखा जा सकता है– (तालिका देखे) तालिका से स्पष्ट है जहां वर्ष 2010 में देशी पर्यटकों का आगमन कोटा में सर्वाधिक रहा वहीं वर्ष 2011, 2012, 2013 में सबसे अधिक देशी पर्यटक झालावाड़ में क्रमश: 41 प्रतिशत, 43.26 प्रतिशत, 43.26 प्रतिशत, 44.17 प्रतिशत आये जबकि देशी पर्यटको का आगमन बून्दी में कम रहा।

वहीं विदेशी पर्यटकों पर नजर डालें तो सर्वाधिक विदेशी पर्यटकों का आगमन बूंदी में रहा है जहां वर्ष 2010 में विदेशी पर्यटकों का आगमन 81.53 प्रतिशत था वहीं 2011 में बढ़कर 86.59 प्रतिशत हो गया 2012 में बढ़कर 89.19 प्रतिशत तथा 2013 में थोड़ी कमी के साथ 84.13 प्रतिशत रह गयी तथा कोटा और झालावाड़ के मुकाबले बूंदी में विदेशी पर्यटकों का आगमन काफी रहा है।

राजस्थान राज्य में आये पर्यटकों का कोटा सम्भाग में आये पर्यटकों का तुलनात्मक अध्ययन निम्न तालिका द्वारा किया जा सकता है।

वर्ष	राजस्थान में आये पर्यटक	कोटा सम्भाग में आये पर्यटक
2010	26822400	0.99
2011	28489297	0.82
2012	30063201	0.72
2013	31735312	0.69

सम्पूर्ण राज्य में वर्ष 2010 में आये पर्यटकों की तुलना में कोटा सम्भाग में 0.99 प्रतिशत पर्यटकों का आगमन हुआ वहीं 2011 में 0.82 प्रतिशत और वर्ष 2012 व 2013 में क्रमश: 0.72, 0.69 प्रतिशत पर्यटक ही आये स्पष्ट है कि कोटा सम्भाग में पर्यटकों का आगमन प्रतिशत घटता चला गया है

कोटा सम्भाग में पर्यटन की सम्भावनाऐं प्रचुर मात्रा में मौजूद है यहां वन्य जीव पर्यटन सांस्कृतिक एवं धार्मिक पर्यटन, ऐतिहासिक पर्यटन के पर्यटन स्थल पर्यटकों को अपनी ओर करते हैं –

कोटा – कोटा में अनेक ऐतिहासिक, धार्मिक, वन्यजीव अभ्यारण व धार्मिक स्थल है। जो पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित कर सकते हैं।

गढ़ पैलेस – कोटा का गढ़ पैलेस ऐतिहासिक पर्यटन में प्रमुख स्थान रखता है इसे सिटी पैलेस के नाम से भी जाना जाता है। जो मुख्यत: राजपूत शैली में बना हुआ है।

जगमन्दिर – किशोर सागर की कृत्रिम झील के बीच में जगमन्दिर का मनमोहक घाटी महल स्थित है। इसे सन् 1346 में बून्दी के राजकुमार धरदेह ने बनवाया था।

देवताजी की हवेली – बाजार के बीचों–बीच देवता श्रीधर जी की सुन्दर हवेली है। यह हवेली अपने लालित्यपूर्ण भित्तियों व अलंकृत कमरों के कारण प्रसिद्ध है।

राजकीय संग्रहालय – किशोर सागर के निकट ब्रिज विलास पैलेस में स्थापित राजकीय संग्रहालय में दुर्लभ सिक्कों व हाड़ौती मूर्तिकला का अच्छा संग्रह है।

बारदौली– कोटा से 48 किमी दूर प्रताप सागर बांध के रास्ते पर स्थित 9वीं शताब्दी का सुंदर व प्राचीन मन्दिरों का स्थान है नक्काशी और मंडप के

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) राजकीय महाविद्यालय, कोटा (राज.) भारत

दरवाजे पर नटराज शिव की मूर्ति शिल्पकला का बेहतरीन नमूना है।
कोटा में वन्य जीव पर्यटन की सम्भावनाऐं मौजूद है दरा अभ्यारण जो कोटा से 50 किमी दूर सौन्दर्यमयी प्राकृतिक दरा गेम सेन्चुरी पर्यटकों के विवरण तथा मनोरंजन हेतु विशेष आकर्षण का केन्द्र है। करीब 80 किमी लम्बी तथा 5-6 किमी चौड़ी प्राकृतिक घाटी में दरा सेन्चुरी का प्रारम्भ 1955 ई.में किया गया। अभ्यारण में तेंदुए, सांभर, चीतल, नीलगाय, रीछ आदि जीव-जन्तु मौजूद हैं। पर्यटकों के रूकने हेतु रावढ़ा में विश्राम गृह है। जहां वन्य-जीवों को समीप से देखा जा सकता है। इसके अलावा घड़ियाल सेन्चुरी पर्यटकों की आकर्षित करती है।

बूंदी – कोटा सम्भाग में पर्यटन की दृष्टि से बूंदी प्रमुख पर्यटन स्थल है यहां ऐतिहासिक महत्व के अनेक पर्यटक स्थल मौजूद है।

तारागढ़ दुर्ग– इस दुर्ग का निर्माण बूंदी की 1426 फुट ऊँची पहाड़ियों पर सन् 1354 ई.में राजा राव वर सिंह ने करवाया था। राजा शत्रुशल्प सिंह ने छत्र महल एवं राजाराम सिंह ने मंगल बुर्ज बनवाकर दुर्ग से शत्रु पर तोपों से आक्रमण की ठोस व्यवस्था का निर्माण करवाया।

रतन दौलत– राजा रतन सिंह द्वारा निर्मित यह स्मारक जिसमें 9 घोड़ों के लिए अस्तबल व एक हाथिया पोल है।

केसर बाग – इस बाग में बूंदी के पूर्व शासकों व उनकी रानियों की छत्रियां है जो नगर की उत्कृष्ट वास्तुकला का उदाहरण है।

रानीजी की बावड़ी – इस बावड़ी का निर्माण नाथावत जी ने सन् 1699 में करवाया था। जिसकी गहराई लगभग 46 मीटर है। यहां पर ऊँचा मेहराव द्वार भी है। इस बावड़ी के खम्भों पर उत्कृष्ट नक्काशी दर्शनीय है।

रामेश्वर – यह नगर केशवराय जी (विष्णु) के मन्दिर के लिए विख्यात है। इस मन्दिर का निर्माण सन् 1601 में बूंदी के महाराजा शत्रुशाल ने करवाया था। यहां प्रसिद्ध जैन मन्दिर भी है।

बिजौलिया– बूंदी 50 किमी दूर बिजोलिया का प्राचीन किला बूंदी-चित्तौड़गढ़ मार्ग पर स्थित है। किले के पास ऊँचे रास्ते में भगवान शिव का भव्य मन्दिर है। मन्दिर के प्रवेश द्वार पर संरक्षक के रूप में खड़े भगवान गणेश जी की सुंदर प्रतिभा है।

हिण्डोली का तालाब– बूंदी से 15 मील दूर अजमेर रोड़ के पास हिण्डोली का तालाब है जिसका निर्माण लगभग 500 वर्ष पूर्व हुआ था बाद में इसके किनारे एक बाग एवं महलों का निर्माण महाराव राजा रघुवीर सिंह ने करवाया था।

बांसी दुगारी– यह स्थान चमत्कारी देवता श्री तेजाजी महाराज की कर्मस्थली रहा है। यहां एक बड़ा तालाब है जिसके पास ही तेजाजी का पवित्र तीर्थ स्थल है।

जैत सागर– नगर से थोड़ी दूर पहाड़ियों के बीच जैत सागर तालाब है। प्रारम्भ में यह तालाब जैत नाम मीणा ने बनवाया था। इस तालाब के पास सुरतमहल है। जिसका निर्माण राजा विष्णु सिंह ने करवाया था।

रामगढ़ विषधारी अभ्यारण– इस अभ्यारण में बाघ, बघेरा, साम्भर चिंकारा आदि अनेक वन्य-जीव पाये जाते हैं। इस अभ्यारण के मध्य से मेज नदी निकलती है।

कनक सागर पक्षी अभ्यारण्य– 1987 ई.में स्थापित यह अभ्यारण प्रवासी पक्षियों के लिए जाना जाता है।

इसके अलावा अनेक पर्यटक स्थल बूंदी में मौजूद हैं जिनमें फूल सागर, नागर-सागर, सुदेर घाट, शिकार बुर्ज आदि है।

झालावाड – झालावाड़ जिसकी दूरी कोटा से 87 किमी है में अनेक दर्शनीय पर्यटन स्थल मौजूद हैं।

झालावाड़ किला– यह शहर के मध्य स्थित इस प्रसिद्ध किले में कलेक्ट्रेट व अन्य सरकारी कार्यालय स्थित हैं। यहां जनाना खास की दीवारों पर कई उत्कृष्ठ चित्र व शीशे का काम दर्शनीय है।

झालरापाटन – झालरापाटन की स्थापना 1796 में राजा जालिम सिंह ने की थी। यह छोटा से नगर घंटियों के शहर के नाम से जाना जाता है। एक भव्य 9वीं सदी का सूर्य मन्दिर, पदमनाथ मन्दिर इस शहर का मुख्य दर्शनीय स्थल है यहां कई जैन मन्दिर भी दर्शनीय है।

चांदखेड़ी – खानपुर अतिशय जैन मन्दिर– इस मन्दिर का निर्माण 17वीं शताब्दी में हुआ। यह मन्दिर वास्तुकला का एक उत्कृष्ट नमुना है। 6 फुट ऊँची पदमासन मुद्रा में भगवान आदिनाथ की प्रतिमा स्थापित है।

बाराँ – कोटा सम्भाग के बारां जिले में भी पर्यटन की सम्भवनाऐं मौजूद हैं। जिन पर ध्यान दिया जाना चाहिये।

काकूनी– बाराँ जिले में छीपाबड़ोद, सारथल रास्ते में काकूनी का दुर्लभ शिल्पधाम है। परवन नदी के किनारे पहाड़ी पर पूर्व में यहां कभी 108 मन्दिरों की श्रृंखला थी। अटरू के पास पश्चिम में ऊँचे टीले पर गढ़ गच्च पुराने मन्दिर के अवशेष आज भी उच्च कोटी की शिल्पकला को प्रस्तुत करते हैं।

सीताबाड़ी – बारां से 45 किमी दूरी पर प्राकृतिक छटा से भरपूर सीताबाड़ी का धार्मिक व स्मणीय स्थल है। लक्ष्मण कुण्ड, सीताकुण्ड व वाल्मीकी आश्रम की विशेषता के साथ सीताबाड़ी यहां की सहरिया जनजाति का प्रमुख धार्मिक स्थल है।

सोरसन– सोरसन अभ्यारण्य को पर्यटन की दृष्टि से विकसित किया जा सकता है यहां हजारों की संख्या में कृष्ण मृग, सियार, लोमड़ी, चिंकारा व अन्य वन्यजीव, पक्षियों को देखने की व्यवस्था, इसके अलावा ब्रहम्णी माता का ऐतिहासिक मन्दिर पर्यटन की दृष्टि से आकर्षण का केन्द्र बन सकते हैं।

इन सबके अलावा कोटा सम्भाग में होने वाले उत्सव व मेले पर्यटकों को आकर्षित करने का काम करते हैं।

कोटा – कोटा का दशहरा मेला जो देश में लगने वाले मेलों में तीसरा स्थान रखता है। सन् 1979 में कोटा के प्रथम शासक राव माधोसिंह द्वारा स्थापित परम्परा चार सौ वर्षों के बाद आज भी चली आ रही है। सन् 1895 ई.में महाराव उम्मेद सिंह ने इस मेले के आयोजन का श्री गणेश किया। नगर निगम व पर्यटन विभाग द्वारा सफलतापूर्वक आयोजन किया जाता है। इसके साथ ही गणगौर मेला भी हर वर्ष कोटा में आकर्षण का केन्द्र रहता है।

झालावाड़ में चन्द्रभागा कार्तिक पशुमेला कार्तिक पूर्णिमा के अवसर पर झालरापाटन नगर के पास चन्द्रभागा नदी के किनारे इस मेले का आयोजन पशुपालन विभाग द्वारा किया जाता है। कार्तिक पूर्णिमा के दिन काफी संख्या में श्रद्धालु चन्द्रभागा नदी में स्नान करते हैं।
झालरापाटन में ही वैशाख पूर्णिमा के अवसर पर पशु मेले का आयोजन किया जाता है।

बाराँ में डोल यात्रा पर्व डोल उत्सव के रूप में मनाया जाता है यह भाद्रमास के शुक्ल पक्ष की एकादशी अर्थात जल झूलसी एकादशी को यहां भव्य शोभायात्रा एवं वार्षिक मेला का आयोजन होता है।

बूँदी– बूँदी में बूँदी महोत्सव नवम्बर माह में भव्य आयोजन किया जाता है इसके अलावा कजली तीज मेले का आयोजन यहां होता है।

निष्कर्ष– उपरोक्त विवरण से पता चलता है कि कोटा सम्भाग में पर्यटन की पर्याप्त सम्भावनाऐं मौजूद है। यहां वन्य–जीव, प्राकृतिक पर्यटन के रूप में पर्यटन को बढ़ावा दिया जा सकता है। लेकिन सरकार द्वारा कोटा सम्भाग के पर्यटन स्थलों पर उचित ध्यान नहीं दिया गया है। पर्यटकों के आगमन को देखा जाऐ तो बूंदी में विदेशी पर्यटको का आगमन सर्वाधिक रहा है। परन्तु कोटा, झालावाड़, में विदेशी पर्यटक कम ही आकर्षित हुए है जबकि बाराँ एक अच्छा पर्यटन स्थल के रूप में विकसित किया जा सकता है। परन्तु उस पर अभी तक कोई ध्यान नहीं दिया गया है अत: कोटा सम्भाग में पर्यटन का लाभ उठाने के लिए सरकार द्वारा उचित प्रयत्न किया जाना आवश्यक है।

सुझाव – कोटा सम्भाग में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए निम्न सुझाव दिये जा सकते हैं –

1. कोटा सम्भाग में पर्यटन को बढ़ाने के लिए कोटा जंक्शन जो दिल्ली–मुम्बई प्रमुख रेलमार्ग है पर पर्यटन सूचना केन्द्र की स्थापना की जानी चाहिए जिससे आने–जाने वाले पर्यटकों को पर्यटन स्थलों की जानकारी मिल सके।
2. कोटा सम्भाग के पर्यटन स्थलों का प्रचार–प्रसार वेब पोर्टल, पम्पलेट्स आदि के द्वारा और अधिक किया जाना आवश्यक है।
3. कोटा सम्भाग में पर्यटन विकास हेतु सवाईमाधोपुर जहां पर्यटक अच्छी संख्या में आते हैं जो गोल्डन ट्राइऐंगल बनाता है। वहां कोटा सम्भाग के पर्यटन स्थलों के बारे में जानकारी उपलब्ध कराने का प्रयास किया जाना चाहिए।
4. कोटा सम्भाग के पर्यटन स्थलों को और अधिक विकसित करने हेतु राजस्थान सरकार द्वारा धन उपलब्ध कराना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. गुप्ता, बेनी, राजस्थान का इतिहास, बोहरा प्रकाशन, जयपुर, 1998, पृष्ट सं.289
2. राजस्थान पर्यटन, वार्षिक प्रतिवेदन वर्ष 2013
3. Discover Rajasthan
4. www.kota-bundi.com
5. चम्बल संदेश, 27 सिंतम्बर, 2013

गत चार वर्षों में कोटा सम्भाग में आये पर्यटक

कोटा सम्भाग	2010		2011		2012		2013	
	देशी	विदेशी	देशी	विदेशी	देशी	विदेशी	देशी	विदेशी
कोटा	97971	3450	6960	2441	62029	1881	63015	2889
बून्दी	53867	16188	58001	17148	50788	16523	49434	15739
झालावाड़	96012	215	88805	213	86019	121	88974	80
योग	2,47,850	19,853	2,16,446	19,802	1,98,836	18,525	2,01,423	18,708

श्रोत– राजस्थान पर्यटन वार्षिक प्रतिवेदन वर्ष 2013

कोटा सम्भाग में विभिन्न पर्यटन स्थलों पर आये पर्यटकों को प्रतिशत के रूप में तुलनात्मक दृष्टि से इस प्रकार देखा जा सकता है–

कोटा सम्भाग	2010		2011		2012		2013	
	देशी	विदेशी	देशी	विदेशी	देशी	विदेशी	देशी	विदेशी
कोटा	39.52	17.37	32.17	12.32	31.19	10.15	31.28	15.44
बून्दी	21.73	8153	26.79	86.59	25.54	89.19	24.54	84.13
झालावाड़	38.73	1.08	41.0	1.07	43.26	0.65	44.17	0.42

****

आतंकवाद का वैश्वीकरण

डॉ. प्रमोद भारतीय *

प्रस्तावना – 'सदियों लग जाती है, आशियॉ बनाने में ।
एक आंतक ही काफी है, इसे उजाड़ने में ।।'

आतंकवाद से अभिप्राय किसी भी हिंसात्मक तरीके से जन सामान्य में भय उत्पन्न करने से है, जिस प्रकार–' मिट्टी कच्ची रहने पर ही कुम्हार बर्तन के आकार में सुधार कर सकता है, पर पके हुए बर्तन के आकर में सुधार की आशा करना मूर्खता है, ठीक उसी प्रकार आतंक की जड़ को काटे बिना आतंकवाद रूपी विशाल वृक्ष नष्ट कर पाना मुश्किल है ।' आज के समाज में चोरी, डकैती, लूट, अपहरण, बलात्कार, हत्या जैसी अमानवीय कृत्यों का बढ़ता हुए ग्राफ किसी से छुपा हुआ नहीं है, पहले प्राकृतिक आपदाओं एवं जीव जन्तुओं से भयभीत होने वाला मानव आज मानव से ही सबसे अधिक भयभीत है। वास्तविकता यह है कि आतंकवाद न तो कोई बीमारी है और ना ही कोई वायरस या जादू टोना है, जिसके लिये कोई इलाज खोजे जाने की प्रतीक्षा में हम बैठे हुए है। वास्तव में ये मानव की गिरती हुई नैतिकता और खोती हुई मानवता का ही परिणाम है। इसीलिये यदि हमें सही मायनों में अपने समाज, देश और विश्व में से आतंकवाद को मिटाना है तो अपनी खोई हुई मानवता को ढूंढकर लाना होगा और सोई हुई इंसानियत को जगाना होगा। किसी ने सच ही कहा है –

'जुर्म होगा उन्हें बहार कहना, जो हमदर्द आदमी के नहीं ।
बागियों से वफा की क्या उम्मीद, जो वतन के नहीं, किसी के नहीं ।।'

अतंर्राष्ट्रीय आतंकवाद के अध्येता ब्रियां क्रोजर के मतानुसार – '20 वीं शताब्दी का आतंकवाद अपने स्वरूप में विलक्षण है, यह समाज और राज्य व्यवस्था के लिये एक कलंक जैसा है, वह अपने स्वरूप में वैश्विक है अर्थात् विश्व भर के आतंकवादियों में आपसी भाईचारा है ।'

आतंकवाद का इतिहास अति प्राचीन है। राबर्ट कीडलैण्डट की मान्यता है कि आतंकवाद शब्द फ्रॉस की क्रांति और जेकोबिन तानाशाही से जुड़ा है। रूसी क्रांति से भी आतंकवाद को प्रमुख स्थान प्राप्त हो गया है। आधुनिक आतंकवाद का इतिहास 20 वीं शताब्दी की शस्त्रीकरण प्रक्रिया से प्रारंभ प्रतीत होता है। इस समय जो राजनैतिक प्रतिद्धंदिता चली, उससे दो विरोधी विचारधाराओं का जन्म हुआ, फलस्वरूप सत्ता हेतु जो संघर्ष उत्पन्न हुआ उससे भय का वातावरण बना एवं घातक हथियारों में वृद्धि हुई, जिसने आतंकवाद का विस्तार किया ।

आतंकवाद अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा, समृद्धि और स्थिरता के लिये ऐसी चुनौती है, जिससे सम्पूर्ण विश्व किसी न किसी रूप में आहत है। आतंकवाद भय और हिंसा के माध्यम से अपने लक्ष्यों की प्राप्ति में विश्वास करता है। यह लक्ष्य राजनैतिक, धार्मिक, आर्थिक एवं व्यक्तिगत भी हो सकता है। मानव स्वास्थ्य, मानव जीवन एवं किसी देश की अखण्डता एवं सम्पत्ति को हानि पहुॅचाने वाले कार्य ही आतंक या भय उत्पन्न करते है, यही आतंकवाद है। आज सम्पूर्ण विश्व आतंकवाद की विभीषिका से कराह रहा है। भारत भी विगत तीन दशकों से इस समस्या से ग्रस्त है।

प्रो. यशपाल के अनुसार – आज सम्पर्ण मानवता आतंकवाद से त्रस्त है ..... इसका खतरा और बढ़ेगा, क्योंकि हम तकनीकी का इस्तेमाल मनुष्य की सृजनात्मक ऊर्जा को जागृत करने और दिलों के फासले को दूर करने के बजाय केवल भौगोलिक दूरी को कम करने के लिये कर रहे है। यही वजह है कि नस्लीय, मजहबी और सांस्कृतिक वर्चस्ववादी आतंकवाद बढ़ रहा है।'

दुनिया के कुछ ऐसे ठेकेदार देशों ने अपने निजी स्वार्थ के लिये 20 वीं सदीं में आतंकवाद के बीज बोये थे। चाहे वह इजरायल–फिलीस्तीन समस्या हो या भारत–पाकिस्तान विवाद हो, वियतनाम युद्ध हो या उत्तर दक्षिणी कोरिया का आपसी विवाद हो, इन सबके पीछे कहीं न कहीं उन तथाकथित विकसित देशों की महत्वाकांक्षा और निजी स्वार्थ ही रहा है। जहॉ–जहॉ इन देशों ने राज्य किया, वहॉ–वहॉ आतंकवाद फैला कर स्वयं का उल्लू सीधा करते रहे। हम मूर्खो की भॉति उनकी इस धिनौनी चाल का शिकार होते रहे। एक ऐसा सत्य जो कटु तो है ही, दर्दनाक भी है और यह सत्य है कि आतंकवाद जिससे विश्व जूझ रहा है, चाहे वह शक्तिशाली अमेरिका हो या छोटा सा द्धीप श्रीलंका। आतंकवाद ने विश्व के अधिकतर देशों को अपनी चपेट में ले लिया है। इतिहास में झॉके तो ज्ञात होता है कि मानव समुदाय को जाति, धर्म, काले–गौरे, हिन्दु–मुसलमान और पता नहीं कितने तरीकों से बॉट रखा है, जिसका परिणाम हम लगातार भुगतते आ रहे है। ऐसे भयावह परिणाम जिसने सम्पूर्ण विश्व को इतने टुकड़ों में बॉट दिया है कि इनकी गिनती करना दुश्कर कार्य है। कई देश आपस में शत्रुता पाले हुए है। आतंकवाद मानव समुदाय के इस बंटवारे का ही परिणाम है आज आतंकवाद ने लाखों देशों को निगल लिया है। गौरतलब बात यह है कि खुद को धर्मनिरपेक्ष कहने वाले **अमेरिका के 44 वें राष्ट्रपति ओबामा** भी बाईबल पर हाथ रखकर शपथ लेते है, अपने भाषण में कहते है कि –'यह देश इसाईयों, मुस्लिमों, यहूदियों और हिन्दुओं का है। 'इससे बड़ी विडम्बना और क्या हो सकती है, हाल ही के वर्षो में मुम्बई आतंकी हमला, गाजा में इजरायली सेना का अभियान और लिट्टे एवं श्रीलंका सेना के बीच जारी युद्ध यह सब आतंकवाद का ही परिणाम है। दरअसल देखा जाये तो साम्प्रदायिकता ही आतंकवाद की जननी है, जो चुनौती हमारे सामने है उसका सामना करने के लिये सबसे जरूरी है, मानव एकता। यह तभी सम्भव है जब हम मानव बंटवारे की राजनीति से उभरें निजी स्वार्थ का परित्याग करे, अन्यथा हम ऐसे ही आतंक की आग में झुलसते रहेगें।

आतंकवाद के कारण – आतंकवाद का मुख्य कारण आर्थिक एवं सामाजिक समस्याऐं है। कहा भी गया है कि – जहॉ मानव अधिकारों का हनन होता है, वही आतंकवाद पनपता है ।' बेरोजगारी,गरीबी, अशिक्षा, उत्पीड़न एवं

* प्राध्यापक व विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहगढ़ राजगढ़ (म.प्र.) भारत

शोषण की भूमिका आतंकवाद का कारण है। राजनैतिक महत्वाकांक्षाऐं भी आतंकवाद को प्रेरित करती है, जो देश आर्थिक एवं राजनैतिक रूप से शक्तिशाली नहीं है वहॉ आतंकवाद को अप्रत्यक्ष रूप से हथियार बनाया जाता है। पाकिस्तान द्वारा जम्मू-कश्मीर में प्रायोजित आतंकवाद इसी का परिणाम है। राजनैतिक इच्छा शक्ति की कमी भी आतंकवाद को पनपने देती है। अफजल गुरू को सजा न देना इसका प्रमुख उदाहरण है।

भारत में आतंकवाद का विस्तार सुरक्षा उपायों में कमी के कारण भी हुआ है। खुफिया सूचनाओं को एकत्र करने एवं उनका सही समय पर विश्लेषण कर आवश्यक कार्यवाही करने में ढीलापन भी एक कारण है। 1984 में इन्दिरा गांधी की हत्या, पंजाब का आतंकवाद, राजीव गॉधी की हत्या, जम्मू-कष्मीर का आतंकवाद, 1999 का विमान अपहरण, 11 सितम्बर 2001 को अमरीकी विश्व व्यापार केन्द्र और पेंटागन पर हुए आतंकी हमले, 13 दिसम्बर 2001 को भारतीय संसद पर हमला, 2008 में जयपुर में बम विस्फोट एवं 26.11.2008 को मुम्बई के ताज होटल एवं नरीमन हाउस के आतंकवादी घटना, लंदन में बम विस्फोट एवं पाकिस्तान में बेनजीर भुट्टो की हत्या आदि घटनाओं से स्पष्ट है कि आतंकवाद के पीछे धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक कारण मुख्य है।

इण्डिया टुडे के **सम्पादक प्रभु चावला** ने 'अपनी बात' में लिखा है कि- हालांकि मुम्बई बम काण्ड के बाद आतंकवाद के खिलाफ जंग में शामिल होने के लिये 94759 लोगों ने अब तक शपथ ली है। देश के राजनेताओं का भी कर्त्तव्य है कि वोट की राजनीति से ऊपर उठकर भारत के वास्तविक कल्याण के बारे में सोचे एवं देश में साम्प्रदायिक सौहार्द के माहौल को विकसित करने की दिशा में प्रयत्न करे।

आतंकवाद समाप्ति के उपाय -

1. प्रत्यक राष्ट्र को जागरूक होकर आतंकवाद के विरोध में सहयोग करना होगा।
2. प्रत्येक राष्ट्र को शिक्षा एवं रोजगार में वृद्धि करके अमीर-गरीब की खाई को पाटना होगा।
3. शिक्षा राष्ट्रीय एवं नैतिक चरित्र का निर्माण करने वाली होनी चाहिये।
4. प्रत्येक राष्ट्र को अपनी जल, थल एवं वायु (तीनों सेना) को मजबूत करना होगा तथा उचित निगरानी रखनी होगी अर्थात् सुरक्षा तंत्र मजबूत बनाया जावे।
5. आतंकवादी भी हाईटेक हो गये है, इन्होंने इंटरनेट अपना लिया है अत: इनके खिलाफ जो भी कदम उठाये जायें उनका प्रचार-प्रसार न हो, तभी इन पर अंकुश लगाया जा सकेगा।
6. सामाजिक रूढ़िवादिता एवं अंधविश्वासों को समाप्त करना होगा।
7. मानव अधिकारों की रक्षा होनी चाहिये अन्यथा विद्रोह आतंकवाद में परिणित हो जाता है।
8. राजनीतिज्ञ स्वार्थ रहित होकर प्रजा का पालन पुत्रवत् करें, जिस देश में शासक भ्रष्ट है तो प्रजा का भ्रष्ट चरित्र होना स्वाभाविक है।
9. मनुष्य को मनुष्य बनने की शिक्षा दी जाये, नहीं तो मानवता का विनाश हो जायेगा।
10. शोषको के प्रति विद्रोह दर्शाने के लिये हिंसा के स्थान पर अहिंसा को अपनाया जाना चाहिये।
11. मानवीय गुणों को जागृत कर मानवीय दुर्बलताओं पर विजय पाना चाहिये, जिससे समाज में आतंकवाद जैसी बुराई से बचा जा सके।
12. मानव मूल्यों में वृद्धि करके विश्व में आतंकवाद को दूर किया जा सकता है।
13. आतंकवाद सम्पूर्ण मानव जाति के लिये चुनौती है इसलिये सभी देशों को एकजुट होकर इसका सामना करना चाहिये।
14. सभी देशों को मिलकर पाकिस्तान पर यह दवाब बनाना होगा कि वह अपने यहॉ चल रहे आतंकवादी शिविरों को समाप्त करें, अन्यथा अन्य देश उसके साथ अपने सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक संबंध तोड़ लेंगें।
15. देश के सामाजिक माहौल को स्वस्थ बनाना आवश्यक है, वास्तव में सांस्कृतिक, धार्मिक एवं क्षेत्रीय विविधता के अनोखे ताने-बाने की वजह से भारतीय समाज दुनिया के किसी भी दूसरे समाज की तुलना में आतंकवाद से निपटने और उसे परास्त करने के लिये बेहतर स्थिति में है।

कुछ लोग इस बहुलवाद को भारत की कमजोरी के रूप में देखते है, लेकिन वस्तुत: यही उसकी असली ताकत है भारत एक आर्थिक, सांस्कृतिक और सामरिक महाशक्ति है, जिस पर आतंकवादी खरोंचे तो डाली जा सकती है, लेकिन उसे तोड़ना असंभव है। वैसे भी दुनिया का भौगोलिक इतिहास इस बात का गवाह है कि आज तक आतंकवाद के द्वारा किसी धर्मराज्य का गठन नहीं किया जा सका, फिर वह हारी हुई लड़ाई के प्रति किसी गुप्त समर्थन या सहानुभूति का कोई अर्थ नहीं रह जाता है। किसी कवि ने ठीक ही कहा है -

' जो भरा नहीं है भावों से, जिसमें बहती रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं वह पत्थर है, जिसमें स्वदेश को प्यार नहीं ॥'

आतंकवाद की यह प्रवृत्ति मानववाद, अमन और विश्व बंधुत्व के विरूद्ध है, इसका उद्देश्य हिंसात्मक, जैव-अजैव हथियारों एवं परमाणु आयुधों के माध्यम से विश्व जनमत को प्रभावित करना है। लोकतंत्र एवं विकास कार्यक्रमों को अवरूद्ध कर आतंकवाद का साम्राज्य कायम करना है। यह अपने इस उद्देश्य के प्रति बेहद गंभीर है विश्व भर के आतंकवादियों के मध्य गठबंधन और राजनीतिक स्वार्थवाद से प्रेरित कुछ राष्ट्रों द्वारा इनको सामाजिक सहयोग ,समर्थन और सम्प्रेषण किया जा रहा है, इसका निशाना अब सिर्फ एक क्षेत्र अथवा देश नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व है, जन साधारण में डर और आतंक फैलाना ताकि जनता आतंकवादियों के विरूद्ध उठ न सके और वे अपनी घृणित गतिविधियों को जारी रख सके।

' हर तरफ जुल्म है बेबसी है, सहमा-सहमा सा हर आदमी है।'

आज सम्पूर्ण विश्व में आतंकवाद को समाप्त करने और मानवतावाद को बढ़ावा देने का संकल्प लेना मानवतावाद के सौहार्द एवं मैत्री की अवधारणा को जनमानस तक पहुॅचाना होगा। शैक्षणिक प्रणाली के आमूल परिवर्तन, नैतिकता, भावनात्मक एकता, न्याय, पारस्परिक आत्म विश्वास, व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर उठकर राष्ट्रीय हित को बढ़ावा देना होगा। बच्चों के जन्म से ही अच्छे संस्कार डालें। ताकि आने वाले कल में दुनिया की तस्वीर में अमन और चैन साफ झलके, कहीं आतंक और मातम न हो, सरकार भी इस क्षेत्र में प्रयत्न कर रही है, देश द्रोही के लिये ' पोटा अधिनियम' लागू किया एवं देश के आतंक को मिटाने के लिये कई एक्ट बनाये गये जिसमें मध्यप्रदेश में इस समस्या से निपटने के लिये 1113 एम पी डी एक्ट प्रभावशील किया गया तथा अन्य राज्यों में भी प्रभावशील है लेकिन समाज में पुन: चेतना जागृत करने हेतु मानवता के नन्हे-नन्हे पौधे लगाने होंगें। हमें आतंकवाद को मिटा कर एकबार पुन: इस शस्य-श्यामला, सुजला-सुफला भारत भूमि पर मानववाद की स्थापना करे।

न आतंक न आतंक का साया, सिर्फ और सिर्फ शांति, प्रेम और राष्ट्रीय एकता, यही हमारी डगर हो।

सदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. समकालीन राजनीतिक मुद्दे – डॉ. बी.एल. फड़िया।
2. स्वांतेजिक (युद्धनीतिक) अध्ययन– प्रो. लल्लन जी सिंह।
3. द न्यू मैन ऑफ पॉवर – सी. राईट मिल्स।
4. द पॉपुलेशन ऑफ इण्डिया एण्ड पाकिस्तान –किन्सले डेविस।
5. द पॉवर एलीट – सी. राईट मिल्स।
6. को–ऑपरेशन एण्ड कॉम्पीटीशन एमंग प्रिमिटिव पीपुल्स– मारग्रेट मीड़।
7. द प्रोटिस्टेन्ट इथिक एण्ड स्पिरिट ऑफ कैपिटलिज्म – मैक्स बेबर।
8. लाईफ एण्ड स्टूडेण्ट– सी.एच. कुले।
9. भारत 2008

पत्रिकाऐं

1. इण्डिया टुडे – 21 जनवरी 2009
2. अमर उजाला, जनसत्ता समाचार पत्र, क्रानिकल।
3. प्रतियोगिता दर्पण।
4. आउटलुक।
5. दैनिक भास्कर – 28 अगस्त 2006, 23 सितंबर 2008, 10 नवम्बर 2008
6. आर्थिक जगत।
7. इण्डियन पोलिटिकल वीकली।
8. औद्योगिक व्यापार पत्रिका।
9. इण्डिया कैरियर।
10. सदन इकॉनोमिक्स।
11. समसामयिक घटना चक्र।

****

भारतीय राजनीति में महिला नेतृत्व

डॉ. अशोक चौहान *

शोध सारांश – पुरूष और महिला एक दूसरे के पूरक है, एक के बिना दूसरे की कल्पना नहीं की जा सकती। भारतीय संविधान में महिलाओं को पुरूष के समकक्ष दर्जा दिया गया है, और समाज में व्याप्त कुरीतियों को समाप्त करने के लिए समय-समय पर अनेक कानून पारित किये गये जिससे की महिलाओं को समाज में उचित स्थान मिल सके और वे राजनीति में अपनी भूमिका स्थापित कर सके। भारतीय राजनीति में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए लोकसभा, विधानसभा, पंचायत एवं नगरीय निकाय में स्थानों का आरक्षण किया गया है, किन्तु उच्च पदों पर आसीन होने का अवसर उन्हें कम ही मिला है। महिलाएं किसी भी क्षेत्र में पुरूषों से कम नहीं है, अत: आवश्यकता इस बात की है कि महिलाओं को भारतीय राजनीति में अपनी भूमिका स्थापित करने के लिए राजनीति में महत्वपूर्ण पदों पर आसीन होने का अवसर दिया जाना चाहिए ताकि वे अपनी योग्यता का परिचय दे सके और उन्हें अपना हक मिल सके।

प्रस्तावना – 'सर्वहारा वर्ग तब तक स्वतंत्रता प्राप्त नहीं कर सकता है जब तक कि, महिलाओं के लिए पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त नहीं कर ले। यदि महिलाओं को राजनीति में, सार्वजनिक कामों में सम्मिलित नहीं किया जाता, उन्हें रसोई की घुटन के बाहर नहीं निकाला जाता, उन्हें बराबर का दर्जा प्राप्त नहीं होता, तब तक वास्तविक स्वतंत्रता की बात करना असंभव होगा, जनवाद की स्थापना करना भी असंभव होगा, समाजवाद की बात तो दूर।'[1] – लेनिन

भारतीय समाज में महिलाओं कि स्थिति समय, काल और परिस्थिति के अनुसार बदलती रही है वैदिक काल में महिलाओ की स्थिति काफी मजबूत और प्रतिष्ठापूर्ण थी लेकिन मध्यकाल में उनकी स्थिति दयनीय हो गई ओर आधुनिक काल में महिलाए अपने अस्तित्व को बनाएं रखने के लिए जूझ रही है। भारतीय संविधान ने नारी को पुरूष के समकक्ष माना है किन्तु सरकार की ओर से समाज में व्याप्त कुरीतियो मसलन दहेज प्रथा का विरोध, भ्रूण हत्या पर प्रतिबंध, लिंग परिक्षण पर पाबन्दी के प्रयासो का भारतीय समाज में कोई ज्यादा प्रभाव नहीं पड़ा , बल्कि ये कुरीतियां ज्यादा फैल रही है।

महात्मा गांधी ने कहां था – 'स्त्री तो पुरूषों की सहचरी है, उसे पुरूषों के समान ही मानसिक क्षमताएं प्राप्त है। उसे पुरूष की गतिविधियों में भाग लेने का अधिकार है और पुरूषों के समान ही स्वतंत्रता और स्वाधीनता का अधिकार प्राप्त है। पुरूष और स्त्री का दर्जा बराबर है, लेकिन एक जैसा नहीं है वे एक अनुपम युगल है और एक-दूसरे के पूरक है। उनमें से प्रत्येक एक-दूसरे की सहायता करते है इस प्रकार एक के बिना दूसरे के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती'।

भारत में आजादी के बाद महिला-पुरूष की समानता को कानूनी आधार प्रदान किया गया। अनिवार्य शिक्षा, हिन्दू मैरिज एक्ट, दहेज निषेध कानून, सती निषेध, समान वेतन आदि कानूनों द्वारा महिला विकास के सकारात्मक कदम उठाए गए। लेकिन यह भी सच है कि कानून द्वारा सामाजिक सुधार सम्भव नहीं है सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है जनमानस में परिर्वतन, महिला पुरूष की दृष्टि में प्रगतिशील सुधार की। भारतीय राजनीति में आजादी के इतने वर्षो बाद भी महिला की भागीदारी बहुत कम बनी हुई है कई दशकों बाद भी महिलाओं को अभी तक लोकसभा व विधानसभाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण का इंतजार है। यह भी एक तथ्य है कि महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण देने के बिल को रखने के दौरान सदन में किस तरह के टकराव व व्यवहार की घटनाऐ सामने आती है कभी तो बिल सदन में रखने के साथ ही फाड़ दिया जाता है, तो कभी पास नहीं करने के नए-नए तरीके समझाऐ जाते है, घोषणाएं कर दी जाती है, लेकिन यथार्थ के धरातल पर उन्हें अमलीजामा नहीं पहनाया जाता।

देश के प्रथम आम चुनाव 1952 से लेकर अभी तक सिर्फ 15 महिलाओं को ही मुख्यमंत्री बनने का गौरव प्राप्त हुआ है। प्रथम बार 1963 में सुचेता कृपलानी उ.प्र., नंदनी सतपते – उड़ीसा 1973 में शशिकला- गोवा, 1980 में सैयद अनवर तैमूर – आसाम , 1988 में जानकी रामचन्द्रन- तमिलनाडू , 1995 में मायावती उ.प्र. 1996 में राजेन्द्र कौर भट्टल- पंजाब , 1997 से 2005 तक तीन बार राबड़ी देवी – बिहार , सुषमा स्वराज – दिल्ली , शीला दीक्षित दिल्ली 2003-04 में उमा भारती – म.प्र. , 2009 में वसुन्धरा राजे- राजस्थान और ममता बनर्जी – पं. बंगाल, कांताबेन पटेल – गुजरात।

'किसी ने कहा है कि प्रजातंत्र क्या है? यह पुरूष प्रधान – पुरूष के लिए पुरूष द्वारा – पुरूष का शासन विधान तंत्र है, जिसमें उक्तियां, पद्धतियां, शैलिया, पुरूष आविस्कृत करता है, ताकि उसकी सत्ता अधिशासित बनी रही और उसका एक छत्र वर्चस्व समाज पर चलता रहे।'[2] स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था के स्थापित हो जाने से यह अपेक्षा की थी कि एक और तो महिलाएं देश में लोकतंत्र को मजबूत करने में सक्रिय योगदान देगी, तो दूसरी ओर लोकतांत्रिक व्यवस्था उन्हें समाज व राजनीति में सकारात्मक, रचनात्मक व समतापरक भूमिका निभाने का अवसर व वातावरण प्रदान करेगा, पर यदि वर्तमान परिदृष्य पर दृष्टिपात करे तो यह स्वप्न अभी भी अधूरा ही दिखता है। यद्यपि भारतीय इतिहास में ऐसी अनेक महिलाओं के नाम मिलते है। जिन्होंने शासन सूत्र अपने हाथ में लेकर न केवल सुशासन का परिचय दिया अपितू निर्णयो व पद्धतियों से इतिहास के पन्नो पर स्वर्णाक्षरों में अपना नाम भी लिखा दिया लेकिन इनकी संख्या थोड़ी थी बड़ी संख्या में समाज में स्थिति की दृष्टि से वे हाशिये पर ही रही है।

अप्रैल 1976 लोकसभा में बोलते हुए **इंदिरा गांधी ने कहा था** 'यहां मै प्रधानमंत्री की हैसियत से नहीं बल्कि संसार के सबसे बड़े अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधि की हैसियत से बोल रही हूँ किसी भी वर्ग में स्त्रियां सबसे अधिक

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, जुन्नारदेव, जिला – छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

शोषित है स्त्रियों के सम्पूर्ण विकास में कई तरह की बाधाएं आती है इसकी सबसे बड़ी वजह है मानसिक गतिरोध पुरूषों का मानसिक रवैया जो समाज ने उसके मन में बैठा दिया है वह बाधक बनता है स्त्रियों को चाहे वे किसी भी तबके की हो उन्हे जरूरत है अपने अधिकारों के प्रति जाग्रत होने की'।

भारतीय जनसंख्या में लगभग 50 प्रतिशत संख्या महिलाओं की है परन्तु राजनीतिक भागीदारी में उनका प्रतिशत बहुत कम है राजनीति में महिलाओं की पर्याप्त भागीदारी और सत्ता में उनकी समान हिस्सेदारी के बिना हमारी आधुनिकता, विकास और सभ्यता सब कुछ बेमानी है बेमतलब है। अंतर्राष्ट्रीय संस्था – **अन्तर संसदीय यूनियन** के ताजा आकड़ो के अनुसार राजनीति में महिलाओं को हिस्सा देने के मामले में भारत विश्व में 98 वे स्थान पर एवं एशिया में 11वें स्थान पर है[3] जबकि हमारे पड़ोसी देश पाकिस्तान , बांग्लादेश एवं नेपाल हमसे आगे है भारतीय संसद में करीब 800 सीटे है लेकिन महिलाओं की संख्या 100 से भी कम है। संविधान के 73 वे तथा 74 वें संविधान संशोधन द्वारा महिलाओं को पंचायतो एवं नगरीय निकायो में 33 प्रतिशत आरक्षण दिया गया जिसके तहत इस समय देश भर में कुल पंचायतो के लगभग 28 लाख 10 हजार प्रतिनिधि है जिनमें से लगभग 36 प्रतिशत महिलाएं है।

लोकसभा के प्रथम निर्वाचन 1952 से वर्तमान तक के निर्वाचनो में महिला सांसदो के निर्वाचन की स्थिति निम्नानुसार रही है।

क्र.	वर्ष	कुल सदस्यो संख्या	महिला सदस्यो संख्या	महिला सदस्यो का प्रतिशत
1	1952	499	22	4.4 %
2	1957	500	27	5.4 %
3	1962	503	34	6.8 %
4	1967	523	31	5.9 %
5	1971	521	22	4.2 %
6	1977	544	19	3.3 %
7	1980	544	38	5.2 %
8	1984	544	44	8.1 %
9	1989	517	27	5.2 %
10	1991	544	39	7.2 %
11	1996	543	39	7.2 %
12	1998	543	43	7.9 %
13	1999	545	49	8.6 %
14	2004	539	44	8.1 %
15	2009	545	60	11.0 %

आकड़ो से स्पष्ट है कि लोकसभा में अभी तक महिलाओं की उपस्थिति ग्यारह प्रतिशत से अधिक नहीं रही है।[4]

आज के राजनीति प्रधान समाज में किसी भी वर्ग का राजनैतिक प्रतिनिधित्व बहुत मायने रखता है लेकिन दुर्भाग्य से भारतीय राजनीति में आधी दुनिया (महिलाओं) का प्रतिनिधित्व बहुत कम है महिलाओं को चोके से संसद तक लाने की बाते तो खूब होती है लेकिन उनकी जिंदगी घर-परिवार, चूल्हे-चोके और ग्लेमर आर्टीकल तक ही सिमटी रहती है। **'मनी, मसल्स और मेंन पावर'** की तिकड़ी के कारण लोगों का चुनावों से भरोसा उठने लगा है इस चुनावी प्रवृति का सबसे बुरा असर महिलाओं की राजनैतिक भूमिका पर पड़ा है बाहुबल के अभाव में महिलाएं चुनावी वेतरणी पार करने में असमर्थ रहती है जिस कारण सत्ता में भागीदारी का उनका सपना पूरा नहीं हो पा रहा है।

इतिहास गवाह है कि भारतीय महिलाओं ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता के झंडे गाड़े है हर जगह पुरूषों के वर्चस्व को तोड़ा है कई कार्यक्षेत्रों में तो महिलाओं ने पुरूषों से भी अधिक प्रभावी भूमिका अदा की है। **गांधीजी ने कहा है कि 'महिलाओं को समान वैधानिक और राजनैतिक अधिकार दिये जाने चाहिए तभी भारत की आजादी सार्थक हो पायेगी।'**[5] वर्तमान में कांग्रेस पार्टी अध्यक्ष , विपक्ष की नेता, राज्यपाल एवं मुख्यमंत्री बनी हुई है इसके बाद भी महिलाओं कि स्थिति चिंताजनक बनी हुई है उन्हें अपने हिस्से के आसमा का इंतजार है। वर्तमान में महिलाओ को यह समझना होगा कि आज समाज में उनकी दयनीय स्थिति भगवान की देन न होकर समाज में चली आ रही परम्पराओ का परिणाम है इस स्थिति को बदलने का बीड़ा महिलाओ को स्वंय उठाना होगा। जब तक वह खुद अपने सामाजिक एवं आर्थिक स्तर से सुधार नहीं करेगी, तब तक समाज में उनका स्थान द्वितीय श्रेणी के नागरिक का ही बना रहेगा। **प्रो. अमर्त्य सेन ने कहाँ था कि** 'यदि वंचित वर्ग को अधिकार मिल जाएं तो उनमें काबिलियत अपने आप पैदा हो जाती है और उस वर्ग का आर्थिक सामाजिक सांस्कृतिक व राजनैतिक विकास भी स्वत: हो जाता है अत: महिलाओं को उनके राजनैतिक अधिकार दे दिए जाएं तो कोई कारण नहीं कि महिलाओं का विकास न हो'।

महिलाओं को आत्म निरीक्षण करना चाहिए कि उनका समाज एवं राजनीति में क्या स्थान है हर सशक्त महिला को चाहिए कि वह अपने जैसी अन्य महिलाओं को स्थानपूर्ति के लिए तैयार रखे जब तक इस प्रकार का सकारात्मक दृष्टिकोण नहीं होगा, महिलाओं को आगे लाना है तो उन्हे उनका उचित हक देना होगा आवश्यकता है उन्हे जागरूक और शिक्षित बनाने की अगर महिलाओं के हाथो में किताबे थमा दी जाएं तो फिर उन्हे राजनैतिक अधिकार देने नहीं पड़ेगें वरन् वे स्वयं छीन लेगी क्योकि कोई भी जागरूक वर्ग अपने अधिकारो का हनन बर्दाश्त नहीं कर पाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूंची :-

1. आधुनिक समाज में कार्यशील महिलाऐं – श्रीमती प्रमिला दाधीच, 2009 मार्क पब्लिसर्स जयपुर, पेज नं. 73-82
2. स्वामी भगवती एवं किशोर सविता, (2008), महिला सशक्तिकरण क्यों और कैसे, आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर, पेज नं. 34
3. सारस्वत, स्वप्निल, (2007), महिला विकास एक परिदृष्य, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, पेज नं. 69
4. महिला विकास एक परिदृष्य – स्वप्निल सारस्वत, 2007, नमन प्रकाशन नई दिल्ली, पेज नं. 67 – 91
5. महिला सशक्तिकरण क्यों और कैसे – भगवती स्वामी, सविता किशोर, 2008, आर. बी. एस. ए. पब्लिसर्स, जयपुर पेज नं. 30,118,139
6. सारस्वत, स्वप्निल, (2007), महिला विकास एक परिदृष्य, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, पेज नं. 72
7. सारस्वत, स्वप्निल एवं सिंह, डॉ. निशांत (2007), समाज राजनीति और महिलाएं-दशा और दिशा, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली , पेज नं. 127
8. समाज राजनीति और महिलाऐं- दशा और दिशा – स्वप्निल सारस्वत, डॉ. निशांत सिंह, 2007, राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली पेज नं. 121-175

****

महिला एवं अधिकार - नवीन दृष्टिकोण

डॉ. रजनी दुबे *

प्रस्तावना – महिला एक ऐसी शक्ति है जो घर को स्वर्ग बना सकती है और त्याग व बलिदान की मूर्ति है। इसका साक्ष्य झांसी की रानी लक्ष्मी बाई व पन्नाधाय जैसी महिलाओं को माना जा सकता है। धर्मशास्त्रों में भी इस बात की पुष्टि की गई है – 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:' अर्थात जहां नारी की पूजा होती है, वहां देवता निवास करते हैं। लेकिन कालान्तर में स्वार्थी मानव इस अटल वाक्य को रौंदते हुये नारी पर अत्याचार करने लगा और नारी उन अत्याचारों को अपनी तकदीर समझकर सहन करती रही।

स्वतंत्रता के पश्चात हमारी सरकार ने नारी के पक्ष में अनेक कानूनों का निर्माण किया, जिनमें से प्रमुख हैं –

1. बाल विवाह अवरोध अधिनियम, 1929
2. दान अधिनियम, 1952
3. दहेज निषेध कानून, 1961
4. सम्पत्ति में स्त्रियों का मालिकाना हक अधिनियम, 1956
5. भरण पोषण का अधिकार (दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत)
6. विवाह एवं विवाह-विच्छेद संबन्धी अधिकार
7. गोद लेने संबन्धी अधिकार
8. तलाक शुदा स्त्रियों को कानूनी संरक्षण
9. नारी हितों के सिविल कानून
10. प्रसूति सुविधा अधिनियम
11. कारखाना अधिनियम में स्त्रियों के लिये विशेष प्रावधान
12. कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम में विशेष प्रावधान
13. पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी
14. नारी अस्मिता का दण्ड विधान

समाज में नारी की भूमिका हर क्षेत्र में श्रेष्ठ रही है। कर्मजा कौशल भाव नारी का ही अधिकार क्षेत्र रहा, उसकी भूमिका से लालित्य है, ममत्व अपनत्व, धैर्य है। स्नेहिलता, सदाशयता, शान्ति व गाम्भीर्य की अपेक्षा रहती है। नारी की महिमा कर्म मन्दिर में वंदनीया है।[1]

भारत के राजनीतिक पटल पर अनेक ऐसी महिलायें हैं जिन्होंने अपने बलबूते पर राजनीति के आकाश में अपनी जगह बनाई है जिसमें सुश्री उमा भारती, श्रीमती सुषमा स्वराज, ममता बेनर्जी, गिरिजा व्यास, श्रीमती सोनिया गांधी, जमुना देवी, मेनका गांधी आदि प्रमुख हैं। वे अपनी प्रतिभा, सूझबूझ एवं संघर्षशीलता के दम पर आगे आ रही हैं। यद्यपि आज का अत्याधिक प्रदूषित राजनीतिक माहौल महिलाओं को राजनीतिक क्षेत्र के लिये कोई प्रलोभन नहीं देता तो भी महिलायें अपनी राजनीतिक चेतना की अभिव्यक्ति करना चाहती है, वह अनेक मंचों पर अपना स्थान बना रही हैं। इस दायरे का विस्तार होना चाहिये। आज बहुसंख्यक महिलायें राजनीति में आना ही नहीं चाहती हैं। इसके पीछे क्या कारण है? इस पर विचार करना होगा क्या कारण है कि आज भी समाज महिलाओं को वह स्तर प्रदान नहीं कर रहा है जो उसे मिलना चाहिये? इन पर विचार करना होगा।

क्या महिला संविधान में वर्णित राजनीतिक , सामाजिक एवं आर्थिक अधिकारों का उपयोग करती है? क्या वह राजनीतिक दलो के संगठन में प्रतिनिधि के रूप में राजनीतिक सत्ता का उपभोग करने में सफल तो पाती हैं? किस सीमा तक राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं को पुरूषों की तुलना में चुनाव लड़ने का अवसर मिल पाता है? इन सभी प्रश्नों के व्यवहारिक पक्ष का अवलोकन करने से स्पष्ट है कि महिलाओं के राजनीतिक विकास में अनेक बाधायें हैं जिनके कारण वे राजनीति से दूर रहने में अपनी भलाई समझती हैं। ये कारण हैं- भारतीय समाजिक संरचना, अशिक्षा, निर्धनता, बालक और बालिकाओं में भेदभाव, नैतिकता का दोहरा मापदण्ड, महिलाओं का आत्मनिर्भर न होना, असुरक्षा की भावना, खर्चीली चुनाव प्रणाली एवं जागरूकता का अभाव।[2]

विश्व परिदृश्य में जब मानवाधिकार का विषय चर्चित होता है तो एक बिम्ब उभरता है कि संयुक्त राष्ट्र संघ जिसकी प्रारम्भ में सदस्य संख्या 1945 में 51 थी, आज 185 राष्ट्र इसके सदस्य है क्या महिला अधिकार व लिंग न्याय के संदर्भ में कुछ विशेष कर पाया है या फिर प्रस्ताव ही पारित करता जा रहा है ?

यह सत्य है कि विश्व की आधी जनसंख्या महिलाओं की है, किन्तु जहां तक शिक्षा की बात है साक्षरता के विषय में विश्व की जनसंख्या की निरक्षरता का अधिकांश भाग महिलाओं का है और दरिद्रता का 70 वां भाग महिलाओं का बना हुआ है। संयुक्त राष्ट्र संघ महिलाओं की वास्तविक स्थिति से भिज्ञ है। महिला विकास जब तक नहीं होगा समाज में विकास का स्वप्न अधूरा रहेगा। इसी उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र संघ की साधारण सभा ने 10 दिसम्बर 1948 को यूनीवर्सल डिकलेरेशन ऑफ ह्यूमन राइट्स को स्वीकार किया व अपने चार्टर में भी मानव विकास अधिकार को ससम्मान स्थान दिया। संयुक्त राष्ट्र संघ की साधारण सभा ने इलिमिनेशन ऑफ ऑल फोर्मस ऑफ डिस्क्रिमिनेशंस अगेन्ट वीमून (सी.इ.डी.ए.डब्ल्यू) अर्थात नारियों के प्रति सभी प्रकार के भेदभाव निवारण का प्रस्ताव पारित किया, जो महिलाओं के विकास के संदर्भ में मेग्नाकार्टो से कम नहीं है। 1995 में अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस चीन (विजिंग) में महिलाओं के अधिकारों को मानव अधिकारों के रूप में पुन: स्वीकार किया है।[3]

आज विश्व के मुखर देशों में जो कि मानव अधिकार विकास की बात करते हैं पश्चिमी यूरोप व अमेरिका देश हैं किन्तु जहां तक महिला अधिकार की आधारशिला लिंगीय स्वतंत्रता व न्याय का प्रश्न है महिलाओं के प्रति इन देशों में अनुदार दृष्टिकोण हावी रहा है।

अमेरिका ने अपने स्वतंत्रता के संदेश में यह बात स्वीकार की है कि 'मनुष्य स्वतंत्र व समान पैदा हुआ है।' किन्तु अमेरिकन महिलाओं को 80 वर्ष

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

बाद मत देने का राजनीतिक अधिकार मिला। फ्रांस जो कि प्रजातंत्रीय एकता, मूल्यों का जनक रूप देश रहा है वहां भी महिलाओं को मत देने का राजनीतिक अधिकार 1944 में मिला। यही मताधिकार स्विट्जरलैण्ड की महिलाओं को 1971 में ही प्राप्त हुआ है। यह स्पष्ट है कि महिला अधिकार क्षेत्र अभी भी अन्याय व विषमता से जूझ रहा है। भारतीय चाहे वह पुरूष हो या नारी, सबको आर्थिक विकास की उन्नति का पूरा अधिकार है और सबको आर्थिक विकास के समान साधन व स्त्रोत उपलब्ध होना आवश्यक है। इस समान अधिकार के अन्तर्गत प्रत्येक भारतीय जब बिना लिंग भेद के भोजन, शिक्षा, स्वास्थ्य, व्यवसाय नियोजन, संरक्षण, देखभाल सुरक्षित परिवेश व वातावरण को समान रूप से पाने का अधिकारी है। नारी व पुरूष के लिंगभेद के बिना कानूनी समानता का अधिकार भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 व 16 में दिये गये हैं।

अत: भारतीय संविधान ने नारी को समानाधिकार दिये हैं। वह अब दमघोंटू वातावरण में निस्पन्द गतिहीन जीवन जीने के लिये तैयार नहीं है। अब नारी पुरूष की सम्पत्ति मात्र न बनकर उसकी सहभागिनी होकर जीवन व्यतीत करना चाहती है। इलाचन्द्र जोशी के शब्दों में – 'नारी की आत्मा की पूर्ण स्वतंत्रता का आन्दोलन भारत में जैसा भीषण रूप धारण करेगा वैसा संसार ने आज तक किसी युग में नहीं देखा होगा।'[4]

आज के राजनीतिक परिवेश में महिलाओं की संख्या अत्यन्त कम है। राजनीति के बिगड़ते स्वरूप को संवारने व उसे स्वच्छ बनाने के लिये महिलाओं को राजनीति में उतरना चाहिये। इसके लिये महिलाओं को सम्मान देने का उत्तरदायित्व पुरूष समाज और राष्ट्र को लेना होगा।

ऐसी विशेषतायें जिन पर पुरूषों का ही एकाधिकार समझा जाता था, उन सभी विशेषताओं को महिलायें अपनाने लगी हैं। वह हर चुनौती को स्वीकार करने लगी हैं, और अधिक आत्मविश्वास के मार्ग पर बढ़ रही हैं। प्रत्येक क्षेत्र के शीर्ष पर पहुंचने वाली महिलाओं ने उदाहरण प्रस्तुत किया हैं–

नाम	प्रथम महिला
आशापूर्णा देवी	ज्ञानपीठ पुरूस्कार से सम्मानित
डॉ. प्रेमा मुखर्जी	पहली भारतीय महिला सर्जन
श्रीमति इंदिरा गांधी	भारत की प्रथम महिला प्रधानमंत्री
किरण बेदी	प्रथम महिला आई.पी.एस.
अन्ता जार्ज	महिला आई.ए.एस.
कमलजीत संधू	ऐशियाई खेलों में स्वर्ण पदक जीतने वाली
डॉ.आशिया चटर्जी	भारतीय विज्ञान कांग्रेस की अध्यक्ष
नरगिस दत्त	अन्तर्राष्ट्रीय पुरूस्कार पाने वाली अभिनेत्री

ये सभी प्रथम भारतीय महिलायें हैं। प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणी रहने वाली प्रथम महिलाओं की संख्या कम नहीं हैं जिन्होंने हर क्षेत्र में चुनौती को स्वीकार किया हैं, और शीर्ष पदों पर प्रतिष्ठित हुई। भारत की कुल जनसंख्या में 52% हिस्सेदारी वाली महिला का जीवन बहुत अधिक कठिन एवं यातनापूर्ण बनकर रह गया हैं। आंकड़ों में यदि ये स्थिति देखी जाये तो प्रत्येक 1000 पुरूषों पर 933 महिलायें हैं। जिनका शैक्षणिक विकास प्रतिशत मात्र 54.14 हैं। भारतीय संसद में ये 10 प्रतिशत भी नहीं हैं, प्रशासकीय, प्रबंन्धकीय व व्यवसायिक पदों पर मात्र 2.3 प्रतिशत और अन्य तकनीक क्षेत्रों में मात्र 20 प्रतिशत प्रतिनिधित्व ही हैं। ये आंकड़े बता रहें हैं कि महिला वर्ग को किस तरह से समाज की विभिन्न गतिविधियों में हाशिये पर रखा जा रहा हैं।

भारतीय संविधान में महिलाओं को समानता का अधिकार और पंचायती राज में आरक्षण का अधिकार मिला तो लिंगभेद आधारित विभिन्न समस्यायें सशक्तीकरण में बाधा बन गई। भारतीय समाज में महिला सशक्तीकरण के लिये सामाजिक पद्धति और नियमों की बृहद परम्परा में यदि हम पुरूष प्रधान मानसिकता के मध्य अमृतमंथन की कल्पना करेंगे तो शायद ये संभव नहीं होगा। अरस्तू कहते हैं कि 'किसी भी राष्ट्र की स्त्रियों की उन्नति या अवनति पर ही उस राष्ट्र की उन्नति या अवनति निर्भर है।'[5]

भारतीय समाज में महिलाओं के प्रति अत्याचार व भेदभाव की मानसिकता को तब अवश्य विराम लगेगा। जब भारत में महिलाओं को उनके विधिक अधिकार और संविधान प्रदत्त सुरक्षा और प्राथमिकताओं के बारे में अधिक से अधिक जानकारी देगें।

भारतीय संविधान भी महिला सुरक्षा हेतु निम्न प्रावधान प्रदान करता हैं।

- सभी व्यक्तियों के लिये कानून के समक्ष समानता (अनु.14)
- धर्म, मूल वंश, जाति, लिंग या स्थान के आधार पर भेदभाव पर निषेध (अनुच्छेद – 14(1)) महिलाओं और बच्चों के लिये अनुच्छेद 15 (3) में विशेष प्रावधान।
- राज्य के आधीन किसी भी पद, रोजगार या नियुक्ति से संबंधित समान अवसर (अनुच्छेद –16)
- पुरूषों और महिलाओं के लिये सुरक्षित जीविका के पर्याप्त साधन उपलब्ध कराने का अधिकार (अनुच्छेद 39(ए))
- समान कार्य के लिये समान भुगतान का अधिकार (अनुच्छेद 39(द))
- स्थानीय निकायों में 1/3 आरक्षण का प्रावधान (अनुच्छेद 343(द)) और 343(त)

इसके अतिरिक्त घरेलू हिंसा अधिनियम 2005, सती निवारण, बालविवाह, हिन्दु वसीयत अधिनियम विदेश विवाह अधिनियमों के माध्यम से विधिक सुरक्षा संरक्षण प्रदत्त कर महिलाओं के सशक्तीकरण के क्षेत्र में गंभीर प्रयास हुये हैं।

अत: भारतीय संविधान महिलाओं को न केवल समानता का दर्जा देता हैं बल्कि महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक रूख अपनाने के उपायों के लिये सरकार को सशक्त भी बनाता हैं।[6]

यदि हम वर्तमान परिप्रेक्ष्य में महिलाओं की स्थिति पर नजर डालते हैं तो यही तथ्य सामने आता हैं कि भारत में महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं हो रहा हैं, उन्हें बराबरी का अधिकार नहीं मिल रहा हैं। वर्ल्ड इकोनोमिक फोरम के ग्लोबल जेंडर सर्वे –2014 की रिपोर्ट के अनुसार भारतीय महिलायें दुनिया में सबसे ज्यादा भेदभाव झेल रही हैं। यह सर्वे 142 देशों में कराया गया हैं इसमें भारत 13 वें स्थान से हटकर 114 वें पायदान पर आ गया हैं। पिछले साल 136 देशों की सूची में भारत 101 वें स्थान पर था। भारतीय महिलायें स्वास्थ्य सेवाओं, शिक्षा और काम के मामले में दुनिया में सबसे ज्यादा विषमता की शिकार हैं।

भारत में महिलाओं की स्थिति को इस प्रकार समझा जा सकता हैं –

	रैंक – 2014	2013
आर्थिक भागीदारी	134	124
काम में भागीदारी	130	24
तनख्वाह में बराबरी	109	86
शिक्षा की संभावना	126	120
स्वास्थ्य/जीवन दर	141	135
जन्म के समय लिंगानुपात	139	133
राजनीतिक भागीदारी	15	09
संसद में महिलायें	111	106

महिलाओं की वर्तमान स्थिति को देखते हुये कुछ सुझाव आवश्यक है–

- महिलाओं में राजनीतिक जागरूकता उत्पन्न की जाये जिसके लिये समानता पर आधारित सामाजिक संरचना का गठन करना होगा।
- महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाना होगा, उनमें साहस, त्याग व निर्भीकता की भावना का विकास करना होगा।
- समाज में सामाजिक परिर्वतन हो, समाज का नजरिया बदलना होगा।
- सरकार महिलाओं की सुरक्षा की पूर्ण गारंटी ले एवं महिलाओं में बढ़ने वाले अपराधों के प्रति कठोर कदम उठायें।
- महिलाओं में राजनीतिक जागरूकता उत्पन्न करने हेतु समय–समय पर महिला सम्मेलनों का आयोजन किया जाये।

अंग्रेजी कवि टेनीसन की कविता शीर्षक यूलीसिस के शब्द स्मरणीय हैं– खोजना, पाने के लिये प्रयत्न करना व कभी न झुकना जीवन का उद्देश्य होना चाहिये। नारी को न्याय युद्ध, जिसे अधिकार युद्ध कहेगें, लड़ना है और इसके लिये कटिबद्ध होना न्यायार्थ सृष्टि है, न्यायार्थ जीवन है, इस कारण न्यायार्थ ही नारी को जीवन जीना है।[8]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. राष्ट्रीय महिला आयोग और भारतीय नारी–पृष्ठ –236,238
2. भारतीय राजनीति के नये आयाम –पृष्ठ –98,99
3. स्वतंत्र भारत के पचास वर्ष भाग–2 पृष्ठ –223
4. कुरूक्षेत्र –अगस्त 2013 पृष्ट 6
5. महिला सशक्तिकरण– सरकारी प्रयास एवं चुनौतियां पृष्ठ –116
6. राष्ट्रीय महिला आयोग और भारतीय नारी –वही पृष्ठ –240
7. दैनिक भास्कर ग्लोबल जेंडर सर्वे–2014 की रिपोर्ट पृष्ठ–1 दिनांक 29 अक्टूबर 2014
8. Women Empowerment – page –46,47

****

गांधीवाद व मार्क्सवाद - एक तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. सिंधु लाहोरिया *

प्रस्तावना – गांधीजी मानवतावादी विचारक थे और उनका दृष्टिकोण 'वसुधैव कुटुम्बकम' का था महात्मा गांधी मूल रूप में एक आध्यात्मिक संत थे, जिनका मूल उद्देश्य धार्मिक जीवन व्यतीत करना था लेकिन गांधी की धर्म संबंधी धारणा परलौकिक नहीं वरन् नैतिक थी और वे मानवता की सेवा को ही वास्तविक धर्म समझते थे। गांधीजी की विचारधारा का आधारभूत तत्व यह है कि अपने मूल रूप में मानव और मानव जाति की समस्त समस्याएं नैतिक समस्याएं है। ऐसी स्थिति में मनुष्य सही अर्थों में मानव बन जाये और अपने समस्त सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक कार्यों को अन्तरात्मा की पुकार के अनुसार करे, तो समाज अथवा विश्व में दु:ख, संकट तथा समस्या जैसी चीज रह ही नहीं सकती है एक स्वस्थ राजनीतिक समाज तथा विकासशील के प्रत्येक कार्य के पीछे एक नैतिक बल अथवा प्रेरणा होना चाहिऐ क्योंकि जिस क्षण व्यक्ति अपनी आत्मा की सचेतन आवाज स्वार्थ के वशीभूत होकर कुचल देता है उसी क्षण उसका पशुत्व प्रबल हो जाता है और सभी समस्याओं के प्रति उसका विचार एवं दृष्टिकोण दूषित हो जाता है।

गांधीवाद सर्वोदय पर आधारित है सर्वोदय का शाब्दिक अर्थ है सबका उदय, यद्यपि गांधीजी स्वयं गांधीवाद का निषेध करते है। गांधीजी ने स्वयं कहा है गांधीवाद जैसा कोई सिद्धांत नहीं है, बल्कि यह एक जीवनपद्धति है, जिसे हम सिद्धांत एवं व्यवहारत: अंगीकार करते है। गांधी भी क्रांति-दृष्टा थे, किन्तु मार्क्स की क्रांति जहां संघर्ष पर आधारित है वहां गांधीजी की क्रान्ति हृदय परिवर्तन पर आधारित है। गांधीजी सत्ता एवं शक्ति के विकेन्द्रीकरण में विश्वास करते है गांधीजी आदर्शवादी होते हुये भी वास्तविक अर्थों में समाजवादी थे। गांधीजी बड़े उद्योगों के विरूद्ध थे, क्योंकि बड़े उद्योगों से पूंजी एवं सत्ता का केन्द्रीकरण होता है, जिससे पूंजीपति वर्ग विकसित होता है तथा वह शेष राज्य का शोषण करता है इसलिए गांधीजी लघु उद्योगों की वकालत करते थे। गांधीजी सत्ता एवं पूंजी के पूर्ण विकेन्द्रीकरण में विश्वास करते थे इसलिए उन्होंने कहा आर्थिक समता ही स्वतंत्रता की कुंजी है जब तक पूंजी का समान वितरण नहीं होगा तब तक न तो व्यक्ति का शोषण समाप्त होगा और न ही राज्य अहिंसक होगा, न्याय एवं शक्ति के समान विवरण के लिए गांधी ने पंचायतीराज की अवधारणा दी तथा उन्होंने कहा कि चूंकि भारत गांव में बसता है, इसलिए जब तक गांव विकसित नहीं होंगे तब तक देश अविकसित ही रहेगा। गांव एक संप्रभु इकाई होना चाहिए, जिससे सभी आवश्यकताएं गांव के स्तर पर ही पूरी हो जाएं इसके लिए उन्होंने लघु उद्योग एवं पंचायतीराज की अवधारणा दी। गांधी जी का नारा था, सब वस्तुओं का बराबर, सब ईश्वर का, हम अपनी संपत्ति के सिर्फ ट्रस्टी है किंतु वास्तविक मालिक नहीं। अत: हम व्यक्तियों को अपनी आवश्यकताएँ न्यून कर लेनी चाहिए, अधिकाधिक वस्तुओं का प्रयोग हमें कमजोर एवं निर्भर बनाता है इसलिये गांधीजी ने कहा कि आधुनिक मानव की आत्मा पर वस्तुओं का बोझ है, परंतु गांधीजी का ट्रस्टीशिप का सिद्धांत छद्म रूप में पूंजीवादी व्यवस्था की ही हिमायत करता है। गांधीजी ने राजनीति को भी धर्म से अनुप्रमाणित किया, उनके अनुसार धर्मविहीन राजनीति निरर्थक चितकार मात्र है जिसका कोई साध्य नहीं है इसमें भ्रष्टाचार तथा अनैतिकता प्रश्रय मिलता है, गांधी जी अंतत: अराजकतावादी है वह शक्तिशाली राज्य के विरूद्ध है, राज्य केवल ट्रस्टीशिप होना चाहिए। शक्तिशाली राज्य व्यक्तियों को न्यूनतम अधिकार देता है, जिससे व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं हो पाता है चूंकि गांधी जी अहिंसावादी थे, इसलिए सैन्य बल का भी विरोध करते थे।राज्य स्वयं सैन्य बल पर निर्भर रहता है अत: राज्य का स्वत: ही निषेद्य हो जाता है वर्णव्यवस्था एवं पूंजीपतियों में ट्रस्टीशिप का उनका सिद्धांत उन्हें पूँजीवादी का हिमायती ठहराता है।

मार्क्सवाद वर्ग संघर्ष एवं द्वंद्वात्मक सिद्धांत पर आधारित है मार्क्स का सिद्धांत हीगल के द्वंद्वात्मक सिद्धांत पर आधारित है, किंतु जहां हीगल विद्वानों के मध्य द्वंद्वांत्मक संघर्ष को स्वीकार करते है, वहां मार्क्स दो वर्ग के मध्य संघर्ष को मान्यता देते है, इसलिए मार्क्स ने कहा कि 'हीगल सिर के बल खड़ा था मैंने उसे पैरों पर खड़ा कर दिया' मार्क्स के अनुसार भौतिक वस्तुएँ मनुष्य के व्यवहार को निर्धारित करती है। प्राय: समाज दो भागों में विभाजित रहता है पहला शासक वर्ग, दूसरा मजदूर वर्ग, शासक वर्ग के हाथ में पूंजी एवं सत्ता केन्द्रीयकृत रहती है, वह सत्ता एवं धर्म का दुरूपयोग करता है तथा अधिकाधिक धनी होता जाता है, दूसरी तरफ मजदूर वर्ग और निर्धन होता जाता है, पूंजीपति वर्ग मजदूर वर्ग का शोषण करता है वह उसे केवल उतना देता है जिससे उसका जीवन चलता रहे एवं वह शासक वर्ग के काम आ सके वह इतना कम भी नहीं देता कि उसका अस्तित्व ही समाप्त हो जाये । वास्तव में पूंजीपति वर्ग का लाभ अतिरिक्त मूल्य पर आधारित है वह उत्पादन के लागत मूल्यों से अधिक अतिरिक्त मूल्य लगा देता है, जिससे वह अधिकाधिक धनी होते जाते है। पूंजी एक हाथ में केन्द्रित होती है, जिसके कारण वे अन्य वर्ग का शोषण करने में सक्षम हो जाते है। राजनीतिक शक्तियां भी उनके हाथ की कठपुतली बन जाती है क्योंकि ये शक्तियां धन के लिए उन पर आश्रित होती है इस प्रकार पूंजीपति वर्ग संप्रभु हो जाता है तथा श्रमिक वर्ग का अत्यधिक शोषण करता है।

श्रमिक वर्ग में वास्तविक शाक्ति निहित होती है यद्यपि वह निर्धन होते है किन्तु उन्हीं की शक्ति के प्रयोग के द्वारा पूंजीपति वर्ग धनी बनता है। जब श्रमिक वर्ग अत्याधिक उत्पीड़ित हो जाता है तो वह पूंजीपति वर्ग का विरोध कर देता है, क्योंकि वास्तविक शक्ति उसमें पुन: शक्ति केन्द्रित हो जाती है और धीरे-धीरे वह अभिजात्य हो जाता है तथा पुन: श्रमिक वर्ग का शोषण प्रारंभ कर देता है इस प्रकार वर्ग संघर्ष क्रमिक रूप से चलता रहता है, मार्क्स की क्रान्ति वर्ग संघर्ष पर आधारित क्रान्ति है, जिसका साध्य सामंजस्यपूर्ण

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

राज्य है वर्ग संघर्ष होते-होते श्रमिक वर्ग अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो जाता है तथा शोषण की प्रवृत्ति समाप्त हो जाती है, अंतत: एक सामंजस्यपूर्ण राज्य की स्थापना होती है। मार्क्स समाजवादी, आदर्शवादी एवं अराजकतावादी है, मार्क्स पूंजी एवं शक्ति के पूर्णत: विकेन्द्रीकरण में विश्वास करता है क्योंकि पूंजी एवं शक्ति का केन्द्रीयकरण शोषण का कारण बनता है। मार्क्स आदर्शवादी है क्योंकि वह अंतत: सामंजस्यपूर्ण राज्य में विश्वास करता है, सामंजस्यपूर्ण राज्य में पूंजी एवं शक्ति का समानरूप से वितरण होता है। मार्क्स अंतत: अराजकतावादी है वह राज्य की अवधारणा का निषेध करता है क्योंकि शक्तिशाली राज्य व्यक्तियों का शोषण करता है, राज्य जितना शक्तिशाली होता है, व्यक्तियों के अधिकार उतने ही सीमित हो जाते है।

गांधी व मार्क्स के दर्शन की उपर्युक्त विवेचना के उपरान्त यह उचित प्रतीत होता है कि आधुनिक युग के इन दो महान विचारकों और उनकी विचारधाराओं (गांधीवाद और मार्क्सवाद) की तुलना की जाये, क्योंकि कुछ क्षेत्र में यह विचार प्रचलित है कि दोनों में आधारभूत अन्तर नहीं है, कहा जाता है कि गांधी और मार्क्स का ध्येय एक ही है, केवल साधनों में अन्तर है, इसी आधार पर अनेकबार यह भी कहा जाता है कि ' गांधीजी हिंसा को लेकर साम्यवादी थे।'

गांधी व मार्क्स दर्शन की समानताएँ – इन दोनो विचारधाराओं में प्रमुख रूप से निम्नलिखित समानता बताई जाती है –

1. **सामाजिक अन्याय का विरोध –** दोनो विचारधाराओं को सामाजिक अन्याय असहनीय है। वे वर्तमान समय की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था से संतुष्ट है और इन व्यवस्थाओं में व्याप्त असमानताओं को दूर कर समानता स्थापित करना चाहती है।

2. **अन्तिम लक्ष्य राज्यहीन और वर्गहीन समाज –** दोनों की विचारधाराओं का अन्तिम लक्ष्य राज्यहीन और वर्गहीन समाज की स्थापना करना है जिससे सामाजिक वर्गो के बीच की विषमता की खाई समाप्त की जा सके तथा समाज में जाति, वर्ण, धर्म, लिंग आदि के भेदभाव बिना प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व का मूल्यांकन हो सके।

3. **पीड़ित पक्ष का समर्थन –**दोनों ही विचारधाराएं समाज के दलित, पीड़ित और शोषित वर्गो के हिमायती है और प्रत्येक व्यक्ति को जीवन की न्यूनतम आवश्यकताएं जैसे, खाना, कपड़ा, निवास, शिक्षा और चिकित्सा की सुविधाएं प्रदान करने के लिए वचनबद्ध और कटिबद्ध है, जिससे प्रत्येक व्यक्ति को उसके व्यक्तित्व और प्रतिभा के विकास का समुचित अवसर प्राप्त हो सके। किशोरीलाल मशरूवाला इस समानता के संबंध में ही लिखते है कि ' गांधी और मार्क्स, दोनों में सामान्य बिंदु यह है कि दोनों मानव जाति के दबाए व सताए हुए , साधनहीन तथा अनभिज्ञ, गूंगे तथा भूखे वर्गो के लिए अत्यधिक चिन्तित है।'

4. **मानवतावादी दर्शन –** दोनों ही मानवतावादी दर्शन है क्योंकि दोनों ही विचारधाराओं का उद्देश्य जन-कल्याण और मानवता का विकास है।

5. **श्रम के लिए आग्रह –** दोनों ही विचारधाराएं प्रत्येक व्यक्ति से अपनी योग्यता और क्षमतानुसार समाजोपयोगी श्रम करने का आग्रह करती है तथा एक ऐसे समाज की स्थापना करना चाहती हैं जिसमें सभी कामगार हो और किसी का शोषण न कर सके। 'जो काम नहीं करेगा, वह खाएगा भी नहीं' यह इन दोनों ही विचारधाराओं का मूल मंत्र है।

6. **अंतर्राष्ट्रीय शान्ति–** दोनों की विचारधाराएं इस बात की घोषणा करती हैं कि उनका उद्देश्य विश्व को शोषण और युद्धों से मुक्त कर अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति की स्थापना करना है।

गांधी व मार्क्स दर्शन की असमानताएँ – गांधीवाद और मार्क्सवाद में इस प्रकार की कुछ ऊपरी समानताएं होने पर भी इनमें मौलिक भेद है। प्रसिद्ध गांधीवादी विचारक किशोरीलाल मशरूवाला ने भी लिखा है कि 'गांधीवाद यानी वगैर हिंसा का मार्क्सवाद, ऐसा कहने से सुनने वाले के दिल पर असर होता है कि मार्क्सवाद में हिंसा का जो थोड़ा मैल पैदा हुआ है, उसे साफ कर दिया जाय तो गांधीवाद और साम्यवाद एक हो जाते है। यह छोटी सी शर्त नहीं वरन् एक पहाड़ है। इस शर्त में इतना विशाल अर्थ समाया हुआ है कि यह तुलना नितान्त भ्रान्तिपूर्ण और बेकार हो जाती है। यह उतनी ही बेकार है, जितना यह कहना कि लाल का अर्थ पीलेपन और नीलेपन से रहित हरा रंग है कीडे का अर्थ निर्विष सांप है।' इन दोनों विचारधाराओं के अंतर को निम्नलिखित रूपों में स्पष्ट किया जा सकता है –

1. **दार्शनिक आधार की दृष्टि से भेद –** दार्शनिक आधार की दृष्टि से ही ये दोनों विचारधाराएं एक-दूसरे से भिन्न है। मार्क्सवादी भौतिकवादी है जबकि गांधीवाद एक नैतिक सिद्धांत होने के कारण साम्यवादी है। मार्क्सवाद भोग और प्रचुरता का दर्शन है तो गांधीवाद संयम और अपरिग्रह का। मानवीय इच्छाओं को सीमित करने का आदेश देते हुए गांधीजी लिखते है कि 'मन एक आरामरहित चिड़िया है, जितना अधिक इसे मिलता है, उतना ही अधिक यह और चाहती है तथा असंतुष्ट रहती है।

2. **साधन और साध्य के संबंध के आधार में अंतर –** गांधीवाद साधन और साध्य की अन्योन्यश्रितता में विश्वास करता है। गांधीजी का विचार था कि साधन और साध्य एक ही सिक्के के दो पक्ष है और उनमें बीज तथा वृक्ष का सा संबंध है। लेकिन मार्क्सवाद श्रेष्ठ साध्य अथवा लक्ष्य में तो विश्वास करता है, किन्तु इस बात को आवश्यक नहीं मानता कि लक्ष्य प्राप्ति के लिए साधन भी उतने ही पवित्र हो। श्रेष्ठ लक्ष्य की प्राप्ति के लिए किसी भी प्रकार के साधन अपनाए जा सकते है और इस संबंध में नैतिक मापदण्ड के आधार पर विचार करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

3. **पद्धति का भेद–** गांधीवाद और मार्क्सवाद में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भेद पद्धति का है। मार्क्सवाद अपने वांछित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हिंसा के प्रयोग को नितान्त आवश्यक मानता है। इसके विपरीत गांधीवाद का न केवल प्रथम वरन् अन्तिम आधार भी अहिंसा ही है। गांधीजी हिंसा के इतने अधिक विरोधी थे कि एक स्थान पर वे लिखते है कि ' यदि भारत हिंसा को अपना लेता है, तो भारत में रहने की इच्छा नहीं करूंगा।'

4. **ईश्वर और धर्म के संबंध में भेद –** ईश्वर तथा धर्म के संबंध में भी गांधीवाद और मार्क्सवाद में महत्वपूर्ण अंतर है। मार्क्सवाद ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास नहीं करता और धर्म को 'ढोंग' तथा 'अफीम का नशा' कहता है। मार्क्सवाद के नितान्त विपरीत गांधीवादी विचारधारा मूल रूपमें धर्म पर आधारित विचारधारा है। श्री रोमा रोलां ने धर्म में गांधीजी के विश्वास के संबंध में कहा है, ' गांधीजी के कार्यो को समझने के लिए ध्यान में रखना चाहिए कि उनकी विचारधारा एक विशाल दोमंजिले भवन की तरह है। नीचे धर्म का ठोस आधार है और मजबूत एवं कभी न डिगने वाले इस आधार पर ही राजनीतिक एवं सामाजिक विचारधारा का प्रतिपादन किया गया है।'

5. **वर्गों के पारस्परिक संबंध के विषय में भेद –** गांधीवाद और मार्क्सवाद में वर्ग-संघर्ष के प्रश्न पर भी तीव्र मतभेद है। मार्क्सवाद के अनुसर समाज में शोषक और शोषित दो वर्ग होते है, जिनके हित परस्पर विरोधी है, और परस्पर विरोधी हितों के कारण उनमें संघर्ष अवश्यम्भावी है। इस वर्ग - संघर्ष को चरमरूप प्रदान करके ही मार्क्सवाद अपने वांछित लक्ष्य की प्राप्ति करना चाहता है, परंतु गांधीवादी दर्शन के वर्ग युद्ध के लिए कोई स्थान नहीं

है। यह वर्ग सामंजस्य को प्रधानता देता है और संघर्ष के स्थान पर प्रेम, त्याग और सत्याग्रह, आदि साधनों द्वारा समस्याओं को सुलझाना चाहता है।

6. व्यक्तिगत संपति के विषय में भेद – मार्क्सवाद व्यक्तिगत संपत्ति को नष्ट करना चाहता है तथा संपूर्ण संपत्ति का स्वामित्व समाज अथवा राज्य को प्रदान करता है। गांधीवाद व्यक्तित्व संपत्ति को अपने आप में कोई बुराई नहीं समझता और न ही उसे स्पष्ट करना चाहता है। गांधीवाद तो भोग–विलास की प्रवृत्ति की निन्दा करता है और वह संपत्ति के संग्रहकर्ता को स्वामी नहीं वरन् प्रत्याशी या संरक्षक बनाकर रखना चाहता है जिससे वह अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के बाद शेष समस्त संपत्ति का प्रयोग सार्वजनिक कल्याण के लिए कर सके।

7. लोकतंत्र के संबंध में भेद – गांधीवाद लोकतंत्र का समर्थक है और गांधीजी के अनुसार व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास के लिए लोकतंत्रात्मक पद्धति उपयुक्त है। परंतु मार्क्सवाद लोकतंत्र में विश्वास नहीं करता। वह लोकतंत्र को निरर्थक और निकम्मा कहकर उसकी निंदा करता है और लोकतंत्र को पूंजीपतियों का एक मजाक कहकर पुकारता है। ट्राटश्की ने लिखा है, 'लोकतंत्र एक निकम्मा तथा निरर्थक स्वांग है। हम सर्वहारा वर्ग के नाम पर इसका प्रतिकार करते है। लोकतंत्र के द्वारा शक्ति प्रदान करने का इरादा बिल्कुल बेकार है।'

8. मानव की स्थिति के संबंध में भेद – गांधी और मार्क्स की मानव विषयक विचारधारा में महत्वपूर्ण भेद है। गांधीजी के लिए 'मानव सर्वप्रथम' है और 'मानवता' ही सर्वोच्च विचारधारा है। प्रो. मजूमदार के शब्दों में, 'गांधीजी के राजनीतिक दर्शन की सौर प्रणाली में मानव सूर्य है।'इसके नितान्त विपरीत मार्क्स के दर्शन में मानव की नितान्त अवहेलना की गई ळें

9. केन्द्रीकरण और विकेन्द्रीकरण का भेद – मार्क्सवाद औद्योगिकीकरण में विश्वास करता है तथा विशाल उद्योगों की स्थापना के साथ–साथ उत्पादन बढ़ाने के लिए उद्योगों का अधिकाधिक मशीनीकरण करना चाहता है। वर्तमान समय की व्यवस्था का ही विस्तार करने के पक्ष में है, जिसके अंतर्गत बड़े पैमाने पर उत्पादन कार्य किया जाता है। लेकिन गांधीवाद वर्तमान उत्पादन व्यवस्था को दोषपूर्ण मानता है और इसके स्थान पर कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन तथा प्रधानता देने के पक्ष में है। बड़ी–बड़ी मशीनें और कारखानें ही वर्तमान सामाजिक व्यवस्था की अधिकांश बुराईयों के लिए दोषी है, इसलिए गांधीवाद सहकारी ढंग पर आधारित कुटीर उद्योग–धंधों का समर्थन करता है।

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप मे कहा जा सकता है कि उपर्युक्त दोनों दर्शन में जहां कुछ असमानताएं है वहीं अनेक महत्वपूर्ण बिन्दुओं के संबंध में परस्पर भिन्नता भी है। वास्तव में इन दोनों विचारधाराओं में समानताओं की अपेक्षा असमानताएँ अधिक महत्वपूर्ण है। समानताएं सतही है और असमानताएं वास्तविक ये दोनों दर्शन वस्तुत: एक दूसरे के लिए चुनौती के रूप में है। आचार्य विनोबा के शब्दों में कहा जा सकता है कि 'दोनों दर्शन आमने–सामने एक दूसरे को निगलने के लिये तैयार है।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. पुखराज जैन – भारतीय राजनीतिक चिंतन।
2. किशोरीलाल मशरूवाला – गांधी और मार्क्स।
3. J.B. Kriplani - His Life and Thought
4. डॉ. बी.एल. फडिया – भारतीय राजनीतिक चिंतन।
5. मनीष वेणुपाल महीप –मार्क्सवाद एवं गांधीवाद की तुलना।
6. हरीश कुमार खत्री – आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन।

पत्र–पत्रिकायें :–

1. दैनिक भास्कर।
2. योजना।
3. प्रतियोगिता दर्पण।

****

भारतीय निर्वाचन प्रक्रिया-एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. वसुधा आवले *

प्रस्तावना – भारत विश्व का एक विशाल लोकतांत्रिक देश है। इस देश में जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से मताधिकार का प्रयोग कर चुनी हुई सरकार द्वारा शासन व्यवस्था का संचालन किया जाता है। यहाँ निर्वाचन प्रक्रिया का प्रभावी ढंग से लागू होना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। स्वतत्रंता पश्चात् देश में संविधान द्वारा केन्द्रीयकृत संघीय शासन प्रणाली को अपनाया गया है। **वर्ष 1950 में 26 जनवरी** के दिन देश में **संवैधानिक रूप से गणतांत्रिक व्यवस्था** को लागू किया गया। भारत का संविधान देश का लिखित सर्वोच्च नीतिनिर्धारक पत्रक है। **जिसमें 395 अनुच्छेद, 22 भाग तथा 12 अनुसूचियाँ शामिल हैं।** संविधान के अनुसार संसदीय शासन प्रणाली को अपनाया गया है जिसके अनुसार कार्यपालिका अर्थात सरकार, विधायिका अर्थात संसद के प्रति उत्तरदायी होती है। संविधान की धारा 52 तथा 63 के अनुसार देश के राष्ट्रपति तथा उपराष्ट्रपति की नियुक्ति का भी प्रावधान है साथ ही संविधान की धारा 74 के अनुसार भारत का प्रधानमंत्री केन्द्र सरकार का प्रमुख होगा। सत्ता की सर्वोच्च शक्तियाँ व्यावहारिक रूप से प्रधानमंत्री को प्राप्त होती है।

संसदीय शासन व्यवस्था के अनुसार शासन तंत्र तथा प्रशासनिक अधिकार क्षेत्रों को दो भागों में विभाजित किया गया है- केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकार। राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में उनकी अपनी सरकारे होती है, इनके प्रमुख केन्द्र में राष्ट्रपति एवं प्रधानमंत्री तथा राज्यों में राज्यपाल एवं मुख्यमंत्री होते हैं।

सत्ता के अधिकाधिक विकेन्द्रीयकरण को दृष्टिगत रखते हुए केन्द्र तथा राज्यों के साथ-साथ स्थानीय स्तर पर भी जनता द्वारा चुने हुऐ प्रतिनिधि शासन चलाते हैं। संविधान के **73 वें तथा 74 वें** संशोधन विधेयक के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में 'पंचायती राज व्यवस्था' तथा शहरी क्षेत्रों में 'नगर पालिका और नगर निगम' को गठित किया गया है। भारत में चुनाव में जनता की सहभागिता के लिए सम्पूर्ण वयस्क मताधिकार की नीति को अपनाया गया है। इसके अनुसार प्रत्येक वयस्क भारतीय नागरिक चाहे वह किसी भी जाति, समुदाय या क्षेत्र से हो, महिला हो अथवा पुरूष, को चुनाव में मतदान करने का अधिकार है। भारत में यह नीति लागू होने के कुछ वर्षो बाद स्विट्जरलैण्ड में महिलाओं को मतदान का अधिकार दिया गया, जिससे भारत के नीति निर्धारकों की आधुनिक तथा यथार्थवादी सोच का प्रमाण मिलता है।

भारतीय संसद देश की सर्वोच्च द्विसदनीय विधायी संस्था है जिसमें प्रथम- निम्न सदन अर्थात् लोकसभा तथा द्वितीय- उच्च सदन अर्थात राज्य सभा है। भारतीय संविधान के अनुसार लोकसभा में 552 सदस्य (530+20+02) निर्धारित किए गए है। इनमें राज्यों द्वारा निर्वाचित सदस्य 530, केन्द्रशासित प्रदेशों द्वारा निर्वाचित सदस्य 20 तथा 2 सदस्य राष्ट्रपति द्वारा आंग्लभारतीय वर्ग से मनोनीत किए जाने की व्यवस्था है। इन सभी की नियुक्ति 5 वर्ष के लिए की जाती है। वर्तमान में लोकसभा में 545 सदस्य है। इसी तरह भारतीय संविधान के अनुसार राज्यसभा में सदस्यों की संख्या 250 है (238+12) जिसमें 238 सदस्य जनता द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित तथा 12 सदस्य राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किये जाते है. इनमें समाज के विभिन्न क्षेत्रों से- अधिकांशत: कला, विज्ञान, न्याय, समाज सेवा के अनुभवी सदस्य होते है। वर्तमान में राज्यसभा की सदस्य संख्या 245 है। इनकी नियुक्ति 6 वर्ष के लिए होती है तथा प्रत्येक 2 वर्ष के अन्तराल पर 1/3 सदस्य अवकाश ग्रहण करते है।

भारतीय निर्वाचन तंत्र एवं निर्वाचन आयोग -भारतीय संविधान के भाग-15 में धारा 324 से धारा 329 तक निर्वाचन संबंधी प्रावधानों का विवरण दिया गया है। विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र होने के कारण भारत में चुनाव प्रक्रिया भी अत्यन्त जटिल तथा चुनौतिपूर्ण होती है। यह निर्वाचन प्रक्रिया महत्वपूर्ण चरणों में पूर्ण होती है जैसे- सर्वप्रथम चुनाव आयोग द्वारा चुनाव की तिथियों की घोषणा करना, राजनैतिक दलों के लिए चुनाव आचार संहिता प्रभावशील होना, चुनावी प्रक्रिया में भाग लेने के लिए प्रत्याशियों द्वारा नामांकन पत्र भरना, चुनाव आयोग द्वारा सत्यापन के पश्चात् उम्मीदवार का निर्धारण, चुनाव प्रचार, मतदान, मतगणना, चुनाव के परिणामों की घोषणा तथा सफल प्रत्याशियों की सूची केन्द्र या राज्य की कार्यपालिका को सौंपना- सम्मिलित है। तत्पश्चात् नवीन सरकार के गठन की प्रक्रिया सम्मिलित है।

निष्पक्ष चुनावों के लिए सभी शासकीय अथवा अर्द्धशासकीय सेवकों की सेवाकालपर्यन्त राजनीति में संलिप्तता निषिद्ध है। इसके साथ ही चुनाव आयोग द्वारा चुनाव तिथि की घोषणा के उपरान्त शासन के अधिकार सीमित हो जाते है जैसे- स्थानान्तरण, पदोन्नति अथवा जनहित योजनाओं की घोषणा इत्यादि प्रतिबंधित होती है।

भारत में निर्वाचन प्रक्रिया का संचालन संविधान द्वारा प्रतिस्थापित एक स्वायत्त संस्था के आधीन होता है जिसे **निर्वाचन आयोग** कहा जाता है। राष्ट्रीय स्तर पर **निर्वाचन आयोग** तथा राज्य स्तर पर **राज्य निर्वाचन आयोग** द्वारा संपूर्ण चुनाव प्रक्रिया का प्रबंधन किया जाता है। निर्वाचन आयोग को देश की संसद, सभी राज्य सरकारो, राष्ट्रपति एवं उपराष्ट्रपति की नियुक्ति के लिए होने वाले सभी चुनावों का पर्यवेक्षण, निर्देशन एवं नियंत्रण की पूर्ण शक्तियाँ प्राप्त है। जिसके अतंर्गत राजनैतिक दलों का पंजीकरण, चुनाव चिन्ह प्रदान करना आदि कार्य भी चुनाव आयोग द्वारा किऐ जाते है। चुनाव आयोग का प्रमुख, चुनाव आयुक्त होता है। निर्वाचन आयुक्त संशोधन अधिनियम 1993 के अनुसार चुनाव आयोग एक बहुसदस्यीय संस्था के रूप में गठित हुई है जिसमें मुख्य निर्वाचन आयुक्त के

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

अतिरिक्त दो अन्य आयुक्तों की नियुक्ति का प्रावधान किया गया है। वर्तमान में हरिशंकर ब्रह्मा भारत के मुख्य निर्वाचन आयुक्त के पद पर नियुक्त है।

भारत में समय-समय पर चुनाव संबंधी सुधारों के लिए निर्वाचन आयोग द्वारा चुनाव सुधारक कमेंटियाँ बनाई गई है जिन्होंने अपनी रिपोर्ट में महत्वपूर्ण अनुशंसायें एवं प्रस्ताव दिए है। कुछ महत्वपूर्ण चुनाव सुधार कमेटियों का विवरण निम्नानुसार है-

1. **वर्ष 1974 जय प्रकाश नारायण कमेटी** - इस समिति द्वारा निर्वाचन प्रक्रिया में बदलाव संबंधी कुछ महत्वपूर्ण अनुशंसायें की है। जिनमें भारत के मुख्य निर्वाचन आयुक्त की निर्वाचन की प्रक्रिया में बदलाव, 3 व्यक्तियों वाले निर्वाचन आयोग का सुझाव, मतदान हेतु वयस्कता की आयु 21 वर्ष से कम करके 18 वर्ष करना, टेलीविजन एवं रेडियों का संचालन सरकार की जगह किसी स्वायत्त संस्था के हाथों में देना आदि शामिल है।

2. **वर्ष 1990 दिनेश गोस्वामी कमेटी**- इस समिति द्वारा की गई अनुशंसाओं में पुनर्मतदान संबंधी प्रावधान, संसद सदस्यों के दल बदल संबंधी एवं अयोग्यता संबंधी नियमों के प्रावधान, मतदान के विविध ढंगो में परिवर्तन, अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के लिए आरक्षित सीटों का रोटेश्नल आधार पर निर्धारण, वर्ष 1981 के जनगणना के आधार पर मतदान क्षेत्रों का पुनर्निर्धारण, चुनाव प्रत्याशियों की आयु सीमा तथा चुनाव क्षेत्रों की संख्या को 2 तक सीमित करने वाला प्रावधान, मतदान के लिए (EVM) का प्रयोग आदि मुख्य है।

3. **जीवन रेड्डी कमेटी** - इस समिति की अनुशंसाओं में राजनैतिक पार्टियों के चुनाव के दौरान विभाजन या सम्मिलन को प्रतिबंधित करना, एक पार्टी से चयनित व्यक्ति का अपने पद पर्यन्त उसी राजनीतिक दल में रहना, राजनीति के अपराधीकरण को रोकने हेतु न्यायालय द्वारा अभियुक्त माने गये व्यक्ति को चुनाव में खड़े होने से प्रतिबंधित करना आदि प्रमुख है।

4. **तारकुण्डे कमेटी** - यह कमेटी जय प्रकाश नारायण कमेटी का ही उपभाग थी । जय प्रकाश नारायण समिति द्वारा की गई अनुशंसाओं के अतिरिक्त इस समिति में सभी मतदान क्षेत्रों में मतदाता परिषद बनाने की अनुशंसा की गई है। जिससे स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव आयोजित किये जा सके।

इस प्रकार स्पष्ट है कि निर्वाचन आयोग की देश की निर्वाचन प्रक्रिया में महती भूमिका होती है। स्वतंत्र एवं निष्पक्ष जनमत की प्राप्ति की परंपरा लोकतंत्र के प्राण है और निर्वाचन आयोग इस परंपरा का एक मात्र संरक्षक है। साथ ही चुनावी प्रक्रिया के सरलीकरण एवं आधुनिकीकरण हेतु भी निर्वाचन आयोग ही जिम्मेदार है। चुनाव प्रक्रिया में नवीनतम तकनीकि का उपयोग कर इस क्षेत्र में निर्वाचन आयोग ने अपनी भूमिका अच्छी तरह निभायी है। मतदान, मतगणना आदि में इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों का प्रयोग, मतदाताओं को कम्प्यूटराइज्ड पहचान पत्र जारी करना आधुनिक तकनीकी के प्रयोग का महत्वपूर्ण उदाहरण है।

स्वतंत्रता के पश्चात् अभी तक देश में कुल 16 लोक सभा चुनाव संपन्न किये गये है। प्रथम लोकसभा चुनाव वर्ष 1951-52 में तथा 16 वाँ लोक सभा चुनाव 2014 में आयोजित किया गया। लोकसभा चुनाव में वयस्क मताधिकार के आधार पर योग्य सभी भारतीय नागरिकों द्वारा प्रत्यक्ष मतदान कर के सदस्यों का चयन किया जाता है। निष्पक्ष एवं स्वतंत्र मतदान सुनिश्चित करने हेतु चुनाव सुधार समितियों द्वारा दिए गए सुझावों को जैसे इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन का प्रयोग, मतदाता की उंगली पर अमिट स्याही का निशान, मतदाता सत्यापित कागज लेखा परीक्षा निशान [VVPAT], 27 सितम्बर 2013 को उच्चतम न्यायालय द्वारा दिये गये आदेशानुसार भारतीय मतदाता को नकारात्मक वोट का अधिकार आदि समय - समय पर निर्धारित किये गये। भारतीय गणतंत्र के 66 वर्षो की लम्बी अवधि के बाद भी इसमें एक सफल एवं दोषरहित निर्वाचन व्यवस्था कहलाने हेतु अभी कई प्रयास बाकी हैं। भारत की निर्वाचन प्रणाली के कुछ महत्वपूर्ण सकारात्मक एवं नकारात्मक पहलुओं का विश्लेषण तथा सुधारात्मक उपायों का विवरण निम्नानुसार है:

भारतीय निर्वाचन प्रणाली के सकारात्मक पहलू -

- निर्वाचन हेतु बहुदलीय प्रणाली अपनाने से समाज के हर वर्ग को समुचित प्रतिनिधित्व एवं मतदाताओं को चुनाव के अधिक विकल्प प्राप्त हुए है।
- सम्पूर्ण वयस्क मताधिकार की नीति को अपनाया गया है तथा मतदाताओं में लिंग, जाति, धर्म के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जाता है।
- निर्वाचन में अधिकाधिक तकनीकी के उपयोग से चुनाव प्रक्रिया अधिक सुरक्षित एवं पारदर्शी हो गई है। EVM के उपयोग से निष्पक्ष मतदान तथा त्वरित मतगणना संभव हो सकी है।
- मतदाता हेतू न्यूनतम आयु 18 वर्ष कर दी गई है। जिससे अधिकाधिक युवा वर्ग इस प्रक्रिया में सहभागी हो सके।
- 27 सितम्बर 2013 के उच्चतम न्यायलय के आदेशानुसार मतदाताओं को मतपरीक्षण तथा नोटा जैसे अधिकार प्रदान कर चुनावी धांधली तथा हेरा-फेरी को नियंत्रित करने का प्रयत्न कर मतदाता को अधिक शक्तिशाली बनाया गया है।
- चुनाव प्रक्रिया में धन के दुरूपयोग, काले धन का प्रयोग, फर्जी मतदान को रोकने, बूथ केप्चरिंग, बल प्रयोग आदि को रोकने तथा निष्पक्ष एवं सुरक्षित चुनाव करवाने के लिए विशेष प्रावधान किये गये हैं ।
- चुनाव की नामांकन प्रक्रिया में प्रत्याशियों की निजी संपत्ति,आय, पृष्ठभूमि परीक्षण आदि संबंधी प्रावधान कड़ाई से लागू किये जाते है। जिससे केवल योग्य प्रत्याशी ही चुनाव लड़ सके।
- प्रत्येक प्रत्याशी को चुनावी व्ययों का, चुनाव परिणाम घोषणा के 30 दिनों के अन्दर ब्यौरा देना तथा इसका अंकेक्षण कराना अनिवार्य है जिससे चुनाव खर्च में हुई धाधंलियों को नियंत्रित किया जा सके।

भारत की निर्वाचन प्रणाली के नकारात्मक पहलू -

- बहुदलीय प्रणाली को अपनाने के कारण देश में राजनैतिक स्थायित्व कम हुआ है जिसका प्रभाव देश की अर्थव्यवस्था, राजनीतिक, सामाजिक विषयों तथा अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों पर पड़ा है।
- गठबंधन की राजनीति से अनैतिक राजनीतिक वातावरण, दल-बदल, संसद सदस्यों की खरीद-फरोख्त जैसी घटनायें बढ़ी है। इन सबसे निपटने के लिए बनाये गये कानून या तो शक्तिशाली नहीं है अथवा प्रभावी ढंग से लागू नहीं किये गये है।
- भ्रष्टाचार देश की सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है और निर्वाचन प्रणाली भी इससे अछूती नहीं रही है।
- निर्वाचन का स्तर विगत कुछ वर्षो मे गिरता जा रहा है।राजनीति में आपराधिक तत्वो का प्रवेश तथा उनके द्वारा देश की राजनीतिक परिस्थितियों पर पड़ने वाले प्रभाव स्वच्छ एवं नैतिक राजनीति के लिए घातक सिद्ध हो रहे हैं।

- जनता का नैतिक अवमूल्यन हुआ है। मतदाता, मत की बहुमूल्यता को न समझकर कुछ पैसों या अन्य प्रलोभनों के आधार पर मतदान कर देते है। यह स्थिति लोकतंत्र के लिए घातक हैं।
- निर्वाचन संबंधी विवादों पर दायर की गई याचिकाओं के निराकरण में अत्यधिक समय लग जाता है जिससे उनका उद्देश्य ही निर्मूल सिद्ध हो जाता है।
- अधिकांश चुनावों में निर्वतमान सरकार वाले राजनीतिक दल द्वारा सरकारी मशीनरी का दुरूपयोग किया जाता है जिसे रोकने के लिए कोई ठोस कानून नहीं बने है।
- **NOTA** जैसे महत्वपूर्ण अधिकार को प्रभावहीन बना दिया गया है। जनता को किसी भी प्रत्याशी को न चुनने का अधिकार है परन्तु इस अधिकार प्रयोग कर वे किसी अल्पमत वाले प्रत्याशी को चुनाव जीतने से फिर भी नहीं रोक सकते।

भारत की निर्वाचन प्रणाली हेतु सुधारात्मक उपाय –

- प्रजातंत्र में जनता को मताधिकार के महत्व से परिचित कराने की आवश्यकता है। मतदाता प्रशिक्षण अभियान जैसी पहल निर्वाचन आयोग द्वारा इस संबंध में की जानी चाहिए।
- मतदान को संवैधानिक संशोधन द्वारा मौलिक कर्त्तव्यों में जोड़ा जाना चाहिए जिससे जनता आवश्यक रूप से निर्वाचन प्रक्रिया में सहभागी हो।
- चुनाव आयोग के संगठन में परिवर्तन का इसके अन्तर्गत विभिन्न उप-विभागों को शामिल किया जाना चाहिए जो निर्वाचन प्रक्रिया के भिन्न-भिन्न पहलुओ के लिए उत्तरदायी हो, जैसे मतदान क्षेत्र परिसीमांकन, मतदाता सूची निर्माण, मतदान सारणी संबंधी घोषणाएँ, निर्वाचन संबंधी एवं आचार संहिता के उल्लंघन की याचिकाओं का निराकरण, मतदाता प्रशिक्षण, निर्वाचन प्रक्रिया में आर्थिक पहलुओं का नियंत्रण तथा पर्यवेक्षण आदि।
- NOTA जैसे कानून को अधिक प्रभावी बनाने की आवश्यकता है। जिससे जनता सभी प्रत्याशियों के अयोग्य होने पर पुनर्मतदान की मांग कर सके।
- राजनीतिक दलों की फंडिंग के पर्यवेक्षण तथा अंकेक्षण कानूनो को अधिक प्रभावशाली बनाने की आवश्यकता है जिससे निर्वाचन प्रक्रिया में काले धन के प्रयोग को रोका जा सके।
- चुनावी प्रत्याशी की योग्यता में न्यूनतम शिक्षा स्तर का प्रावधान भी शामिल होना चाहिए, अशिक्षित नेता जनता का कल्याण नहीं कर सकते। साथ ही इस प्रावधान से अप्रत्यक्ष रूप से राजनीति के अपराधीकरण पर भी रोक लगाई जा सकती है।
- बाहुबलियों तथा आपराधिक तत्वों के राजनीति प्रवेश पर रोक लगाने हेतु सख्त कानून बनाये जाने चाहिए। नामांकन के समय प्रत्याशी की योग्यता की जांच में आपराधिक पृष्ठभूमि का लेशमात्र संकेत मिलने पर भी उसे निर्वाचन हेतु अयोग्य घोषित किया जाना चाहिए।
- निर्वाचन संबंधी न्यायिक प्रकरणों का निराकरण अधिक शीघ्रता के साथ फास्ट ट्रेक कोर्ट में किया जाना चाहिए।

इस प्रकार उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि स्वतंत्रता के पश्चात् विभिन्न अनुभवों से गुजरते हुऐ भारतीय निर्वाचन प्रणाली वर्तमान में काफी परिपक्व तथा विकसित हो चुकी है। भारत विश्व का सबसे बड़ा गणतंत्र देश है जहां बिना भेद-भाव के पूर्ण वयस्क मताधिकार को अपनाया गया है। मतदान एवं निर्वाचन की प्रक्रिया में आधुनिक स्वचालित तकनीकी का प्रयोग किया गया है और इतनी अधिक सामाजिक, राजनीतिक एवं सास्कृतिक विविधताओं के बावजूद सभी वर्गों को निर्वाचन में समान भागीदारी देने का प्रयत्न किया गया है।

भारत जैसे विविध बाहुल्यता वाले देश में व्याप्त समस्याओं का निराकरण वैसे भी जटिल होता है। परन्तु इसके बाद भी निर्वाचन संबंधी सुधारात्मक उपायों की प्रभावशीलता को देखते हुऐ वर्तमान परिस्थितियों में निर्वाचन आयोग, न्यायालय तथा संविधान द्वारा संरक्षित हमारे गणतंत्र की निर्वाचन प्रक्रिया का भविष्य उज्ज्वल दिखाई देता है। समय-समय पर संज्ञान लेकर निर्वाचन आयोग द्वारा चुनाव सुधारों के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाये गये हैं और भविष्य में भी यह क्रम जारी रहेगा। निर्वाचन आयोग की स्वायतत्ता तथा निष्पक्षता की छाया में भारतीय गणतंत्र के विकसित स्वरूप तथा सुनहरे भविष्य की कल्पना करना उचित प्रतीत होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारत का संविधान-एक परिचय, डॉ0 दुर्गादास वासु, लेक्सिस नेक्सिस प्रकाशन, 10वाँ संस्करण।
2. भारत की राज्य व्यवस्था-डॉ0 एम0 लक्ष्मीकांत, टाटा मैग्राहिल एज्युकेशन इंडिया प्रायवेट लि0, चतुर्थ संस्करण।
3. भारत की लोकतांत्रिक यात्रा एवं चुनाव- डॉ0 ममता मणि त्रिपाठी, राधा पब्लिकेशन ।
4. http://en.wikipedia.org
5. http://www.google.com
6. http://eci.nic.in/eci/eci.html
7. http://www.lawcommissionofindia.nic.in/lc170.htm

****

भारतीय राजनैतिक चिन्तन में नारी की दशा और दिशा - एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. ओ.पी. चक *

प्रस्तावना – कहा जाता है कि प्राचीन भारत में महिलाओं का स्थान ऊँचा था। इसीलिए प्राचीन भारत अपने विकास के सर्वोच्च शिखर पर था। कालान्तर में पुरूष प्रधान समाज ने नारी जाति की अवहेलना की समाज का विकास अवरूद्ध हो गया। उत्तर वैदिक काल में ब्राहम्णवाद ने महिलाओं की स्थिति को और अधिक गिरा दिया। नारी को पुरूष का आश्रित बना दिया। मनु के विचारों में इसका स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि नारी बाल्यकाल में पिता के अधीन, युवा काल में पति के अधीन एवं वृद्धावस्था में पुत्रों के अधीन रहती है और यही उसकी अस्मिता और सुरक्षा की दृष्टि से उचित होगा।

भारत में ही नहीं वरन् विदेशों में भी नारी की स्थिति सम्मानजनक नहीं रही है। मानव समाज नारी व पुरूष की सम्मिलित रचना है व समाज के विकास में दोनों का ही योगदान रहा है परन्तु जैविक अन्तर के कारण नारी को पुरूष की तुलना में कमतर और कमजोर माना गया है। इस सत्य को प्लेटो ने भी अपने चिन्तन में महत्वूपर्ण स्थान दिया है। वह स्त्रियों को पुरूषों के द्वारा किए जाने वाले सभी कार्यों को करने में सक्षम मानता है। इसीलिए वह नारी को अपने संरक्षण मंडल में सम्मिलित करता है। वह स्त्रियों के लिए पुरूषों के समान शिक्षा की व्यवस्था और समान उत्तरदायित्व की व्यवस्था करता है। प्लेटो का स्त्री-पुरूष समानता का यह विचार उसके समय में तो प्रासंगिक था ही आज भी प्रासंगिक है। लिंग भेद को मिटाने की दृष्टि से प्लेटो एक क्रान्तिकारी ही नहीं वरन् एक दूरदर्शी विचारक के रूप में प्रस्तुत होते हैं।

प्लेटो के समय में एथेन्स में स्त्रियों की दशा दर्दनाक थी उनको घर की चहारदीवारी में कैद रखा जाता था। उनका कार्य क्षेत्र घर गृहस्थी सम्भालना, बच्चे पैदा करना और उनका पालन पोषण करना ही उनकी जिंदगी थी।

सार्वजनिक जीवन में किसी तरह भाग लेने और किसी उत्तरदायित्व का निर्वाह करने के लिये वे योग्य नहीं समझी जाती थी। फलत: प्लेटो ने अपने आदर्श राज्य में स्त्रियों को पुरूषों के समकक्ष घोषित किया। उन्हें समानता का अधिकार प्रदान किया और उन्हें वे सब कार्य करने के लिए सक्षम और अधिकारी माना जो पुरूषों के द्वारा किए जाते हैं। एथेंस में स्त्रियों का कार्यक्षेत्र केवल घर चलाने और बच्चों का पालन पोषण करने तक सीमित था। प्लेटो के अनुसार यह अनुचित था क्योंकि इससे राज्य अपने भावी सरंक्षकों की सेवाओं से वंचित हो जाता था।

आज 21वीं सदी में भी महिलाओं का स्थान पुरूषों से निम्न ही है। आर्थिक कारणों से आज महिलाएं भी नौकरी और व्यवसायों में सम्मिलित अवश्य हो रही है परन्तु उन्हें परिवार और बाह्य कार्य दोनों का बोझ उठाना पड़ता है। उनकी कमाई पर चलने वाले परिवारों में भी वे पुरूषों के वर्चस्व एवं प्रताड़ना से बच नहीं पाती है। परिवार में लड़कों और लड़कियों में भेद किया जाता है। लड़के पैदा होते हैं तो उत्सव मनाया जाता है जबकि लड़कियों के साथ व्यवहार में भिन्नता देखी जाती है। लड़कों को स्वतंत्र आचरण की अनुमति होती है जबकि लड़कियों को पारिवारिक बंधनों के दायरे में ही आचरण करना पड़ता है। स्वतंत्रता के पूर्व तक भारत में स्त्रियों की शिक्षा का प्रतिशत पुरूषों की तुलना में नगण्य ही रहता था। स्वतंत्रता के बाद शासकीय प्रयासों एवं नवजागृति ने मिलकर स्त्री शिक्षा को काफी प्रोत्साहित किया है परन्तु आज भी अनेक शैक्षणिक सुविधाओं के बावजूद स्त्रियों की शिक्षा का प्रतिशत पुरूषों की तुलना में आधा भी नहीं है। सदियों से परम्पराओं में जकड़ी होने के कारण आज भी स्त्रियाँ मानसिक रूप से परम्पराओं और रूढ़िवादी सोच से ग्रसित है। स्त्रियाँ भीरू हैं और धार्मिकता में जकड़ी हुई हैं। कोई भी नया काम करने से वे डरती हैं। उनमें स्वयं कुछ करने की प्रवृति कम ही पायी जाती है।

आज भी नारी पर पुरूष प्रधान मानसिकता हावी है। स्त्रियों पर आये दिन अत्याचार होते रहते हैं। दहेज के नाम पर महिलाओं की बलि आम बात हो गई है। नौकरी पेशा महिलाएँ पुरूषों की वासना का शिकार होती रहती है। महिलाओं का दैहिक शोषण एक आम बात हो गई है। एक स्वस्थ एवं विकसित राष्ट्र के निर्माण में यह मानसिकता अच्छी बात नहीं है। इसीलिए न केवल भारत वरन् दुनियां के अधिकांश राष्ट्रों में इस तरह के व्यवहार और मानसिकता के उन्मूलन के प्रयास किए गए हैं।

विभिन्न देशों के अधिकार पत्रों में स्त्री-पुरूषों के लिए समान अधिकार की बात कही गयी है। संयुक्त राष्ट्र का 'सयुक्त घोषणा पत्र में महिलाओं के अधिकारों के संरक्षण के प्रावधान किए गए हैं। फिर भी महिलाओं पर होने वाले अत्याचार समाप्त नहीं हो रहे हैं। भारत मुस्लिम देशों और अन्य विकासशील देशों में तो महिला वर्ग के लिए यातनायें आए दिन की बात है। इंग्लैंड, अमरीका और यूरोप के अन्य देशों में भी महिला वर्ग, पुरूष वर्ग के हाथों अत्याचार भुगत रहा है। भारत जैसे देश में तो दहेज की मांग करते हुए महिला वर्ग पर अत्याचार तथा परिवार और समाज में महिला वर्ग के लिए अपमानजनक स्थिति आए दिन का घटनाक्रम बन गया है। मुस्लिम देशों में महिलाएं 18वीं और 19वीं सदी में रहते हुए अपना जीवन ढो रही हैं। विशेषतया महिलायें ही महिलाओं पर अत्याचार करने में सबसे आगे हैं। जन्म के साथ ही पुत्र और पुत्री में भेद महिला वर्ग पर अत्याचार का प्रारम्भ है और इस अत्याचार का प्रारम्भ स्वयं महिला के द्वारा ही किया जाता है।

महिला वर्ग की गिरी हुई स्थिति के मूल कारण दो हैं – प्रथम महिलाओं में शिक्षा का अभाव और द्वितीय – महिलाओं की आर्थिक निर्भरता-उदाहरण के लिए भारत में 75.85 प्रतिशत पुरूष साक्षर हैं लेकिन महिलाओं में साक्षरता का प्रतिशत केवल 54.16 प्रतिशत है। इसके अतिरिक्त महिलाएं पुरूषों पर आर्थिक निर्भरता के कारण पुरूष वर्ग के अत्याचारों को सहन करने के लिए

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, आलमपुर भिण्ड (म.प्र.) भारत

बाध्य हैं। आर्थिक निर्भरता, आत्महीनता की भावना को जन्म देती है लेकिन स्थिति का अन्य पक्ष यह है कि भारत और अन्य देशों में जो कामकाजी महिलाएं हैं उनके भी बहुत बड़े भाग में आत्मविश्वास का अभाव है और वह अपनी स्थिति में सुधार के लिए प्रयत्नशील नहीं है। भारत जैसे देश में ऐसी महिलाएं भी बड़ी संख्या में विद्यमान है जो स्वयं मजदूरी करके रोजी रोटी और कुछ उदाहरणों में पूरे परिवार की रोजी रोटी प्राप्त करती है तथा साथ ही निठल्ले शराबी पति के अत्याचारों को भी सहन करती है। बाल विवाह, पर्दाप्रथा, विधवा पुन: विवाह पर नियंत्रण आदि महिलाओं की गिरी हुई स्थिति के अन्य कारण है। वस्तुत: पारिवारिक जीवन के प्रसंग में हमारी समाजिक मान्यताऐं ही अत्यधिक दोषपूर्ण हैं। पारिवारिक जीवन के टूटने पर स्त्री को अधिक दोषी ठहराया जाता है। पुरूष को उनकी चारित्रिक कमजोरी के लिए उसे सहज ही क्षमा कर दिया जाता है लेकिन स्त्री की चारित्रिक कमजोरी के कारण उसे क्षमा नहीं किया जाता है। मध्य युग में कन्या वध होता था। आज भी कन्या भ्रूण हत्या की जाती है। सामाजिक कट्टरता, धार्मिक कट्टरता और अन्धविश्वास तथा समस्त यथास्थिति वादी तत्व महिलाओं की स्थिति में सुधार के मार्ग में प्रमुख बाधक तत्व हैं।

भारत में कुछ स्त्री संगठनों ने स्त्रियों में चेतना जागृत करने और उनकी स्थिति में सुधार लाने के प्रयत्न किए हैं। बीसवीं सदी के प्रारम्भ में ही स्त्रियों को समाज में उचित सम्मान दिलाने हेतु स्त्री-आन्दोलन का सूत्रपात हुआ। सर्वप्रथम मद्रास में भारतीय महिला संघ का गठन किया गया। इसके बाद देश में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन की स्थापना की गई। इस संगठन ने बाल विवाह, बहुपत्नी विवाह प्रथा और दहेज प्रथा आदि का विरोध किया। इसने स्त्रियों के लिए पुरूषों के समान सम्पत्ति अधिकारों की मांग की। इसके अलावा विश्वविद्यालय महिला संघ, भारतीय ईसाई महिला मंडल, अखिल भारतीय स्त्री शिक्षा संस्था एवं कस्तूरबा गांधी स्मारक ट्रस्ट आदि स्त्री संगठनों ने स्त्रियों की निर्योग्यताओं को दूर करने, सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करने और स्त्री शिक्षा का प्रसार करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। इसी तरह विश्वस्तर पर भी स्त्रियों की स्थिति में सुधार के प्रयत्न किए गए। संयुक्त राष्ट्र की आर्थिक सामाजिक परिषद के अन्तर्गत महिलाओं की स्थिति सम्बन्धी आयोग का गठन किया गया।

भारत में स्त्रियों की स्थिति में सुधार के लिए कुछ अधिनियम भी पारित किए गए। भारत के संविधान में स्त्री-पुरूष को समान अधिकार दिए गए हैं। सन् 1955 में हिन्दू विवाह अधिनियम पारित हुआ जिसमें स्त्रियों को पुरूषों के समान अधिकार दिए गए हैं। (विवाह के क्षेत्र) विशेष परिस्थितियों में विवाह विच्छेद का प्रावधान किया गया। बहुपत्नी विवाह पर रोक लगा दी गई। 1956 में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, हिन्दू नाबालिग और संरक्षता अधिनियम, हिन्दू दत्तक ग्रहण और भरण पोषण अधिनियम, स्त्रियों और कन्याओं का अनैतिक व्यापार निरोधक अधिनियम तथा सन् 1961 में दहेज निरोधक अधिनियम पारित किए गए।

संविधान के 73वें संशोधन में तथा 74वें संशोधन में ग्रामीण और शहरी क्षेत्र की स्थानीय स्वशासन संस्थाओं और पंचायती राज संस्थाओं एवं नगर पालिकाओं में चुनाव से भरे जाने वाले पदों से महिलाओं के लिए एक तिहाई पद आरक्षित किए गए हैं। वर्तमान में बदलाव से अधिक महिलाएं इन संस्थाओं के विभिन्न पदों पर राजनीतिक चेतना जागृति का कार्य कर रही हैं। इस आरक्षण से महिलाओं की स्थिति में सुधार होगा। इसी तरह लोकसभा और विधानसभाओं में महिलाओं के लिए एक तिहाई पद आरक्षित किए गए हैं। सन 2000 में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने एक प्रमुख निर्णय दिया जिसमें कहा गया है कि स्वेच्छा से होने वाले तलाकों में भी पति द्वारा पत्नी को गुजारा भत्ता दिया जाना चाहिए। इस प्रकार भारत और विश्व के अन्य देशों में नारी की स्थिति में सुधार सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण कार्य हुए हैं किन्तु यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि अभी भी बहुत कुछ किया जाना शेष है।

भारत में महिला संगठनों की संख्या बहुत कम है इसके अतिरिक्त ये उच्च मध्यवर्गीय संगठन है जो घटना की उत्पत्ति के बाद ही सक्रिय होते हैं जबकि शेष समय पर ये निष्क्रिय ही रहते हैं। भारत में आज ऐसे संगठनों की आवश्यकता है जो ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के निम्न वर्गों में कार्य करे।

हिन्दू समाज में स्त्रियों की परतंत्रता एवं हीन भावना और दशा के प्रति डॉ. भीमराव अम्बेडकर विशेष रूप से चिन्तित थे। डॉ. अम्बेडकर चाहते थे कि वे वैधानिक रूप से स्वतंत्र हो ताकि आत्मनिर्भर जीवन यापन कर सके तथा यथोचित अधिकार प्राप्त कर सके स्त्रियों की हीन दशा के लिए वे हिन्दू धर्मग्रन्थ में मुख्य रूप से मनुस्मृति को उत्तरदायी मानते हैं जिसमें प्रतिपादित किया गया कि स्त्रियां बालकाल में पिता के संरक्षण में, युवा अवस्था में पति के संरक्षण में तथा वृद्धावस्था में पुत्रों की अधीनता में रहे। उन्होंने इस विचारधारा और व्यवस्था का विरोध किया। वे चाहते थे कि उन्हें शिक्षा का अधिकार मिले। अपनी योग्यतानुसार वे व्यवसाय का अधिकार प्राप्त करे। सम्पत्ति के उत्तराधिकार एवं पुत्र पुत्री को गोद लेने का अधिकार प्राप्त करें। पुन: विवाह का अधिकार प्राप्त करे। इसीलिए उन्होंने हिन्दु कोड बिल पारित कराया जिसके माध्यम से उसे उपरोक्त सभी अधिकार प्राप्त हुए।

इसी प्रकार गॉधी जी भी भारत में स्त्रियों की हीन दशा के प्रति चिन्तित थे। वे स्त्री-पुरूष में भेद नहीं करते थे। वे स्त्री पुरूष की असमानता के निन्दक थे। उन्होंने पर्दा प्रथा का विरोध किया था। वे तमाम कुरीतियों के विरोधी थे। स्त्रियाँ बाल विवाह, वृद्धविवाह देवदासी जैसी कुप्रथाओं की शिकार थी। वे पुरूषो पर निर्भर थी। विधवा के रूप में स्त्रियाँ शोषित और नारकीय जीवन यापन करती थी। इन कुप्रथाओं के विरूद्ध गॉधी जी आजीवन संघर्ष करते रहे। गॉधी जी के प्रयासों के कारण ही स्वंतत्र भारत के संविधान में स्त्रियों को पुरूषो के समकक्ष समान अधिकार प्राप्त हुए है। स्त्रियों में सुधार हुआ है। समाज के प्रत्येक क्षेत्र में वे अग्रणी रूप से भाग ले पा रही है।

बाल गंगाधर तिलक एक राजनीतिक यौद्धा थे। कहा जाता है कि वे एक सामाजिक सुधारक कम वरन राजनीतिज्ञ अधिक थे। इसके बाबजूद स्त्रियों के प्रति उनकी समझ और सम्वेदना अत्यधिक महत्वपूर्ण थी। उन्होंने एक निश्चित योजना के तहत सामाजिक सुधार कार्यक्रमो को कार्यान्वित करने का प्रयास किया। बाल विवाह, विरोध, विधवा विवाह का समर्थन, दहेज का उन्मूलन आदि कार्यक्रमों को लागू करने का प्रयास किया।

इसी प्रकर राजाराम मोहन राय ने स्त्री के विरूद्ध रूढिवादी और परम्परावादी कुप्रथाओं के उन्मूलन के प्रयास किये। स्त्री और पुरूषो के समान गरिमा और स्वतंत्रता का समर्थन किया। स्त्री शिक्षा पर बल दिया ताकि बाल विवाह, अनमेल विवाह जैसी प्रथाओं को समाप्त किया जा सके तथा एक स्वस्थ एवं सर्वांगीण रूप से विकसित समाज की स्थापना की जा सकें।

सम्पूर्ण भारतीय राजनीतिक और सामाजिक चिंतन स्त्री गरिमा और स्वतंत्रता समर्थक विचारों से ओतप्रोत रहा है। जिसमें प्राचीन भारतीय विचारों से लेकर आधुनिक चिन्तन तक सभी ने स्त्री पुरूष समानता का समर्थन किया

है। कुरीतियों और रूढवादियों का विरोध किया है। संवैधानिक उपचारों और सामाजिक संगठनों का अपना स्थान और महत्व है किन्तु स्त्री को यदि सम्मान और आत्मनिर्भर जीवन जीना है। उसे अपने सोच और प्रयासो में आमूलचूल बदलाव करना होगें। तभी नारी की शक्ति प्रतिष्ठापित होगी और एक स्वस्थ एवं सर्वांगीण विकसित समाज की स्थापना हो सकेगी।

महिलाओं पर आज अधिक आक्रमण हो रहें है। यौन शोषण एवम् बलात्कार की यातनाएँ दिन दूनी रात चौगुनी बढ रहीं है। दहेज आदि घटनाओं के कारण स्त्रियों की हत्याएं की जा रहीं है। इन घटनाओं का सामना स्वंय महिलाओं को ही करना है। शिक्षा प्राप्तकर महिलाऐं इन समस्याओं से उबर सकती है। पुरूष में संसाधनों की उपलब्धता और संसाधनों के दोहन की शाक्ति अधिक है क्योंकि उन्होंने इसका निरन्तर प्रयोग किया है। सामाजिक मान्यताओं और कुरीतियों में जकडी महिलाऐं इससे वंचित रही हैं। आधुनिक समाज में महिलाऐं चुनौतीपूर्ण जीवन में प्रवेश कर रही है। अत: उनके लिये अच्छा होगा कि वे संसाधनों की चिन्ता न करें आगे बढें और अपनी सोच बदले और तब तक आगे बढ़ती रहें जब तक कि उन्हें अपनी मंजिल प्राप्त न हो जायें। दृढ़ निश्चय और आत्म विश्वास ही उनके जीवन में सकारात्मक सुधार सुनिश्चित कर सकता है। महिलाएं शिक्षित बने और अपने आप में हुनर विकसित करें। जिसके पास हुनर होता है उसका कद ताकतवर व्यक्ति से ज्यादा ऊँचा होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मेहता एवम् खन्ना - राजनीति विज्ञान साहित्य भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स प्रा0लि0 आगरा (उ0प्र0)।
2. श्याम सुन्दरम् - सी.पी.शर्मा, राजनीति विज्ञान रामप्रसाद एण्ड संस आगरा।
3. डॉ पुखराज जैन राजनीति विज्ञान, साहित्य भवन पब्लिकेशंस, आगरा।
4. दैनिक भास्कर समाचार पत्र ग्वालियर।
5. दैनिक पत्रिका समाचार पत्र ग्वालियर।
6. दैनिक राज एक्सप्रेस समाचार पत्र ग्वालियर।

****

ग्रामीण महिला सशक्तिकरण

डॉ. समीना खॉन खटक *

प्रस्तावना – यह एक विडम्बना है कि देश को आजाद हुऐ सात दशक होने जा रहे हैं परन्तु हमारे देश में महिला सशक्तिकरण का मुद्दा आज भी एक नई अवधारणा के रूप में देखा जाता है। जिस धरती पर 100–150 वर्ष पूर्व स्वामी विवेकानन्द, राजा राममोहनराय, महात्मागांधी, डॉ. भीमराव अम्बेड़कर जैसे विचारकों का जन्म हुआ, जिन्होंने इस पुरूष प्रधान समाज में महिलाओं को उनका उचित स्थान व सम्मान दिलाने व उनको इस दिशा में जागृत करने हेतु अथक व सार्थक प्रयास किये, उस धरती पर आज भी नारी इस समाज में अपने अधिकारों व सम्मान हेतु एक कभी ना समाप्त होने वाली लड़ाई लड़ रही है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार 'समाज रूपी इस गरूड़ के स्त्री और पुरूष दो पंख है। यदि एक पंख सबल और दूसरा निर्बल हो तो उसमें गगन को छूने की शक्ति कैसे निर्मित होगी।' आज जब हम महिला सशक्तिकरण की बात करते है तो एक बिन्दू पर अवश्य बहस होती है कि महिलाओं के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में बदलाव होना चाहिये। परन्तु यदि हम वास्तविक धरातल पर देखें तो हम पायेगें कि इस बदलाव की गति अत्यन्त धीमी है और इसका मुख्य कारण है भारतीय समाज में सदैव से ही ऐसी प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष शक्तियों का सक्रिय रहना जो महिलाओं को समानता का अधिकार देने का विरोध करती रहती हैं।

कन्या भ्रूण हत्या, बाल विवाह, दहेज प्रथा, शिक्षा का अभाव, अधिकारों के प्रति जागरूकता में कमी, राजनीतिक उदासीनता, आदि कुछ ऐसे कारण है, जो हमारे सामाजिक परिवेश में महिला सशक्तिकरण के प्रयासों को कमजोर करने की दिशा में सहायक होते है। राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो के अनुसार 2012 में 8233 महिलाऐं दहेज की बलि चढ़ गईं। आज भी हमारे देश में कन्या भ्रूण हत्या रोकने हेतु कानून होते हुए भी प्रत्येक वर्ष 5 लाख से अधिक कन्याओं की जन्म से पहले ही हत्या कर दी जाती है। आज भी देश में 30 करोड़ से अधिक महिलाऐं व बालिकाएँ खुले में शौच करती है, जिसके कारण बीमारी, हीनभावना, छेड़छाड़ व बलात्कार जैसी सम्भावनाओं का खतरा बना रहता है। यह सच है कि हजारों वर्षो से हमारे समाज में अपनी पैठ बना चुकी लिंगानुभेद की इस समस्या को रातों–रात समाप्त नहीं किया जा सकता। परन्तु इस सत्य से भी हम मुँहं नहीं छुपा सकते कि स्त्री सशक्तिकरण के बिना समाज का समग्र विकास असम्भव है। अरस्तु के अनुसार 'किसी भी राष्ट्र की स्त्रियों की उन्नति या अवनति पर ही उस राष्ट्र की उन्नति या अवनति निर्भर है।'

भारत के सामाजिक परिवेश पर यदि हम नजर डालें तो यह स्पष्ट तौर पर देखा जा सकता है कि हमारे वैचारिक और व्यवहारिक स्तर में एक विकराल अन्तर है, जो इस समस्या से देश और समाज को छुटकारा दिलाने में मुख्य रूप से बाधक सिद्ध हो रहा है। विचारधारा के इस असन्तुलन के चलते महिला सशक्तिकरण की दिशा में बाधाऐं उत्पन्न होना स्वाभाविक है। ऐसे में यह अत्यन्त आवश्यक है कि सरकार व समाज द्वारा महिला सशक्तिकरण की दिशा में ठोस योजनाऐं केवल सिद्धान्त रूप में ही नहीं अपितु व्यवहारिक धरातल पर ईमानदारी व बिना किसी पूर्वाग्रह के क्रियान्वित की जायें।

भारत एक ग्राम प्रधान देश होने के कारण देश की 70 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। शहरी क्षेत्रों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों में विकास की गति धीमी होती है जिसके कारण समाज का एक बड़ा वर्ग सरकार द्वारा चलाई जाने वाली विकास की योजनाओं से अछुता रह जाता है, जिसके चलते ग्रामीण इलाकों में महिला, सशक्तिकरण की प्रक्रिया को वांछित गति व स्वरूप नहीं मिल पाता है। यही कारण है कि हमारे समाज ने शहरी महिलाओं को महिला सशक्तिकरण का चेहरा बना रखा है और यह दिखाने का प्रयास किया जाता है कि भारत में इस दिशा में किये जा रहे प्रयासों को अत्यधिक सफलता मिल रही हैं। परन्तु यह सत्य तब तक अधूरा रहेगा जब तक ग्रामीण समाज की महिलाओं को आर्थिक, सामाजिक राजनीतिक, शैक्षिक तौर पर अधिकार सम्पन्न नहीं बना दिया जाता है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि आज भी ग्रामीण महिलाओं को उनके पारम्परिक कार्यो जैसे चूल्हा–चौका, संतानोत्पत्ती, कृषि कार्यो आदि में पुरूष सदस्यों की सहायता के लिये ही उपयुक्त समझा जाता है। महिलाओं का उद्यम उनकी सामाजिक व पारिवारिक पृष्ठभूमि के अनुसार पुरूषों द्वारा ही निर्धारित किया जाता है। इस तरह घरेलू कार्यो हेतु उन्हें कोई पारिश्रमिक भी नहीं मिलता है तथा उन्हें अपने पारिवारिक उद्यमों जैसे कृषि पशुपालन आदि के अतिरिक्त कार्य करने की स्वतन्त्रता भी नहीं होती है। इस प्रकार का भेदभाव मनोवैज्ञानिक, सामाजिक व आर्थिक रूप में महिलाओं के प्रति समाज में एक उपेक्षित व तिरस्कार की मानसिकता को जन्म देता है।

किसी भी समाज व राष्ट्र की उपलब्ध मानव शक्ति की कार्यक्षमता, सामर्थय, गुणवत्ता, नैतिकता, शिक्षा जैसे गुणों के स्तर पर निर्भर रहता है। फिर चाहे वह मानव शक्ति ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती हो अथवा शहरी क्षेत्रों में।

यदि आर्थिक गतिविधियों के आधार पर हम भारत की संरचना पर नजर डाले तो लगभग 60 प्रतिशत महिलाऐं कृषि क्षेत्र में प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से कार्यरत हैं। अत: इस आधार पर इस निष्कर्ष तक पहूँचना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि ग्रामीण महिलाओं की शिक्षा, कार्यक्षमता, गुणवत्ता के स्तर में विकास करने से सम्पूर्ण देश की अर्थव्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन किया जा सकता है क्योंकि देश की अर्थव्यवस्था में कृषि का अति महत्वपूर्ण योगदान है।

ग्रामीण महिला सशक्तिकरण की दिशा में सरकार द्वारा प्रयास – इस दिशा में सबसे महत्वपूर्ण प्रयास 1991 में तत्कालीन केन्द्र सरकार द्वारा 73 वें संविधान संशोधन द्वारा महिलाओं को पंचायती राज व्यवस्था व स्थानीय

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला–उज्जैन (म.प्र.) भारत

निकायों में 33 प्रतिशत आरक्षण देकर उनको देश की राजनीतिक व्यवस्था में सक्रिय भागीदार बनाने का है। आगे चलकर मध्य प्रदेश सहित देश के अधिकांश राज्यों ने इस आरक्षण को 50 प्रतिशत तक कर दिया है। इस एक प्रयास ने देश की ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण अध्याय का सूत्रपात किया है। इसके द्वारा तृणमूल स्तर पर विकास की प्रक्रिया में भागीदारी करने का ग्रामीण महिलाओं को अवसर प्रदान किया गया है।

महिलाओं को जागरूक, अधिकार युक्त व शक्ति सम्पन्न बनाने की दिशा में यह एक क्रांतिकारी कदम है क्योंकि राजनीतिक रूप से सजग व सशक्त महिला समाज में समानता के अधिकार हेतु अपेक्षाकृत अधिक शक्ति के साथ लड़ सकती है। सामाजिक व आर्थिक असमानता व भेदभाव के विरूद्ध उसकी इस लड़ाई में नेतृत्व क्षमता के विकास के चलते अन्य महिलाऐ भी अपेक्षाकृत सरलता के साथ उसके साथ जुड़ सकती है। ग्रामीण महिलाऐं जो अब तक उपेक्षित जीवन जीने को मजबूर थी, पंचायतो के आरक्षण व्यवस्था के चलते केवल सदस्य के रूप में ही नहीं, वरन् पंचायत के मुखिया के रूप में अपनी भागीदारी द्वारा विकास की प्रक्रिया का हिस्सा बनकर अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। किसी भी नवीन व बेहद व्यापाक स्तर पर प्रारम्भ की जाने वाली व्यवस्था की तरह इस व्यवस्था में भी सुधारों की एक सतत् प्रक्रिया के द्वारा देश का ग्रामीण महिला समाज सशक्तिकरण की दिशा में धीमा ही सही परन्तु प्रभावशाली प्रदर्शन कर रहा है। सरकार के इस कदम से ग्रामीण महिलाओं को स्थानीय विकास में भागीदारी व अपनी नेतृत्व क्षमता का विकास करने का एक अवसर दिया है।

आर्थिक सशक्तिकरण समाज के प्रत्येक वर्ग के समग्र विकास हेतु अत्यन्त महत्पूर्ण विषय है, जिसके अभाव के चलते ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरण बेमानी हो जाता है। केन्द्र सरकार ने 2008 में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी योजना (मनरेगा) को सम्पूर्ण देश में लागू कर के रोजगार को प्रत्येक नागरिक का कानूनी अधिकार बनाया तथा इस योजना में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण देकर उनकी आर्थिक स्थिति को सुधारने की दिशा में एक साहसिक कदम उठाया। इतना ही नहीं इस योजना में कार्यस्थल पर आने वाली महिलाओं के 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों की देखभाल व निगरानी की व्यवस्था का भी प्रावधान रखा गया।

गरीब ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक स्थिति सुधारने की दिशा में सरकारी स्तर पर महिलाओं को उनके पारम्परिक क्षेत्रों जैसे कृषि, पशुपालन डेयरी, हथकरघा, हस्तशिल्प, खादी ग्रामोद्योग आदि में दक्षता व कौशल उत्पन्न करने हेतु प्रशिक्षण के कार्यक्रमों द्वारा भी सशक्तिकरण के प्रयास किये जा रहे है।

'महिला स्वंयसिद्धा योजना' के अन्तर्गत ग्रामीण महिलाओं के स्वंयसहायता समूहों के गठन के माध्यम से उनके सामाजिक आर्थिक सशक्तिकरण की प्रक्रिया सन् 2001 से निरन्तर जारी है। अत्यन्त कम ब्याज पर राष्ट्रीय महिला कोष नाबार्ड जैसी संस्थायें ग्रामीण महिलाओं द्वारा संचालित स्वंय सहायता समूहों को सूक्ष्म ऋण व्यवस्था द्वारा उनके पारम्परिक क्षेत्रों में आर्थिक सहायता प्रदान कर रही है। जिसके चलते ग्रामीण महिलाओं में आत्मविश्वास व स्वालम्बन की भावना का उदय हो रहा है। आज देश के ग्रामीण इलाकों में 30 लाख से अधिक स्वंयसहायता समूहों के फैले जाल के द्वारा ग्रामीण महिलायें आर्थिक असुरक्षा व अभावों के मकड़जाल से बाहर निकलने का सफल प्रयास कर रही है।

ऐसे अनेक उदाहरण है जहाँ महिलाओं ने इन समूहों के माध्यम से बेहद प्रभावशाली ढ़ग से आर्थिक प्रगति का रास्ता खोला है। इनके द्वारा ग्रामीण महिलाओं में बचत की भावना को बढ़ावा मिला है जिसके चलते स्थानीय सूदखोरों पर निर्भरता कम हुई है।

शिक्षा के क्षेत्र में भारत की ग्रामीण महिलाओं की स्थिति अत्यन्त शोचनीय है। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में महिला साक्षरता दर 65.46 प्रतिशत है जबकि पुरूष साक्षरता 82.14 प्रतिशत है। ग्रामीण क्षेत्रों में तो स्थिति और भी अधिक गम्भीर है। 2011 की जनगणना के आंकड़ो के अनुसार शहरी महिला साक्षरता दर 79.92 प्रतिशत के मुकाबले ग्रामीण महिला साक्षरता दर केवल 58.75 प्रतिशत ही है। ये आंकड़े ग्रामीण महिलाओं की शिक्षा की स्थिति के अत्यधिक दयनीय पक्ष को उजागर करते है।

बालिका भ्रूण हत्या, बाल विवाह जैसी अनेक सामाजिक कुरीतियों के चलते शहरी क्षेत्रों की अपेक्षा ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक व शैक्षिक स्थिति अत्यन्त दयनीय है। अल्प आयु में विवाह कर देने के कारण अथवा बालिका को केवल घर की चार-दिवारी की वस्तु समझने की पुरूष मानसिकता के चलते अधिकतर पालक या तो बालिका को स्कूल नहीं भेजना चाहते है अथवा छोटी कक्षा से ही उसकी शिक्षा समाप्त कर दी जाती है। अभिभावक बालिका शिक्षा पर खर्च किये जाने वाले व्यय व समय को अनुत्पादक व फिजूलखर्च समझते है। परिवार के अधिकतर बुजुर्ग अशिक्षित होने के कारण सामाजिक परिवेश भी यदि बालिका शिक्षा के अनुकूल नहीं होता है तो समस्या और अधिक विकराल रूप धारण कर लेती है।

इस मानसिकता को बदलने हेतु विगत दो दशकों से सरकारी स्तर के साथ-साथ गैर सरकारी संगठनों, मीडिया तथा विभिन्न औधोगिक संगठनों आदि द्वारा सराहनीय व ठोस प्रयास किये जा रहे है। महिला साक्षरता में वृद्धि हेतु सबसे आवश्यक है ग्रामीण क्षेत्रों की बालिकाओ को अधिक से अधिक संख्या में स्कूलों तक लाना, स्कूलों में शैक्षिक वतावरण में सुधार के साथ-साथ एक ऐसा वातावरण तैयार करना जिससे अभिभावकों और बालिकाओं की मानसिकता में शिक्षा के प्रति ठोस व दूरगामी परिवर्तन लाया जा सके। सर्व शिक्षा अभियान, राष्ट्रीय बालिका शिक्षा कार्यक्रम, प्रौढ शिक्षा कार्यक्रम, कस्तुरबा गांधी शिक्षा परियोजना, सायकिल प्रदाय योजना, गाँव की बेटी योजना आदि अनेक योजनाओं के माध्यम से सरकार महिला शिक्षा को बढ़ावा देने हेतु प्रयास कर रही है। इन योजनाओं का क्रियान्वयन केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा किया जा रहा है और ऐसा आभास मिल रहा है कि इस दिशा में गम्भीर व ठोस प्रयास किये जा रहे है कि ग्रामीण महिलाऐं भी शिक्षा के क्षेत्र में शहरी महिलाओं से पीछे नहीं रहे।

भारत जैसे विशाल कृषि प्रधान व जटिल सामाजिक आर्थिक संरचना वाले देश में जहाँ कुल जनसंख्या का करीब 70 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है ग्रामीण महिलाओं का स्वास्थ्य आज भी एक गम्भीर विषय बना हुआ है। भारत में 70 में से एक महिला की प्रसव के दौरान मृत्यु हो जाना इस समस्या के विकराल रूप की और इशारा करता है। एक अस्वस्थ माँ द्वारा जन्में बच्चें के स्वास्थ पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है और साथ ही एक पूरी पीढ़ी पर इसका दुष्प्रभाव देखा जा सकता है। केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा इस समस्या को गम्भीरता से लिया जा रहा है और अनेकों योजनाओं को लागू करके इस दिशा में सुधार करने के प्रयास किये जा रहें है। जननी सुरक्षा योजना, राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम, राष्ट्रीय आयोडीन अल्पता विकार नियंत्रण कार्यक्रम, प्रसव हेतु प्रसव व उपचार

योजना, प्रसव सहयोगी योजना, विजयाराजे जननी कल्याण बीमा योजना, राष्ट्रीय टीकाकरण कार्यक्रम, राष्ट्रीय मेंटरनिटि बेनिफिट योजना, आदि अनेको ऐसी कल्याणकारी योजनाओं के द्वारा महिलाओं के स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं के निराकरण की दिशा में प्रयत्न किये जा रहे है। इन सभी योजनाओं का मुख्य उद्वेश्य है– महिलाओं और मुख्य रूप से ग्रामीण महिलाओ के स्वास्थ्य में सुधार करते हुवे मातृ व शिशु मृत्यु दर में कमी लाना।

महिला सशक्तिकरण की दिशा में 22 जनवरी 2015 को प्रधानमंत्री श्री नेरन्द्र मोदी ने 'बेटी बचाओं– बेटी पढ़ाओं' योजना की घोषणा की है जिसे आरम्भ में देश के 100 जिलों में लागू किया जावेगा ओर इस योजना के द्वारा देश की महिलाओं के सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक उत्थान व मुख्य रूप से ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु उपाय किये जायेगें। केन्द्र/ राज्य सरकारों, सामाजिक व गैर सरकारी संगठनों, मीडिया, बड़े औधोगिक घरानों तथा विभिन्न प्रकार की अन्य संस्थाओं द्वारा किये जा रहें प्रयासों के परिणाम भी सामने आने लगे है और ग्रामीण महिलाओं की सशक्तिकरण प्रक्रिया को बल मिल रहा है। परन्तु इस दिशा में और अधिक ठोस, तीव्र, प्रभावी और निरन्तर प्रयासो की आवश्यकता है। इस बात पर विशेष बल दिया जाना अत्यावश्यक है कि इस दिशा में की जाने वाली योजनाओं व कार्यक्रमों में ईमानदारी, पूर्णनिष्ठा, समयबद्धता व निष्पक्षता का पूरा ध्यान रखा जाये तथा हर स्तर पर इसकी प्रभावी ढ़ग से मोनिटिंग भी की जाये। ग्रामीण महिला सशक्तिकरण जैसे अत्यन्त जटिल परन्तु महत्वपूर्ण विषय को सरलता से लेना समाज व देश के लिये अहितकारी है, अत: हर स्तर पर इस समस्या को गम्भीरता से लेना बेहद जरूरी है और सरकारों द्वारा इस विषय को अपनी प्राथमिकताओं में जितना शीर्ष व महत्वपूर्ण स्थान दिया जाये उतना महिलाओं, समाज व देश के लिये हितकारी होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुरूक्षेत्र, अगस्त 2013, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन नई दिल्ली।
2. आगे आये– लाभ उठाये, जनसम्पर्क विभाग, म.प्र.।
3. महिला आरक्षण – महिलाओं में नेतृत्व शक्ति का विकास– डॉ. दिवाकर शर्मा, गुप्ता पब्लिशर्स, नागपुर (महाराष्ट्र)।
4. भारत की जनगणना 2011

****

सामाजिक गिरावट व कन्या भ्रुण हत्या

भावना ठाकुर *

प्रस्तावना – इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्राचीनकाल में स्त्रियों को महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त थे। 'हमारे देश में ग्रार्गी, मैत्रेयी तथा अभी आदि ऐसी अनेको नारियाँ हुई है, जिनको सम्मानजनक स्थान प्राप्त था परन्तु मध्यकालमें नारी की स्थिति अत्यन्त शोचनीय थी। वह घर की चार दिवारी में कैद थी।' परिवार का सम्पूर्ण ढ़ाँचा आदमी के वर्चस्व और नारी की निर्भरता पर आधारित था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1950 में स्त्रियों को पुरूषो के समान अधिकार दिये गये। लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष, महिला दशक के बाद 2001 में महिला सशक्तीकरण वर्ष के रूप में मनाया गया जो इस बात का गवाह है कि आजादी के 60 साल बाद भी संविधान द्वारा दिये गये, 'समानता के अधिकार' से महिलाएँ वंचित है।

संवैधानिक प्रावधानों और कानूनों के बावजूद महिलाओं के उत्पीड़न की घटनाओं की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ रही है। महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों के अनेक रूप है – कन्या भ्रुण हत्या, शिशु कन्या हत्या, परिवार में लड़कियों की शिक्षा और स्वास्थ्य की उपेक्षा, अल्पायु में विवाह, बलात्कार, जलात, वैश्वीकरण आदि। आधुनिक महिला जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरूषों की प्रतियोगी है फिर भी वह पहले से कहीं ज्यादा असुरक्षित है। मध्यकालीन भारत में जहाँ बोझ समझने के कारण कन्यावध की प्रथा सर्वप्रचलित थी आज भी वर्तमान एवं सभ्य समाज में अभी भी बनी हुई है। यदि चयन की बात हो तो चयन सदैव पुत्र के लिए होता है पुत्री के लिए नहीं।

किसी भी देश की संरचना में लिंग संरचना तथा लिंगानुपात का विशेष महत्व होता है। लिंगानुपात को देख कर ही किसी देश की सामाजिक, सांस्कृतिक स्थिति का एक निश्चित सीमा तक अनुमान लगाया जाता है। स्त्री पुरूष अनुपात की भिन्नता के कारण ही देश के विभिन्न भागों में भिन्न–भिन्न वैवाहिक एवं पारिवारिक प्रथाएं देखने को मिलती है। देश की जनसंख्या जन्म दर विवाह की आयु तथा लिंग संरचना पर लिंगानुपात का महत्वपूर्ण रूप से प्रभाव पड़ता है।

लिंगानुपात से तात्पर्य – 'प्रति हजार पुरूषो के पीछे स्त्रियों की संख्या के अनुपात को लिंगानुपात माना गया है।'

राष्ट्रीय जनगणना के 2001 के आँकड़ों पर आधारित अध्ययन यह बात सिद्ध होती है कि 0–6 आयु वर्ग के बच्चे देश के समृद्ध राज्यों जैसे – दिल्ली, गुजरात, पंजाब, एवं हरियाणा आदि में लिंगानुपात चिन्ताजनक है। महानगरों के उन क्षेत्रों में ही देखे जहाँ समृद्धतय लोग निवास करते है स्त्री पुरूष अनुपात अत्यन्त कम है। दक्षिण–पश्चिमी दिल्ली देश की राजधानी का अत्यन्त संभ्रान्त इलाका माना जाता है जहाँ लिंगानुपात 1991 में 904 था वह 2001 में गिरकर 845 रह गया है। पूरे देश में भी लिंगानुपात में चिन्ताजनक दर से कमी आयी है। इस स्थिति में के कारण ही संयुक्त राष्ट्र संघ ने भारत को कहा कि वह इस संबंध में प्रभावी कदम उठाये। भारत की गांवों की यह मिथक धारणा कि वंश तो सिर्फ बेटो से ही बढ़ेगा यह धारणा अब शहरी क्षेत्रों में भी नजर आने लगा है। समाज की संरचना, संगठन और व्यवस्था में लिंग की समानता और असमानता का विशेष महत्व होता है जो कि स्त्री और पुरूष से मिलकर बनता है। अनेक सामाजिक व्यवस्थाओं में नर नारी के बीच बहुत सी विषमताएँ पायी जाती है। भारतीय समाज भी इसका अपवाद नहीं है, विश्व के अनेक भागों में जनसंख्या में स्त्री पुरूष अनुपात में बहुत महत्वपूर्ण अन्तर दिखाई पड़ते है। भारत में स्त्री पुरूष अनुपात विशेष रूप से कम रहा है। यह समस्या देश के सभी भागों में समान रूप से दिखाई देती है। ताजा आंकड़ो के आधार पर यह प्रतीत होता हे कि स्त्री पुरूष अनुपात देश के उत्तरी प्रांतो विशेषकर उत्तर पश्चिमी राज्यों में कुछ ज्यादा ही न्यून स्तर पर पाया गया है। हरियाणा में इसका स्तर 0.87 तो पंजाब में एवं उत्तर प्रदेश में 0.88 है तो राजस्थान में यह 0.91 है इसके विपरीत दक्षिणी प्रांतो में यह अनुपात किसी सीमा तक अधिक सम्मानीय कहा जा सकता है।

तमिलनाडु और आंध्रप्रदेश में इसका स्तर 0.97 और कर्नाटक 0.96 केरल में यह अनुपात सर्वाधिक 1.00 से अधिक आंका गया है। यह सभी जानते है कि भारत में बीसवीं सदी के प्रारंभ से स्त्री पुरूष अनुपात में गिरावट आनी शुरू हो गई थी। वस्तुत: 1901–2001 तक निरंतर कमी ही आती रही है और स्त्री पुरूष अनुपात अपने न्यूनतम स्तर तक पहुंच गया है यह स्तर 933 स्त्री प्रति 1000 पुरूष से भी कम है।

अखिल भारतीय स्तर पर स्त्री पुरूष अनुपात में कमी के मूल कारण निम्नानुसार है –

1. स्त्री की तुलना में पुरूषों को अधिक महत्व दिया जाना।
2. सामाजिक एवं सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण देश में पुत्र रत्न प्राप्ति का सर्वाधिक महत्व देना।
3. स्त्रियों की मृत्यु दर का ऊँचा होना।
4. बाल विवाह–परिणाम स्वरूप स्त्री मृत्यु दर अधिक होना।
5. स्त्रियों की औसतन आयु पुरूषों से कम होना।

उपरोक्त महत्वपूर्ण कारणों से देश में लिंग अनुपात समान न होकर असमान पाया जा रहा है।

घटता लिंगानुपात एक सामाजिक चिन्तन का एक गंभीर पहलू है। प्रकृति से खिलवाड़ करने की अनुमति किसी भी व्यक्ति को नहीं है, और न ही दी जा सकती है। यह ईश्वरी एवं सामाजिक नियमों का सरासर उल्लंघन है। घटता हुआ लिंगानुपात की असंतुलनता भी इस स्थिति को उजागर करता है कि वहाँ का समाज कैसा है। यह स्थिति समाज को कैसे प्रभावित करती है यह विचारणीय प्रश्न है। एक आदर्श जनसंख्या के लिए स्त्री और पुरूषों की

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, रेहटी (म.प्र.) भारत

जनसंख्या का समान होना अनिवार्य है। लेकिन युनीसेफ की एक रिपोर्ट चौका देती है, इस रिपोर्ट के हिसाब से देश के 80 प्रतिशत जिलो में 1991 के बाद अब तक लिंगानुपात में जबरदस्त गिरावट आई है। स्टेट ऑफ द वर्ल्ड चिल्ड्रन रिपोर्ट 2007 के अनुसार भारत में सबसे खराब स्थिति पंजाब की है। 2001 में इस राज्य में लड़कियों की स्थिति 798 रह गई है जबकि राष्ट्रीय औसत 927 लड़कियों की है।

तालिका से स्पष्ट है कि 1901 से 1971 तक पुरूष, स्त्री अनुपात में बराबर गिरावट आती रही है 1901 से 972 या इसके बाद 1991 तक लगातार लिंगानुपात में मामुली सुधार हुआ परन्तु इसके बाद पुन: लिंगानुपात में गिरावट का क्रम शुरू हुआ जो 2005 में पुन: बढ़ कर 925 हो गया है। 0-6 वर्ष के बच्चों का लिंगानुपात 1991 में 945 था जो 2005 में घट कर 917 हो गया है। इसका मूल कारण कन्या भ्रुण हत्या बताया गया है।

सन् 1901 से 2011 के बीच स्त्री पुरूष अनुपात

क्र.	जनगणना वर्ष	लिंगानुपात
1	1901	972
2	1911	964
3	1921	955
4	1931	950
5	1941	945
6	1951	946
7	1961	941
8	1971	930
9	1981	935
10	1991	927
11	2001	933
12	2011	940

0-6 बच्चों का लिंगानुपात 2001 से लेकर 2003-04 में पंजाब में 875 से 793 हिमाचल प्रदेश में 951 से 897, गजरात में 928 से 875, महाराष्ट्र में 946 से घटकर 917 हो गया है।

भारत के विकसित राष्ट्रों महाराष्ट्र तथा गुजरात में लिंगानुपात में गिरावट आई है। हिन्दी भाषाई राज्य बिहार, झारखंड तथा उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश में लिंगानुपात में निरंतर गिरावट आई है। 2001 के जनगणना के आधार पर देखा जाए तो 122 जिलों तथा 14 राज्यों 0-6 आयु समूह की लिंगानुपात 900 और 900 से कम हुई है। उत्तर प्रदेश के बागवत जिले में प्रति 1000 पुरूषों पर 847 स्त्रियों की संख्या है। इसी प्रकार पंजाब के फतेहगढ़ साहब जिले में प्रति हजार लड़कों पर 754 जनसंख्या है।
पंजाब, हरियाणा, गुजरात, महाराष्ट्र, दिल्ली इत्यादि में भी लड़कियों की संख्या कम बताई गई है। इस तरह जब हम स्त्री व पुरूष के लिंग अनुपात को देखते है तो यह सारे देश की जनांकिकी को भयावह बना देता है। इसमें सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि हम यह नहीं देखते कि इस अनुपात के बिगड़ते से सम्पूर्ण सामाजिक संरचना में असंतुलन आ जायेगा। प्रेंति इस तरह से काम करती है कि समाज का सामान्य अनुपात बना रहता है लेकिन जब चिकित्सा तकनीकी इसमें हस्तक्षेप करती है तब इसके परिणाम समाज के लिए घातक हो जाते है।

हमारे देश में यह कार्य जहाँ सम्पन्न किया जाता है उस स्थान का नाम है - अल्ट्रा साउण्ड केन्द्र, अल्ट्रा सोनोग्राफी सेन्टर, जेनेटिक 'लीनिक आदि। यूँ तो आधुनिक चिकित्सा प्रणाली में अल्ट्रासाउण्ड जैसी आधुनिकतम मशीन के अविष्कार ने बालिका भ्रुण हत्या जैसी भयावह सामाजिक एवं चिकित्सीय समस्याओं को जन्म दिया है। लिंग निर्धारण से स्पष्ट हो जाता है कि कन्या है या नहीं यदि दुर्भाग्य से कन्या होना सुनिश्चित हो जाता है तो दम्पत्ति गर्भपात कराने का सहज तैयार हो जाते है। बालिका भ्रुण के लिए जीवन असुरक्षित हो गया है।

गणतंत्र दिवस पर अपने भाषण में राष्ट्रपति श्री केआर.नारायण में महिलाओं की सोचनीय स्थिति पर टिप्पणी करते हुए कहा था - 'उनके लिए कोई जगह यहाँ तक कि माँ की कोख भी सुरक्षित नहीं है। जन्म से पहले ही उन्हें मार दिया जाता है। ''मध्यप्रदेश की स्थिति यदि देखे तो हम पाते है कि 1991 में 912 पर थी जो बढ़कर 927 हो गया है फिर भी यह स्थिति खराब है। इस स्थिति का सबसे अधिक असर मुरैना, भिंड़, जिले में देखने को मिलता है। रोहना गांव जो भिंड़ के गोहद ब्लाक में आता है उसके ग्राम पंचायत में जो पंजीकरण रजिस्टर है उसके गत वर्ष में 2001 में कुल 35 जन्म पंजीकृत किये गये इनमें मात्र 9 लड़कियाँ थी। जिसमें से साल के अंत तक 8 लड़कियों की मृत्यु हो गई।

इंड़ियन मेड़िकल एसोसिएशन की ताजा रिपोर्ट के अनुसार भारत में कन्या भ्रुण हत्या की संख्या प्रतिवर्ष 50 लाख है। स्वास्थ्य विभाग में लंबे अर्से से पदस्थ रहे आईएएस.अफसर डॉ.मनोहर अगनानी कहते है कि प्रदेश के 14 जिलों में लिंग अनुपात 900 से भी कम है। उसमें भोपाल शामिल है। यह इस बात से साबित होता है कि 0 से 6 वर्ष तक के बच्चों का लिंग अनुपात तेजी से कम हो रहा है। मध्यप्रदेश में वर्ष 1981 में 0-6 तक के 1000 लड़कों पर 975 लड़कियँ थी जो 1991 में 941 व 2001 में 932 रह गई है। भोपाल में प्रति 1000 लड़कों पर 2001 में कम होकर मात्र 925 रह गई है। देश में पुरूषों के अनुपात में महिलाओं की संख्या कम होने से एक ओर जहाँ सामाजिक संतुलन के बिगड़ने का खतरा उत्पन्न हो गया है, वही दूसरी ओर अनेक सामाजिक और आर्थिक समस्याएँ भी सामने आ रही है। है। 0-6 वर्ष तक की शिशु कन्याओं की संख्या में निरंतर कमी चिंताजनक है।

इस स्थिति को सुधारने का लगातार प्रयास किया जाना आवश्यक क्योंकि यदि बालिका भ्रुण हत्या पर बोझ नहीं लगायी गयी तथा लिंगानुपात इसी तरह कम होता गया तो यह देश के लिए अत्यन्त भयावह हो सकता है। भारत के जनसंख्या नियंत्रण कार्यक्रम को गहरा आघात लग सकता है। क्योंकि इस कार्यक्रम के लिए अच्छा लिंगानुपात होना आवश्यक है। साथ ही साथ इस तरह की मानसिकता को सहलना भी जरूरी है। भारतीय महिलाएँ इस कृत्य की वजह से निबन रही है तथा उनकी स्थिति में गिरावट का भी संकेत दे रही है। संतुलित परिवार के लिए लड़के के साथ लड़कियों का होना भी अत्यन्त आवश्यक है। परिवार और समाज में लड़कियों की संख्या कम होने से उनका वर्तमान एवं भविष्य दोनों खतरे में पड़ सकते है तथा उनके लिए सामाजिक एवं शारीरिक दोनों प्रकार के खतरे में पड़ सकते है तथा उनके लिए सामाजिक एवं शारीरिक दोनों प्रकार के खतरे उत्पन्न हो सकते है। अत: अब समय आ गया है कि बालिका भ्रुण हत्या की अमानवीय एवं शर्मनाक प्रथा पर रोक लगायी जाये और भविष्य में समाज को गर्व में धकेलने से रोका जाये।

देश में कन्या भ्रुण हत्या रोकने के उद्देश्य से वर्ष 1994 में बनाया गया प्रसव पूर्व परीक्षण तकनीक अधिनियम ठीक प्रकार से लागू नहीं किए जाने के कारण अपने निर्धारित उद्देश्यों को पूरा करने में बुरी तरह असफल तो रहा ही है। साथ ही इसमें किये गये प्रावधान इतने लाचार और संकीर्ण रूप से परिभाषित है कि उनको क्रियान्वित किये जाने से भी अच्छे परिणामों की आशा नहीं की जा सकती। इन दोनों मुद्दों पर ही यद्यपि सर्वोच्च न्यायालय

द्वारा सरकार को निर्देश भी जारी किए जाने और विभिन्न सरकारी और अर्द्ध-सरकारी संगठनों, जैसे इण्डियन मेडिकल एसोसिएशन, यूनिसेफ, राष्ट्रीय महिला आयोग गैर सरकारी संस्थाओं के साथ-साथ देश भर के अनेक धार्मिक नेताओं के उठ खड़े होने से कुछ आशा की किरण दिखाई दी है। महिला आयोग ने स्वास्थ्य निर्देशालय से प्रत्येक अस्पताल तथा नर्सिग दोनों में बड़े-बड़े अक्षरों से इस कानून के बारे में रोक लगाने के लिए कहा ताकि परीक्षण करने तथा करवाने वालों पर नैतिक दवाब पड़ सके। प्रसव पूर्व एवं गर्भजल परीक्षण के खिलाफ माहौल बनाने के लिए यह कोशिश मील का पत्थर तभी साबित हो सकती है जब वास्तव में लोगों की नैतिकता जागृत और वे स्त्री पुरूष के जन्म दर में आ रही लगातार गिरावट के खतरे को महसूस कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. नाटानी प्रकाश नारायण - कन्या भ्रुण हत्या व महिलाओ के प्रति घरेलू हिंसा-बुक एन लेव जयपुर 2007
2. डॉ. सिंह मीनाक्षी निशांत -आधुनिक और महिला उत्पीडन;ओमेगा पब्लिशिंग नई दिल्ली 2008
3. hhttp://en.wikipedia.org/wiki/2011_Census_of_India
4. state of the world children report 2007
5. समाज कल्याण 2007

****

महिला मानवाधिकारों का हनन एवं सुरक्षा के उपाय

डॉ. सन्दीप सिंह *

प्रस्तावना – मानव अधिकार वे अधिकार हैं जिन्हें प्रत्येक मनुष्य को उपभोग व सरंक्षण करने का हक है। ऐसे अधिकारों की पृष्ठभूमि में वे बुनियादी सिद्धान्त हैं, जो सभी सभ्यताओं और संस्कृतियों में पुरूष, स्त्री और बच्चों के प्रति सम्मान देने से सम्बन्ध रखते हैं।

सार्वभौमिक मानवीय अधिकारों की बातें तब उठी जब 20वीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में विश्व दो महायुद्धों की विभिषिकाओं से त्रस्त बर्बादी के कगार पर पहुँच चुका था। साम्यवाद व साम्राज्यवाद नामी दो अर्थ चक्रों ने विश्व को नया अर्थशास्त्र दे दिया था। दिन-प्रतिदिन के नये वैज्ञानिक आविष्कार अनेक देशों की दूरियों को कम करते हुए सभ्यताओं के सम्मेलन का काम कर रहे थे। नया उपभोक्तावाद जन्म ले रहा था। राष्ट्र के गणमान्य नायक बातें तो मानव कल्याण की करते परन्तु वस्तुत: मानवीयता के विपरीत काम होने लगे थे।

स्थिति में आज तक कोई खास परिवर्तन नहीं आया है। आज भी जबकि सभी राष्ट्र जीवन स्वतन्त्रता और सुरक्षा के अधिकार को मान्यता देते हैं, यह चौंकाने वाले तथ्य हैं कि गत शताब्दी में लगभग 12 करोड़ व्यक्ति सशस्त्र युद्धों में मारे गये थे। आर्थिक दरिद्रता के कारण विश्व में 1.5 करोड़ से अधिक बच्चे 5 वर्ष की आयु प्राप्त करने से पहले ही काल के ग्रास बन जाते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय विधि में दासता निषिध है फिर भी 20 करोड़ से अधिक व्यक्ति दासता अथवा बन्धुआ मजदूर का जीवन जी रहे हैं जिनमें 10 करोड़ के लगभग तो बालक ही हैं जो श्रमिक, अनैतिक व्यापार और भीख माँगने जैसे व्यवसाय से प्रतिबद्ध है। उत्पीड़न-प्रतीड़न एक और बुराई है जो जेलो में या बन्दियों के साथ अपनाई जा रही है। आज 100 से अधिक देशों में पुलिस थाने ऐसे प्रपीड़न के केन्द्र बने हुए हैं। अभिव्यक्ति और संघ बनाने के अधिकार की मान्यता के बावजूद भी अहिंसक विचारों के उपासकों को स्वतंत्र अभिव्यक्ति के कारण 60 से अधिक देशों में व्यक्तियों को जेलों में निरूद्ध किया हुआ है। लगभग डेढ़ करोड़ राजनैतिक शरणार्थी दूसरे देशों में शरण लिए हुए हैं तो 2.50 करोड़ के लगभग लोग आतंकवाद की वजह से अपने ही देशों में शरणार्थी की तरह रहते हैं। एक चौथाई के लगभग विश्व आबादी को भरपेट भोजन उपलब्ध नहीं है।

शिक्षा का अधिकार मान्यता रखते हुए भी विश्व में 13 करोड़ बच्चों को प्राथमिक शिक्षा भी प्राप्त नहीं है। एक अरब की आबादी निरक्षर है जिसमें 60 करोड़ सिर्फ महिलाएँ हैं। ऐसे माहौल में कोई चिन्तन ऐसा तो होना चाहिए जो अंधेरे को उजाले में परिवर्तित कर सकने की रुपरेखा दे सके। वैसे तो प्रत्येक देश का मानव अधिकारों की प्राप्ति के सन्दर्भ में अपना-अपना इतिहास रहा है तथापि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सन् 1948 में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा की गई।

भारत में मानवाधिकार – विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र के निवासियों ने अनेक शासको के शासनों का स्वाद चखा है। 'वसुधैवकुटुम्बकम ' और 'सर्वे भवन्तु सुखिन:, सर्वे सन्तु निरामया' के वेद वाक्य इस धरती की ही विश्व को देन है। सर्वधर्म समानस्य, सहिष्णुता, सहअस्तित्व, पंचशील और समन्वय जैसे सैद्धान्तिक और व्यावहारिक पक्ष का समर्थक यह देश किस तरह कट्टर जाति और सम्प्रदायवाद के विषैले सिद्धान्तों की चपेट में आ गया। इसका आभास मानवीयता को तो हो गया परन्तु जिनके कारण ऐसा हुआ उन्हें दण्डित नहीं किया जा सका।

19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारत में मानव अधिकारों ने विधिक स्वरूप लेना प्रारम्भ कर दिया था। सन् 1861 में कानून बनाकर अधिकारों और कर्तव्यों को विनियमित किया गया। कालान्तर में वही कानून सन् 1949 में एक नये रूप में सामने आया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद तो एक के बाद एक कानून इस तरह बने कि वियना सम्मेलन के संकल्प और संयुक्त राष्ट्र संघ के सहस्त्राब्दी प्रस्तावों में वर्णित लगभग सभी महत्वपूर्ण माननीय अधिकारों को विधि द्धारा प्रवर्तनीय बना दिया गया। भारत में मानव अधिकारों का सर्वाधिक महत्वपूर्ण दस्तावेज भारतीय संविधान का भाग 3 है जो विश्व के अन्य देशों के संविधान से आज भी बेहतर है।

महिला-मानवाधिकार – महिला - अधिकारों को अब मानवाधिकार से अलग करके नहीं देखा जा सकता। महिलाऐं स्त्री रूप में कोई विशेषाधिकार भी नहीं चाहती। माँ के रूप में भारतीय संस्कृति ने उन्हें जितना विशेषाधिकार - बच्चों के अधिकार, उनकी सुरक्षा, उनकी स्वस्थ सामाजिकता और उनकी संस्कारिता की दृष्टि तो उन्हें देना ही होगा अन्यथा न मातृत्व की गरिमा की पुन:स्थापना सम्भव होगी न वर्तमान समाज की विसंगतियों का निवारण कर भावी स्वस्थ समाज की रचना ही की जा सकेगी। मातृपद का विशेषाधिकार कोई पुरूष - विरोधी बात नहीं है, स्वयं पुरूषो के हित और पूरे परिवार व समाज के हित की ही बात है।

समाज के निर्माण में स्त्रियों की भागीदारी महत्वपूर्ण होती है। किसी समाज के विकास के स्तर का आंकलन ही इसी बात से किया जाता है कि उसमें स्त्रियों की स्थिति क्या है? स्त्री-मानवाधिकार की पृष्ठभूमि भी यही होगी। संयुक्त राष्ट्र संघ के सार्वभौमिक मानव अधिकार घोषणा पत्र के अनुसार स्त्रियों को भी वे सब अधिकार मिले हुए हैं जो पुरूषों के पास हैं। लेकिन जब अधिकारों के हनन की बात आती है तो महिलाओं को ही इसका शिकार बनना पड़ता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के 1993 (विएना) और 1995 (पेईचिंग) में हुए सम्मेलनों में इस बात पर गम्भीर चिन्तन हुआ और यह संकल्प पारित किया गया कि इस भेदभाव को समाप्त किया जाए। महिलाएँ भी चूँकि मानवाधिकारों के घोषणा पत्र की परिधी में आती हैं, विभिन्न देशों की सरकारों को यह निर्देश दिया गया कि वे इन अधिकारों को सुनिश्चित करवाएँ। लेकिन लगभग सभी देशों में महिलाओं की दशा में कोई खास सुधार नहीं हुआ।

मानवाधिकार सम्बन्धी भारतीय कानून – भारत का संविधान, प्रस्तावनाा, भाग 3, भाग 4, भाग 4(क) अनुच्छेद 226, 300(क), 325 एवं 326

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) राजस्थान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चिढावा जिला -झुंझुनू (राज.) भारत

- मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993
- अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों का राष्ट्रीय आयोग
- अल्पसंख्यको के लिए राष्ट्रीय आयोग (1992 के अधिनियम के अर्न्तगत)
- राष्ट्रीय महिला आयोग
- नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955
- अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989
- दहेज प्रतिरोध अधिनियम, 1961
- सती रोक अधिनियम, 1929
- बंधुआ मजदूर प्रथा समाप्ति अधिनियम, 1950

महिला मानवाधिकारों का हनन एवं सुरक्षा के उपाय – आज महिलाओं के हक में अवश्य अनेक कानून हैं, संविधान ने उन्हें कई बराबरी के अधिकार दिये हैं, परन्तु महिलाओं की हालत आज भी शोषित, पीड़ित और दबी हुई है। कितना आश्चर्य है कि डेढ़ सौ साल पहले से सती प्रथा कानूनन जुर्म है, परन्तु आज भी रूपकुँअर जलाई जाती अथवा सती होती है। बाल-विवाह या दहेज लेना गैर कानूनी है परन्तु आज परम्परा के नाम पर दोनों प्रचलित हैं। स्त्री-पुरूष समान अधिकार का नारा जरूर है लेकिन बेटियाँ आज भी पैदा होते ही मार डाली जाती हैं। संविधान शिक्षा के मामले में कोई भेद नहीं करता, परन्तु 65 वर्ष के पश्चात् भी महिलाएँ सबसे अधिक अशिक्षित है। छेड़छाड़, बलात्कार, अपहरण, यौन शोषण, वेश्यावृति जैसी महिला अत्याचार की घटनाएँ लगातार बढ़ रही हैं जबकि इनके खिलाफ कानून बने हुए हैं।

सुरक्षा के उपाय/सुझाव – मुद्दा यह है कि कानून बनाने या संविधान की दुहाई देने से महिला अत्याचार का मुद्दा हल नहीं होगा। आवश्यकता मानवीय संवेदना, सोच और महिला विरोधी परम्परा को बदलने या सुधार करने की है।

महिलाओं को घरेलू हिंसा से बचाने का कानून (2005) लागू हो गया है। इसका उद्देश्य माँ, पत्नी, बहिन और परिवार की किसी विधवा को पुरूषों से मिलने वाली प्रताड़ना से बचाना है।

इस कानून के तहत महिला अपने साथ हो रहे अत्याचारों के खिलाफ कानून की शरण में जा सकेगी।

महिला अधिकारों की सुरक्षा हेतु सुझाव इस प्रकार है –

- महिलाओं में आत्मविश्वास जाग्रत करना और उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाना चाहिए।
- महिलाओं को सामर्थ्यवान बनाना चाहिए ताकि वे सभी क्षेत्रों में विकास के प्रयासों का भरपूर लाभ उठाने में सक्षम हो सकें।
- नारी जीवन की उत्तरजीविता और सुरक्षा सुनिश्चित करना चाहिए।
- समाज में महिलाओं की सहभागिता सुनिश्चित करना चाहिए।
- समाज में महिलाओं की सहभागिता सुनिश्चित करना और निर्णय लेने में उनकी भूमिका सुदृढ़ करनी चाहिए।
- आर्थिक गतिविधियों में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए सकारात्मक पहल करनी चाहिए।
- जीवन के सभी क्षेत्रों में महिलाओं की प्रत्यक्ष उपस्थिति सुनिश्चित करनी चाहिए।
- महिला अधिकार के प्रश्न पर समाज के रवैये में व्यापक परिवर्तन लाना और उसे संवेदनशील बनाना चाहिए।
- महिलाओं के प्रति अत्याचार और हिंसा को रोकना चाहिए। इसके लिए सरकार द्वारा उपयुक्त सोच और महिलाओं के लिए समुचित कार्यक्रम विकसित करने का प्रयास करना चाहिए।

निष्कर्ष – मानवाधिकारों की क्रियान्वित व सुरक्षा के लिए सरकार द्वारा समय – समय पर अनेक कानून बनाए गए। इन कानूनों के माध्यम से महिला मानवाधिकार पर भी बल दिया गया। संविधान में व्यवस्था की गई है कि स्त्री – पुरूष के बीच किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाएगा। महिलाओं के हित में अनेक कानून बनाए जा चुके हैं लेकिन आज भी महिलाओं के साथ अत्याचार होते हैं। जहाँ एक ओर आठ मार्च को पूरा देश अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस मना रहा था। वहीं दूसरी ओर इसी दिन दिल्ली में दस बजकर बीस मिनिट पर राधिका की गोली मारकर हत्या कर दी गयी।

महिलाओं पर बढ़ते अत्याचार से व्यथित होकर उप राष्ट्रपति हामिद अंसारी की पत्नी सलमा अंसारी ने यहाँ तक कह दिया कि अगर हमारा समाज लड़कियों को सुरक्षा नहीं दे सकता है तो उन्हें पैदा होते ही जहर दे देना चाहिए।

अंसारी के इस बयान पर विवाद खड़ा हो गया। कई महिला संगठनों ने बयान का विरोध किया। महिला संगठनों का कहना है कि सलमा का यह बयान महिलाओं के पक्ष में नहीं है। अत्याचार की शिकार महिलाओं को बचाने की बजाय इस तरह का बयान उनका मनोबल तोड़ने वाला है।मानव अधिकारों की घोषणाओं का यदि इसी प्रकार उल्लघंन होता रहेगा तो मानवाधिकार सिर्फ किताबी शब्द बन कर रह जाएगा। इन्हें अमली जामा देने के लिए प्रभावी मशीनरी की आवश्यकता है जो प्रभावी ढंग से लागू कर सके। लोकतन्त्र और मानव अधिकार मानवीय समग्र विकास की कुंजी हैं। यह तभी संभव है जब हम मिलकर इनके प्रति आम जनता में जागरूकता पैदा करें। जानकारी और विश्वास की जड़े मजबूत करें। कोई देश कितना अमीर है इसका महत्व नहीं है। बल्कि देश मानवीय मूल्यों को कितना सम्मान देता है, यही तथ्य किसी देश की गरिमा बढ़ाता है। मानव अधिकार आन्दोलन को परिपक्व बनाने के लिए स्वार्थी का त्याग कर आन्दोलन को गति देने वाले निष्पक्ष संगठनों की आवश्यकता है।

यदि लोगों को अधिकारों के स्वरूप का ज्ञान हो जावे तो सरकार द्वारा इन अधिकारों को प्राप्त करने का आधार भी तैयार हो सकता है। यह तभी सम्भव है जब आम आदमी को उनकी भाषा में ऐसे अधिकारों की सही जानकारी दी जावे जिसके लिए न सिर्फ सरकारी प्रयास बल्कि स्वैच्छिक संगठन, मीडिया और प्रत्येक शिक्षित वर्ग का कर्तव्य बनता है।

हमें आशा रखनी चाहिए सभी राष्ट्राध्यक्षों ने, सरकारो ने, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों ने जिन मानव अधिकारों की परिकल्पना मानव समाज को दी है, वह परिकल्पना देर सवेर सत्य हो, क्रियान्वित हो इसी आकांक्षा के साथ ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. राष्ट्रीय महिला आयोग और भारतीय नारी, एम.ए.अंसारी, ज्योति प्रकाशन जयपुर, 2008
2. महिला और मानवाधिकार, एम.ए.अंसारी, ज्योति प्रकाशन जयपुर, 2000
3. भारत में महिला अधिकारों का वर्तमान परिदृश्य एवं बढ़ते हुए अत्याचार, रामेश्वर दयाल, प्रखर पब्लिशर्स, 2005
4. नारी उत्पीड़न समस्या एवं समाधान, हरिदास रामजी शेण्डे, ग्रन्थ विकास प्रकाशन जयपुर, 2008
5. महिलाओं के मौलिक अधिकार, रतनलाल गौरा, राधा गोविन्द पब्लिशर्स, जयपुर 2010

सूचना का अधिकार – विश्वसनीयता एवं जवाबदेही से भागते राजनीति दल

डॉ. अनिल दीक्षित *

प्रस्तावना – प्रजातंत्र को सुदृढ़ बनाने के लिए 'सूचना का अधिकार' अधिनियम एक कारगर साबित होगा। क्योंकि इसमें विचार और अभिव्यक्ति की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। इन दोनों की स्वतंत्रता अनेक माध्यमों से लोकतंत्र को प्रभावित करती है। स्वीडन विश्व का पहला देश है जिसने सूचना का अधिकार सर्वप्रथम लागू किया। वर्ष 1766 में स्वीडन में 'फ्रीडम ऑफ प्रेस एक्ट' पारित हुआ जिसमें लोक दस्तावेजों तक पहुंच का अधिकार दिया गया। इसी प्रकार फ्रांस ने 1970 में तथा आस्ट्रेलिया ने 'फ्रीडम ऑफ इनफॉरमेंस एक्ट 1982' के रुप में सूचना का अधिकार आम जनता को दिया। मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा 1948 और अन्तर्राष्ट्रीय सिविल तथा राजनीतिक अधिकारों की प्रसंविदा 1966 में वाक् और अभिव्यक्ति को मानव अधिकार स्वीकार किया गया।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में समस्त नागरिकों को विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सुनिश्चित करने का दृढ़ संकल्प है। संविधान के भाग तीन के अनुच्छेद 19 (1) (क) में वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रत्याभूत की गई है। किसी भी देश के लिए सूचना का अधिकार, पारदर्शी सरकार तथा उदार लोकतांत्रिक व्यवस्था एक महत्वपूर्ण विशेषताएं मानी जाती है। हाल ही के वर्षो में सूचना के अधिकार को सरकारी, गैर सरकारी तथा आम नागरिकों द्वारा मान्यता देने की दिशा में न सिर्फ भारत बल्कि दुनिया के अनेक देशों ने सार्थक पहल की गई है। भारत के सूचना की शुरुआत साठ के दशक में हो चुकी थी लेकिन वह केवल चर्चा तक ही सिमट कर रह गई। मनमोहनसिंह सरकार के प्रथम कार्यकाल के अन्तर्गत मई 2004 में न्यूनतम साझा कार्यक्रम के स्वच्छ और पारदर्शी शासन देने के तहत घोषणा की थी। 23 दिसम्बर 2004 को सूचना के अधिकार से सम्बंधित विधेयक संसद में पेश किया गया। यह विधेयक लोकसभा ने 11 मई और राज्यसभा ने 12 मई 2005 पारित किया। संसद में इस पर काफी लम्बी बहस के बाद लगभग 100 संशोधन लाए गए तथा 15 जून को राष्ट्रपति द्वारा अनुमोदित हुआ अर्थात 12–13 अक्टूबर 2005 से लागू हो गया।

इस अधिनियम का लक्ष्य प्रत्येक लोक अधिकारी के कार्यकरण में पारदर्शिता और उत्तरदायित्व का संवर्धन करना, लोकप्राधिकारी के नियंत्रणाधीन सूचना तक पहुंच सुनिश्चित करना और नागरिकों के सूचना के अधिकार की व्यावहारिक शासन पद्धति स्थापित करना है। इस प्रकार यह अधिनियम जम्मू–कश्मीर को छोड़कर पूरे भारत में लागू कर दिया गया।

सरकार के द्वारा किसी भी समस्या की जांच के लिए आयोगों का गठन कर दिया जाता है। यह जांच आयोग लम्बे समय तक काम करते रहते है और परिणाम जब आते है तो आशानुकूल नहीं आते है। जनता के सामने इन आयोगों की रिपोर्ट को सार्वजनिक नहीं किया जाता है और गोपनीयता की दुहाई देकर मुख्य साक्ष्य छिपाए जाते हैं तथा अपार धन का दुरुपयोग भी होता है जो जनता का पैसा होता है बेचारी जनता ठगी सी रह जाती है। दिनेश त्रिवेदी द्वारा उच्चतम न्यायालय में सूचना प्राप्त करने के लिए याचिका दायर की। इस सम्बंध में माननीय ने निर्णय देते हुए कहा कि संवैधानिक लोकतंत्र में जनता को सरकार के उन कार्यो का जो उसके कल्याण के लिए किए जाते हैं, जानने का स्वयं सिद्ध अधिकार है। सूचनाओं को गुप्त रखने के लिए प्रशासनिक अधिकारी और अन्य कर्मचारी इसका भरपूर फायदा उठाते हैं। यह सरकार और लोकतंत्र के लिए घातक है। सूचना के अधिकार के तहत कार्यों, दस्तावेजों और रिकार्डो का निरीक्षण, सूचना से सम्बंधित दस्तावेज, रिकार्ड, सीडी, प्रति, फार्म आदि प्राप्त किए जा सकते है। इस सूचना के अधिकार के तहत कोई भी व्यक्ति किसी भी संस्था से सूचना प्राप्त कर सकता है जो निम्न है –

- ऐसी संस्था जिसका गठन संसद व विधानमंडल द्वारा किया गया हो।
- जिन्हें केन्द्र सरकार व राज्य सरकार द्वारा स्थापित किया गया हो।
- ऐसी संस्था जिसे सरकारी अनुदान प्राप्त हो।
- ऐसी संस्था जिस पर केन्द्र व राज्य सरकार का नियंत्रण हो।
- समस्त आयोगों व न्यायालयों को इसके तहत लाया गया है।

इस सूचना के अधिकार से एक बात तो समझ में आयी कि इससे आम जनता में एक नया विश्वास व सम्भावना नजर दिखाई देती है वही दूसरी ओर राजनेताओं और नौकरशाहों में खलबली व दहशत की स्थिति बनी हुई हैं। यह अधिनियम भ्रष्ट राजनेताओं के क्रियाकलापों व अधिकारियों की काली कमाई को उजागर करने का माध्यम बन चुका है। आरटीआई कार्यकर्ता की सुरक्षा की गारण्टी सरकार पर है क्योंकि बिना सुरक्षा के कोई भी व्यक्ति इस तरह का पंगा नहीं लेगा क्योंकि उसे अपनी जान प्यारी है। सिर्फ हरियाणा सरकार ने इस पहल पर सार्थक प्रयास किए है। ऐसा जब अन्य राज्यों में होगा तभी सूचना के अधिकार की विश्वसनीयता बरकरार रहेगी।

जहॉ एक ओर जनता में इसके प्रति विश्वास बढ़ा है वहीं दूसरी ओर सूचना अधिकार कानून ने लोकशाही के सामन्तों की शान में एक बार फिर गुस्ताखी की है और इसके पर कतरने की तैयारी हो रही है। कानून में संशोधन करके राजनीतिक दलों तथा मुख्य न्यायाधीश को इसके क्षेत्राधिकार से बाहर रखने का प्रस्ताव है। राजनीतिक दल मुख्य सूचना आयुक्त के उस निर्णय से खासे नाराज है, जिससे वे भी अब सूचनाधिकार दायरे में आ गए है। वे संसद में इस पर बहस हो, इसके लिए प्रतीक्षा करने का तैयार नहीं हैं। वे बगैर बहस इस संशोधन को अध्यादेश के माध्यम से अंजाम देने पर आमादा

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

है। कानून को पारित करना व संशोधन करना या उसे समाप्त कर देना विधायिका का क्षेत्राधिकार है इसलिए सरकार के द्वारा अध्यादेश लाने पर किसी को काई आपत्ति नहीं हो सकती।

संविधान के मुताबिक राजनीतिक दलों को सूचना अधिकार के दायरे में लाने से कोई ऐसे आपात हालात नहीं पैदा हो गए है कि यदि अभी कानून नहीं बदला गया, तो भारी तबाही हो जायेगी। यह संविधान में दिए गए अधिकार का दुरुपयोग हैं। इससे लोकतांत्रिक मूल्यों पर चोट पहुॅचती है और लोगों के मन में इस व्यवस्था के प्रति कुंठा पैदा होती है तथा विश्वास में कमी आती है। अगर यह प्रक्रिया बरकरार होती है तो यह राजनीतिक दलों के लिए अच्छा नहीं है इससे उनकी लोकछवि को गम्भीर क्षति हो सकती है। सरकार सूचना अधिकार में संशोधन की मंशा व्यक्त करके खुद बनाए हुए नियमों के प्रति अविश्वास व्यक्त कर रही है। चुनाव के समय राजनीतिक दल आम जनता के दरवाजे पर वोटों के लिए दर-दर भटकते हैं और न जाने क्या-क्या वादे करते है और सत्ता में आने के बाद अपने को आम आदमी की तरह मानने के बजाए राजनीतिक दल अपने को ऐसे विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग में रखना चाहते है, जिनके ऊपर कोई कानून लागू नहीं होगा। लेकिन डीओपीटी के वरिष्ठ अधिकारी ने कहा 'अगर कोई पक्ष सीआईसी (केन्द्रीय सूचना आयोग) के आदेश से असंतुष्ट होगा तब इस बारे में उपचारात्मक उपाय है और वह संबंधित अदालत में इसके खिलाफ अपील कर सकता है'। राजनीतिक दल सार्वजनिक प्राधिकार होते है और सूचना के अधिकार कानून के तहत नागरिकों को प्रति जवाबदेह होते है।

लगभग सभी राजनीतिक दल सूचना के अधिकार से ऊपर रहना चाहते हैं, उन्हें यह मंजूर नहीं कि उनसे जुड़ी सूचनाएं जनता के बीच पहुॅचें। सभी राजनीतिक दलों की आम सहमति बन गई है कि सूचना के अधिकार के दायरे से बाहर कर दिया जाए। केबिनेट ने सभी आरटीआई में संशोधन के विधेयक को हरी झण्डी दे दी है। अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है कि लोकतंत्र में सबकी जवाबदेही मांगने वाले नेता और दल अपनी जिम्मेदारी व जवाबदेही से भाग रहे हैं, और नौकरशाही से सारी सूचनाऐं हमे चाहिए, सरकार की सारी सूचनाएं खुली है, तो सरकार बनाने वाले, कानून के रखवाले क्यों जवाबदेही से डर रहे है ? हमारे स्वाधीनता आंदोलन के दौरान कई महान नेताओं ने सैद्धांतिक व प्रतिबद्ध राजनीति की अवधारणा दी थी। वैसे भी राजनीतिक दलों की पूरी कार्यप्रणाली सार्वजनिक जीवन का ही कार्य व्यवहार है, वे जितना जनता के करीब है, उतना और कोई नहीं है। लेकिन यहां पर अजीब-गरीब स्थिति है कि जिस जनता से शक्ति ग्रहण करके वे शक्तिमान बनते है, उसी जनता को जवाब देने से राजनीतिक दल बचने लगते है। जिस जवाबदेही का वे ढ़ोल पीटते हैं, श्रेय लेते हैं, उसी को जब खुद पर लागू करना होता है, तो उन्हें पसीने छूटते है और वे इससे निकल भागते हैं। यह जन सामान्य को क्या संदेश दे रहा है कि लोकतंत्र में राजनीतिक दलों की कोई जवाबदेही नहीं हैं ? इस पूरे मामले का हास्यापद पहलू यह भी है कि राजनीतिक दल स्वयं ही परिवादी हैं, वकील हैं, अदालत है और खुद ही न्यायाधीश बन गए है, सब कुछ वे ही निर्धारित कर रहे है, वे खुद ही खुद को पारदर्शिता, खुलापन और जवाबदेही स्थापित करने वाले कानून से मुक्त करके खुद की ही पीठ थपथपा रहे हैं और दूसरी तरफ, पूरे देश की जनता इस अदभुत तमाशे को देख रही है। लोकतंत्र में राजनीतिक दलों की घटती साख एक दिन हमारी पूरी राजनीतिक प्रक्रिया पर ही प्रश्न चिन्ह लगा देगी और लोगों का भरोसा राजनीतिक दल नामक संस्था से उठ ही जायेगा। तब राजनीतिक वर्ग भी अप्रासंगिक हो सकता है, उसे इस खतरे से सावधान रहना चाहिए। जनता तो आखिरी दम तक जवाबदेही मांगेगी और राजनीतिक दलों से पारदर्शिता चाहेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुमार, डॉ. नीरज, सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005, भारत लॉ हाउस प्रा.लि. नई दिल्ली, 2010
2. प्रतियोगिता दर्पण ।
3. इण्डिया टूडे ।
4. दैनिक पत्रिका, 10.06.2013
5. प्रो. हरवंश दीक्षित, (वरिष्ठ विधि विशेषज्ञ), सूचना का अधिकार और राजनीतिक दल दैनिक पत्रिका 05.07.2013
6. अरुणा राय, 'जवाबदेही से भागती राजनीति' आर्टिकल दैनिक पत्रिका- 06.08.2013

****

भारतीय राजनीति में जातिवाद

बल्लु सिंह मुवेल * प्रकाश गुजराती ** डॉ. अनिल कुमार जैन ***

प्रस्तावना – स्वाधीनता संग्राम के दौरान ऐसा दिखता था कि जनता पर जातिवाद का प्रभाव कम हो गया है, किन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त जातिवाद ने फिर जोर पकड़ा और वयस्क मताधिकार व्यवस्था को देश में लागू कर दिये जाने के परिणामस्वरूप यह एक राजनीति शक्ति के रूप में उदित हुआ वैसे राजनीति पर जातिगत प्रभाव प्रतिनिधि व्यवस्था के लागू होने के समय से ही शुरू हो गया था किन्तु यह प्रभाव नगण्य ही था इसके लिये उत्तरदायी थे ब्रिटिश प्रशासन राष्ट्रीय आन्दोलन तथा सीमित मताधिकार स्वतंत्रता प्राप्ति ने प्रथम दो कारणों का निराकरण कर दिया और नये संविधान में अपनाई वयस्क मताधिकार व्यवस्था ने तीसरे का फलत: जातियों के प्रभाव में आशातीत वृद्धि हो गई आरम्भ में तो सामाजिक अथवा आर्थिक दृष्टि से उच्च अथवा श्रेष्ठ जातियाँ ही राजनीति से प्रभावित रही और राजनीतिक लाभ उन्हीं तक सीमित रहे। समय के साथ-साथ मध्यम और निम्न समझी जाने वाली जातियाँ आगे आने लगी और अपने राजनीतिक प्रभाव को बढ़ाने में प्रयत्नशील रहने लगी प्रो. रूडोल्फ के शब्दों में भारत में राजनीतिक लोकतंत्र के संदर्भ में जाति वह धुरी है जिसके माध्यम से नवीन मूल्यों और तरीकों की खोज की जा रही है। यथार्थ में यह एक ऐसा माध्यम बन गई है कि इसके जरिये भारतीय जनता को लोकतांत्रिक राजनीति की प्रक्रिया से जोड़ा जा सकता है, आज भी देश में जाति प्रथा का भेदभाव खत्मत नहीं हो सका और न होगा।

भारतीय राजनीतिक सांस्कृतिक का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू जातिवाद है। जाति व्यवस्था के कारण ही प्राचीन समाज विभिन्न वर्गों में विभाजित था भारतीय जाति प्रणाली में राष्ट्रीय प्रवृत्तियों को लिया है और विघटनकारी तत्वों को बढ़ावा दिया है। भारत में राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया तीव्र होने के कारण ऐसा माना जाता था कि प्रजातांत्रिक मूल्यों का लोप हो जायेगा परन्तु ऐसा हुआ नहीं तथा जाति का प्रभाव भारतीय राजनीति पर दिनों दिन बढ़ता ही गया। जहाँ सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में जाति की शक्ति घटी है वहाँ राजनीति एवं प्रशासन पर इसके बढ़ते हुए प्रभाव को राजनीतिज्ञों प्रशासनाधिकारियों और केन्द्र तथा राज्य सरकारों में स्वीकार किया है, एक ओर सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक कारणों ने जातियों के राजनीतिकरण को बढ़ाया है, वहीं दूसरी ओर कतिपय संवैधानिक उपलब्ध भी राजनीति पर जाति के प्रभुत्व में सहायक हुए हैं। जाति और राजनीति के संबंध में अच्छे बुरे दोनों पहलू हैं। अच्छे पहलू को लो तो विभिन्न जातियों और सम्प्रदायों के राजनीति में भाग लेने के फलस्वरूप सामूहिक या राष्ट्रीय भावना का उदय हुआ है, और उसकी पृथकता कम होकर राजनीतिक एकीकरण हुआ है। बुरे पहलुओं को लो तो जातिगत वैमनस्य और संघर्ष ने भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली को बाधा पहुँचायी है।

राज्यों की राजनीति पर जातिवाद का प्रतिकूल प्रभाव बहुत अधिक रहा है। भारतीय राजनीति में जातिप्रथाओं ने राजनीतिक नेतृत्व के स्वरूप को भी प्रभावित किया है, चुनाव क्षेत्र में जिस जाति का बाहुल्य है, उस जाति का प्रत्याशी प्राय: चुनाव में विजयी होता है, और भी सरकार बनाते समय जातीयता को गौण नहीं समझा जाता है, क्योंकि बहुमत दल में जातियाँ घुसी रहती हैं, जातियों में प्रतिबंधिता रहती है और इस प्रकार प्रशासन भी जातिवाद से प्रभावित रहता है जो कि प्रजातंत्र का सबसे बड़ा शत्रु होता है जहाँ एक ही निर्वाचन क्षेत्र से एक ही जाति के एक से अधिक प्रत्याशी चुनाव लड़ते हैं वहाँ उस जाति के वोट कट जाते हैं, और प्रत्याशी प्राय: जाति के आधार पर न जीत कर धर्म संबंध प्रभाव आदि अन्य आधारों पर जीतता है।

भारतीय संविधान के निर्माता जाति व्यवस्था के दुष्परिणामों से परिचित थे अत: उन्होंने ऐतिहासिक अनुभवों का लाभ उठाते हुए जाति व्यवस्था को समाप्त करने का प्रयास किया। संविधान का निर्माण सामाजिक न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों के आधार पर किया गया। पृथक निर्वाचन प्रणाली के स्थान पर संयुक्त निर्वाचन प्रणाली को अपनाया वयस्क मताधिकार की व्यवस्था की गई। जाति, धर्म और भाषा के आधार पर भेदभाव को समाप्त कर दिया गया अस्पृश्यता को दण्डनीय अपराध घोषित कर दिया गया। धर्मनिरपेक्षता के सिद्धान्तों को संवैधानिक रूप से मान्यता प्रदान की गई।

उपरोक्त समस्त संवैधानिक व्यवस्थाओं के पश्चात् यह सोचा गया था कि जाति कालान्तर में समाप्त हो जावेगी किन्तु ऐसा नहीं हुआ। जाति व्यवस्था का प्रभाव आज भी भारतीय राजनीति में विद्यमान है। हाल ही में भंग विधानसभा चुनाव में उत्तरप्रदेश में जो चुनाव हुआ उन्हें खुले रूप से जातिवाद पर लड़े गये चुनाव कहा जा सकता है। क्योंकि सत्ता रूप समाजवादी एवं बहुजन समाज वादी पार्टी गठबंधन ने अपने चुनावी नारों में ऐसे घोर जातिवादी नारों का भी प्रयोग किया है, कि 'यादव की बेटी यादव को और यादव का वोट यादव को', 'जाट की बेटी जाट को और जाट का वोट जाट को' इस नारे से स्पष्ट होता है कि, आजकल राजनीतिज्ञ अपने चुनावी स्वार्थ के लिये जाति का कितना गलत इस्तेमाल कर रहे हैं, लेकिन आश्चर्य की बात तो यह है कि कांग्रेस (इ) जैसी देश की सबसे बड़ी पार्टी भी ऐसे घोर जातीय दल को उत्तरप्रदेश में बिना शर्त समर्थन दे रही है। रजनी कोठारी के अनुसार है कि, 'भारतीय राजनीति और जाति व्यवस्था के पारस्परिक सम्बन्धों के

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (लोक प्रशासन) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
*** सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

विषय में यह आशा करना कि जनतंत्रीय संस्थाओं की स्थापना के पश्चात् जाति व्यवस्था का लोप हो जाना चाहिये एक भ्रामक एवं त्रुटिपूर्ण विचार है। कोई भी राजनीति तंत्र कभी भी समाप्त नहीं हो सकता अत: यह प्रश्न करना कि क्या भारत में जातीयता का लोप हो रहा है व्यर्थ है।'

जातिवाद अथवा भारत में जातियों का होना वास्तव में एक सामाजिक बुराई है, तो उसे अभी तक दूर नहीं किया गया? छुआछूत मिटाने के लिये यदि कानून बन सकता है, तो जाति प्रथा को समाप्त करने के अभी तक कानून क्यों नहीं बना? यह सहज ही शंका का विषय बन जाता है। ऐसा प्रतीत होता है, जातीय संगठन और जातीय नेता राजनीतिक दलों और राजनीतिज्ञों से सांठ गांठ करके जाति का राजनीतिकरण करने में लगे हुए है। बिहार और उत्तर प्रदेश आये दिन जातीय झगड़ों, तनावों और सम्बन्धों में जाति और राजनीति की अन्त: क्रिया ही दिखाई देती है, हाल ही में हुए उत्तरप्रदेश में विधान सभा चुनाव के दौरान जिस तरह सवर्ण दलित के बीच रेखा खींची वह अच्छा संकेत नहीं है कांग्रेस सहित अन्य दलों ने भाजपा को सत्ता से दूर रखने के लिये जिस तरह समाजवादी पार्टी और बहुजन समाजवादी पार्टी जैसी घोर जातिवादी पार्टियों की पीठ थपथपाई उससे यह तो तय हो गया है, कि किसी को भी भविष्य में खतरा हो सकता है। अगर इस जातिवाद के फन को कुचला नहीं गया तो इसकी परिणति खून खराबे से भरी होगी। इस विचार पर अभी से सचेत हो जाना चाहिये समय की मांग भी है और देश की आवश्यकता भी है।

भारत में जातियाँ संगठित होकर राजनीति और प्रशासनिक निर्णय की प्रक्रिया को प्रभावित करती हैं। उदाहरणार्थ संविधान में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिये आरक्षण के प्रावधान रखे गये जिसके कारण यह जातियाँ संगठित होकर सरकार पर दबाव डालती हैं, कि इस सुविधाओं को अधिक वर्षों के लिये चलता रहे अन्य जातियाँ चाहती हैं कि आरक्षण समाप्त किया जाये अथवा आधार सामाजिक आर्थिक स्थिति दयनीय हो उन्हें भी आरक्षित सूची में शामिल किया जाये ताकि वे इसके लाभ से वंचित न रह जायें।

भारत में सभी राजनीतिक दल किसी भी चुनाव क्षेत्र में प्रत्याक्षी मनोनीत करते समय जातिगत का अवश्य विश्लेषण करते हैं। सन् 1962 में गुजरात के चुनाव में स्वतंत्र पार्टी की सफलता का राज उनका क्षत्रिय जाति के समर्थन में छिपा हुआ था। हरिजन, मुसलमान और ब्राह्मण शक्तिकुंज बनाकर ही सन् 1971 का आम चुनाव कांग्रेस ने जीता था सन् 1977 में जनता पार्टी की विजय का कारण मुसलमानों और हरिजनों के साथ उच्च जातियों का समर्थन प्राप्त था। जनवरी 1980 के लोकसभा चुनाव में कांग्रेस (इ) की विजय का कारण है, कि श्रीमती गांधी, हरिजन, ब्राह्मणों और मुसलमानों का जातीय समर्थन जुटाने में सफल हो गयी हैं। 1 नवम्बर 1989 के लोक चुनाव में उत्तर प्रदेश और बिहार में जनता दल की अपूर्ण विजय का कारण जाट, राजपूत समर्थन है, हाल ही हुए उत्तरप्रदेश विधानसभा चुनाव में समाजवादी एवं बहुजन समाजवादी गठबंधन की अपार सफलता का राज दलितों एवं यादवों का समर्थन है।

लोकसभा और विधानसभाओं के लिये जातिगत आरक्षण की व्यवस्था प्रचलित है। केन्द्र एवं राज्यों की सरकारी नौकरियों एवं पदोन्नति के लिये जातिगत आरक्षण का प्रावधान है। मेडिकल, इंजीनियरिंग और अन्य कॉलेजों में प्रवेश विद्यार्थियों की भर्ती हेतु आरक्षण का प्रावधान है, तथा सभी क्षेत्रों की सरकारी नौकरियों में भी लगभग 60 प्रतिशत जातिगत आरक्षण की व्यवस्था की गई है।

राजनीतिक जीवन में जातीयता का सिद्धान्त इतना गहरा धस गया है, कि राज्यों के मंत्री मण्डल में प्रत्येक प्रमुख जाति का मंत्री होना चाहिये यह सिद्धान्त प्रान्तों की राजधानियों से ग्राम पंचायतों तक स्वीकृत तक स्वीकृत हो गया कि प्रत्येक स्तर पर प्रधान जाति को प्रतिनिधित्व मिलना ही चाहिये था। यहाँ तक की केन्द्रीय मंत्री मण्डल में भी हरिजनों जनजातियों सिक्खों, मुसलमानों, ब्राह्मणों, जाटों, और कायस्थों को भी किसी न किसी रूप में स्थान अवश्य दिया जाता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रो. रजनी कोठारी 'कास्ट इन इंडियन पॉलिटिक्स'
2. बी.आर. अम्बेडकर 'एनिलिहेशन ऑफ द कास्ट', पृष्ठ 28.29
3. प्रो. एम.पी. राय, भारतीय शासन एवं राजनीति, कॉलेज बुक डिपो, रायपुर, 1990
4. डी.के. मिश्र, सामाजिक प्रशासन, ओरिएन्ट बारामेन रोड नई दिल्ली, 1990
5. प्रभुदत्ता शर्मा, प्रजातंत्र चनौतियाँ और उत्तार कॉलेज बुक डिपो जयपुर, 1990
6. जे.सी. बिहारी, भारतीय शासन एवं राजनीति, स्टालिंग प्राइवेट पब्लिकेशन, 1989
7. डॉ.रजनी कोठारी, भारतीय राजनीति ओरियन्ट।

****

नारी सशक्तिकरण के परिप्रेक्ष्य में नारी के उत्तरदायित्व

डॉ. सुमन तनेजा *

प्रस्तावना – 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता' और 'नारी तुम केवल श्रद्धा हो' ऐसे पावन नारी की गरिमा को दर्शाने वाले वाक्यांश साहित्य में यत्र-तत्र-सर्वत्र दृष्टव्य है। नारी समाज की रचनात्मक शक्ति है। नारी स्तुत्य है। समाज की संरचना और उन्नति में नारी का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। भारतीय धर्मशास्त्र नारी की करुणा, ममता, त्याग, समर्पण, सहनशीलता, संवेदना, वीरता आदि से परिपूर्ण हैं। नारी धरा पर ईश्वर की सर्वोत्कृष्ट कृति कही जा सकती है। वह 'माँ' है। उसी से सृष्टि का संपादन सम्भव हुआ है। वह सृष्टि का मूलाधार हैं।

प्राचीन नारी की महानता के साथ यह भी दृष्टव्य है कि भारत में नारी की स्थिति को मध्यकाल में मुगलो के आक्रमण से आघात पहुँचा। सतीप्रथा, पर्दा प्रथा, शिक्षा निषेध, आदि अनेक कुरीतियों ने नारी की स्थिति दयनीय कर दी। अनेक बंधनों की विवशता उसकी नियति बन गई। महिलाएँ मानसिक रुप से पराधीन हो गई। नारी की इस दयनीय स्थिति को सुधारने के प्रयास ब्रिटिश काल में राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद के द्वारा किये गये। नारी उद्धार के कई कार्य हुए। राष्ट्रीय आंदोलन के काल में महात्मा गांधी ने नारियों को समान दर्जा दिलाने का आव्हान किया और उन्हें भी सामाजिक ढाँचे को बदलने हेतु प्रेरित करते हुए राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाने का आग्रह किया। इस आव्हान पर अनेक महिलाओं ने अपना योगदान दिया और नारी शिक्षा एवं महिला विकास कार्यो हेतु आगे आई जिनमें रमा बाई रानाडे, सावित्री बाई फुले, आनंदी बाई जोशी के नाम लिये जाते है। राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान ही नारी के समान अधिकारों की धारणा को पुरजोर समर्थन प्राप्त हुआ। इसी का प्रतिफल था कि भारतीय संविधान में जाति, धर्म, वर्ण, लिंग भेद के बिना सभी के लिए समान रुप से भारतीय संविधान के तीसरे अध्याय में मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की गई जिनमें कुछ स्थानों पर महिलाओं के लिए विशेष उपबंधों की भी व्यवस्था की गई। संविधान के चौथे अध्याय राज्य के नीति निर्देशक तत्वों में भी महिलाओं के साथ समानतापूर्ण व्यवहार का लक्ष्य रखा गया।

स्वातंत्रयोत्तर भारत में नारी ने आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक सभी क्षेत्रों में अपनी सहभागिता आरम्भ की। उसका प्रभाव सर्वत्र परिलक्षित हुआ। महिलाओं की यह स्थिति महिला कल्याण फिर महिला विकास और अब महिला सशक्तिकरण के रुप में देखी जा रही है। यह तीनों ही सम्प्रत्यय अन्तर्सम्बंधित और अन्योन्याश्रित है। महिला कल्याण योजनाओं से ही महिला विकास सम्भव है और महिला विकास के लिए महिला का सशक्तिकरण आवश्यक है। सशक्त महिला ही विकासोन्मुख हो सकती है और महिला विकासोन्मुख हो सके इसके लिए उसका सशक्तिकरण आवश्यक है।

महिला कल्याण, विकास और सशक्तिकरण के उद्देश्य से भारत सरकार ने अपनी पंचवर्षीय योजनाओं एवं विभिन्न कार्यक्रमों में महिलाओं को विशिष्ट स्थान दिया। संवैधानिक सुधारों के माध्यम से भी महिलाओं के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक सुदृढ़ता के प्रयास किये गये। परिवार नियोजन सम्बंधी योजनाओं का भी इस दिशा में योगदान रहा। महिला बाल विकास विभाग इस दिशा में निरंतर प्रयत्नशील है। स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका भी महिलाओं को आगे लाने में सराहनीय है।

महिलाओं को सशक्त बनाने में मध्यप्रदेश सरकार ने तो इस दौर में कई अभिनव प्रयोग किये है जिसमें नारी का मनोबल बढ़ा है। वह विश्वासपूर्वक आगे बढ़ रही है। निरंतर नवीन से नवीनतम योजनाएँ जैसे लाड़ली लक्ष्मी, कन्यादान, जननी सुरक्षा, गाँव की बेटी, प्रतिभा किरण, आवागमन योजना, नि:शुल्क पुस्तक एवं स्टेशनरी प्रदाय आदि नारी सशक्तिकरण की दिशा में मील का पत्थर साबित हो रही है।

नारी विकास और सशक्तिकरण का दौर आज भारत में ही नहीं सम्पूर्ण विश्व का विषय है। नारी सशक्तिकरण सम्बंधी नीतियों, योजनाओं, कार्यक्रमों, संगोष्ठियों, सेमीनारों, कार्यशालाओं पर विहंगम दृष्टि डालने से एक तथ्य जो उभरकर आता है वह यह है कि सशक्तिकरण तभी सार्थक है, जब इससे जुड़े उत्तरदायित्वों को भी मनोयोग से निभाया जाये। नारी शोषण से, अन्याय से, यौन-उत्पीड़न, घरेलू हिंसा आदि अप्रिय स्थितियों से मुक्त होना चाहती है तो उसे कुछ बिन्दुओं से बंधे रहना चाहिए। ये बिंदु मेरी दृष्टि में निम्नानुसार है-

- नारी शिक्षा की और अनेक प्रयास हुए है नारी को शिक्षा की दिशा में स्वप्रेरित होना चाहिए। शिक्षा समस्त मानसिक व्याधियों को निदान कर सकारात्मक सोच को जन्म देती है। अतएव परिवार की नारियों को अपनी कन्याओं की शिक्षा की ओर पूरा-पूरा ध्यान देना चाहिए। कई बार 'नारी ही नारी की प्रगति में बाधक होती है।' ऐसी स्थिति नहीं होगी तभी शिक्षा के क्षेत्र में नारी की सशक्तिकरण हेतु संचालित की गई योजनाओं से नारी लाभान्वित हो सकेगी। अंधविश्वास और कुरीतियों के बंधन से मुक्त हो सकेगी।
- पारिवारिक मूल्यों का राष्ट्र के मूल्य निर्माण में बहुत योगदान होता है। नारी मूल्यों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक संवाहित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। नारी को अपने मूल्यों को समझकर उन्हें अपने जीवन में अंगीकार करना चाहिए। चीनी दार्शनिक कन्फ्यूशियस से लेकर आज के समाजशास्त्री नारी के जीवन में मूल्यों की अहं भूमिका समाज में भ्रष्टाचार को समाप्त कर सकती है, इसे स्वीकारते है। अभी हाल ही में जनवरी 2015 में गणतंत्र दिवस पर आमंत्रित मुख्य अतिथि अमेरिका के राष्ट्रपति बराक ओबामा

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.) भारत

ने इंडियन फैमिली वैल्यूज (पारिवारिक मूल्यों) की प्रशंसा की। इस समय हमारे सामने जो नारी सम्बंधी अनेक समस्याएँ आती है, उनका समाधान करने में फैमिली वैल्यूज काफी सहयोगी है। मूल्य युक्त जीवन ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण करता है, जो प्रत्येक विपरीत परिस्थिति में भी अपने विवके का प्रयोग कर समस्या से उभर सकता है। अच्छा आचरण नारी सशक्तिकरण की प्रथम आवश्यकता है।

- नारी सशक्तिकरण के दौर में निस्संदेह नारी को बहुत अधिकार दिये गये है, नारी का भी दायित्व है, कि वह अपने अधिकारों का प्रयोग इस प्रकार से करें कि उससे समाज में, परिवार में किसी के साथ अन्याय न हो। उसे अपने अधिकारों का ज्ञान होना तो एक अनिवार्यता है, लेकिन परिणाम ऐसे न हो कि परिवार बिखर जाये। समाज में ऐसे भी कई उद्धरण देखने को मिलते है कि दहेज प्रताड़ना सम्बंधी अपने अधिकार का प्रयोग किया और उससे जो थोड़ी सी समझ और सहनशीलता से परिवार सम्हल सकता था वह टूट गया। अधिकार जोड़ने के काम आये तोड़ने के नहीं यह नारी को स्वयं समझना है।
- भारत सरकार द्वारा घोषित राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण नीति 2001 में महिलाओं की उन्नति विकास तथा शक्तिसम्पन्नता के साथ सभी स्तरों पर लिये जाने वाले निर्णयों में महिलाओं को भागीदार बनाना मुख्य बात थी। महिलायें निर्णय ले लेकिन SWOC अपनी शक्ति (स्टैंथ), कमजोरी (वीकनेस), अवसर (ऑपरचुनिटी), चुनौती (चैलेजेंस) का पर्याप्त विश्लेषण करने के उपरांत निर्णय लें। निर्णय से बहुत बड़ा दायित्व जुड़ा होता है। अतएव निर्णय इस दम्भ के वशीभूत होकर न लिया जाये कि जो मैं 'कहूँगी वही होगा। पर्याप्त सोच समझ विचार-विमर्श के बाद निर्णय लें।
- नारी का व्यवहार संतुलित हो जिससे कि कोई अप्रिय घटना की शिकार होने से वह यथासम्भव बच सके। आज जबकि कामकाजी महिलाओं का प्रतिशत बढ़ रहा है, तो ऐसे में कार्यस्थल पर कुछ व्यवहारिक पहलुओं का उन्हें ध्यान रखना चाहिए जैसे-
- पुरुष सहकर्मियों से एकांत की अपेक्षा समूह में वार्तालाप करें।
- जहाँ तक हो उपहार आदि लेने के प्रति उपेक्षणीय व्यवहार रखें।
- अपने कार्य को पूर्ण दक्षता, निष्ठा, ईमानदारी से करें ताकि किसी से कोई अन ड्यू एडवांटेज लेने की स्थित न आये।
- किसी के व्यक्तिगत जीवन में हस्तक्षेप न करें न अधिक रुचि प्रदर्शित करें।
- किसी पुरुष के लिये अपमानजनक शब्द न कहें।
- अपनी वेशभूषा एवं रहन-सहन गरिमामयी रखे।
- अपने शील और चरित्र के संरक्षण को सर्वोच्च प्राथमिकता देवे।
- अपने कार्यो हेतु पारिवारिक सदस्यों या सहकर्मियों पर निर्भर न रहकर स्वयं करें।
- महिला वसित ग्रहो में रहने वाली काम-काजी महिलाएँ वसित ग्रह के नियमों का पालन सुनिश्चित करें।
- वाहन सुविधा की दृष्टि से किसी अंजान से लिफ्ट न लेवे।
- मोबाईल, इंटरनेट, वाट्सएप, जैसे संचार साधनो को नारी अपने विकास एवं रचनात्मक लक्ष्यों हेतु उपयोग करें।

नारी सशक्तिकरण की 'लहर' में बहे नहीं वह अपने कदम सशक्तता से टिकाते हुए आगे बढ़े। अपनी स्वतंत्रता के साथ-साथ अपनी सीमाओं को समझे तब वह आसमान की ऊँचाइयों को छू सकती है। सरोजनी नायडू, इंदिरागांधी, प्रतिभा पाटिल, सोनिया गांधी, सुषमा स्वराज, मीरा कुमार, शीला दीक्षित, वसुन्धरा राजे, मेघा पाटकर, किरण बेदी, कल्पना चावला की श्रेणी में नारी अपना स्थान दर्ज कराना चाहती है तो उसे अपने उत्तरदायित्वों को पूर्णत: समझना होगा और उसके प्रति समर्पित होना होगा। शून्य सहनशीलता औचित्यपूर्ण नहीं है। सशक्तिकरण के प्रयासो के साथ-साथ उसकी प्रतिष्ठा तभी सम्भव है, जब वह अपने उत्तरदायित्वों के प्रति समर्पित होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महिला सशक्तिकरण का सच - मीनाक्षी निशांत सिंह।
2. महिला विकास कार्यक्रम - डॉ.आशुरानी।
3. ए जर्नल ऑफ एशिया फॉर डेमोक्रेसी एंड डबलपमेन्ट।
4. आत्मकथा - मो. क. गांधी।

****

वर्तमान सामाजिक परिप्रेक्ष्य में महिलाओं के साथ बढ़ती घरेलू हिंसा का सामाजिक विश्लेषण (कुक्षी तहसील के विशेष संदर्भ में)

विजय यादव *

शोध सारांश – 20वीं शताब्दी के बाद महात्मा गाँधी द्वारा सुधार प्रयत्न और राष्ट्रीय आन्दोलनों ने भारत की स्वतंत्र नारी सचमुच स्वतंत्र हुई आधुनिक काल में भी नित हुए विधानों द्वारा उसे घर की चार-दिवारी के भीतर हो रही घरेलु हिंसा से बचाने का प्रयत्न किया, किन्तु फिर भी आधुनिक काल में महिला के साथ हिंसात्मक व्यवहार का दौर थमा नहीं है, अपितु इसकी मात्रा व विभत्सता में परिवर्तन अवश्य हुआ है, लेकिन आजादी के बाद महिलाओं के साथ होने वाले अपराधों व अत्याचारों में कमी नहीं आई इसी हिंसा ने हर कहीं पुरूष के खिलाफ समान आक्रोश, असंतोष अकुलाहार, सुलगाहर और विद्रोह को जन्म दिया है। नारी का सृष्टि रचना में योगदान महत्वपूर्ण रहा है, क्योंकि वह मानव को जन्म देती है संसार के विकास में इसका योगदान नगण्य क्यों रहा ?

आज कहीं यह योगदान दिखाई देता है तो उसी की तरह की जैसे किसी वर्ग विशेष के लिए कुछ प्रतिशत सीटें रख दी जाती है। समानता की भागीदारी केवल कागजों पर है क्या वह मात्र दुसरे दर्जे की इन्सान हैं ? क्या वह बुद्धि या मानवीय गुणों में पुरूषों से भिन्न हैं ? क्या वह केवल पुरूष का मन बहलाव करने की वस्तु और संतान पैदा करने की मशीन भर है उसका अपना निजी अस्तित्व अपनी पहचान कहाँ है ? निजी तौर पर विश्ववहित में उसकी कोई अन्य भूमिका क्यों नहीं रही ? ये ऐसे कई प्रश्न आज भी प्रबद्ध नारी को कुरूद रहे हैं कहीं कम तो कहीं ज्यादा पर मूल प्रश्न समान है। समाज के प्रत्येक क्षेत्र में नारी समय-समय पर अपना योगदान देती रही है। लेकिन फिर भी कोई समाज नारी उत्पीड़न से अछूता नहीं रहा। समय-समय पर अपने जीवन को समाज व परिवार के लिए हमें (उत्सर्गित) करने वाली नारी का उत्पीड़न क्यों ?

प्रस्तावना – नारी ईश्वर का वरदान है, उसकी महत्ता को किसी भी समाज में नकारा नहीं जा सकता। महिलाओं के साथ घरेलू हिंसा को आज के युग धरना मानना अतिश्योक्ति होगी क्योंकि प्राचीन समय से लेकर वर्तमान समय तक महिला उसी त्रासदी से गुजर रही है। वर्तमान काल में महिलाओं के साथ घरेलू हिंसा अपनी चरम सीमा पर चल रही है। आये दिन अखबार व मैग्जीन में घरेलू हिंसा की घटना सुर्खियों में परिलक्षित होती है। बलात्कार, छेड़छाड़ दहेज प्रताड़ना अपहरण आदि घटनायें आज भी घटित हो रही हैं, प्राचीन युग से वर्तमान युग में उत्पीड़न की मात्रा व विभत्सना में कमी या बढ़ोत्तरी अवश्य हुई लेकिन यह उत्पीड़न समाप्त नहीं हुआ एक और तो वर्तमान समय में नारी उन शिखरों को छू रही हैं, जो कभी पुरूष के आधित्य समझे जाते थे, वहीं आज भी आधुनिक व सशक्त कहीं जाने वाली नारी उस हिंसा की लगातार शिकार हो रही है जो पुरातन काल से बंद दरवाजों के पीछे होती है। जिस चारदीवारी को नारी के लिए सदैव से ही सबसे सुरक्षित स्थान समझा जाता था वहीं आज उसके लिए इतना खतरनाक हो गया हैं कि विभिन्न कानूनी प्रावधान व संवैधानिक उपचार होते हुए भी घरेलू हिंसा से बचाव के लिए नया अधिनियम लागू किया गया है इस प्रकार प्राचीन काल से लेकर आज वर्तमान में भी ये समस्या व बुराईयाँ अपनी जड़े पूरी तरह जमा चुकी है।

सम्बन्धित साहित्य –

1. **शर्मा नितिन (2002) –** महिलाओं के प्रति पारिवारिक अत्याचारों का अध्ययन में उन्होंने अध्ययन के लिए उन प्रकरणों को मुख्य आधार बनाया जिनमें पीड़ित महिला एवं प्रताड़ित करने वाले परिवार के कथित अपने (पति, सास, ससुर, माता-पिता अथवा ससुराल पक्ष व महिला के रिश्तेदार) ही होते है।
2. **व्होरा, आशारानी (1986) –** गाँधीजी का कथन है कि मर्दो ने औरतों का प्रयोग अपने स्वार्थ सिद्धि के लिए किया औरतों ने भी हारकर अंत में यही मान लिया कि यही मार्ग सबसे आसान है। सदियों से शोषण के परिणाम स्वरूव भारतीय नारी में विरोध करने की शक्ति शेष नहीं रही। और स्वतंत्र होना चाहती है, तो उसे निर्भिक होना होगा। यदि हम भारत में लोकतंत्र बनाना चाहते हैं तो महिलाओं का सहयोग और अनिवार्य शर्त होगी। बिना नारी शक्ति के कैसा तंत्र व कैसा लोकमंत्र।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. घरेलू हिंसा की प्रकृति का अध्ययन करना।
2. घरेलू हिंसा के कारणों का विश्लेषण करना।
3. विभिन्न आयामों पर घरेलू हिंसा की वर्तमान स्थिति का पता लगाना।
4. घरेलू हिंसा निरोध अधिनियम कानून के वास्तविक प्रभाव को ज्ञात करना।
5. घरेलू हिंसा का महिलाओं के सामाजिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों को ज्ञात करना।

अध्ययन की विधि – कुक्षी तहसील के 5 क्षेत्र जिसमें ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र का चयन किया गया। जिसमें कुक्षी, सुसारी, निसरपुर पड़िपाल और हदि अध्ययन के लिए चयन किया गया चुने गए 5 क्षेत्र को प्रतिनिधि के रूप में चयन किया गया। प्रस्तुत शोध के लिए दैव निर्दशन पद्धति का चयन किया गया। इस चयनित प्रत्येक क्षेत्र से 52-52 हिंसा पीड़ित महिलाओं का चयन साक्षात्कार हेतु किया गया है। इस शोध के लिए कुल 260 महिलाओं का अध्ययन हेतु चयन किया गया है।

* शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय,उज्जैन (म.प्र.) भारत

संकलित समंको का विशेषण –

तालिका 1

घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं की आयु को दर्शाने वाली

क्र.	आयु स्तर (वर्षों में)	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1	15–25	158	60.76
2.	26–35	84	32.30
3.	36–45	18	06.94
	कुल योग	**260**	**100.00**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि कुल 260 महिलाओं उत्तरदाताओं में से 158 (60.76) प्रतिशत महिलाओं का आयु स्तर 15 से 25 वर्ष का है। 84 (32.30) प्रतिशत महिलाओं का आयु स्तर 26 से 25 वर्ष है। 18 (06.94) प्रतिशत महिलाओं का आयु स्तर 36 से 45 वर्ष का है। यह तालिका दर्शाती है कि व्यक्ति पर जब प्रकृतियाँ हावी होती है तो इसके लिए उस समय को सामाजिक प्रतिष्ठा मान–मर्यादा तथा आयु कोई मायने नहीं रखती है आंकड़ों से स्पष्ट है कि सर्वाधिक घरेलू हिंसा का शिकार 15–25 आयु वर्ग की महिला अपने ऊपर हो रही हिंसा का कारण समझ सके व हिंसा का विरोध कर एक लम्बे समय तक उसे सहन भी करती रहती है। आयु संबंधित विविधता दर्शाता है कि हिंसा करने व सहने वालो के लिए उम्र की कोई सीमा नहीं है। हिंसा करने वालों को हिंसा करना है व सहन करने वाले को तब तक सहन करना जब तक सहन शक्ति खत्म न हो जाए।

तालिका क्र. 2

घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं के शैक्षणिक स्तर को दर्शाने वाली तालिका

क्र.	शिक्षा का स्तर	संख्या	प्रतिशत
1	अशिक्षित	92	35.39
2.	मिडिल	55	21.15
3.	हाईस्कूल	52	20.00
4.	इन्टर	39	15.00
5.	स्नातक/स्नातकोत्तर	22	08.00
	योग	**260**	**100.00**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि कुल 260 महिलाओं उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक अशिक्षित महिलाएँ 92 (35.39) प्रतिशत तो सर्वाधिक है, 52 (20.00) प्रतिशत महिलाओं ने हाई स्कूल तक शिक्षा प्राप्त की है। 39 (15.00) प्रतिशत महिलाओं ने इन्टर तक शिक्षा प्राप्त की है। 22 (08.00) प्रतिशत महिलाओं ने स्नातक/स्नातकोत्तर तक की शिक्षा प्राप्त की है। यह तालिका दर्शाती है कि वर्तमान में शिक्षित महिलाओं की संख्या अशिक्षित पीड़ित महिला उत्तरदाताओं से ज्यादा है इससे स्पष्ट है कि शिक्षा का स्तर जैसे–जैसे बढ़ रहा है महिलाओं पर अत्याचार भी उसी अनुपात में बढ़ रहे है। अत: अशिक्षित व शिक्षित दोनों ही हिंसा कर रही है तथा हिंसा का शिकार हो रही है।

तालिका क्रमांक 03 – घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं के परिवार के स्वरूप को दर्शाने वाली तालिका

क्र.	परिवार का स्वरूप	संख्या	प्रतिशत
1	संयुक्त परिवार	97	37.01
2.	एकांकी परिवार	163	62.69
	कुल योग	**260**	**100.00**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि कुल 260 महिलाओं उत्तरदाताओं में से 163 (62.69) प्रतिशत महिलाएँ एकांकी परिवार से है तथा 97 (37.01) महिलाएँ संयुक्त परिवार से है। यह दर्शाता है कि आज समाज में संयुक्त परिवार का विघटन हो रहा है। तथा एकांकी परिवारों की संख्या बढ़ रही है। एकांकी परिवार में पति–पत्नी तथा अविवाहित बच्चे रहते है जिससे हिंसा करने वाले को किसी का डर नहीं होता और बीच–बचाव करने वाला भी कोई नहीं होता अत: एकांकी परिवार में भी महिला घरेलू हिंसा की शिकार होती है संयुक्त परिवार में बहु–बेटियों पर पूर्णत: अंकुश लगाया जाता है बहुओं में आपासी तुलना होती रहती है जिसका प्रभाव प्रताड़ना के रूप में पड़ता है।

तालिका क्र. 04

दहेज के लिए प्रताड़ना के समय को दर्शाने वाली तालिका

क्र.	प्रताड़ना की शुरूआत	संख्या	प्रतिशत
1	विवाह के तुरंत बाद	108	41.53
2.	बच्चे होने के बाद	53	20.39
3.	दहेज के लिए हिंसा नहीं हुए	99	38.08
	कुल योग	**260**	**100.00**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि कुल 260 महिला उत्तरदाताओं में से 108 (41.53) प्रतिशत महिलाओं के साथ विवाह के तुरन्त बाद दुर्व्यवहार शुरू कर दिया था तथा 53 (20.39) प्रतिशत महिलाएँ ऐसी है जिनके साथ बच्चे होने के पश्चात् दुर्व्यवहार शुरू किया गया है। 99 (अर्थात् 38.08) प्रतिशत महिलाएँ किन्हीं अन्य कारणों से घरेलू हिंसा का शिकार हो रही थी।

तालिका क्र. 05

घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं द्वारा पुलिस से रिपोर्ट दर्ज करवाने के बाद ससुराल वालों के व्यवहार को दर्शाने वाली तालिका

क्र.	ससुराल वालों का रूप	संख्या	प्रतिशत
1	घर से निकाल दिया	161	61.92
2.	दहेज के लिए हिंसा नहीं हुई	99	38.08
	कुल योग	**260**	**100.00**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि कुल 260 महिला उत्तरदाताओं में से 161 (61.92) प्रतिशत महिलाओं ने माना कि पुलिस में रिपोर्ट करवाने के पश्चात् ससुराल वालों ने उन्हें महिला को घर से निकाल दिया 99 (38.08) प्रतिशत महिलायें किन्हीं अन्य कारणों से हिंसा का शिकार हो रही थी तालिका से स्पष्ट होता है कि महिला के विरोध करने पर उसे घर से निकाल दिया जाता है। ससुराल पक्ष को दहेज की मांग जायज लगती है एवं उनके विरूद्ध पुलिस में जाने पर उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा पर आघात होता है। ऐसी स्थिति से बचने के लिए वे बेटी समान बहु को एक व्यर्थ सामान की तरह बाहर फेंक देते है। यही नहीं उस पर तरह–तरह के लांछन भी लगाते है। पुलिस का भय उन्हें इस कृत्य को करने से नहीं रोक पाता, यहाँ तक कि उनकी हत्या तक कर दी जाती है।

निष्कर्ष – सरकार द्वारा महिलाओं के साथ हो रही घरेलू हिंसाओं को रोकने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर कानून बनाकर प्रयास किये जा रहा है। फिर भी नारी पूरी तरह से स्वतंत्र नहीं हो पायी हैं। वर्तमान समय में भी महिलाओं को प्रताड़ित किया जा रहा है। शोध से स्पष्ट होता है कि वर्तमान में महिलाओं के साथ हिंसात्मक रवयै अपनाने के कोई कारण स्पष्ट होते है। जिसमें दहज प्रथा की महत्वपूर्ण भूमिका स्पष्ट होती है। दहेज के साथ–साथ कई अन्य

कारण है, जिसके कारण महिला उसका विरोध नहीं कर पा रही है। जिसमें अशिक्षा, साहस की कमी, अत्याचार को चूपचाप सहन कर लेना, कानूनी कार्यवाही का सही उपयोग न होना आदि है। वर्तमान में महिलाओं का शिक्षा का स्तर तो बढ़ा है लेकिन फिर भी इनके ऊपर होने वाले अत्याचार कम नहीं हो रहे हैं इन सब कारणों को गौर करती हुई सरकार को चाहिए कि वह कड़ा कदम उठाये।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. मोहन राजेन्द्र (2000) भारत में समाज पियुश पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
2. नाटिवि, पी.एन. (2007) महिला संरक्षण एवं न्याय, अरविंद प्रकाशन, उदयपुर।
3. नाराणी प्रकाश (2002) - महिला जागृति और कानून, आविष्कार पब्लिकेशन, जयपुर।
4. पोशन के.पी. एवं टोंग्या (1989) - परिवार तथा समाज कमल प्रकाशन, इन्दौर।
5. सक्सेना योगेन्द्र नारायण (1999) - बढ़ता हुआ नारी उत्पीड़न पुलिस के लिए चुनौती - साहित्य भवन, आगरा।
6. व्होर आशारानी (1982) - नारी शोषण आईने एवं आयाम - नेशनल पब्लिकेशन नई दिल्ली।
7. शर्मा त्रिभुवन (2001) - आधुनिक समाजों में स्तरीकरण, इग्नू नई दिल्ली।
8. व्होरा आशारानी (1983) - भारतीय नारी दशा एवं दिशा नेशनल पब्लिकेशन हाउस नई दिल्ली।

****

निम्न जातियों में निम्न आय वर्ग की महिलाओं में घरेलू हिंसा की समस्या - एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. प्रार्थना निगम * डॉ. अनामिका प्रजापति **

प्रस्तावना – भारतीय समाज में पारिवारिक समस्याओं के अंतर्गत घरेलू हिंसा की समस्या वर्तमान युग की एक प्रमुख समस्या है। घरेलू हिंसा का तात्पर्य परिवार के किसी भी सदस्य के साथ इस तरह का व्यवहार है जो उसे शारीरिक या मानसिक रूप से प्रताड़ित करता हो तथा जिसे व्यवहार के निर्धारित मापदण्डों का विचलन के रूप में देखा जाता हो। अब प्रश्न यह उठता है कि ऐसी हिंसा परिवार में किन व्यक्तियों द्वारा किन सदस्यों के विरूद्ध की जाती है ? स्वाभाविक है कि कुछ अपवादों को छोड़कर घरेलू हिंसा सदैव परिवार के अधिकार संपन्न पुरूष या स्त्री सदस्यों द्वारा उन्हीं सदस्यों के विरूद्ध की जाती है जो उस परिवार से वैवाहिक संबंधों के कारण जुड़ते हैं।

पारिवारिक हिंसा का संबंध स्त्रियों के उसी उत्पीड़न से है जो किसी महिला के निकट संबंधियों जैसे सास, श्वसुर, देवर, ननद अथवा पति द्वारा किया जाता है। स्पष्ट किया जाता है, इसका संकुचित अर्थ है कि किसी व्यक्ति को प्रताड़ित करना, चोट पहुंचाना या शारीरिक रूप से घायल करना है। व्यापक अर्थ में हिंसा कोई भी ऐसा व्यवहार है जिसका औपचारिक रूप से सामाजिक निन्दा की जाती है या एक विशेष व्यवहार से शारीरिक चोट नहीं पहुँचती, किन्तु व्यवहार व्यक्ति को मानसिक रूप से आघात पहुँचाता हो या किसी ऐसे कार्य को करने के लिए बाध्य करता हो, जो सामाजिक प्रतिमानों के विरूद्ध हो।

इस दृष्टिकोण से मैगार्गी ने हिंसा को परिभाषित करते हुए लिखा है 'कोई भी ऐसा कार्य जो जानबूझ कर, धमकाकर, बलपूर्वक किया गया हो, जिसके फलस्वरूप व्यक्ति को आघात पहुंचा हो अथवा उसके सम्मान को ठेस लगी हो, उसे हम हिंसा कहते हैं।

स्पष्ट है कि 'परिवार के किसी सदस्य में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से बल प्रयोग करके किसी ऐसी वस्तु को लेना या किसी ऐसे व्यवहार के लिये बाध्य करना जिसे वह अपनी स्वेच्छा से करना नहीं चाहता अथवा जिससे उसे शारीरिक आघात या भावनात्मक उत्पीड़न का शिकार होना पड़ा हो, पारिवारिक हिंसा है।'

घरेलू हिंसा का रूप प्रच्छन्न होने के कारण इसके सभी प्रकारो की सही जानकारी मिल सकना कठित होता है। इसके बाद भी उत्पीड़ित महिलाओं से संबंधित होने वाले अनेक अध्ययनों से घरेलू हिंसा के विभिन्न रूप सामने आये हैं, उनमें दहेज यातनाऐं, शारीरिक प्रताड़ना, भावनात्मक और लैंगिक दुर्व्यवहार, नारी हत्या तथा कन्या भ्रूण हत्या, वैवाहिक शोषण, विधवाओं के प्रति की जाने वाली हिंसा एवं मानसिक प्रताड़ना आदि प्रमुख है।

अध्ययन का उद्देश्य –

- निम्न जातियों में निम्न आय वर्ग में व्याप्त घरेलू हिंसा की समस्या को समाप्त करना।
- पारिवारिक हिंसा को जन्म देने वाले कारकों का अध्ययन।
- निम्न जातियों में निम्न आय वर्ग की महिलाओं में आत्मविश्वास (Self Identity) को बढ़ाना ताकि उनका समाज को सकारात्मक योगदान मिले।
- निम्न जातियों में निम्न आय वर्ग की आगे आने वाली पीढ़ी के व्यक्तिगत एवं विकास के लिये अनुकूल वातावरण का निर्माण हो।

अध्ययन क्षेत्र – शोध कार्य हेतु गांधी नगर उज्जैन के निवासियों को समग्र के रूप में लिया गया है। उनमें से उद्देश्य पूर्ण निदर्शन के आधार पर निम्न आय वर्ग के 20 परिवारों का चयन किया गया है। चयनित परिवारों में से महिला सदस्य को अध्ययन की इकाई के रूप में लिया गया है।

प्रविधि – अध्ययन कार्य हेतु अवलोकन प्रविधि तथा साक्षात्कार अनुसूची का उपयोग किया गया है तथा सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु एसपीएसएस का उपयोग किया गया है। अध्ययन कार्य हेतु निम्नांकित प्रश्नों की जानकारी प्राप्त की गई। क्या निम्न जातियों में निम्न आय वर्ग में घरेलू हिंसा का कारण आय का कम होना है ?

- पुरूष प्रधान समाज (Male Dominating Society) महिला हिंसा के लिये उत्तरदायी है?
- क्या मादक द्रव्य व्यसन घरेलू हिंसा का कारण है ?
- क्या शिक्षा का अभाव घरेलू हिंसा का कारण है ?
- क्या आस-पास के वातावरण का प्रभाव एवं समाजीकरण (Up Bringing or sociolization) भी निम्न जातियों में निम्न आय वर्ग में हिंसा के लिये उत्तरदायी है?

आय का एक महत्वपूर्ण कारक है जो व्यक्ति का सामाजिक और आर्थिक स्तर निर्धारित करती है। उच्च आय स्तर और निम्न आय स्तर का जीवन स्तर एक समान नहीं होता। अत: अध्ययनगत उत्तरदाताओं को आय के आधार पर अलग-अलग श्रेणियों में बांट कर उसका हिंसा से संबंध देखने का प्रयास किया गया।

सारिणी क्रं.1 में सांख्यिकीय विश्लेषण द्वारा इसे दर्शाया गया है तथा यह ज्ञात होना है कि आय का कम होना हिंसा के लिये उत्तरदायी है सार्थक है।

सारिणी क्र. 1 आय का स्तर

आय का स्तर	N	Mean	Std
1000-3000	4	7.25	1.25
3001-5000	12	2.58	2.02
5001-7000	4	1.00	.81
			2.72

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) सुभद्रा शर्मा शासकीय कन्या महाविद्यालय, गंजबसौदा, विदिशा (म.प्र.) भारत

One Way Anova
हिंसा की आवृत्ति

	Sum of Square	df	Mean square	F
Between Groups	89.53	2	44.76	14.73**
Within Group	51.66	17	3.03	
Total	141.20	19		

Sfq. 000
SPSS 10 Variation

मद्यपान के कुछ सामाजिक दुष्परिणाम है। घरेलू हिंसा पर मद्यपान का भाव जानने का प्रयास किया गया तथा यह पाया गया है कि 80 प्रतिशत परिवारों में पति द्वारा मद्यपान किया जाता है तथा 20 प्रतिशत द्वारा नहीं किया जाता है।

अध्ययन से प्राप्त आंकड़ों से ज्ञात होता है कि मद्यपान करने वालो के परिवार में हिंसा की आवृत्ति नहीं करने वालो की तुलना में ज्यादा है।

अध्ययन से प्राप्त आंकड़ों से ज्ञात होता है कि मद्यपान करने वालो में हिंसा की आवृत्ति का माध्य 3.92 प्रतिशत है तथा नहीं करने वालों में 1.33 प्रतिशत है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत अध्ययन द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि निम्न जातियों में निम्न आयु वर्ग में घरेलू हिसा किसी न किसी स्वरूप में विद्यमान है और उसका मुख्य कारण आय की कमी, मद्यपान, अशिक्षा तथा पुरूष प्रधान समाज की मानसिकता एवं वातावरण का प्रभाव आदि उत्तरदायी कारण है।

यदि इन कारणों का गहराई से विश्लेषण करें तो पता चलता है कि मद्यपान और घरेलू हिंसा का आपस में क्या संबंध है तथा पुरूष मद्यपान क्यों करते हैं तो अन्तर्निहित कारणों का पता चलता है कि उन्हें लगता है कि समाज में इनकी कोई प्रस्थिति, महत्व, मूल्य नहीं है। आय के पर्याप्त साधन नहीं है तो वे कुण्ठाग्रस्त होकर मद्यपान की ओर अग्रसर होते हैं जिससे उनका स्वास्थ्य और कार्यकुशलता तो प्रभावित होती है साथ ही परिवार में भी हिंसा की समस्या पैदा होती है। और एक बार यह समस्या पैदा होती है तो यह चक्र चलता रहता है।

सुझाव –

- महिलाओं के प्रति पुरूषों के मनोभावों एवं सोच में बदलाव जरूरी है।
- समाज में प्रत्येक जाति, वर्ग के व्यक्ति का महत्व व मूल्य है तथा समाज के लिये उसका प्रकार्यात्मक योगदान है। अत: समाज उसकी व्यक्तित्व विशिष्टता को महत्व दे तथा उसके हुनर का उपयोग कर मान्यता दे, ताकि वह कुण्ठाग्रस्त होकर विचलित व्यवहार न करे।
- निम्न जातियों में निम्न आय वर्ग की महिलाओं के लिए सरकार व स्वयंसेवी संगठनों को नि:शुल्क विभिन्न रोजगार व व्यवसाय मूलक शिक्षा व ट्रेनिंग की व्यवस्था करे ताकि वे अधिक आय अर्जन कर सके।
- मद्यपान की पाबंदी तथा व्यवहार में इसका पालन हो सके ऐसी योजनाओं की आवश्यकता है।
- निम्न जाति व निम्न आय वर्ग की बस्तियों में वातावरण में सुधार हेतु प्रयास किये जावे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Ahuja. Ram, Crime against Women, Rawat Publication, Jaipur, 1987.
2. Blumer, D. Neuro-psychiatric Aspects of Violent Behaviour, University of Toronto, Canada, 1973.
3. Borland, Maried (ed.) Violence in the Family, Manchester University Press, Manchester, 1976.
4. Maria, (ed), Battered Women, : A pshycho-Sociological Study of Domestic Violence, Van, Nostrand Reinhold, New York, 1977.

****

एक सभ्य समाज में मृत्युदण्ड की प्रांसगिकता पर प्रश्न चिन्ह

डॉ. अनामिका प्रजापति *

प्रस्तावना – दण्ड: शास्ति प्रजा: सर्वा: दण्ड एवाभिरक्षति।
दण्ड: सुप्तेषु जागर्ति दण्डं धर्म विदुर्बुधा:।।[1]

भारत के प्रथम संहिताकार मनु ने मनुस्मृति में मृत्युदण्ड को दैवीय उत्पत्ति मानते हुए कहा है कि 'दण्ड ही सब प्रजाओं का शिक्षक है, दण्ड ही सबके सो जाने पर जागता है और दण्ड को ही पण्डितों ने धर्म कहा है।' आचार्य चाणक्य ने सभी प्रकार की विधाओं का साधक दण्ड को ही माना है।[2] मृत्युदण्ड किसी व्यक्ति को कानूनी तौर पर न्यायिक प्रक्रिया के फलस्वरूप किसी अपराध के परिणाम में प्राणांत का दण्ड देने को कहते है। अंग्रेजी का केपिटल शब्द लैटिन शब्द कैपिटलिस से बना है जिसका अर्थ है– 'सिर से संबंधित । अर्थात् आरंभ में मृत्युदण्ड का अर्थ सिर को धड़ से अलग करने की प्रक्रिया में लिया जाता था। फेयरचाइल्ड के अनुसार– 'अपराध के लिए मृत्यु की सजा को प्राणदण्ड कहते है।'[3]

किसी व्यक्ति को जब फांसी या मृत्युदण्ड की सजा दी जाती है तो एक मुद्दा उठता है कि ऐसा क्यो? क्या मृत्युदण्ड के अलावा कोई और सजा नहीं दी जा सकती है? एक बार यदि किसी व्यक्ति को मृत्युदण्ड दे दिया गया और फिर उसके निरापराधी होने का पता चला तो क्या उस व्यक्ति को पुन: जीवित किया जा सकता है? जीवन का अन्त कर देना समस्या का समाधान नहीं है यदि हम किसी को जीवन नहीं दे सकते हैं तो क्या उसे लेने का हमें हक है? आदि अनेक ऐसे प्रश्न है जो कि मृत्युदण्ड की प्रासंगिकता पर प्रश्नचिन्ह् लगाते हैं।

मृत्युदण्ड की इस व्यवस्था ने कई बार हमारे समाज का अहित किया है। प्रेम का संदेश देने वाले ईसा को सूली पर लटकाना, महान दार्शनिक सुकरात को विष का प्याला देना, गैलेलियो, ब्रूनो, रूसो जैसे विद्वान जिन्होनें समाज को अपना बहुमूल्य योगदान दिया, अपराधी ठहराकर मृत्युदण्ड दिया गया। भगतसिंह, राजगुरू जैसे देशभक्तों को असमय फांसी की सजा देना, यह कैसी व्यवस्था है जो व्यक्ति के अच्छें कार्यो का प्रतिफल उसके जीवन का ही अन्त कर देती है।

महात्मागांधी ने कहा था कि अपराध से घृणा करे अपराधी से नहीं। हमने अहिंसा का संदेश देने वाले गौतम बुद्ध को भुला दिया, जिन्होंने अपने वचनों से अंगुलीमार जैसे डाकू को प्रेम का पाठ पढ़ाया और उसे प्रायश्चित का अवसर दिया। स्पष्ट है कि मानव जीवन अनमोल है यदि कोई व्यक्ति अपराध करता है तो उसमें सुधार की गुंजाइश ढूंढनी चाहिये न कि उसको मृत्युदण्ड देकर सदा के लिये दुनिया से उठा दिया जाये।

एक सभ्य समाज में अव्यवस्था को रोकने हेतु मृत्युदण्ड की व्यवस्था की गयी किन्तु क्या अंग्रेजों द्वारा क्रान्तिकारियों को मृत्युदण्ड देने से क्रान्ति की आग बुझी नहीं वरन् उल्टा और अधिक भड़की। आंतकवादियों को तो आज मौत की सजा का तनिक भी भय नहीं है वे स्वयं मानव बम बनकर आंतकवादी गतिविधियों को बढ़ावा दे रहे हैं और समाज में अव्यवस्था बढ़ा रहे हैं। क्या यहां पर मृत्युदण्ड का कोई औचित्य है उनके लिये।

आज हम लोक कल्याण के आदर्श की स्थापना की बात करते हैं जिसमें प्रत्येक व्यक्ति का समुचित शारीरिक, मानसिक व चारित्रिक विकास हो, किन्तु दूसरी ओर मृत्युदण्ड की वकालत करते हैं। तो लगता है कि आज भी हमारे अन्दर की पशुता जीवित है जो खून का बदला खून से लेती है। क्षमा हमारे समाज में सबसे बड़ा दान बताया गया है। महर्षि व्यास ने कहा है कि–

'अज्ञानता भवेत् कश्चिद्पराध कृतो यदि'

अर्थात् यदि पूर्ण जांच पड़ताल के बाद यदि यह साबित हो जाये कि अमुक व्यक्ति से अपराध अनजाने में हुआ है तो उसे क्षमादान के योग्य बताया गया है।[4] हमारे महान ऋषियों ने भी अपराध हो जाने पर प्रायश्चित का मार्ग बतलाया गया है, किन्तु आज हम अपराधी के प्रति कठोर हो जाते हैं और उसे प्रायश्चित के स्थान पर मृत्युदण्ड दे देते हैं। व्यक्ति को उसकी गलती का अनुभव करने हेतु प्रायश्चित का मौका तक नहीं देते है। क्या मृत्यृदण्ड को आजीवन कारावास में नहीं बदला जा सकता हैं ?

मृत्युदण्ड हमारे समाज में एक कलंक की भांति है, जो कि मानवतावादी दृष्टिकोण पर प्रश्नचिन्ह् लगाता है। समाजशास्त्रीय व मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से यदि विचार किया जाये जो अपराधी व्यक्ति से काउन्सलिंग कर उसके अन्तर्मन की परिस्थितियों व उसके परिवेश को समझकर उसके अपराध के कारण की खोज कर उस कारण का उपचार किया जाये तो हम समाज का सही मायने में भला कर सकेंगे। क्योंकि अपराधी से घृणा न करते हुए उसके द्वारा किये जाने वाले अपराध से हमें घृणा करनी चाहिए।

उपर्युक्त विश्लेषण से अब तक यही सिद्ध होता है कि एक सभ्य समाज में मृत्युदण्ड की व्यवस्था नहीं होनी चाहिए, किन्तु आज हम जिस समाज में रह रहे है वहां पर दिन–दहाड़े बलात्कार, चौरी–डकैती, हत्याएं की घटनाएं एक आम बात हो गयी है तो क्या ऐसे समाज को हम सभ्य कहेगें। आज मन्दिर, मस्जिद, गुरूद्धारे, संसद तथा अदालतें कोई भी स्थान सुरक्षित नहीं है। विश्व परिदृश्य में देखे तो मादक पदार्थो की तस्करी, अपहरण आदि की संख्या दिनों–दिन बढ़ रही है। क्या इन कृत्यों में संलग्न व्यक्तियों को मात्र आर्थिक दण्ड और कारावास की सजा देकर छोड़ देना उचित है ? अपराधिक मानसिकता वाले व्यक्ति यदि जेल में भी रहते हैं तो वहां पर भी वे अपनी दूषित मानसिकता से लोगों को प्रभावित कर देते हैं। ओसामा बिन लादेन इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है जो खुद तो मर गया लेकिन न जाने कितने लादेन पैदा करके इस धरती पर छोड़ गया। यदि ऐसे में मृत्यृदण्ड को समाप्त कर दिया जाये तो ये समाज अपराधियों से भर जायेगा। अत: अमानवीय कृत्यों पर रोक लगाने हेतु मृत्युदण्ड एक अपरिहार्यता है।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) सुभद्रा शर्मा शासकीय कन्या महाविद्यालय, गंजबासौदा, जिला – विदिशा (म.प्र.) भारत

इराक के पूर्व राष्ट्रपति सद्दाम हुसैन ने इंसानियत के खिलाफ दजैल में 1982 में 148 शियाओं के कत्ल के आरोप में मृत्यृदण्ड दिया गया। क्या ऐसे व्यक्ति के जीवन के अधिकार की रक्षा करना जायज था, जिसके लिये दूसरे व्यक्तियों के जान की कोई कीमत न हो। क्या भारतीय संसद पर हमले के आरोपी अफजल गुरू को फांसी की सजा नहीं दी जानी चाहिए। देश के नागरिकों को जोखिम में डालने का क्या ये क्षमायोग्य अपराध है। क्या राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, पूर्व प्रधानमन्त्री श्रीमती इंदिरा गांधी और राजीव गांधी की हत्या करने वाले व्यक्ति इस योग्य थे कि उनके जीवित रहने के अधिकारों का सम्मान किया जाये और उन्हें क्षमादान किया जाये। निश्चय ही मृत्युदण्ड ऐसे समाजो के लिये आवश्यक है जिन्होंने मानवीय संवेदनाओं को भुला दिया है और विकृत मानसिकता को अपनाया हुआ है। बीते दिनों में घटित जेसिकालाल हत्याकाण्ड, प्रियदर्शिनी मट्टू हत्याकाण्ड, निठारी काण्ड, आरूषि हेमराज हत्याकाण्ड आदि अनेक काण्डों ने मृत्युदण्ड की प्रासंगिकता को साबित कर दिया है।

हाल ही में राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने मृत्यृदण्ड को समाप्त किये जाने की सलाह देकर देशव्यापी बहस छेड़ दी है। अब तक 180 देशों में से लगभग 106 देश इसे पूरी तरह या फिर आंशिक रूप से समाप्त भी कर चुके है।[5] मृत्युदण्ड की प्रखर विरोधी एमनेस्टी इंटरनेशनल के आकड़ों के अनुसार विश्व के 58 देशों में अभी भी मृत्युदण्ड दिया जाता है।[6] इसका मानना है कि सभ्य समाज को अब इस आदिम युगीन बर्बर सजा को हमेशा के लिये समाप्त कर देना चाहिए। पैसों के प्रभाव और साक्ष्यों के अभाव में गलत व्यक्ति को मृत्युदण्ड दिये जाने के अंदेशों से इंकार नहीं किया जा सकता है तो हमें किसी का जीवन लेने का भी क्या अधिकार है। यूरोपियाई संघ के सदस्य देशों में चार्टर ऑफ फण्डामेण्टल राइट्स ऑफ द यूरोप यूनियन की धारा–2 मृत्युदण्ड का निषेध करती है।[7]

मनुस्मृति में दो प्रकार के प्राणदण्ड की विधियों का उल्लेख है– चित्रवध और शुद्धवध। चित्रवध में पहले अपराधी को असहनीय शारीरिक पीड़ा जी जाती थी और इसके बाद अपराधी को मौत के घाट उतारा जाता था। शुद्धवध में बिना किसी प्रकार की यातना पंहुचाएं ही व्यक्ति को मौत के घाट उतार दिया जाता था।[8] आचार्य कौटिल्य ने भी अपने 'अर्थशास्त्र ' में उक्त स्वरूपों का वर्णन किया है, परन्तु साथ ही लिखा है कि शुद्धवध का ही दण्ड दिया जाये। उन्हीं के शब्दों में–

'एते शास्त्रेष्वनुगता: क्लेशदण्डा महात्मनाम्।
अक्लिष्टानां तु पापानां धर्म्य: शुद्धवध: स्मृत:।।'[9]

भारत में मृत्युदण्ड दिये जाने का इतिहास बहुत पुराना है। समय के साथ–साथ इसमें नरमी आयी है। भारत में 1898 में जब दण्ड प्रक्रिया लागू की गई उस समय धारा 367(5) में यह व्यवस्था की गयी थी कि यदि मृत्युदण्ड वाले अपराध में कम सजा दी जाती है तो उनका कारण देना पड़ता था। 1955 में इस धारा में संशोधन करके धारा 367(5) को हटा दिया गया और मृत्युदण्ड की सजा को आजीवन कारावास की सजा में तबदील कर दिया गया। भारत में मृत्युदण्ड को समाप्त करने के लिये सन् 1949, 1952 और 1954 में संसदीय स्तर पर भी प्रयास किये गये किन्तु वे असफल रहे। फिर 1962 में इस मामले को विधि आयोग को सौंप दिया गया। विधि आयोग ने छानबीन कर अपनी 35 वीं रिपोर्ट में मृत्युदण्ड को बनाये रखने के पक्ष में सिफारिश की। इसमें 18 वर्ष से कम आयु के अपराधियों को इस सजा को न दिये जाने की सिफारिश की गयी। इस रिपोर्ट में यह भी कहा गया कि न्यायधीश मृत्युदण्ड की सजा देते समय उन विशेष कारणों का उल्लेख करेगें जिनके आधार पर यह सजा दी गयी।

लेकिन मृत्युदण्ड को समाप्त किये जाने की लड़ाई अभी खत्म नहीं हुई इसको न्यायपालिका के मंच से उठाया गया। 1980 में बच्चन सिंह बनाम् पंजाब राज्य के मामले में उच्चतम् न्यायालय की संविधान पीठ के सामने मृत्युदण्ड को असंवैधानिक बताते हुए इसे संविधान के अनुच्छेद 14,19 और 21 का उल्लंघन माना गया, किन्तु उच्चतम् न्यायालय ने मृत्युदण्ड के प्रावधान को बनाये रखने पर ही अपना निर्णय दिया। इन प्रयासों का यह परिणाम् हुआ कि 1978 में दण्ड प्रक्रिया संहिता में संशोधन कर दो धाराएं 235 (2) तथा 354 (3) जोड़नी पड़ी जिसके अन्तर्गत यह तय हुआ कि मृत्युदण्ड अत्यन्त गंभीर और दुर्लभ मामलों में ही दिया जायेगा।

अब प्रश्न यह उठता है कि वह दुर्लभ परिस्थितियां कौन सी होगी जिसमें मृत्युदण्ड को अवश्यमभावी माना जायेगा। इस बात का उच्चतम् न्यायालय ने बलराज बनाम् उत्तरप्रदेश राज्य के मामले में अति गंभीर अपराधों को निम्न प्रकार से सूचीबद्ध किया–

1. जहां घटना के तथ्य यह साबित करते हो कि अपराधी की मानसिक तैयारी पूर्व निर्धारित थी। अपराधी अत्यधिक शातिर हो और समाज के लिये खतरा जान पड़े।
2. जहां पर अपराध अत्यधिक संगठित ढंग से, ठण्डे दिमाग और बहशियाने तरीके से किया गया हो।
3. जहां निर्दोष और निहत्थे लोगों को शिकार बनाया गया हो।
4. जहां पर बिना किसी उत्तेजना व आक्रोश के हत्या की गयी हो।
5. जहां हत्यारे का कानूनी रूप से अपने शिकार की रक्षा का दायित्व हो।

इसके अतिरिक्त न्यायालय ने इस मामले में यह भी कहा है कि न्यायालय को हर केस में हत्या के कारण और परिस्थितियों की सन्तुलित समीक्षा की जानी चाहिए। संभवत: दण्ड प्रक्रिया संहिता के रचियता ने इन्हीं दो मूल सिद्धांतो को ध्यान में रखकर मृत्युदण्ड पर अपनी लेखनी चलाने से पहले गहरा मंथन करते हुए लिखा है कि– 'हम पूरी तरह इस निष्कर्ष पर पहुंचते है कि मृत्युदण्ड को बहुत ही दुर्लभ मामलों में लागू किया जायेगा। हमारा प्रस्ताव है कि हमें इसे वहीं लागू करना चाहेगे जहां या तो हत्या का मामला हो या राजद्रोह का।'[10] तत्पश्चात् वे सात बिन्दु तय किये गये जिनमें मृत्युदण्ड अधिकतम् सजा के रूप में प्रस्तावित था –

1. भारत सरकार के विरूद्ध युद्ध की घोषणा (धारा–121)
2. राजद्रोह को उकसाना व उसमें भाग लेना (धारा–132)
3. ऐसी झूठी गवाही व सबूत देना जिससे किसी बेगुनाह को फांसी हो जाय।
4. हत्या जिसमें मृत्युदण्ड या आजीवन कारावास संभव हो (धारा–302)
5. किसी नाबालिग, मानसिक रूप से असंतुलित व नशे से प्रभावित व्यक्ति को आत्महत्या के लिये उकसाना (धारा–305)
6. डकैती जिसमें हत्या भी की गयी हो (धारा–396)
7. आजीवन कारावास की सजा भुगत रहे व्यक्ति द्वारा हत्या का प्रयास जिसमें व्यक्ति घायल हुआ हो (धारा–307)

निष्कर्षत: मृत्युदण्ड पर बहस जारी है और राष्ट्रपति महोदय भी फांसी की सजा के पक्ष में नहीं है। बेशक मृत्युदण्ड अमानवीय है किन्तु निर्मम हत्या तथा जघन्य अपराध और बलात्कार करने वाले को इससे कम क्या सजा मिले? बहुत हद तक संभव है कि कानूनो को तोड़–मरोड़कर और झूठी गवाही के आधार पर निर्दोष व्यक्ति को फांसी की सजा दे दी जाये, और एक बार उसका जीवन लेने के बाद वह निर्दोष सिद्ध हुआ तो क्या उसका जीवन पुन: लौटाया जा सकता है। इसका उत्तर है नहीं। अत: मृत्युदण्ड की सजा के

लिये बहुत ही वैज्ञानिक निर्णय लेने की आवश्यकता है। अच्छा यह होगा कि मृत्युदण्ड की सजा को अपराध की गंभीरता के आधार पर आजीवन कारावास अर्थात् मृत्यु तक कारावास की सजा दी जाये और बलात्कारियों के लिये तो एक ही सजा है उन्हें नपुंसक बना दिया जाये।

अन्ततः आज हम जिस समाज में जी रहे है वहां पर नक्सलवाद, आतंकवाद और उग्रवाद जैसी समस्याएं हैं जहां पर मनुष्य को जंगली बनने से रोकने हेतु देश की न्यायपालिका के हाथ में मृत्युदण्ड को एक हथियार के रूप में प्रयोग में लाना ही होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मनुस्मृति, अध्याय : 7, श्लोक-18
2. श्री भारतीय योगी (अनुवादक), कौटिल्य अर्थशास्त्र, बरेली, संस्कृत संस्थान, 1973, पृ. 27.
3. H.P. Fairchild, Dicitionary of Sociology, p. 243
4. प्रतियोगिता दर्पण/अगस्त/2008/152
5. परीक्षा मंथन, 2006-07, पृ. 188-189.
6. एमनेस्टी इंटरनेशनल
7. चार्टर ऑफ फण्डामेण्टल राइट्स ऑफ द यूरोप यूनियन
8. डी.एस. बघेल, अपराधशास्त्र, विवेक प्रकाशन, नई-दिल्ली, 1996 , पृ.210-211.
9. डॉ. धर्मवीर महाजन एवं डॉ. कमलेश महाजन, अपराधशास्त्र, विवेक प्रकाशन, नई-दिल्ली, 2011, पृ. 286.
10. परीक्षा मंथन, सामान्य ज्ञान का वार्षिक सर्वेक्षण, 2006-07, पृ.142

****

गुणवत्ता प्रबंधन में प्रतिभा बैंक - महाविद्यालय शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में

डॉ. सुधा लाहोटी *

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति में शिक्षा उस प्रकाश की भांति है जिसके जाग्रत होने पर व्यक्ति के जीवन का अन्धकार समाप्त हो जाता है तथा विकास का मार्ग खुल जाता है। शिक्षा का ज्ञान बाल्यवस्था से ही प्रारंभ हो जाता है किन्तु विद्यार्थी के व्यक्तित्व का विकास, वैचारिक, मानसिक, चिंतन क्षमता एवं समग्र विकास उच्च शिक्षा प्राप्त करने पर ही होता है। वर्तमान समय में शिक्षा की अनेक विधाएँ जैसे–विज्ञान, रसायन, इतिहास, भूगोल, कानून, चिकित्सा, वाणिज्य, अंतरिक्ष, यातायात, तकनीकी, इलेक्ट्रौनिकी इत्यादि के क्षेत्र में हुए क्रांतिकारी परिवर्तन एवं विकास से व्यक्ति का बहुमुखी विकास संभव हुआ है। उच्च शिक्षा में गुणवत्ता प्रबन्धन एवं विस्तार के माध्यम से वर्तमान शिक्षा पद्धति कहीं न कहीं मूल उद्देश्य को सार्थक करने में सफल रही है।

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में गुणवत्ता लाने हेतु उच्च शिक्षा विभाग द्वारा कुछ लक्ष्य निर्धारित किये गये जिससे विद्यार्थियों में उच्च मूल्यों का विकास, तकनीकी विकास, प्रतिभा एवं कौशल विकास, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक विकास, भाषा सुधार इत्यादि शिक्षा ग्रहण करने के साथ–साथ हो सके। इसी उद्देश्य हेतु विद्यार्थियों के सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास को दृष्टिगत रखते हुए महाविद्यालयों में उनकी प्रतिभा को निखारने के लिए उनके अन्दर निहित विभिन्न विधाओं संबंधी कौशल को विकसित करने की दृष्टि से स्थानीय विशेषज्ञों एवं प्रतिभाओं का सहयोग लेने के लिए प्रतिभा बैंक का गठन किया जाता है।

यह एक ऐसा बैंक है जो हमेशा मूल प्रतिभाओं के साथ निखार एवं विकास का ब्याज देता है। प्रतिभा बैंक के अन्तर्गत विभिन्न विषयों से संबंधित विशेषज्ञ, तकनीकी विशेषज्ञ, साहित्यकार, संगीतकार, उद्योगपति, वकील, हस्तषिल्पी, पत्रकार, शिक्षक, सामाजिक कार्यकर्ता इत्यादि को नामांकित किया जाता है। ये विषय विशेषज्ञ महाविद्यालय में उपस्थित होकर विद्यार्थियों से चर्चा कर अपनी शंकाओं/समस्याओं का समाधान करते है। उनसे नवीन जानकारी प्राप्त करते है, और ज्ञान को अपडेट करते है। इस प्रकार के प्रतिभा बैंक विद्यार्थियों को उनकी रुचि अनुरुप जानकारी प्रदान करते है, उनके कौशल में वृद्धि करने, लक्ष्यों को निर्धारित करने में सहायक होते है।

महाविद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों से चर्चा करने पर ज्ञात हुआ कि प्रतिभा बैंक योजना के अन्तर्गत आयोजित व्याख्यानों से विद्यार्थियों को लाभ प्राप्त हो रहा है। पाठ्यक्रम के साथ ही साथ उनको अपनी रुचि अनुरुप विषय पर जानकारी हासिल हो जाती है। प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी के लिए भी मार्गदर्शन प्राप्त हो रहा है। इस प्रकार निसंदेह प्रतिभा बैंक योजना विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास एवं कौशल उन्नयन में सहायक है।

परम्परा और प्रगति के बीच आज का युवा द्वन्दग्रस्त है। अकादमिक डिग्रियों के साथ आजीविका का प्रश्न भी महत्वपूर्ण है। केवल अकादमिक डिग्री में वह शक्ति नहीं होती कि, विद्यार्थी को जीविका के योग्य पर्याप्त कौशल और हुनर दिखा सके। सिर्फ किताबी ज्ञान या कक्षा से विद्यार्थी को जीवन की विस्तृत दीक्षा नहीं मिल पाती है। आर्थिक उदारीकरण के साथ साथ शिक्षा का परिदृश्य बदला है। आज विद्यार्थियों के सामने आवश्यक कौशल अर्जित करने के क्षेत्र बढ़ गये है। पर्यटन, एविएशन, होटल, पाककला, पब्लिक रिलेशन्स, काउन्सिलिंग, प्रकाशन, अनुवाद, प्रबंध, आडिटिंग, बजटिंग इत्यादि विविध क्षेत्र में रोजगार के अवसर उपलब्ध है।

ये क्षेत्र बौद्धिक संप्रेषणीय, संगठनात्मक, इंटर पर्सनल रिलेशन, विदेशी भाषा को समझाने की योग्यता, गणनीय क्षमता कम्प्यूटर साक्षरता, इत्यादि अनेकानेक विधाओं से संबंधित है।

रोजगार प्राप्त करने के लिए डिग्री के साथ ही विभिन्न विधाओं में पारंगत होना भी आज के समय की मांग है। संवाद क्षमता, नेतृत्व करने और टीम के साथ काम करने की योग्यता, समस्या समाधान करने की क्षमता, कार्यक्रमों को आयोजित करने और चुनौतियों को स्वीकार करने की क्षमता, वर्तमान में जरुरी योग्यताओं की श्रेणी में जानी जाती है। अतएव विद्यार्थी उपाधि प्राप्त करने के साथ–साथ भविष्य की योजनाओं और रुचियों के अनुरुप अतिरिक्त ज्ञान अर्जित करना चाहता है।

महाविद्यालयों में प्रतिभा बैंक के गठन से उसके अन्तर्गत होने वाली संगोष्ठी में विद्धानों के अनुभव, विचार विमर्श और चिन्तन से जो निष्कर्ष निकलते है वे सारगर्भित एवं रोजगार के क्षेत्र में चहुँमुखी विकास करने में सहायक होते है। स्वामी विवेकानन्द जी ने भी कहा है कि 'हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जिससे चरित्र का निर्माण हो, मन की शक्ति बढ़े, बुद्धि का विकास हो, और मनुष्य अपने पैर पर खड़ा हो सके।'

कहते है कि उपयोग के बिना सोना भी पत्थर है ऐसी ही शिक्षा का उद्देश्य प्रतिभा बैंक के माध्यम से पूरा किया जाता है। प्रत्येक विद्यार्थी के अन्दर एक छिपी प्रतिभा होती है जिसमें कठिन परिश्रम के माध्यम से ही उसमें निखार लाया जाता है। इसमें आने वाली मुश्किलें वह आग होती है जिनसे गुजरने पर अशुद्धियॉ दूर होती है। इसी तरह कठिन चुनौतियों एवं प्रतिभा के धनी व्यक्ति विद्यार्थियों के व्यक्तित्व को निखारते है एवं उनको स्वाबलंबी, आत्मनिर्भर तथा समाज में अपना स्थान बनाने के लिए प्रेरित करते है।

अत: उच्च शिक्षा के साथ विद्यार्थियों को शैक्षणिक डिग्री के अतिरिक्त प्रतिभा बैंक के माध्यम से अपनी रुचि के अनुरुप समस्त जानकारी, अनुभव, समस्या, उनसे उबरने के उपाय तथा चारित्रिक निर्माण में संपूर्ण सहायता मिलती है। इसके अतिरिक्त प्रतिभा बैंक के माध्यम से व्याख्यान भी आयोजित किये जाते है जिससे विद्यार्थी का नैतिक, वैचारिक एवं मानसिक स्तर भी ऊँचा होता है।

विद्यार्थी उच्च शिक्षा की उपाधि हासिल करने के अतिरिक्त व्यक्तित्व विकास के साथ कौशल अर्जित करने की कला भी सीखता है। अनेक विषयों

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.) भारत

के ख्याति प्राप्त, शोधोन्मुखी एवं विषय पारंगत विशेषज्ञों से ज्ञानार्जित करके वह अपने ज्ञान से दीपक की लौ प्रज्ज्वलित करके इस समाज को आलोकित कर सकता है। प्रतिभा बैंक के अन्तर्गत आयोजित विचारों से अकादमिक वातावरण में सुधार एवं ज्ञान विज्ञान का माहौल बनता है, साथ ही समाज में भी बौद्धिक वातावरण का पुनर्सृजन होता है। इसमें भूतपूर्व प्रतिभावान विद्यार्थियों के अनुभवों से वर्तमान विद्यार्थियों में आत्मविश्वास एवं मनोबल तो बढ़ता ही है साथ ही साथ उनके लिए वे 'रोल मॉडल' का भी कार्य करते है।

उच्च शिक्षा प्राप्त कर विद्यार्थी नवचेतन एवं निश्चित दिशा लेकर आत्मनिर्भरता की मुख्यभूमि पर आत्मविश्वास के साथ कदम रखने के लिए तैयार हो जाता है तथा अपनी युवा शक्ति की रचनात्मक ऊर्जा को जीवन के नवनिर्माण में प्रयुक्त करने में सफल होता है।

अंत में उच्च शिक्षा में गुणवत्ता एवं निखार लाने के दृष्टि से महाविद्यालयों में प्रतिभा बैंक का गठन एक सकारात्मक एवं महत्वपूर्ण कदम है जिसके माध्यम से विद्यार्थी सृजनात्मक विचारों द्वारा पारितोषिक होता है तथा स्वयं को जीवन के नये आयामों से परिचित कराता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उच्च शिक्षा में गुणवत्ता प्रबंधन - म.प्र.शासन, उच्च शिक्षा विभाग
2. रचना - म.प्र.शासन उच्च शिक्षा विभाग एवं म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी अंक 78 मई,जून 2009
3. रचना - म.प्र.शासन उच्च शिक्षा विभाग एवं म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी अंक 109 जुलाई, अगस्त 2014

****

सीखने की प्रक्रिया एवं व्यक्तित्व विकास

डॉ. उमा लवानिया *

शोध सारांश – सीखने की प्रक्रिया प्रारंभ तब हो जाती है। जब शिशु माँ के गर्भ में होता है शिशु की माँ जिस वातावरण में रहती है विचार करती है। साहित्य पढती है, वैसा ही प्रभाव शिशु पर पड़ता है। इस प्रकार यह प्रक्रिया अचेतन रूप में शिशु के जन्म के पूर्व ही और चेतन के रूप में जन्म के पश्चात से मृत्यु तक जारी रहती है। अत: सीखने की प्रक्रिया जीवन भर चलने वाली एक सामाजिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति समाज में जीवन यापन करने की विधि सीखता है जिससे उसके व्यक्तित्व का विकास होता है तथा वह एक व्यक्ति और समूह के सदस्य के रूप में कार्य करने की क्षमताएं प्राप्त करता है एवं समाज में प्रचलित मूल्यो, प्रथाओं और जनरीतियों को ग्रहण करता है और उन्हें अपने व्यक्तित्व में उतारता है।

प्रस्तावना – संसार में जन्म लेने वाला प्रत्येक मानव एक ऐसा प्राणी है जिसे प्रकृति ने अपनी आवश्यकताओं को स्वयं ही पूर्ण कर सकने की जन्मजात क्षमताएं प्रदान नहीं की हैं। इसलिए न केवल नवजात शिशु को बल्कि उम्रभर व्यक्ति को अपनी आवश्यकताऐं पूर्ण करने, सुरक्षा तथा जीवित रहने के लिए दूसरों पर निर्भर रहना पडता है। किसी एक समाज संस्कृति के अंतर्गत आने वाले लोग व्यवहार करने की जिन विधियों को सीखते हैं। वे सीखी हुई विधियां ही मनुष्यों में पारम्परिक सहयोग तथा पारम्परिक निर्भरता संभव बनाती है। इसके साथ ही व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया प्रारंभ हो जाती है। इस प्रक्रिया द्वारा व्यक्ति समाज में जीवन यापन करने की विधि सीखता है और अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया एक लंबी एवं जीवन भर चलने वाली प्रक्रिया है मनुष्य के लिए यह महत्वपूर्ण प्रक्रिया है क्योंकि इस प्रक्रिया के बिना एक जैविक मानव सामाजिक मानव बन ही नहीं सकता है।

व्यक्तित्व विकास का सीधा संबंध सीखने की प्रक्रिया से जुड़ा हुआ है और सीखने की प्रक्रिया के दो पक्ष होते है सीखने वाला एवं सिखाने वाला। सीखने वाला वह पक्ष है जिसके व्यक्तित्व का विकास होना है एवं सिखाने वाला वह पक्ष है जो सीखने वाले को सहयोग प्रदान करता है किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास किसी एक पक्ष के माध्यम से नहीं होता है बल्कि व्यक्तित्व विकास के समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अनेक साधन हैं– परिवार व्यक्तित्व निर्माण करने की प्रथम पाठशाला है जीवन नहीं प्रारंभिक अवस्था में बालक के व्यक्तित्व निर्माण करने का मुख्य दायित्व परिवार पर ही रहता है। परिवार ही वह समूह है जिसमें बालक सर्वप्रथम भावनात्मक संबंध विकसित करता है। भाषा, सांस्कृतिक, आदर्श, मूलक, आचार–व्यवहार, कार्य आदि सभी बातों को परिवार से ही सीखा जाता है।

भारतीय समाज की संरचना एवं संगठन पाश्चात्य समाज से भिन्न है। भारत में आनुदायिक जीवन तथा हम की भावना को अधिक महत्व दिया जाता है। सामाजिक दृष्टिकोण से व्यक्तित्व विकास में परिवारिक व सामाजिक जीवन में पड़ोस तथा नातेदारी समूह का अत्यधिक महत्व है नातेदारी के माध्यम से व्यक्ति पारस्परिक दायित्व, सहयोग, समन्वय तथा भूमिकाओं का ज्ञान, प्रशिक्षण प्राप्त कर व्यवहारिक रूप में निष्पादित करता है जो उसके व्यक्तित्व विकास का आधार बन जाता है। समवयस्क संगीसाथियों के समूह द्वारा भी व्यक्तित्व का विकास संभव है इस समूह द्वारा व्यक्ति की भाषा का विकास स्वंय को अभिव्यक्त करने की क्षमता विकसित होती है। इसी प्रकार सहयोग, प्रतिरोध, स्वस्थ्य प्रतिस्पर्द्धा, नियंत्रित रहना, नियंत्रण करना, अनुशासन की आवश्यकता, नेतृत्व करने की क्षमता, दूसरों के साथ समायोजन करना, नियम बद्धता आदि गुणों का विकास होता है जो उसके व्यक्तित्व निर्माण में सहायक है।

व्यक्तित्व विकास में विद्यालय, महाविद्यालयों के शिक्षकों का महत्वपूर्ण योगदान होता है क्योंकि इन शिक्षण संस्थाओं के माध्यम से विद्यार्थी का सम्पर्क उस जगत से होता है जो उसके आस–पास के परिवेश से भिन्न है। यह सम्पर्क शिक्षकों द्वारा दिये जाने वाले मौखिक ज्ञान तथा पुस्तकों के माध्यम से होता है इसका संबंध विद्यार्थियों को ज्ञान प्रदान करना तथा उनकी प्रतिभाओं का विकास करना है समाज में शिक्षक विद्यार्थियों को सामाजिक मूल्यों की जानकारी देकर, शैक्षणिक तथा अन्य शैक्षणोत्तर गतिविधियों जैसे– खेलकूद, समाजसेवा, साहित्यक सांस्कृतिक, मनोरंजन परक कार्यक्रम स्वच्छता, समयवद्धता, लगन, परिश्रम, अनुशासन, नम्रता, शिष्टाचार, सहयोग, प्रतिस्पर्द्धा, बड़ो का सम्मान आदि सामाजिक गुणों का विकास करता है।

आज के वैज्ञानिक प्रौद्योगिकीय समय में जनसंचार के साधनों का व्यक्तित्व विकास में अमूल्य योगदान है जनसंचार के साधन तत्काल समस्याओं व घटनाओं सामाजिक परिवर्तनों को जनता तक पहुँचाते है, मनोरंजन, प्रतिस्पर्द्धात्मक सफलताएँ, रोजगार के नए स्त्रोत सौन्दर्य एवं वेषभूषा के प्रतिमान ज्ञान, सुख–सुविधा के भौतिक साधनों के लिए मार्गदर्शन करने की भूमिका, अब परिवार के स्थान पर संचार माध्यमों ने ले ली है। संचार माध्यम कभी–कभी व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव भी डालते हैं जो बालकों व युवाओं को मनोवैज्ञानिक दृष्टि से प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते है इसके लिये आवश्यकता है परिवारिक व सामाजिक नियंत्रण की और उससे भी अधिक जरूरी है व्यक्ति को स्व–अनुशासन में रहकर जनसंचार के साधनों का उपयोग करने की ताकि व्यक्तित्व विकास में इनका उपयोग वाधक नहीं बल्कि साधक बना रहे।

व्यक्तित्व विकास के साधन व्यक्ति के जीवन में यदि सकारात्मक भूमिक का निर्वहन करते हैं तो निष्चित रूप से समाज के विकास में भी व्यक्ति अपना योगदान दे सकता है। व्यक्ति में उन दक्षताओं का विकास हो जाता है जो सामाजिक दृष्टिकोण से आवश्यक है समाज में रहने के लिए यह भी

* सहायक प्राध्यापक, प्रवर श्रेणी, शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

आवश्यक है कि व्यक्ति अन्य लोगों तक अपनी भवनाओं, विचारों, अपेक्षाओं, समस्यायाओं की सरलता, प्रभावी ढंग से पहुँचा सके तथा दूसरो को समझ सके। इस दृष्टि से विभिन्न प्रकार के संकेतों का आदान-प्रदान बोलना, लिखना, पढ़ना आदि का ज्ञान आवश्यक है जो व्यक्तित्व निर्माण के साधनो से व्यक्ति सीखता है एवं स्वयं के लिए परिवार व समाज के लिए उपयोगी सिद्ध होता है। समाज में मूल्यों और विश्वासों की एक विशिष्ट व्यवस्था का प्रचलन होता है। जैसे - भारतीय समाज में एक विवाह, सादगी, सहिष्णुता, विरोधी विचारों के साथ अनुकूल करना, मोक्ष के लिए पिंड दान हेतु पुत्र का होना, विवाह को जन्म जन्मान्तर का संबंध मानना, अपनी ही जाति में विवाह करना, वृद्धों को पूज्यनीय मानना आदि विशिष्ट आस्थाओं व मूल्यों का प्रचलन है। व्यक्ति समाज में रहकर यदि इन आस्थाओं और मूल्यों के महत्व को न समझे तो उसका आचरण समाज विरोधी आचरण की परिधि में आयेगा। व्यक्तित्व विकास के महत्वपूर्ण साधन-परिवार, पड़ोस, शिक्षण संस्थाएँ, धर्म, नातेदारी, संबंध, मित्र मण्डली, जनसंचार के साधन आदि व्यक्तित्व के निर्माण में सहायक है।

अब आप स्वयं विचार कीजिए व्यक्तित्व विकास में आपकी सहायता किसने की ? परिवार, पास-पड़ोस, मित्रगण, शिक्षक आदि। इसी प्रकार आगे के जीवन में विवाह के माध्यम से स्थापित परिवार नौकरी या व्यवसायिक दशाएँ राजनैतिक दल, क्लब सभा समितियाँ आदि तथा धार्मिक व्यवस्थाएँ पत्र-पत्रिकाएँ, रेडियो, दूरदर्शन आदि के माध्यम से व्यक्तित्व विकास होगा। इन सबका योगदान न हो तो हम मात्र जीव रह जायेगें। सामाजिक सांस्कृतिक तथा आर्थिक रूप में आत्मनिर्भर प्राणी नहीं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश लोक सेवा आयोग मध्यप्रदेश राज्य सेवा प्रारंभिक परीक्षा।
2. समाजशास्त्र - डॉ. डी. एस. बघेल।
3. समकालीन उच्चतर समाजशास्त्रीय सिद्धांत - रविन्द्रनाथ मुकर्जी।
4. जनजातिय समाज का समाजशास्त्र- एम.एल गुप्ता, डॉ. डी. डी. शर्मा।
5. समाजशास्त्र- डॉ. ए. पी. श्रीवास्तव।

****

सृजनात्मकता एवं व्यक्तित्व विकास

डॉ. निशा जैन *

प्रस्तावना – सृजनात्मकता वह शक्ति है जो मानव को नई दिशा नई लय, नई जिदंगी तथा नव चिंतन प्रदान करती है। यही शक्ति मनुष्य को नई खोज करने के लिए प्रेरित करती है जिससे विद्यार्थी को व्यक्तित्व विकास होता है। सृजनात्मकता सभी व्यक्तियों में होती है। सृजनात्मकता की स्थिति में विद्यार्थी आत्म निर्देशित दिशा, आत्मानुभूति, आत्म प्रेरणा, आत्ममिव्यक्ति तथा आगे बढ़कर काम करने की विशेषताएँ सन्निहित रहती है। सृजनात्मकता एक ऐसी योग्यता है जो किसी समस्या का विद्धतापूर्ण समाधान करने के लिए नवीनतम विधियों एवं स्थितियों का सहारा लेती है तथा व्यक्ति के रचनात्मक उत्पादन में मौलिकता प्रवाहकता आदि कारक सन्निहित रहते है। सृजनात्मकता एक प्रकार की नियंत्रित कल्पना है जिससे किसी न किसी उपलब्धि को निर्देशन प्राप्त होता है।

सृजनात्मक शक्ति वह शक्ति है जो विद्यार्थी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास करती है। विद्यार्थी को आनंद व संतुष्टि प्रदान करती है। सृजनात्मक शक्ति से विद्यार्थी को शारीरिक, मानसिक व सामाजिक विकास होता है। जिस विद्यार्थी की सृजन शक्ति उत्तम होती है, विभिन्न क्षेत्रों में उनका समायोजन, प्रस्तुति भी उत्तम होती है। कई शोध अध्ययन में दृष्टिगत हुआ है कि सुप्रसिद्ध गायक चोपनि ने 8 वर्ष की आयु में जनता के समाने गायन प्रस्तुत किया। जान स्टुअर्ट मिल ने ग्रीक भाषा का अध्ययन 3 वर्ष की आयु में प्रारंभ कर दिया था और 8 वर्ष की आयु में उसने जीनोकोन, हीरोडोस एवं प्लेटो पढ़ लिया था। इसी प्रकार बहुत कम ही उम्र में (लगभग 3 से 5 वर्ष की उम्र) में ही कम्प्यूटर पर महारथ हासिल करना, नई-नई वेवसाइट तैयार करना, साफ्टवेयर तैयार करना। 10 वर्ष में कक्षा 10 उर्त्तीण करना। गायन, नृत्य और चित्रकारी में नवीन रचनाएँ करना, बाल कवियों द्धारा कविताओं का सृजन करना आदि सृजनात्कता के ही उदाहरण है जो विद्यार्थी के समस्त व्यक्तित्व का विकास करते है।

विद्यालय या महाविद्यालय में विद्यार्थी के व्यक्तित्व विकास को अध्ययन के साथ-साथ सृजनात्मकता से जोड़ने का सार्थक प्रयास शिक्षकों एवं अभिभावक के द्धारा किया जा रहा है। विद्यार्थी के व्यक्तित्व विकास के तीन आधार स्तंभ है-

प्रथम	–	अभिभावक
द्धितीय	–	महाविद्यालय
तृतीय	–	शिक्षक

विद्यार्थी के सृजनात्मकता में अभिभावक की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। अभिभावक अपने बच्चे की सृजन क्षमता पहचान कर उस दिशा में उसे प्रेरित कर सकता है एक ऐसा वातावरण अपने बच्चों को प्रदान कर सकता है जिससे उसकी सृजन क्षमता को बढ़ावा मिले। बच्चों द्धारा बनाए जा रहे मॉडल के साथ-साथ मॉडल तैयार करने में उनकी मदद भी कर सकते है। अपने बच्चों द्धारा सृजन की गई नवीन रचना, नूतन कृति को सदैव सराहना करते हुए निर्देशन व सुझाव दे और अपने बच्चों को स्वतंत्र एवं निर्भय वातावरण प्रदान करे।

परिवार में अभिभावक की भूमिका के उपरांत विद्यार्थी के व्यक्तित्व विकास में महाविद्यालय/ विद्यालय की भूमिका भी अति महत्वपूर्ण है। विद्यालय में विभिन्न पाठ्य सामग्री अध्ययन अध्यापन के साथ-साथ विभिन्न प्रकार की रूचि कक्षाएँ भी संचालित होनी चाहिए। महाविद्यालय में गुणवत्ता प्रकोष्ठ का गठन केरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ का गठन शासन द्धारा विद्यार्थी की 'सृजनशीलता' को बढ़ाने के लिए किया गया जिसमें केरियर के लिए रूचि अनुसार खिलौने बनाना, केनिंग, सिलाई, बुनाई, कढ़ाई, नृत्य, संगीत, वादन, कम्प्यूटर प्रशिक्षण आदि सीखाने का प्रयास विद्यार्थी की सृजन शक्ति बढ़ाना है। विद्यालय या महाविद्यालय में खेल के माध्यम से भी विद्यार्थी में सृजन का नवीनीकरण किया जा सकता है। कम उम्र में ही बच्चे नाटकीय खेलों के माध्यम से अपने दैनिक जीवन की घटनाओं को चित्रित करता है, जिससे उसमें अभिव्यक्ति की क्षमता का विकास होता है तथा संवेगात्मक तनाव दूर हो जाता है। विद्यार्थी कागज पर चित्रकारी करना, पेपर कटिंग करना, फूल बनाना खिलौने बनाना, और कभी-कभी टुकड़ो को जोड़-जोड़ कर उसे नई आकृतियां प्रदान करना आदि माध्यम से रचनात्कता का विकास होता है महाविद्यालय में अभिभावक संघ के साथ समय-समय पर बैठक कर विद्यार्थी की योग्यता को आगे बढ़ाने के तरीको पर चिंतन किया जा सकता है। साहित्यिक सांस्कृतिक गतिविधियों में बौद्धिक एवं रचनात्मक प्रस्तुति के माध्यम से व्यक्तित्व विकास किया जा सकता है। विद्यार्थी को शैक्षणिक खेल के अंतर्गत समसभायिक विषयों पर प्रश्नोत्तरी, समूह चर्चा, प्रश्नमंच, वक्तता वाद-विवाद आदि के माध्यक से उनकी अभिव्यक्ति की क्षमता को निखारा जा सकता है।

अभिभावक एवं विद्यालय की भूमिका के पश्चात् शिक्षक की भूमिका एक विद्यार्थी के व्यक्तित्व विकास के सृजन में मील का पत्थर साबित हो सकती है।एक शिक्षक अपने विद्यार्थी की सृजन क्षमता को पहचान कर उसे सीखाने की पहल कर उसकी सृजनात्मकता को बढ़ावा दे सकता है। विद्यार्थी के विचारो को, कार्यो का मूल्यांकन इस तरह से करे की विद्यार्थी के अंदर अपने व्यवहार के कारण एवं परिणामों को देखने की योग्यता में वृद्धि हो जाए। विद्यार्थी के कलात्मक एवं असाधारण विचारों एवं कार्यो का सम्मान करें उन्हें यह एहसास कराए कि उसका कार्य या विचार शिक्षकों की नजर में कितना महत्त्वपूर्ण है। शिक्षक का विद्यार्थी के व्यक्तित्व विकास में सबसे आवश्यक कार्य यह है कि शिक्षण कार्य करते समय विद्यार्थी की व्यक्तिगत विभिन्नता का ध्यान रखे एवं विद्यार्थी में आत्म विश्वास, स्वतंत्र निर्णय शक्ति तथा साहस का भाव विकसित करे विषय की नवीन जानकारी रखे तथा शिक्षण कार्य में नवाचार के साथ आधुनिकता प्रविधियों का प्रयोग करे ताकि विद्यार्थी की सृजन क्षमता का विकास हो सके।

विद्यार्थी का सृजनक्षमता में अभिभावक शिक्षा के केन्द्र और शिक्षक मिलकर उनमें सृजनात्मकता का विकास करते है तो निश्चित ही एक विद्यार्थी सृजनात्मकता के गुण तर्क, चिंतन, कल्पना, कार्यलेखन, वाचन, अध्यापन एवं अन्य सृजन शक्तियों से आत्म प्रेरित होकर अपने पूर्ण व्यक्तित्व का विकास कर समाज एवं राष्ट्र के हित में सदैव कार्य करेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समाजशास्त्र सामाजिक अंत: क्रियाओं का अध्ययन, परिमल बी.कर जवाहर पब्लिशर, नई दिल्ली।
2. बाल विकास, डॉ. सुमन वाजपेयी, विश्वभारती प्रकाशन, नई दिल्ली।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

मध्यप्रदेश में वन और सुरक्षा

विनीता तिवारी * सविता वर्मा **

शोध सारांश – मानव जीवन के तीन बुनियादी आधार शुद्ध हवा, ताजा पानी और उपजाऊ मिट्टी मुख्य रूप से वनों पर ही आधारित है। इसके साथ ही वनों से कई प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लाभ भी है। खाद्य पदार्थ, औषधियाँ फलफूल, ईधन, पशु आधार, इमारती, लकडी, वर्षा सन्तुलन भू–जल संरक्षण, और मिट्टी की उर्वरता, आँक्सीजन की उपलब्धता आदि प्रमुख हैं। जिसके बिना मानव जीवन का अस्तित्व ही नही हैं मनुष्य के जीवन में वनों की महत्वता चारो दिशाओं में फैली है। हम यह कह सकते हैं, कि जिस प्रकार मानव शरीर में रक्त का प्रवाह होता है। जिसके बिना मानव जीवन सम्भव ही नही हैं। वही कार्य वनों का है।

शब्द कुंजी –(1) सचेत करना = जागरूकता करना (2) संरक्षण = सुरक्षा (3) संर्वधन = विकास (4) सदासेवक = सदैव सेवा करने वाला (5) अनछुए = जिसे छुआ न गया हो

प्रस्तावना – भारत के केन्द्र में स्थित मध्य प्रदेश देश का हृदय स्थल है। मध्य प्रदेश में वन क्षेत्र देश में सर्वाधिक है। जैव विविधता में समृद्ध होने तथा अनेक महत्वपूर्ण नदियों का जलग्रहण क्षेत्र होने के कारण प्रदेश के वन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मध्य प्रदेश में भौगोलिक क्षेत्रफल 3,08,245 वर्ग किमी, एवं वन क्षेत्र 94,689 वर्ग किमी, तथा वन प्रतिशत 30.71 प्रतिशत हैं जो प्रति व्यक्ति वन क्षेत्र 0.51 हेक्टेयर है। अत: प्रदेश के पर्यावरणीय एवं पारिस्थिकीय सन्तुलन तथा जल संरक्षण में प्रदेश के वनों का विशिष्ट योगदान है। यह लाभ हमें निरन्तर तभी प्राप्त होगा, जब 'वनों को सुरक्षित रखते हुए उनसे प्राप्त होने वाले विभिन्न प्रकार के लाभ के बारे में जन साधारण को शिक्षित एवं संचेत करने से ही हम उन्हें सुरक्षित रखने के उद्देश्य की पूर्ति करने में सफल होगे। स्थानीय जन – साधारण को वनों के संरक्षण एवं उनके विकास के महत्व को हृदयगम करने की आवश्यकता है।'[1] वनों का संरक्षण एवं संर्वधन करने के लिए जंगल के विनाश के खिलाफ मुहिम चलाने की आवश्यकता है 'हालाकि हमें इस बात को लेकर स्पष्ट रूख रखना चाहिए, कि म0प्र0 या कोई भी प्रदेश अपनी 22 फीसदी भूमि विकास के लिए इस्तेमाल किए बिना ऐसे ही नहीं छोड़ सकता है। जंगल के विनाश के खिलाफ मुहिम चलाने वाले इस भूमि को देने के पक्ष में नहीं हैं, लेकिन यह बदलाव का समय हैं।'[2]

उद्देश्य –

1) वनों की महत्वता को समझाना।
2) वनों के विकास करने का प्रयास करना।
3) वनों की अनिमितताओं को समझाने का प्रयास करना।

शोध विधि – मध्य प्रदेश में वन और वन सुरक्षा में द्वितीयक स्त्रोत जैसे – पुस्तक पत्रिका, इन्टरनेट बेवसाइट का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण – ' प्रतिवर्ष विश्वभर में तकरीबन 1.3 करोड हेक्टेयर वन नष्ट कर दिये जाते है। इसका जलवायु एवं मनुष्य दोनों पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। यदि वर्तमान स्थिति में वनों का विनाश रोका गया तब भी इन्हें पुन: पल्लिवित होने में कम से कम आगामी तीन सौ वर्ष लगेंगे। वैसे पुनर्वनीकरण ने जोडर तो पकडा हैं, लेकिन हम सभी जानते है, कि जंगल नहीं बगीचे लगाये जाते है।'[3] लोग वास्तविकता से परे होकर दिखावा करते है। मगर वास्तविक रूप से वृक्षारोपण नहीं हो रहा हैं। इसमें लोगों की गलती नहीं है। क्योकि आज पाश्चात सभ्यता का समय है लोग दिखावे में ही विश्वास करते है। उसके पीछे उनकी अच्छाइयों और बुराइयों को पृथक नहीं करते है। हम वनों के महत्व को अभी भी नहीं समझ पा रहे हैं।

इसे बहुत बडी विडम्बना कहा जा सकता है, क्योंकि जो आपकी सेवा में दिन–रात लगा है। जिसका उद्देश्य ही जीव प्राणियों की सेवा करना है हम उसको नुकसान पहुँचा रहे है। भारतीय सभ्यता में ऐसे व्यवहार का कोई स्थान नहीं है। चाहे वह निर्जीव क्यों ना हो। हमें ऐसे सदासेवक वृक्षो को बढावा देना चाहिए। लेकिन अफसोस की बात है, कि 'देश का अधिकारी वर्ग अपने दामन को पाक–साफ बनाये रखने के लिए वन विनाश के दो कारण गिनता रहता हैं। एक तो प्राकृतिक दावानल, दूसरे लकडी काटकर बेचने के व्यवसाय से जुडे गरीब लोग। इस कारोबार से करीब 23 लाख लोगों की रोजी–रोटी चलती है। बहुधा अब प्राकृतिक कारणों से जंगलों में आग बहुत कम लगती है, लगती है, तो उस पर काबू पा लिया जाता है।'[4] वनों की महत्वता को समझने की आवश्यकता हैं। इन्हें अपने जीवन का एक अंग मानते हुए, इनके विकास का प्रयास करना ही हमारा उद्देश्य है।

मनुष्य के अस्तित्व के लिए वन उसी प्रकार आवश्यक है, जिस प्रकार आर्थिक विकास उन्नत जीवन के लिए। अत: जब आर्थिक विकास के प्रयासो के इस बुनियादी तथ्य को ध्यान में नहीं रखते तो ये प्रयास वस्तुत: विकास को नहीं, अपितु विनाश को आमन्त्रित करते हैं। हम तथ्यों को नजर अन्दाज कर अपने व्यक्तिगत तुरन्त की आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु दोहन नहीं शोषण करते जा रहे हैं।

'वानिकी विशेषज्ञ जुरगेन ब्लासेर एवं हेंस ब्रेगसन का अनुमान है, कि वर्षा वनों का अनियन्त्रित कटाव अभी अगले 50 वर्षो तक अनियन्त्रितौर पर जारी रहेगा, क्योंकि इन अनहुए वनों में अभी लकडी और कच्चा माल

* शोधार्थी, शहीद पद्मधर सिंह शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, शासकीय माधव कला, वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

मौजूद हैं। यह प्रवृत्ति तभी रूक सकती है, जबकि वन संरक्षण को कठोरता से लागू किया जाएगा। इसके 300 वर्ष पश्चात् ही विश्व के वन पुनर्जीवित हो पाएगे।'[5] इससे कई वर्षो के आकलन से ज्ञात होता है, कि वनों का विनाश दिन प्रति दिन बढता ही जा रहा है। प्रदेश के वनों पर बढते जैविक दबाव के कारण वन संरक्षण सर्वोच्च प्राथमिकता का विषय है। जन भागीदारी एवं क्षेत्रीय इकाइयों की सक्रियता से वन अपराधो पर नियन्त्रण के लगातार प्रयास किये जा रहे हैं। विभाग द्वारा विगत तीन वर्षो में पंजीबद्ध वन अपराध प्रकरणो का विवरण तालिका क्रमांक - 1 में दर्शित है -

तालिका क्रमांक -1

वर्ष	अवैध कटाई	अवैध शिकार	अतिक्रमण	अन्य	योग
2008	49,912	628	773	9,882	61,195
2009	58,025	740	1017	11,258	71,040
2010	43,382	818	1380	7,312	2,892

www.mpforest.org

'मानव जीवन के तीन बुनियादी आधार शुद्ध हवा ताजा पानी और उपजाऊ मिट्टी मुख्य रूप से वनों पर ही आधारित है। इसके साथ ही वनों से कई प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लाभ भी है। खाद्य पदार्थ, औषधियाँ फलफूल, ईधन, पशु आधार, इमारती, लकडी, वर्षा सन्तुलन भूजल संरक्षण, और मिट्टी की उर्वता, आँक्सीजन की उपलब्धता आदि प्रमुख हैं।'[6] जिसके बिना मानव जीवन का अस्तित्व ही नहीं हैं मनुष्य के जीवन में वनों की महत्व चारो दिशाओं में फैला है। हम यह कह सकते हैं, की जिस प्रकार मानव शरीर में रक्त का प्रवाह होता है। जिसके बिना मानव जीवन सम्भव ही नहीं हैं। वही कार्य वनों का है, लेकिन इसे प्रवाहित करने का कार्य हमारा है। तभी यह हमें रक्त की भाँति सेवाऐं प्रदान करेगा। वनों से अनेक उद्योगों अथवा उद्यमो से लाखो लोगों को रोजगार प्राप्त होता है तथा राष्ट्रीय आय में भी सहायक होते है। विगत वर्षो में उद्यमो के प्रकार की जानकारी व सम्भावित आजीविका के अवसरो की संख्या तालिका क्रमांक-2 में दर्शित है -

तालिका क्रमांक-2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

'इससे यह सिद्ध होता हैं कि पेड़ प्रकृति के देवदूत है, जो प्रकृति चक्र के बदलाव के साथ फल-फूल से शोभायमान होते है। पृथ्वी के जन जीवों को प्राणवायु प्रदान कर कार्बनडाइ ऑक्साइड को ग्रहण करते हैं। पेड़ो के फेफडो उसकी पत्तियां है जो दूसरे जीव जन्तु के लिए भी कार्य करता है। जब की मानव फेफड़ा अपने लिए ताजी हवा को खून तक पहुँचाता हैं। पेड़ो की पत्तियां हवा पानी के साथ भोजन बनाती है। श्वसन क्रिया में पत्तियां कार्बनडाइ ऑक्साइड को वातावरण से सोखती है। पेड़ अपनी पत्तियां से पानी उड़ा कर अपना ताप नियन्त्रित करते है। इससे वातावरण में नमी बनी रहती है। पेड़ो की यह सारी प्रक्रिया प्रकृति को यथास्थित बनाये रखने में सहायक सिद्ध होती है।'[7] यह सम्पूर्ण कार्य मानव हित में होता है, लेकिन लोग वनों को बचाने के बजाय उसे दिन - प्रतिदिन नष्ट ही करते जा रहे है। वनों के विकास की बात तभी बनेगी जब हम वृक्षो को वृक्षारोपण के द्वारा वनों की पूर्ति कर सके। कुछ हद तक वृक्षारोपण बीज बोबाई का कार्य किया जाता है। विगत वर्षो में किये गए वृक्षारोपण की जानकारी तालिका क्रमांक -2 में दर्शित हैं -

वर्ष	ग्रामों की संख्या	रोपित क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)
2007-08	577	13,934
2008-09	227	3,973
2009-10	126	2,826
2010-11	223	10,403

www.mpforest.org.

उपसंहार - 'राष्ट्र की अद्धितीय व अटूट प्राकृतिक सम्पदा और आदिम जातियों की जिजीविषा के प्रमुख साधन रहे जंगल समूचे भारत में तेजी से लुप्त हो रहे है। देश का वन विभाग अब यह दावा कर रहा था। कि भारत के कुल भू-भाग में 19 प्रतिशत जंगल है।'[8] अगर वनों का इसी तरह विनाश होता रहा, तो वह दिन दूर नहीं जब सम्पूर्ण पृथ्वी प्रलय की गोद में समा जाए।

इन समस्याओं का अगर समय रहते समाधान नहीं किया गया तो शायद, हमें भविष्य में सोचने का मौका न मिले, इसलिए हमें वनों का संरक्षण और संवर्धन करना होगा। क्योकि 'वन क्षेत्रो का बढ़ना वन उत्पादो की जरूरतो को पूरा करना जड़ी-बूटियों से बनी दवाओं का निर्यात, रोजगार के अवसर उत्पन्न करना वन क्षेत्रो के निवासियों की गरीबी को दूर करना पर्यावरण संरक्षण को स्थायी रूप देना, लकड़ी से भिन्न अन्य संसाधनों, नीति, विधायी उपायों और बजटीय सहायक को मजबूत करना आज समय की मांग हैं।'[9]

सुझाव - प्रत्येक व्यक्ति को प्रण लेना चाहिए कि वह वृक्षो की सुरक्षा व विकास का पूर्ण प्रयत्न करेगें। क्योंकि वह तभी हमारा साथ देगें जब हम उन वनों के साथ होगें। वृक्षों को लगाना है। वनों को बचाना है। इस प्रण के साथ हमें यह प्रयत्न करना है कि अधिक-अधिक वनों का विकास हो सके। किन्तु हमें इसके लिए प्रत्येक व्यक्ति की मानसिकता को बदलना होगा। उन्हें वनों की प्रति सकारात्मक विचार देना होगा।

वनों को नया जीवन देने के लिए अनोखे उपाय का समाचार कुछ समय पहले उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जिले से मिला यह प्रयास विशेषकर उन वनों के लिए अनुकरणीय है। जहाँ वृक्षो का व्यापारिक कटान तो हुआ है। पर इन वृक्षों का कुछ (ढूंढ) हिस्सा बचा हुआ है। यहाँ नागवा पंचायत के आदिवासियों ने कटान के क्षेत्र में वन को नव जीवन देने के लिए समितियों का गठन किया। जितने भी पेड़ काटे थे, उनके कल्ले निकालने के लिए मई व जून माह में स्थानीय स्तर पर मिलने वाली जडी-बूटीयों का लेप लगाकर बोरो से बांध दिया गया पूरे चार माह तक बोरे बंधे रहने के बाद इन पेड़ो में से नए कल्ले निकलने शुरू हो गए इस तरह दो-तीन वर्षो तक कटे पेड़ो की रक्षा करने पर बहुत उत्साह वर्धक परिणम मिले है।'[10]

परन्तु चिन्ता का विषय यह है कि जहाँ 'हम एक विरोधाभाषी समय के साक्षी है। एक ओर सारी दुनिया में हरियाली बचाने के लिए जोर-शोर से प्रचार हो रहा है। वही दूसरी ओर जिस तरह जंगलो और शहरो में पेड़ो को काटा जा रहा है। उससे यह लगता है, कि आने वाले वर्षो में हमने कृतिम प्राणवायु पर रहने की तैयारी कर ली है।'[11]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ सिंह, नीता 'पर्यावरणीय शिक्षा एवं वन संरक्षण'पर्यावरण विकास जुलाई 2006 पेज नं.- 18
2. सुनीता नारायण 'वन सुरक्षा हो साथ तो बने विकास की बात' पर्यावरण विकास जुलाई 2011 पेज नं.- 5

'जहर का कहर' चुनौतियाँ एवं प्रबंधन - इंदौर नगर के विशेष संदर्भ में

डॉ. दिवाकर प्रसाद चतुर्वेदी *

प्रस्तावना – वातावरण के अथवा जीव मंडल के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों के ऊपर जो हानिकारक प्रभाव पड़ता है, प्रदूषण कहलाता है। भू-प्रदूषण प्रौद्योगिक युग की नई समस्या है। भू-प्रदूषण से भूमि की प्राकृतिक गुणवत्ता तथा उपयोगिता नष्ट हो जाती है। यह प्राकृतिक व मानवीय दोनों कारणों से संभव है। विषैले रसायन तथा आपतनशील कचरा मानवजन्य कारण है। प्राकृतिक कारक सीमित, सामायिक तथा कुछ समय बाद प्राकृतिक संतुलन बिठाकर शांत हो जाते हैं, किन्तु मानवीय कारक बहुत तीव्रता से बड़ी मात्रा में प्रदूषण फैला रहे हैं, जिसकी विकृति से आज जीव और वनस्पतियों को भारी क्षति हो रही है।

Waste - Anything which does not add value to a product or service in any activity, whether manufacturing or non-manufacturing is considered a waste.

Classification of Waste -

General Waste - A General Waste is produced within the domain of local authorities and comprises rubble, domestic, commercial and non-hazardous industrial waste. It may contain small quantities of hazardous substances dispersed within it, e.g. batteries, insecticide and other pesticide residues in containers and medical waste discarded on domestic and commercial premises.'

Domestic Waste - Domestic waste is a waste from householders which cannot be recycled, composted, reused or disposed of by other means.

- This waste is generated as consequences of household activities such as the cleaning, cooking, repairing empty containers, packaging, huge use of plastic carry bags.
- There is no system of segregation of organic, inorganic and recyclable wastes at the household level.

Hazardous Waste - `A Hazardous Waste is a waste which because of its quantity, chemical or infectious characteristics may cause ill health, increased mortality, or adversely affect the environment, or pose an immediate threat, and exhibits the characteristics of corrosively, toxicity, flammability, volatility, explosively or radioactivity.'

Classification of Hazardous Waste -

Explosive, e.g. Dynamite
Flammable, e.g. Acetone
Corrosive, e.g. Sulphuric Acid
Radioactive, e.g. Nuclear fuel
Poisonous, e.g. Arsenic
Oxidizing, e.g. Hydrogen peroxide
Biologically active, e.g. Antibiotics.

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य नगरों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थ, समस्या की ओर ध्यान आकर्षित करना है। समस्या से पर्यावरण पर आने वाले संकट से पहचान कराना है। अपशिष्ट पदार्थों का कैसे प्रबंधन तथा निस्तारण किया जाये? इस ओर सुझाव प्रेषित करना है।

शोध विधि – समग्र के चुनाव के लिए बहुस्तरीय निर्देशन पद्धति का उपयोग किया गया है। अध्ययन हेतु मध्य प्रदेश के इन्दौर शहर का चयन किया गया है। नगर निगम के अनुसार इन्दौर शहर 85 वार्डों में बटा है। 2001 राजपत्र सूची के अनुसार इन्दौर में 229 गंदी बस्तियाँ पाई जाती है। प्रस्तुत अध्ययन में प्राईमरी तथा सेकेण्ड्री डाटा का प्रयोग किया गया है।

परिणाम एवं परिचर्चा– इन्दौर शहर से निकलने वाला कचरा चार प्रकार का है- (1) घरेलू अपशिष्ट (Domestic Wastes) (2) नगर पालिका अपशिष्ट (Municipal Wastes)(3) औद्योगिक अपशिष्ट (Industrial Wastes) (4) कृषि अपशिष्ट (Agricultural Wastes)

उक्त सभी प्रकार के अपशिष्टों के दो वर्ष बनाये जा सकते है-

(1) जैविक अपघटित व्यर्थ पदार्थ (Bio Degradable Wastes)
(2) अपतनशील व्यर्थ पदार्थ (Non-degradable Wastes)

(1) जैविक अपघटित व्यर्थ पदार्थ (Bio Degradable Wastes)– यह ऐसे कार्बनिक अपशिष्ट है जिन पर बैक्टीरिया और अन्य सूक्ष्म जीवाणुओं का पोषण होता है। धीरे-धीरे यह अपघटित हो जाता है। यद्यपि इनसे हाइड्रोजन सल्फाइड, कार्बन डाइ ऑक्साइड, मीथेन तथा विभिन्न दुर्गन्धयुक्त गैसे बनती हैं जो प्रदूषण करती हैं किंतु पुन: चक्रीकरण प्रक्रिया में आ जाते है। इनमें कागज, गत्ता, लकड़ी, पत्तियाँ कपड़ों के टुकड़े, सड़े-गले फल, छिलके, गुठलियाँ, मांस-सब्जियाँ, भोजन, जूठन तथा मानव मल, पशुशालाओं का गोबर, चारा, लीद, मृत पशु हैं; इस प्रकार के व्यर्थ पदार्थ से दृश्य-भूमि अस्वच्छ होती है। बड़ी दुर्गन्ध फैलती है। मच्छर, मक्खी, कीड़े-मकोड़ों तथा चूहों की संख्या बढ़ती है। गंदगी के कारण विभिन्न बीमारियों के कीटाणु तेजी से पनपते हैं। आन्त्रशोध, हैजा, टायफाइड तथा आँखों के विभिन्न रोग नेत्रश्लेष्मा शोध (Conjuctivities) तथा तपेदिक जैसे कीटाणुओं की वृद्धि होती है। मानव मल समुचित निष्कासन न होने के कारण टाईफायड, पैराटाईफायड, पेचिस, आंत्रशोध जैसी बीमारियाँ जन्म लेती हैं जो ' जैव निम्नीकरण योग्य (Bio Degradable) नहीं है। अत: यह पारिस्थितिक प्रणाली के लिए वर्षो तक खतरा बने रहेंगे।

(2) अपतनशील व्यर्थ पदार्थ (Non-degradable Wastes)– इनके अन्तर्गत ऐसे अकार्बनिक पदार्थ अथवा अपक्षरित पदार्थ लवण धातुएँ आदि है जो दीर्घ अवधि तक यथावत बनी रहती है अथवा जिनके गलने में बहुत अधिक समय लगता है। जैसे जमीन में गाड़ देने पर भी काँच की बोतल दस लाख वर्षो तक रह सकती है। वस्तुत: आज व्यर्थ पदार्थ एकत्रीकरण की

* प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय माधव विज्ञान महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

समस्या का भयावह रूप इनके कारण ही है क्योंकि यह पदार्थ प्रकृति के पुन: चक्रीकरण में बाधा उत्पन्न कर प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ते हैं। इसमें संश्लेषित प्लास्टिक कचरा, प्लास्टिक की थैलियाँ आदि, रबड़, धातुओं के टुकड़े, कांच, राख तथा अग्नि-मिट्टी, क्रॉकरी के टुकड़े तथा विभिन्न रसायनिक विषैले तत्व एवं रसायन है जिनका उत्पादन बहुत तेजी से बढ़ रहा है। कांच, प्लास्टिक, चीनी मिट्टी ये तीनों नगरीय अपशिष्ट समस्या का मूल कारण है।

इन्दौर शहर का ठोस अपशिष्ट पदार्थ नगर निगम के माध्यम से इन्दौर बायपास देवगुड़िया ट्रेचिंग ग्राउण्ड पर पहुँच रहा है। शहर में किस तरह का कचरा निकलता है? उसकी कुछ प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं -

11 प्रतिशत मलवा - जिसका कोई प्रबंधन इंदौर शहर में नहीं है।

26 प्रतिशत कचरा - रिसाइकिल होने वाला प्लास्टिक, लोहा आदि।

63 प्रतिशत कचरा (665 टन) - घरों, बाजारों, व्यापार से निकलने वाला कचरा जिसका प्रबंधन वर्तमान नगर निगम कर रहा है।

कचरा प्रबंधन हेतु नगर निगम का विगत छह वर्षों वार्षिक बजट

वर्ष	आवंटित धनराशि (करोड़ रू. में)
2009-10	90.00
2010-11	60.25
2011-12	67.00
2012-13	12.00
2013-14	44.20
2014-15	41.00

म.प्र. पाल्यूशन कंट्रोल बोर्ड ने हाईकोर्ट में एक रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसके अनुसार देवगुड़िया ट्रेचिंग ग्राउण्ड का 4 वर्ग किलो मीटर क्षेत्र अत्यधिक प्रदूषण से ग्रस्त है। यहाँ प्रतिमाह 25000 मैट्रिक टन कचरा फैका जाता है, जहाँ केवल 4500 मैट्रिक टन प्रतिमाह कचरे का निपटान होता है। इन्दौर नगर निगम के कमिशनर राकेश सिंह भी मानते हैं कि यह पर्याप्त नहीं है। नगर निगम की घोर लापरवाही तथा अव्यवस्था से गुस्से में हाईकोर्ट ने ये व्यवस्था कलेक्टर की देखरेख में सौंप दी है। ट्रेचिंग ग्राउण्ड के पास सैकड़ों वैध अवैध तरीके से बसी कॉलोनी है। कॉलोनी के नागरिक सैकड़ों की संख्या में अस्वस्थ्य हो रहे है। कचरे के सड़ने-गलने तथा जलने से दर्जनों कॉलोनी वाले बीमार पड़ गये हैं। कालिन्दी टाउन के रहवासी दिसम्बर 2014 के तीसरे सप्ताह से निरंतर आन्दोलन कर रहे है। धरना प्रदर्शन, ट्रैफिक जाम के साथ जुलूस की शक्ल में चेतावनी भरे शब्दो में चिल्ला रहे है। **कचरे के जहरीले धुएं से घुट रही हजारों जिन्दगी, आबोहवा तो बिगड़ी ही विकास कार्य भी रूके, 475 करोड़ का बायपास भी होने लगा कचरा घर, 50 हजार लोगों की सेहत से खिलवाड़।** बच्चे भी आन्दोलन में कूद पड़े बोले-क्या हमें बीमार कर मारना चाहते हो? अफसरों से सवाल किए ट्रेचिंग ग्राउण्ड में कचरे का निपटान सही तरीके से क्यों नहीं किया जा रहा। जहरीले धुएं के विरोध में कई बार चक्का जाम किया गया। मौके पर **डॉक्टर बोले (डॉ. राकेश शुक्ला) ट्रेचिंग ग्राउण्ड से कैंसर, ब्रोंकाइटिस, गंभीर बीमारियाँ तथा अस्थमा का खतरा है** A Times of India ने 22 दिसम्बर 2014 को लिखा **Garbage Burning-Cong MLA back protest.** IMC promises to Raise Resource to check pollution at devguradia Trenching Ground. पत्रिका ने लिखा **वन विभाग ने तैयार की थी करोड़ों की योजना ट्रेचिंग ग्राउण्ड ने रोप वे का भी कर दिया कचरा।** 15 दिसम्बर 2014 को दैनिक भास्कर ने लिखा - **ट्रेचिंग ग्राउण्ड धुएँ से सांस लेना मुश्किल बच्चों के साथ बायपास पर उतरे रहवासी।** 15 दिसम्बर 2014 को Times of India ने obIm Residence Near Devguradia Protest burning of Wastes.

निष्कर्ष - इन्दौर नगर की ट्रेचिंग ग्राउण्ड पर कचरे की समस्या को मुम्बई में किये गये प्रयोगो को आजमाकर निपटाया जा सकता है। इन्दौर के ये कचरे के पहाड़ों को पूरी तरह समाप्त किया जा सकता है।

भाभा ऑटोमिक रिसर्च सेन्टर (BARC) शहरों और कस्बों में घरों से निकलने वाले मल व कीचड़ (स्लज) को लोग और नगर पालिकाएँ समस्या समझती रही है। अब देश के अग्रणी वैज्ञानिक संस्थान भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र (बार्क) ने इस समस्या को पूर्णतया स्वदेशी तकनीक से समाधान में बदलने का रास्ता खोज लिया है।

बार्क ने अपने रेडियेशन टेक्नोलाजी डेवलपमेंट डिविजन के प्रमुख डॉ. ललित वार्ष्णेय के नेतृत्व में स्लज को कृषि उपयोगी खाद में बदलने का रास्ता ढूँढा है। एक रूपए प्रति किलो से भी कम कीमत पर यह खाद किसानों को बेचकर न सिर्फ किसानों की समस्या का समाधान हो सकता है, महानगरों का स्लज कोबाल्ट-60 की छड़ों के गामा विकिरण से गुजर कर बोरियों में बन्द बदबू रहित खाद में बदल कर हमारे खेतों की हरियाली बन सकता है।

15 करोड़ की लागत से 100 टन क्षमता वाली इकाई - डॉ. वाष्णेय के अनुसार शहर या शहर से बाहर किसी कोने में मात्र 5000 वर्ग फीट भूखंड पर सिर्फ 15 करोड़ की लागत से प्रतिदिन 100 टन क्षमतावाली इकाई लगाई जा सकती है। जहां एसटीपी इकाईयों या नगर पालिका कर्मचारी नालों-नालियों से निकाले गए सूखे स्लज के ढेर को स्वचलित विकिरण प्रणाली से खाद में बदला सकते हैं। इस तरह तैयार खाद में नाइट्रोजन आदि तत्व मिलाकर उनके विभिन्न प्रकार भी तैयार हो सकते हैं। मुम्बई में 2003 में यह प्रयोग किया गया था। वैज्ञानिक एस.आर. भाले और बिजरू मंदरा ने महज 60 दिन में 80 फीट ऊँचे कचरे के पहाड़ को खत्म कर उससे उपयोगी खाद् बना दी थी। दोनों वैज्ञानिकों ने 80 फीट ऊँचे पहाड़ के कचरे को एक हैक्टेयर जमीन पर फैला दिया, इसमें गीला तथा सूखा दोनों तरह का कचरा शामिल था । फिर मैदान में फैले कचरे पर बैक्टीरिया और हर्बल कैमिकल मिलाकर बनाया गया एक लिक्विड डलवाया। कुछ दिनों बाद गीला कचरा मिट्टी के रूप में आ गया और सूखा कचरा अलग हो गया। सूखे कचरे को अलग कर उसे रिसायकल किया गया। 60 दिन में गीला कचरा खाद बना, इस प्रक्रिया में करीब 10 लाख रूपये खर्च हुए।

मानव और उसके सम्पूर्ण पारिस्थितकीय (Eco System) परिवेश को शनै:-शनै: घातक सिद्ध होते जा रहे ठोस अपशिष्ट पदार्थ रूपी दानव के शिकंजे से मुक्त होने के प्रयास अब युद्ध स्तर पर किये जाने चाहिए। कचरा प्रबंधन के कुछ महत्वपूर्ण तथ्य इस प्रकार है-

424 नगर निगम (देश भर में) 1 लाख 60 हजार टन कचरा रोज निकलता है।

2300 करोड़ 1 वर्ष में कचरे से निपटाने के लिए देश में खर्च होते है।

90 लाख टन खाद 1 साल में बन सकती है।

27 हजार करोड़ रूपये का फायदा हो सकता है।

45 लाख एकड़ भूमि को एक वर्ष में उपजाऊ बनाया जा सकता है।

इस प्रकार ठोस अपशिष्ट पदार्थ के उचित प्रबंधन से देश को विकसित किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. **Muktikanta Mohanty**, Macmillan's – G.K. 2010.
2. **कौशिक एस.डी.** (1985), मानव भूगोल रस्तोगी प्रकाशन मेरठ
3. World Development Report (1991) Oxford University Press
4. **पर्यावरण अध्ययन,** डॉ. नरेन्द्र मोहन अवस्थी, 2006
5. **पर्यावरण चेतना –** प्रो. धनंजय वर्मा, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल 2011
6. **पर्यावरण शिक्षा –** डॉ. पंकज श्रीवास्तव म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
7. **हमारा पर्यावरण –** पर्यावरण एवं विज्ञान प्रकोष्ठ, गांधी प्रतिष्ठान, नई दिल्ली
8. **पत्रिका, दैनिक भास्कर** - Times of India, 15 से 23 दिसम्बर 2014 (रिपोर्ट)
9. **कहाँ खर्च हुए दस हजार करोड़ –** पत्रिका 30.12.2014
10. **रिपोर्ट प्रशांत कालीधार, हरिनारायण शर्मा –** दैनिक भास्कर, 15.1.2015
11. **बार्क ने निकाला सीवेज से उपजाऊ खाद का रास्ता**–राज एक्सप्रेस, 10–15 जनवरी 2015

****

जनजातियों एवं गैर-जनजातियों में कृषि नवाचार का तुलनात्मक अध्ययन (मध्य प्रदेश के धार जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. मेकुसिंह निगवाल *

प्रस्तावना – कृषि लंबे समय से भौगोलिक अध्ययन की विषय वस्तु रही है। भारत की कुल आबादी का दो तिहाई से अधिक भाग गॉवों में निवास करती हैं और ग्रामीण आबादी का उतना ही भाग कृषि एवं उससे संबंद्ध व्यवसायिक गतिविधियों पर निर्भर होकर अपना जीविकोपार्जन कर रहा है। इनकी आय का मुख्य स्त्रोत कृषि है, साथ ही अन्य व्यवसायिक विकास का आधार भी कृषि ही है।

कृषि के विकास के लिए कृषि नवाचार का उपयोग अनिवार्य है, तभी उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाना संम्भव होगा। दास गुप्ता (1989,12) के अनुसार उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाने के लिए नवाचार के साथ-साथ आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक सुधार और कृषि विपणन आवश्यक है, जो ग्रामीण क्षेत्रों में नवाचार के लिए अहम् है किन्तु इस क्षेत्र के सभी किसान नवाचार से अनभिज्ञ है, क्योंकि ग्रामीण इन आधुनिक तकनीकी, तरीके तथा जानकारी के अभाव में उन्नत कृषि कार्य करने में असमर्थ रहे है। इसका प्रमुख कारण आर्थिक रूप से असमर्थ, अशिक्षा तथा संचार का अभाव रहा है। ऐसे में दूर-दराज क्षेत्र के निवासियों को राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़ने का मूल उद्देश्य है।

प्रारम्भ से जनजातीय समुदाय दूर-दराज तथा बीहड़ क्षेत्र में निवास कर कृषि कार्य करते आ रहे है। शुरूआती दौर में जंगल को जला कर एवं वृक्षों को काटकर व साफ कर कृषि कार्य प्रारम्भ किया तद्पश्चात इनके द्वारा स्थानांतरित कृषि कार्य को अपनाया गया। अंतत: स्थाई कृषि का स्वरूप निर्मित हुआ। इसी के परिणामस्वरूप ये जनजाति समुदाय आधुनिक तकनीकी से कोसों दूर रहे है।

शोध अध्ययन का क्षेत्र -मध्यप्रदेश के धार जिले में कुल सात तहसील में समाहित है जिसमें कुल 13 विकास खंड में से 12 विकास खंड़ जनजातीय बाहूल्य है। धार जिले की तहसीलवार जनसंख्या एवं जनजातीय जनसंख्या (2001 जनगणनानुसार) निम्नलिखित है

क्र.	तहसील	कुल जनसंख्या	जनजातीय जनसंख्या
1.	धार	431636	149197
2	बदनावर	193688	69324
3.	कुक्षी	356206	263145
4.	मनावर	254924	159337
5.	सरदारपुर	230251	128947
6.	गंधवानी	122172	110438
7.	धरमपुरी	151452	68046

स्त्रोत-जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2010

अध्ययन का उद्देश्य -

- जिले में जनजातीय एवं गैर-जनजातीय कृषकों की स्थिति का अध्ययन करना।
- जिले में जनजातीय एवं गैर-जनजातीय कृषकों के द्वारा कृषि में अपनाये गये नवाचारों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- जिले में जनजातीय एवं गैर-जनजातीय कृषकों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- जिले में जनजातीय एवं गैर-जनजातीय कृषकों के द्वारा कृषि में अपनाये गये नवाचारों से इनके जीवन पर सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभाव का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि - प्रस्तुत शोध अध्ययन में (2001 की जनगणना के अनुसार) जिले की तहसील, विकासखंड़ एवं ग्रामों के आधार पर देव निर्देशन विधि का उपयोग किया गया।

- प्रथम चरण में प्रत्येक तहसील के 60 प्रतिशत से अधिक जनजातीय जनसंख्या के आधार पर एक ग्राम तथा उसी आधार पर एक सामान्य जाति की जनसंख्या वाले ग्राम का चयन कर 40 उत्तरदाताओं का चयन किया गया।
- द्वितीय चरण में 08 जनजातीय बहुल गॉवों में से प्रत्येक गॉव से 40 कृषक परिवार (08 X 40 = 320) तथा 08 गैर-जनजातीय गॉव में से भी 40 कृषक परिवार (08 X 40 = 320) = 640 उत्तरदाताओं का चयन कर साक्षात्कार के माध्यम से जानकारी संकलित की गई।

तालिका क्रमांक-1

कृषि नवाचार का उपयोग

क्रमांक	नवाचार का उपयोग	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1	हॉ	489	76.41
2	नहीं	151	23.59
	योग	640	100.00

स्त्रोत- 640 कृषक परिवार का सर्वेक्षण।

उपर्युक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट है कि 76.41 प्रतिशत उत्तरदाता ने नवाचार को अपनाया है, जबकि 23.59 प्रतिशत उत्तरदाता ने नवाचार का उपयोग नहीं किया हैं। अत: स्पष्ट है कि 23.59 प्रतिशत उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण वे आज भी परम्परागत कृषि संसाधनों का उपयोग कर अपना जीवन निर्वाह कर रहे है। साथ ही उनकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थिति भी परम्परागत पायी गई हैं।

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला-उज्जैन (म.प्र.) भारत

तालिका क्रमांक–2

कृषि नवाचार

समुदाय	कुऐं		विद्युत पंप		डिजल पंप	
	उत्तरदाता	%	उत्तरदाता	%	उत्तरदाता	%
जनजातीय	229	71.56	211	65.9	419	5.94
गैर जनजातीय	260	81.25	269	84.0	628	8.75
योग	489	76.40	480	75.00	47	7.34

स्त्रोत– 640 कृषक परिवार का सर्वेक्षण।

तालिका क्रमांक 2 से स्पष्ट हैं कि अध्ययन क्षेत्र में 71.56 प्रतिशत जनजातीय कृषकों द्वारा कुओं के माध्यम से सिंचाई की जाती है, जबकि 81.25 प्रतिशत गैर जनजातीय कृषकों द्वारा कुओं के द्वारा सिंचाई की जाती है। इसी प्रकार 65.94 प्रतिशत जनजातीय कृषक तथा 84.06 प्रतिशत गैर–जनजातीय कृषक सिंचाई के लिए विद्युत पंप का उपयोग करते है। साथ ही 5.94 प्रतिशत जनजातीय कृषक व 8.75 प्रतिशत गैर–जनजातीय कृषक द्वारा डिजल पंप का उपयोग करते है।

अत: दोनों समुदाय का तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि कुओं के माध्यम से सिंचाई का प्रतिशत जनजातीय कृषकों से अधिक है। अध्ययन के दौरान जनजातीय उत्तरदाताओं का कथन है कि उनके पिताजी रहट (मोट) के द्वारा सिंचाई करते थे जबकि इनके द्वारा मोटर पंप से की जाती है। इससे स्पष्ट है कि नई पीढ़ी के द्वारा नवाचार का उपयोग करने लगे है। इसी प्रकार 65.94 प्रतिशत जनजातीय कृषक एवं 84.06 प्रतिशत गैर जनजातीय कृषक द्वारा विद्युत पंप के माध्यम से सिंचाई की जाती है। जनजातीय कृषक के द्वारा यह जो नवाचार अपनाया जा रहा है, वह शहरी क्षेत्रों के आस–पास स्थित ग्रामों में आर्थिक रूप से सम्पन्न परिवारों द्वारा इनका उपयोग किया जा रहा हैं। जबकि दूर–दराज ग्रामों में नवाचार नहीं के बराबर है।

निष्कर्ष –

- प्रस्तुत अध्ययन में 76.41 प्रतिशत उत्तरदाता कृषि नवाचार को अपना रहे है, वहीं 23.59 प्रतिशत उत्तरदाता कृषि नवाचार से अनभिज्ञ है। उत्तरदाताओं ने साक्षात्कार के दौरान बतलाया कि वे कृषि नवाचार को अपनाने के लिए तैयार है, किन्तु कम ब्याज दर पर ऋण अथवा अनुदान के अभाव में इनका उपयोग नहीं कर पा रहे है।
- दोनों समुदाय का तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि कुओं के माध्यम से सिंचाई का प्रतिशत जनजातीय कृषकों से अधिक है। अध्ययन के दौरान जनजातीय उत्तरदाता का कथन है कि उनके पिताजी रहट (मोट) के द्वारा सिंचाई करते थे,जबकि इनके द्वारा मोटर पंप से की जाती है। इससे स्पष्ट है कि नई पीढ़ी नवाचार का उपयोग करने लगी है।
- 65.94 प्रतिशत जनजातीय एवं 84.06 प्रतिशत गैर जनजातीय कृषकों द्वारा विद्युत पंप के माध्यम से सिंचाई की जाती है। जनजातीय कृषक के द्वारा यह जो नवाचार अपनाया जा रहा है, वह शहरी क्षेत्र के आस–पास स्थित ग्रामों में आर्थिक रूप से सम्पन परिवारों द्वारा इनका उपयोग किया जा रहा हैं। जबकि दूर–दराज ग्रामों में नवाचार नहीं के बराबर है।
- 5.94 प्रतिशत जनजातीय व 8.75 प्रतिशत गैर–जनजातीय कृषकों के द्वारा डीजल पंप का उपयोग किया जाता है अर्थात् दोनों समुदाय में डीजल पंप का उपयोग धीरे–धीरे कम होता जा रहा है। यह नवाचार दूर–दराज के उन्हीं क्षेत्रों में उपयोग किया जा रहा है, जहॉ बिजली की सुविधा का अभाव है, साथ ही विद्युत सुविधा वाले ग्रामों में पर्याप्त समय विद्युत उपलब्ध नहीं रहने के कारण इसका उपयोग किया जा रहा है।

सुझाव –

- जनजातीय एवं गैर–जनजातीय क्षेत्र में शासन, एन. जी. ओ तथा प्रशिक्षित कृषकों के माध्यम से नवाचार से संबंधित सभी तकनीकी का उपयोग करने के बारे में प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ताकि यह समुदाय नई – नई तकनीक का उपयोग कर राष्ट्र की मुख्य धारा से जुड़ सके।
- चूंकि धार जिला जनजाति बाहुल्य क्षेत्र है, जहॉ शासन द्वारा कृषि नवाचारों के लिए अनुदान देकर नवीन तकनीक का अधिक से अधिक उपयोग पर बल दिया जाना चाहिए। साथ ही गरीब रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले कृषकों को न्यूनतम या रियायती दर पर ऋण अथवा अनुदान पर उपलब्ध करवाया जाना चाहिए ताकि गरीब व कमजोर वर्ग के कृषक भी नवाचार का लाभ उठा सके जिससे उनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हो सके।
- शासन को समय–समय पर कृषि मेला, शिविर, प्रदर्शनी, कार्यशाला तथा ऋण एवं अनुदान शिविर इत्यादी का आयोजन करते रहना चाहिए।
- नवाचार से संबंधित संचार माध्यमों टीवी, रेडियों, समाचार पत्र, पत्र–पत्रिकाओं एवं होर्ड़िग के माध्यम से अधिक से अधिक प्रचार–प्रसार किया जाना चाहिऐ ताकि सीमांत एवं लघु कृषक नवाचार से अवगत हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सिंह, जी.बी., 1997, कृषि का आधुनीकिकरण; पंजाब का एक अध्ययन, विशाल प्रकाशन, कुरूक्षेत्र, पृष्ठ–117।
2. विश्वकर्मा, डी. डी., 2003, कृषि विकास मापकों का अनुकूलन, नई दिल्ली, नार्दर्न बुक सेन्टर, पृष्ठ–45
3. शर्मा, एस. के. एवं जैन, सी. के., 1980, सिचाई के लिए जल संसाधनों का उपयोग तथा कृषि का विकास, पृष्ठ–465
4. जैन, सी. के., 1988, म. प्र. में कृषि विकास का प्रतिरूप, नई दिल्ली, नार्दर्न बुक सेन्टर, पृष्ठ–95

****

विद्यानिवास मिश्र के निबंधों में मूल्यवत्ता का अन्वेषण

डॉ. रत्नेश विश्वक्सेन *

शोध सारांश – आज परिवर्तन की गति बहुत तीव्र हो गई है, जिसके कारण सामयिक मूल्यों में तेज बदलाव की ही नहीं शाश्वत मूल्यों के उत्पादन की भी चेष्टा हो रही है। मूल्यों के बदलाव का वास्तविक और प्रमुख कारण समाज में प्रचलित नैतिक कारण अवस्था–व्यवस्था और मनुष्य की वर्जितोन्मुखी अन्तश्चेतना का निरंतर द्वन्द्व है। वस्तुत: आज का 'मूल्य' शब्द कुछ समय पूर्व 'आदर्श' और उससे भी पहले धर्म था। जैसे अहिंसा बुद्ध के लिए धर्म था, गाँधी के लिए मूल्य, नेहरू के लिए नीति। मूल्य समाज के लिए आदर्श बन जाते हैं। लोगों को अपने मूल्यों के प्रति संवेगात्मक लगाव होता है, यदि ऐसा न हो तो लोग अपने सांस्कृतिक मूल्यों के अनुसार व्यवहार न करें। मूल्यों का संबंध आस्था से निश्चित रूप से है, जब आस्था टूट जाती है, तो मूल्य टूट जाते हैं। कुछ मूल्य काफी स्पष्ट होते हैं, कुछ अस्पष्ट। ईश्वर सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान है, यह एक अमूर्त, सामाजिक मूल्य अस्पष्ट है। सदा सत्य बोलना चाहिए को ले, तो सत्य का केवल एक रूप ही नहीं है। कौन सा सत्य, किसका सत्य और किस परिवेश का सत्य यह प्रश्न तेजी से उभरता है। फिर 'औचित्य ही इसका सही निर्धारक है।' कुछ विशेष नैतिक मूल्यों की रूढ़ि बनने की प्रक्रिया जब आरंभ होने को होती है तो इस स्थिति को स्वस्थ और स्वस्तिकर माना जाता है, पर यह रूढ़ि होकर नष्ट होने लगती है। औचित्य से सत्य का निर्णय होना चाहिए। यही सत्य धारणीय है। कभी–कभी मूल्यों में टकराव भी हो सकता है। समाज जितना बड़ा या जटिल होता है, वहाँ मूल्यों के टकराव की आशंका अधिक होती है। मूल्य जब रूढ़ि बन जाते हैं, तो क्षरित भी होने लगते हैं। यथा रामचरितमानस के महानायक राम का जीवन मूल्य, जो सामाजिक जीवन–मूल्य का संदेश था – सामाजिक व्यवहार में बहुत क्षरित हुआ है। आज के भौतिकवादी जटिल समाज में मूल्य ढ़ह रहे हैं। स्वार्थान्धता तेजी से बढ़ रही है, तो पुराने मूल्य भी उखड़े खूंटे की तरह पड़े हैं। आज विभिन्न मूल्यों के बीच अक्सर संघर्ष है। जैसे – आज समाज को सहिष्णुता, भाईचारा, ईमानदारी, मनुष्यता के मूल्यों का पाठ सिखाया जा रहा है, लेकिन भौतिकतावादी और अतिवैयक्तिक मूल्यों के कारण आज का 'उपभोक्ता–आदमी' उन सारे मूल्यों को नकार देता है। जातीय और धार्मिक उन्माद में फंसकर समाज भाईचारे और सहिष्णुता तथा मानवीयता के मूल्यों को तिलांजलि दे बैठा है। इसलिए समाज के स्थान में मूल्य एक सामाजिक मानक है, अत: मूल्य सामाजिक महत्व की अवधारणा है। मूल्यों में सामाजिक कल्याण की भावनाएँ प्रधान हैं, जो महत्त्व की हैं। मूल्य अनेक हो सकते हैं – नैतिक मूल्य, बुद्धिसंगत मूल्य, सौंदर्यपरक मूल्य, कलात्मक मूल्य, मानव–मूल्य, पारिवारिक–सामाजिक, वैश्विक मूल्य, सांस्कृतिक मूल्य आदि। मूल्य जीवन की कसौटी है, कसौटियों की कसौटी है। विचार–दृष्टि और जीवन कर्म का उद्गम है, जीवन रथ के दिशा–सूत्रों का सारथी है।

शब्द कुंजी – मूल्यवत्ता, समानानुमति, तिरोहण, भाषिक अस्मिता, सामाजिक दायित्व, उपभोक्ता आदमी, जीवन कर्म।

प्रस्तावना – परिवार एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक मूल्य है। भारतीय संस्कृति में तो परिवार को अपने गुण–धर्मों के कारण विशिष्ट दर्जा प्राप्त है। आज विश्व के लिए भारतीय पारिवारिक मूल्य एक दृष्टि बन गया है। मिश्र जी का मानना है कि 'परिवार की कल्पना ही भारतीय जीवन दर्शन का मुख्य आधार हैं।' मिश्र जी वेदों के सौमनस्य सूक्त का एक उदाहरण दिया है जिसका भावार्थ है कि – तुम सब लोग एक साथ मिलकर सोचो, एक साथ मिलकर अपनी भक्तियों का आह्वान करो, तुम लोग का मन एकचित्त हो, यही होता आया है। प्राचीन काल के देवता भी एक मन होकर हविर्भाग स्वीकार करते आए हैं। तुम लोग भी एकमन, एकचित्त होकर अपना दाय परस्पर बाँटकर उपयोग करो, तुम लोगों की वाणी में यह एकता मुखरित हो, तुम लोगों की चेष्टा से एकता संचारित हो। तुम लोगों के सोचने में और अनुभव करने में यह एकता प्रवाहित हो। तुम्हारा अध्यवसाय एक हो, तुम्हारा हृदय एक हो, और तुम्हारा अन्त:करण एक हो। तुम लोगों का एक पूर्ण संगठन हो।

मूल्य, नवीनता और अस्तित्व का घनिष्ठ संबंध है। मूल्य अस्मितामूलक होते हैं। औचित्य की वांछनीयता मूल्य का निर्माण करती है। चेतना के अस्तित्व से भी मूल्य संबद्ध है। मनुष्य और मूल्य समानान्तर अनिवार्यताएँ हैं। जीवन सबसे बड़ा मूल्य है तो जीने के लिए मूल्यों की अनिवार्यताएँ हैं। नवीन मूल्यों को लेकर निबंधकार के विचार है कि – 'हम नए मूल्यों के अन्वेषण के रूप में अपनी बुद्धिवादी उदारता के चक्कर में ग्रहण भी कर रहे हैं, पर वह खोखलेपन के खतरे की सूचना है, और इस दृष्टि से अपनी परंपरा के प्रति जागरूकता, चाहे वह इसी संकल्प से क्यों हो, हम उसका खंडन करेंगे, हमारे लिए अस्तित्व का प्रश्न बन गयी है।'

आज परिवारिक मूल्य की समस्या समूचे विश्व में मुँह बॉये खड़ी है। आदमी संसाधनों में ज्ञान विज्ञान और सुख–सुविधा संपन्न होने के बाद उन्नति और विकास के कुछेक डग मापने के बाद रोबोट का साथी होकर भाव शून्यता के कगार पर पहुँचकर निपट अकेला पड़ गया है। व्यक्ति केंद्रित मानसिकता ने आज के आदमी का कद बहुत घटाया है। व्यक्ति केंद्रित मानसिकता से व्यक्ति का बौनापन एवं बनैलापन दोनों सतह पर आ गया है। आज विश्व के तथाकथित विकसित देशों में परिवार की जो स्थिति है भयावह है। भारत में भी पश्चिमीकरण का और उसकी नकल का बुरा असर हुआ है। 'एकल परिवार' की ओर लोभ–लालसाएँ अधिक उदीप्त हुयी हैं। इससे मनुष्य पारिवारिक भावना से परे और वंचित होकर विकास के मायने तलाशने में जुटा है। इसमें पारिवारिक तटस्थता, विघटन और उदासीनता में बड़ी वृद्धि हुई है। हम यउपयोगितावाद' का जो पैमाना तैयार कर रहे हैं, वह मनुष्य रूप को बेजार कर रहा है। विश्व में परिवार का संबंध जैसे केवल आपूर्ति का संसाधन मात्र बना दिया गया है, फिर असभ्यता भी गहरे घर कर गई है। जैसे

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) स्नातकोत्तर राँची महाविद्यालय, मोहराबादी, राँची (झारखण्ड) भारत

आदमी परिवार से दायित्वहीन होता जा रहा है। वह अपनी दुनियाँ, केवल पैसा, पत्नी और अपनी संतान में सिमटकर जी रहे है। उसके संस्कारों में पिता, माता, दादा, दादी, भाई, बहन आदि के प्रति संभावनाएँ सूखती जा रही है। वह नितांत अकेला भी पड़ रहा है और आकंठ वैयक्तिकता एवं स्व के अंधकार में ही अपने कूप-जल का पान करते-करते पस्त हो रहा है। 'इस युग का मुख्य उद्देश्य मनुष्य है। इस युग का सबसे बड़ा अभिशाप यह है कि विज्ञान की सहायता से जहाँ बाह्य भौगोलिक बंधन तड़ातड़ टूट गये हैं वहाँ मानसिक संकीर्णता दूर नहीं हुई है।'[1]

सामाजिक मूल्यों के लिए शास्त्रों की उपयोगिता के संदर्भ में मिश्र जी उसके परिष्कार की बात कहते हैं। 'शास्त्र विधि का तात्पर्य शास्त्र का पाठ नहीं, शास्त्र की समझ है। शुद्ध भाव से किया लोक-व्यवहार इस समझ से स्वच्छंद होता है, तो शास्त्रों का अनुसरण ही उसे ठीक रास्ते पर लाता है।'

राजनीति आज विश्व के केंद्र में है। 'अथ' उसी के समानान्तर चल रहा है। दोनों ही सामाजिक महत्व के विषय हैं। यह दोनों आज विश्व-संचालन की महत्त्वपूर्ण धुरी बन चुके हैं। राजनीति का तो आज नाम आते ही आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की बात महत्त्वपूर्ण हो जाती है 'राजनीति भुजंग से भी अधिक कुटिल, असिधारा से भी अत्यंत दुर्गम और विद्युत-शिखा से भी अत्यंत चंचल है।' मिश्र जी राजनीतिक संस्कृति की चर्चा सामाजिक मूल्यवत्ता की तर्ज पर करते हैं कि 'अब समय आ गया है कि राजनीति की अपनी संस्कृति विकसित हो। लोग अलग-अलग मत रखें, पर व्यक्तिगत संबंधों को भी बनाए रखें। मत के आधारों पर जहाँ से चुने जाए, वे केवल अपने दल के लोगों के ही प्रतिनिधि हों और पूरे निर्वाचन क्षेत्र के लिए कार्य करें।' .....

एक राजनीतिक दल सत्ता में आता है कुछ निर्णय करता है और दूसरा राजनीतिक दल सत्ता में आता है तो पिछले सारे निर्णयों को झुठलाने की कोशिश करता है। इस प्रक्रिया ने नौकरशाही की तटस्थता को भी प्रभावित किया है और अब तथ्यों के आधार पर समग्र हित का ध्यान रखकर निर्णय लेने वालों अफसरों की संख्या घटती जा रही है। चापलूस, चुगलखोरों की संख्या बढ़ रही है। इस स्थिति का निदान अच्छी राजनीतिक संस्कृति के विकास से ही संभव है।'

विद्यानिवास मिश्र ने खोखले सामाजिक बोध, लेखन और खेमेबाजी के भयानक प्रभुत्व ज्वर को भली प्रकार से पहचाना है। ऐसे में वे सामाजिक मूल्य-बोध और लेखन तथा समसामयिक परिस्थितियों के परिपार्श्व में विचार करते हुए लिखते हैं कि -'जब देखता हूँ लोग कलम को हथियार बनाए हुए, लिखने को सामाजिक दायित्व का एकमात्र साधन मानते हैं, तो लिखना मुझे नपुंसक कायरता लगती है, लिखना व्यक्ति का उद्धार नहीं है, वह उसका केवल सम्प्लवन है, और वह सम्प्लवन कर्म नहीं है, जीवन का भाव है। यह सोचता हूँ तो लिखना दुगना मुश्किल हो जाता है। मुझे लगता है कि वास्तविक संघर्ष यहाँ है कि ऐसी विडंबनापूर्ण स्थिति में जब लिखना एक खेमा हो, खेमों का विरोध करनेवाला मैं लिखकर खेमा बनूँ या न लिखकर भीतर-भीतर उबलता रहूँ कि मैं लिख नहीं पा रहा। 'और अब जब जीवन में औद्योगिक उपभोक्ता संस्कृति का बोलबाला है तब लेखन कर्म को लोग 'कर्म' नहीं मानते शौक मानते हैं।'[2]

जाति, समाज, मूल्य, राजनीति एवं समाजवाद को एक साथ रखकर विचार करते हुए मिश्र जी कहते हैं 'जातिवाद की विघटन और विध्वंसक शक्ति आज राजनीतिक स्वार्थों से जितनी तीव्रतर हुई है, उतना मध्ययुग के किसी अंधे से अंधे कोने में नहीं रही होगी। उसका कारण यह है कि उस जमाने में कुछ मूल्य बचे थे, जिनके कारण स्तर-भेद बराबर दबा रहता था, आज वे मूल्य नहीं रह गए। पश्चिम के समाजवाद से उधार लिए मूल्य हमारे काम आऐं या वे हिन्दू समाज में नयी चेतना ला सके, यह बस ख्याली पुलाव पकाना है। स्तर भेद का नाश होगा तो अपने देश-काल की खराद पर चढ़े मूल्यों से होगा।'

भारतीय सामाजिक मूल्य अपने आप में विशिष्ट और विलक्षण है। भारतीय और हिंदू मन में अन्तर्निहित सामाजिक मूल्य की चर्चा करते हुए लिखते हैं - 'भारतीय मन हिंदू मन से अलग नहीं, मुस्लिम मन से अलग नहीं, ईसाई मन से अलग नहीं, अलग होता तो उपनिषदों का अनुवाद मुसलमानों ने क्यों फारसी में किया होता ..... समन्वय खुले मन से होता है और खुले मन वाला ही समन्वित होने के लिए तैयार है। यदि मुसलमान और ईसाई विचारधारा के बीच समन्वय नहीं हो पाया तो कहीं न कहीं द्वार बंद जरूर रहे होंगे।'

सामाजिक मूल्य के परिप्रेक्ष्य में साहित्य और साहित्यकार की भूमिका एवं उसके दायित्व का विवेचन करते हुए पंडित जी कहते हैं कि 'साहित्य समाज की उस संभावना, बेचैनी की तलाश है जो मानव समाज को उत्तरोतर उत्कृष्ट मूल्यों के लिए उत्सर्ग करने के लिए प्रेरित करती है, और समाज की आत्म संतुष्टि को, उसके अहंकार को, उसके दंभ को झूठ को तोड़ती रहती है। ..... नागरिक दायित्व का कोई विकल्प नहीं होता और जो साहित्य विकल्प बनाना चाहता है, सत्य और चिरंतन नहीं होता। साहित्य रचकर सामाजिक शोषण के दायित्व से मुक्ति पा लेने का नुस्खा एक घटिया नुस्खा है। यह हो सकता है कि लक्ष्य परिलक्षित नहीं है तो उसका साहित्य ईमानदारी का साहित्य नहीं हो सकेगा। 'जब कोई न्याय नहीं कर पाता तो कवि न्याय करता है। जब अन्याय बढ़ता है तो ईश्वर जन्म ले न ले कवि न्याय का जन्म होता है। एक निर्बल, अनाथ, अशक्त, अकेले के पक्ष में खड़े होने का अकिंचन साहस पैदा होता है।'[3]

वह पीड़ा जो मनुष्य का लक्षण है, जो मनुष्य को बनाती है, वही सामाजिक मूल्य की महान कसौटी है। अपनी परिधि मात्र से बाहर की करूणा और दु:ख अर्थात् पर दु:ख कातरता और समानानुमति (सहानुभूति नहीं) उसे रेखांकित करते हुए निबंधकार लिखता है कि -'हमारी पीड़ा का बोध हमारे कारूण्य का बोध अपना दुख नहीं है। हमारे लिए कारूण्य का बोध है यह, कहीं कोई नष्ट कर रहा है, उसे मिल नहीं रहा तो मुझे दर्द होना चाहिए, इस पर जिसको जिसका चाहा मिल नहीं रहा उसमें मैं भी शरीक हूँ, मेरे कारण नहीं मिल रहा है, वह पीड़ा है। वही वास्तविक पीड़ा है। वही पीड़ा मनुष्य का लक्षण है, उसी के कारण पहचान होती है। और वही नहीं रहती है तो लगता है कि उसमें सब कुछ है, लेकिन एक चीज ऐसी नहीं है, जो होनी चाहिए।

स्व का तिरोहण करनेवाला उदात्तपूर्ण त्यागमयी प्रेम मनुष्य के जीवन का चरम मूल्य है, इस तरह वह चरम सामाजिक मूल्य भी है। कालिदास ने शाकुंतलम् में जिस प्रेम की गाथा कही वह अपनी चाह और मस्ती के लिए कुलांचे मारने वाला प्रेम नहीं है। मिश्र जी का कहना है, कालिदास का प्रेम ऐसा सस्ता नहीं है। इसलिए ऐसे प्रेम को काँटों और दर्द तथा अप्राप्य की शिरो रेखाओं पर गहरे नाटकीय तनाव की तरह आपाधापी करनी पड़ती है। थपेड़े खाने पड़ते हैं एवं कष्ट और वेदना में जलाने वाले होते हैं एवं उसका आकर्षण तथा लालसाओं ने जो प्राप्य सोचा है उससे विचित्र तरह से वंचित होना पड़ता है। प्रेम का अभिप्राय है वंचित होना। भारत में प्रेम जैसे व्यक्ति के लिए प्राप्ति का मूल्य नहीं है। मिश्र जी कहते हैं - 'उसका (शकुंतला) गर्भधारण संतान के कल्याण के लिए कभी तप की अपेक्षा रखता था। कालिदास का प्रेम सस्ता नहीं है इसी से ऐसे अधकचरे प्रेम में अन्तराल लाना उन्हें अभीष्ट हो जाता है।

दोनों प्राणियों को विरह की साधना में निखरना पड़ता है। यह अवश्य है कि दुष्यंत का अपराध होने के कारण उसका दु:खवार सविशेष है। शकुंतला के लिए तो एक आसरा है – भरत, पर दुष्यंत को अपने संतानवान होने का पता नहीं है। उसे जब ज्ञात होता है कि उसने शकुंतला को पाकर भी खो दिया है, तब तो उसके लिए बसंत अभिशाप हो जाता है। 'शकुंतला का जो रूप दुष्यन्त को रमणीय लगता है, वह पौधों की क्यारियों में पानी भरते–भरते शिथिल बांहों, शिथिल केशपाश, श्रम से स्वेदविन्दुल कपोलों में अभिव्यक्त रूप है। वह रूप इतना निखार अपने परिवेश की सजग चिंता और उसके आनंद भरे श्रम से पाता है।'[4]

सामाजिक मूल्य से साहित्यिक मूल्य का गहरा सरोकार है। कविता या साहित्य जब नारा बन जाता है तब वह खत्म हो जाता है। साहित्य संभावनाओं का द्वार प्रशस्त करने का कार्य करता है, या कहें निर्देशक होता है। आज जिस तरह साहित्य में साहित्यिक मूल्य के नाम पर सामाजिक मूल्य के मुखौटे पहनकर सत्य की जगह यथार्थ की चीख–पुकार और खेमेबाजी हो रही है, उसने साहित्य और आलोचनाओं को अविश्वसनीय बनाया है। सामाजिक परिप्रेक्ष्य में साहित्यिक मूल्य की अर्थवत्ता और दायित्वबोध की वास्तविक भूमिका से सहमत और प्रसन्न होते हुए कहा 'मैं यह जानकर बहुत ही प्रसन्न हुआ कि बड़ी ईमानदारी से केदारनाथ अग्रवाल जी ने कहा है कि साहित्य परिवर्तन नहीं करता, परिवर्तन करने वाला नागरिक होता है और नागरिक का एक सामूहिक जातीय संकल्प होता है। उस संकल्प के लिए बहुत कुछ न्योछावर करने के लिए तैयारी से क्रांति होती है। और यदि साहित्य क्रांति का विकल्प बनता है तो साहित्य भी नकली हो जाता है और क्रांति भी नकली हो जाती है। साहित्य उसका विकल्प है। साहित्य केवल उकसाने का कार्य करता है, प्रश्नचिन्ह लगाता है।' मिश्र जी कबीर के सामाजिक मूल्य को स्वीकार करते हुए शुक्ल जी के अंतर्विरोधों की बात प्रत्यक्ष करते हैं। उनका कहना है – 'एक अंतर्विरोध और शुक्ल जी में है कि वे वाद के रूप में अछूतों के लिए अपार करूणा से लहराकर उनकी ओर से कविता में आर्तनाद कर सकते हैं, पर आलोचना में कबीर जैसे पाखंड विरोधी, ऊँच–नीच, विरोधी कवि की ओजस्वी रचना की मूल्य यात्रा बहुत कुछ अनदेखी कर जाते हैं।'

निष्कर्ष– सामाजिक मूल्य बिखर रहे हैं क्योंकि हमारी सोच बिखर गई है। विकसित और विकासशील दोनों ही देशों में अपनी–अपनी सामाजिक मूल्यपरक समस्याएँ हैं। मिश्र जी का कहना है कि विकसित देश आज अपनी भयावहता को भाप चुके हैं, पर हमारा स्वभाव तो नकलची और अकर्मण्य का है, तो हम चटखारे ले रहे हैं। हमने सामाजिक मूल्य चूर–चूर कर दिए हैं और उसकी तिथि मना रहे हैं। हमने दिखावे की प्रवृत्ति को अपना लिया है। ऐसी हमारी लाचारी हो गई है। निबंधकार कहता है कि – 'विकसित देश अपनी स्थिति की भयावहता पहचानने लगे हैं, हम केवल अभी उसका चटखारा ले रहे हैं, क्योंकि हम बुद्धिजीवी के रूप में एक अजूबा प्राणी बन गए हैं। दूसरों की राह बनायी है, हमारी राह एक है, हम उस पर चलकर आजमाना भी नहीं चाहते, यह विडंबना भी भारतीय परंपरा की एक तार्किक परिणति है, जो परंपरा इतने बड़े मूल्यों को साधना चाहती है और उसके योग्य संकल्प से और कर्म के बिना कट जाती है, उसकी यह नियति होती है। अद्वैत की परमार्थक सत्ता की बात बस बात रह जाती है, आचार उसका विरोधी हो जाता है, अर्द्धनारीश्वर बैठक खाने की शोभा बन जाते हैं और अर्धांग बुढ़ापे में नहीं, तरूणाई में लोभानल का भक्ष्य बन जाता है। अपरिग्रह दो अक्टूबर को सौंप दिया जाता है, वृक्षारोपण पहली जुलाई को और ईमानदारी किसी एक पखवारे को। यह है सत्य और ऋत के अनभ्यासी दंभ की तार्किक परिणति।' भाषा, संस्कृति की तरह जीवन की अस्मिता (पहचान) और उसकी संचारिणी, संवाहिका एवं जीवन–मूल्यों की स्रष्टा होती है। मानव जिन मूल्यों के साथ जीवन को गति और चेतना देता रहता है, उसमें भाषा की अहम भूमिका है। भाषा से हीन जीवन और समाज की कल्पना नहीं हो सकती। भाषा अस्तित्व है, अस्मिता है और आस्था है। भाषा पहचान का कारण है, जुड़ने का सबसे प्रधान सूत्र। राष्ट्रीय सामाजिक दायित्व की कुंजी है भाषा। राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी आज जिस दयनीयता का शिकार है और अपनों के हाथों हारी है, वह क्षोभ का विषय है। प्रतिस्पर्द्धा के नाम पर कोई देश अपनी भाषिक अस्मिता से तो क्रीड़ा नहीं करता। हमारे यहाँ भाषा को लेकर टुकड़ों–टुकड़ों की राजनीति है, हिंसा है, आतंक है। विश्व में यह प्रश्न उठाया जा रहा है कि भारत के लोगों की अपनी एक भाषा नहीं है, जिसका सभी लोग समर्थन करते हैं। भाषा का सामाजिक दायित्व बड़ा दायित्व है। भाषा को लेकर मिश्र जी ने बहुत विचार किया है। यहाँ भाषा के सामाजिक दायित्व और उसके सरोकारों की बात रखते हुए मिश्र जी कहते हैं – 'अभी हिंदी का व्यापक जन आधार नहीं बना है। हम अभी हिंदी भाषी जनता में आत्मगौरव नहीं जगा सके हैं। असम की साहित्य सभा में ढाई लाख लोग साहित्यकारों को चुपचाप ध्यान से सुन सकते हैं।। मलयालम के कवि की अर्थी के साथ ढ़ाई लाख लोग चल सकते हैं, और ऊँचे राजनेता उस अर्थी को कंधा देने में अपने अस्तित्व की सार्थकता मान सकते हैं, पर क्या यह हिंदी क्षेत्र में संभव है? और यदि संभव नहीं है तो हम कहीं इसके अपराधी तो नहीं हैं'?

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भाषा साहित्य और देश – आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ0–17, भारतीय ज्ञानपीठ, 2009, दिल्ली।
2. साहित्य का उत्तर समाजशास्त्र – सुधीश पचौरी, पृ0–187, राधाकृष्ण, 2006, दिल्ली।
3. साहित्य का उत्तर समाजशास्त्र – सुधीश पचौरी, पृ0–22, राधाकृष्ण, 2006, दिल्ली।
4. सहृदय – विद्यानिवास मिश्र, पृ0–16, साहित्य अकादमी, 1994, दिल्ली।

****

सौंदर्य के कुशल चितेरे पद्माकर

डॉ. अमित शुक्ल *

शोध सारांश – सौंदर्य मानव के मन मस्तिष्क के लिए एक आवश्यक तत्व है क्योंकि वह उसे सुकून देता है। यह कहा जाए कि सौंदर्य मानव मस्तिष्क के लिए भोज्य पदार्थ है तो अतिश्योक्ति न होगी। सौंदर्य प्रेमी–प्रेमिका के रूप से आरम्भ होकर दिव्य सौंदर्य के अनुभव हेतु आध्यात्मिक आरोहरण की ओर प्रेरित करता है और यही आत्मा के उत्कर्ष का साधन बनता है। अखोरी गंगाप्रसाद जी ने पद्माकर को 'सौंदर्य का कवि' माना है। सौंदर्य भाव क्षेत्र का सामंजस्य है। भावों के इस सामंजस्य में आकर्षण उत्पन्न होता है। और संवेदनशीलता जागृत होती है और प्रेम का संयोग होता है।

शब्द कुंजी – सौंदर्य, प्रेमी–प्रेमिका, अलौकिक आनन्द, संवेदनशीलत ।

प्रस्तावना – सौंदर्य मन के अन्दर की चीज है जिसे कवियों ने भी अपने काव्य का प्रमुख विषय बनाया क्योंकि सौंदर्य–वृत्ति की जागरूकता काव्य का गुण है, जो कला तथा काव्य के निरंतर अनुशीलन तथा चिन्तन से उतनी तीव्र तथा संवदेनशील होती है कि सौंदर्य के सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूप विलास भी इस की पकड़ से बाहर नहीं रह सकते और परिणाम होता है मानसिक उन्नयन, उद्दीपन, तथा परितोष, जो अलौकिक आनन्द की कोटि में आता है। चेतना वह अनुभव करती है कि उसकी सत्ता है, यह सौंदर्य प्रेमी–प्रेमिका के रूप से आरम्भ होकर दिव्य सौंदर्य के अनुभव हेतु आध्यात्मिक आरोहरण की ओर प्रेरित करता है और यही आत्मा के उत्कर्ष का साधन बनता है।[1] कवि पद्माकर ने नायिका उसी को कहा है, जिसे देखने पर श्रृंगार का भाव हृदय में अकुंरित हो। नायिका के एकान्त रूप–वर्णन के लिये कवि ने तीन आधार लिये हैं– 1. राजमहल का अन्त:पुर 2. सरोवर अथवा भवनदीर्धिका 3. उच्च आसन।

रूप संचेतन के लिये नायिका की तीन भाव चेष्टाएँ प्रकट हैं–अवरोहण, संतरण, आरोहण। कवि ने इस रूपायन के प्रत्यक्षीकरण के लिये तीन उदहारणों को तीन शब्द चित्रों में प्रस्तुत किया है। पहले में स्थिरता, दूसरे में गतिशीलता तथा तीसरे में चेतना की सक्रियता लक्षित होती है। सौंदर्य के अंकन की ये रेखाएँ कहीं स्थूल कहीं सूक्ष्म कहीं सरल, कहीं संलिष्ट हैं मानो चित्रकार ने नायिका सौंदर्य को विभिन्न पार्श्वों से देखा है और तीसरे उदाहरण में तो उसके अपने चित्र की रचना को चौकी पर रखकर निरीक्षण करना चाहा है। आचार्य शुक्ल ने पद्माकर की हावभाव पूर्ण मूर्ति–विधायिनी कुशलता की भूरि–भूरि प्रशंसा की है। निम्न उदाहरण से उनके शब्द चित्रों को देखा जा सकता है।[2]

सुंदर सुरंग नैनल सोभित अनंग रंग,
अंग अंग फैलत तरंग परिमल के।
वारन के भार सुकुमारिको लचत लंक,
राजै परजंक पर भीतर महल के।
कहै 'पद्माकर विलोचित जन रीझैं जाहिं,
अंबर अमल के सकल जल–थल के।
कोमल कमल के गुलाबन के दल के,
सुजान गड़ि पायन बिछोना मखमल के।

नायिका के इस रूप चित्र की रेखाओं को देख कई आलोचकों ने उसे स्थिर चित्र कहा है। डा. भगीरथ मिश्र ने इसमें माधुरी के साथ सुकुमारता का चित्रण भी देखा है। डा. स्वर्णकिरण ने इसके नयेपन सुकुमार को ही नहीं बल्कि लेटी हुई उस नायिका के समूचे महल को सुवासित करने की महक के प्राण सौंदर्य को भी सुन्दर समझा है। डॉ. महेन्द्र कुमार ने इस द्वंद्व में प्राप्त रूप सौंदर्य का बिम्ब विधान इस प्रकार अंकित किया है–'इसके प्रथम चरण के अन्तर्गत नायिका के नेत्रों की वासना और उसके शरीर की गंध और जहाँ सूक्ष्म रेखाओं द्वारा व्यक्त की गई है वहीं द्वितीय चरण में उसके केशभार स्थूल रेखा द्वारा, कमर की लचक पतली और मोड़दार रेखा द्वारा तथा महल के भीतर उसकी उपस्थिति सामान्य रेखाओं द्वारा व्यक्त हुई है। आगे तृतीय चरणागत चल–थल के लोगों का उसके रूप पर रीझना सामान्य रेखाओं का विषय रहा है, जबकि अंतिम चरण में कोमल पुष्पों की पंखुड़ियों का मखमल गलीचों का उसके कोमल चरणों में गड़ जाना सूक्ष्म रेखा द्वारा व्यंजित किया गया है। नायिका के नेत्रों में वासना भरी है और विशाल जनसमूह जिसके रूप को ललचाये हुए नेत्रों से देख रहा है।[3] डॉ. स्वर्णकिरण ने इस छंद के रूप अंकन में यही कहा 'पद्मकार की नायिका आंखों में अनंग रंग के कारण मादक अधिक है। किन्तु पद्माकर की सौंदर्यानुभूति किसी छवि से भी कम नहीं हैं नायिका की जिसमें सुन्दरता जल–थल–अंबर सब जगह के रहने वालों के लिये मोह है पद्माकर ने नायिका की कोमल गति–मति का ही अंकन किया है।' गंगाप्रसाद सिंह ने इस कोमलांगी राजकुलांगना के बाह्य सौंदर्य एवं सौकुमार्य का अत्युक्ति अलंकार की सहायता से जो शब्द चित्र अंकित किया है उसकी समानता अंग्रेजी कवि शैली की इन पंक्तियों से किया है–Like a high born maidn in a palace tower soothing her love laden soul insecret hour with music sweet as love which everflows her power.

आचार्य पं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने उनका दूसरा सवैया आंका है। वहाँ वर्ण छटा सहज है, भाव की शक्ति ही शब्द शक्ति बन गयी है, इसी से भाव स्फूर्ति, रूप ज्योति, पदमूर्ति प्रपूर्ति सब की सामंजस्यता है–[4]

जाहिरै जागति सी जमुना जब बूड़ै बहै उमहे वह नैनी।
त्यों पद्माकर हीर के हारन गंग तरंगन को सुख देनी।
पाइन क रंग सों रंगि जातसी भांति ही भांति सरस्वती सैनी।
पैरे जहांई जहाँ ब्रजबाले तहां–तहां ताल में होत त्रिवेनी।

यदि किसी ने त्रिवेणी के तट पर संगम के दर्शन किये हों तो पद्माकर ने जो रमणीय दृश्य यहाँ अंकित किया है उसे वह भली–भांति हृदयंगम कर सकता है। वहाँ गंगा और जमुना की धाराएँ अलग–अलग प्रतीत होती हैं।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

संगम की रेखा इस प्रकार दोनों को विभाजित कर देती है मानों सफल चित्र खींचा हो। ब्रजबाल तैर रही हैं ताल में और वह जलाशय हैं। जल का तीर्थ है कोई धार्मिक तीर्थ नहीं, जिसका माहात्म्य हो, पर उसके कारण वह ताल आज त्रिवेणी संगम हो गया। तीर्थराज बन गया। यमुना की लालिमा ही नहीं दिखती है, गंगा से मिलती यमुना में अलिंगन प्रवाह और उमंग की जैसी वृत्तियाँ प्रतीत है, वे वेणी के बुड़ने बहने और वह उमड़ने में है। गंगा यमुना तो मिली नहीं, यमुना ही गंगा में जा मिली, गंगा को इससे सुख हुआ। वेणी ही हीरों के हार में जा उलझती है हार थोड़े ही उलझने जाते हैं नागपाश की विशेषता वेणी में भी और कलियाना को बसाए रखने वाली यमुना में। नीलिमा दूर से ही झलक जाती है, हीरे के हार पानी में पड़े है, इससे उतने चमकते नहीं। यमुना दूर से ही प्रतीत होने लगी है। गंगतरंग यमुना से भी अधिक तीव्र और धारा विशेष प्रखर है। यमुना मिलने के अनंतर उसमें कमी आ गयी, गति कम हो जाने से हरी भरी दौड़ के, जल की चंचलता के कम हो जाने से कुछ स्थिरता आई सुख मिला। जहाँ एक और यमुना इतनी प्रत्यक्ष है वहीं सरस्वती अप्रत्यक्ष हैं उनमें जो सहज रंग हैं उसका भान भर होता है वह प्रत्यक्ष कहाँ होती है, भाँति-भाँति इसलिए कि अन्य रंगों के साथ उसका मेल होता रहता है। डॉ. भगीरथ मिश्र ने इस छंद में एक क्रिया-कलाप ताल में तैरते हुए अपने रूप और सौंदर्य के संपर्क से ताल को सौंदर्य और पवित्रता का गौरव प्रदान करती हुई छवि का चित्रण कहा है। डॉ. बच्चन सिंह ने चित्र की दृष्टि से इसे वर्ण भंग का श्रेष्ठ उदाहरण कहा है। ललित चित्र योजना के अन्तर्गत इसे वर्ण चित्र का उदाहरण कह सकते हैं। तीनों रंगों के अनुरूप वर्ण योजना यहाँ दर्शनीय है।[5] तद्भुण अलंकार के प्रयुक्त होने से तो यह छंद एक संकेतों का, रंगों के मिश्रण का रंगीन छंद बन गया है। तीसरे छंद की चित्रकारी पर तो नलिन विलोचन शर्मा भी मुग्ध हो गये है। डॉ. द्वारका प्रसाद मिश्र ने इस छंद में उनकी चित्र बनाने की असाधारण शक्ति का परिचय पाया है जो इस तरह है-

आर्ध्य खेलि होरी धरे नवल किसोरी कहूँ
बोरी गई रंगन मुगंधन झकोरे है।
कहै 'पद्माकर हूकत चलि चौकी चढ़ि हारन के,
बारन तै फंद बंद छोरे है।
घांघरे की घूमन सु ऊरुन दुबीचै दबि आंगि हूँ,
उतारि सुकुमारि मुख मोरे है।
दंतन अधर दावि दूनर मई सी चापि
चाँवर पचौवरके चुनरी निचोरे है।

ब्रज की होली खेल आने के विशेष संवेदनों के साथ इसके आंगिक और गतिशील रूप का सौंदर्यबोध अतिशय आकर्षण है। पं. शुकदेव दुबे जी लिखते है कि 'पद्मकार स्वरूपांकन के विधान में अत्यन्त निपुण है। एक नवल किशोरी गोपिका होली खेलते खेलते किस रूप में सामने आ खड़ी होती है, उसके वस्त्र किस प्रकार भींग जाते है और किन भाव मुद्राओं तथा चेष्टाओं के साथ वह चुनरी को निचोड़ती तथा कपड़े बदलने की तैयारी करती है। चुनरी शब्द भक्तिकाल का शब्द है अत: इस शब्द से श्रीकृष्ण के साथ ब्रज में होली खेलकर आने का संकेत है। पर कवि पद्माकर ने हिन्दू रमणी के सौभाग्य अलंकार चूड़ी और शीशफल आभूषण को लेकर जो ऐन्द्रिय चेतना जगाई है, और मनस-तत्व के अवतरण की जो कल्पना की है वह जितनी सुन्दर है मनोविज्ञान की दृष्टि से वह उतनी ही नवीन है- [6]

इस की दुहाई सीसफूल ते लटकि लट
लट ते लटकि कंध पै ठहरिगां।
कहै 'पद्माकर सुमंद चलि कंथ हू
तै भ्रमि भ्रमि भाई सी भुजा पै त्यों भभरि गौ।
भाई सी भुजा में भ्रमि आयो
गोरी-गोरी बांह गोरी बांह हू ते चीप
चूरन और गो हेस्यो हरै हरै हरी चूरिन
तै चाहां जो लो तो लों मन मेरो
दांरि तेरे हाथ परिगो।

न्यूरोलाजी तथा गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का विशेष प्रभाव स्पष्ट है।[7] मानव-मस्तिष्क स्नायु मंडल से संयुक्त है और आन्तरिक प्रेरणाओं का जो प्रभाव उन पर पड़ता है वह विशेष प्रेरक होता है। 'इस की दुहाई शब्द से वह प्रेरणा सिद्ध है, इस प्रेरणा में मन:स्थिति को इतना चंचल कर दिया है कि वह मन बाहर आ निकला है। बाह्य अलंकार के आग्रह का इतना जबरदस्त प्रभाव पड़ा कि वह मन स्खलित हो, वेणी की लट पर आ लटका। मांसल कंध पर कुछ ठहर ही पाया था कि गोल-मोल भुजा के चक्कर में आ पड़ा, इस चक्करदार चक्कर में उनका मन भी चक्कर खा गया। और गोरी मसृण बांह पर जा उतरा। मनोवेग से बांह के नीचे आने परतो वह सौभाग्य चिन्ह चूड़ियों में आ पड़ा। इस स्खलन के सन्तुलन के लिये ज्यों ही नायिका ने आकांक्षा से देखा तो देखा कि वह मन प्रेमी के हाथों में आ पड़ा है। यह आन्दोलन, यह प्रभाव, यह सन्तुलन और यह व्यवस्था कितनी अनुकूल है। अखोरी गंगाप्रसाद जी ने पद्माकर को 'सौंदर्य का कवि माना है। सौंदर्य भाव क्षेत्र का सामंजस्य है। भावों के इस सामंजस्य में आकर्षण उत्पन्न होता है। और संवेदनशीलता जागृत होती है और प्रेम का संयोग होता है। भारतीय प्रेम की प्रारम्भिक अवस्था का प्रदर्शन छंदों में हुआ है- [8]

रूप दुहुं की दुंहुन सुन्यो सु रहे तब से मनो संग सदा ही।
ध्यान में दोऊ दुहून लतै हरषे अंग-अंग अनंग उछाही।
मोहि रहै कबकै ये दुहूं, पद्माकर, और कछु सुधि नाहीं।
मोहन को मन मोहिनी मे वस्यो मोहिनी को मनमोहन माहीं।

डॉ. नगेन्द्र के शब्दों में आधुनिक मनोविज्ञान के अनुसार सौंदर्य चेतना एक मिश्र वृति है। इसके योजक तत्व हैं-प्रीति अर्थात् आनंद और विस्मय। इसमें एक ओर रसवाद की स्पष्ट अभिव्यक्ति है, तो दूसरी ओर अलंकारवाद का आग्रह स्वत: व्यक्त है। सूरदास ने भी इस प्रसंग के पदों की रचना की है। किन्तु पद्माकर ने पूरे प्रसंग को रूपांतरित करने में जैसे कला मर्मज्ञता व्यक्त की है वह निश्चय रूपेण श्लाधनीय है और उनकी नवीन दृष्टि की परिचायक है-

बछरै खरी प्यावै गऊ तिहिको 'पद्माकर को मन ल्यावत है।
तिय जाति गिरैया गही बनमाल सुरेचे ललादूच्यौ छावत है।
उलटी करि दोहनी मोहनी की अंगुरी घन जानि केदावत है।
दुहिवो औ दुहाहबो दोउन को सखि देवत ही बनि आवत है।

डॉ. भगीरथ् मिश्र ने इसे प्रेमविभोर दशा को चित्रित करने वाला छंद कहा है। वे कहते हैं पारस्परिक प्रेम भाव की विह्वलता तो अत्यन्त विलक्षण होती है। इस भाव में पूर्ण मग्नता से तन्मय होने पर तो दोनों ही की दशा लोक विपरीत हो जाती है। चेष्टा ओर क्रियाकलाप कुछ अटपटे से हो जाते है। डॉ. विद्यानिवास मिश्र ने इन अंतिम दो पंक्तियों को उद्धृत करते हुए लिखा है कि वस्तुत: तन्यमता की पराकष्ठा है जो अभिव्यक्त करती है, उंगलियों के स्पर्श में दूध झरने की गहरी व्यजंना प्रेम के सात्विक रस-प्रवाह से चित्र को आप्लायित करने के लिये नियोजित है। कवि पद्माकर के हृदयगत युगल किशोर स्वरूप के अभीष्ट बिम्ब को शब्दों के द्वारा कागज पर उतार देने का श्रेय पद्माकर को है। [9]

निष्कर्ष यह है कि पद्माकर सौंदर्य के कवि हैं, उनका काव्य सौंदर्य हिन्दी साहित्य की अमूल धरोहर है। तरलता और नाद पद्माकर का प्रधान गुण है। उनकी भाषा माधुर्य एवं प्रसाद गुण से युक्त है। ओज यद्यपि उनकी भाषा का प्रधान गुण नहीं है पर भयानक वीर एवं रौद्र रस के काव्यों में पुनरावृत्ति के प्रयोग के द्वारा उसे लाने की चेष्टा की गई है। फिर भी यह कहा जा सकता है कि पद्माकर के काव्य का सौंदर्य पाठक मन को निश्चित ही आकर्षित करता है। [10]

संदर्भ ग्रन्थ सूंची :–

1. विन्ध्य भारती त्रैमासिक शोध पत्रिका, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा पृष्ठ–15, मई 2008
2. हिन्दी अनुशीलन भारतीय हिन्दी परिषद इलाहाबाद पृष्ठ , 64, 6,सन् 2013
3. अक्षर पर्व, साहित्यिक वैचारिक मासिक देशबन्धु परिसर, रामसागर पारा रायपुर, छत्तीसगढ़, पृ. 17, दिसम्बर, 2005
4. राष्ट्रवाणी द्विमासिकी, राष्ट्रभाषा भवन पुणे, अंक 6, पृष्ठ 22–22, अप्रैल 2010
5. सृजन विमर्श संभाषा की शोध पत्रिका 320 इन्द्रपुरी इन्दौर अंक 04 05 पृष्ठ 28 जुलाई–दिसंबर 2009,
6. साहित्य अमृत मासिक पत्रिका आशफ अली रोड नई दिल्ली, पृष्ठ 25, अक्टूबर 2010
7. अक्षरा द्विमासिक हिन्दी पत्रिका, हिन्दी भवन राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल पृष्ठ 14, जून 2007,
8. रचना द्विमासिकी पत्रिका, हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल, पृष्ठ 27, 38, दिसंबर 2008
9. ज्ञानोदय, श्रोत्रिय प्रभाकर संपादक अंक 40 जून 2006 भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड नईदिल्ली पृ0 28,30,38
10. स्वयं का सर्वेक्षण एवं निष्कर्ष।

****

राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में सामाजिक चेतना - उखड़े हुए लोग के संदर्भ में

डॉ. सुनिता यादव *

प्रस्तावना – स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी उपन्यासकारों में राजेन्द्र यादव का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। उनके उपन्यासों का उद्देश्य प्रगतिवादी चिन्तन के आधार पर मध्यवर्गीय समाज में पारिवारिक जीवन का विश्लेषण तथा चित्रण करना है। उनके उपन्यासों में आग्रह युक्त समाजवादी चेतना का प्रस्फुटन हुआ है। वे जनजीवन में व्याप्त विषमताओं का उद्घाटन करते हैं, युग धर्म को आत्मसात करने की जागरूकता उनमें सतत् दिखाई देती है। उन्होंने अपने सभी उपन्यासों में निम्न मध्यवर्ग तथा मध्यवर्ग की समस्याओं का चित्रण किया। राजेन्द्र यादव ने मध्यवर्गीय जीवन की समस्याओं और संघर्षो के चित्रण में मार्क्सवादी चिन्तन का आधार लिया है। साम्यवाद की शोषण विरोधी नीति एवं सामान्य जन हितकारी भावना से पूरित प्रस्तुत उपन्यास अत्याधुनिक सामाजिक व्यवस्था तथा सामाजिक सम्बंधों का एक अत्यन्त सजीव यथार्थवादी और व्यंग्यात्मक चित्र है। साम्यवाद की अनुपस्थिति में प्रजातन्त्रात्मक व्यवस्था किस प्रकार पूँजीवादिता का रूप ग्रहण कर सकती है। इसका चित्रण लेखक ने अपने इस उपन्यास में किया है।

सामाजिक चेतना संयुक्त सामाजिक शब्द है। समस्त पद के रूप में सामाजिक चेतना में समाज और चेतना दोनों का सम्मिलित अर्थ समाविष्ट होता है। सामाजिक चेतना समाज की अबाधित, अनवरत और विकासशील प्रवृत्ति है। यही मानव समाज को पशु से विभक्त करती है। सामाजिक चेतना का प्रयोग व्यापक अर्थो में भी होता है, न केवल यह समूह में सामाजिक नियन्त्रण से सम्बन्धित है, अपितु समूह के सदस्यों के पारस्पारिक व्यवहार पर भी प्रकाश डालती है। चेतना सामाजिक वातावरण के प्रभाव से व्यक्ति नैतिकता और उच्च व्यावहारिकता प्राप्त करता है। चेतना और मनुष्य के सामाजिक चरित्र में मौलिक सम्बंध है,क्योंकि मनुष्य केवल चेतना से उत्पन्न प्रेरणा के कारण ही कोई कार्य करता है। किसी मनुष्य की चेतना उसकी व्यक्तिगत सम्पत्ति न होकर सामाजिक उपक्रम का परिणाम होती है।

प्रत्येक युग में सामाजिक चेतना के कई स्तर होते हैं। सामाजिक चेतना व्यक्ति की भी हो सकती है, समूह की भी, व्यक्ति की भी सामाजिक चेतना व्यक्ति अनुभव के आधार पर निर्मित होती है, अत: उसे व्यापक रूप देने के लिए आवश्यक है, कि सामाजिक, समूची सामाजिक गतिविधियों के प्रति सचेष्ट रहे और अपने को समग्र परिवेश से जोड़कर रखे। आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियों तथा समाज में प्रचलित परम्परागत मूल्यों के परस्पर संघात से जो नयी-नयी स्थितियाँ उत्पन्न होती है। उनकी समझ और विश्लेषणात्मक शक्ति सामाजिक चेतना है। डॉ0 लाल साहब सिंह के अनुसार 'साहित्य सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है। अत: साहित्य का इतिहास मानव-समाज के बाह्य एवं आन्तरिक विकास का लेखा-जोखा हो जाता है। साहित्य केवल ऐतिहासिक तथ्यों का विवरण मात्र नहीं है, वरन् वह मानव की मनोवृत्तियों के विकास का सरस चित्रण भी है।'[1] साहित्यकार अपनी प्रतिभा के लेन्स को समाज में फिराकर उसे समाज का पक्षधर बनाता है। प्रत्येंक समाज किसी न किसी विचार, जीवन-दर्शन से परिचालित होता है, और इन जीवन मूल्यों या जीवन-दर्शनों की महानता किसी भी साहित्य की महानता का मापदण्ड है, अत: समर्पित साहित्यकार मानवीय औदार्य सहिष्णुता, प्रेम,मानव-समानता आदि जीवनगत मूल्यों का समसमायिक सन्देश देता चलता है। वह मनुष्य को जीवन की कश्मकश में तोड़ देने वाली निराशओं, कुण्ठाओं की उपेक्षा करके जुझने का बल देता है।

स्वातन्त्रोत्तर हिन्दी उपन्यासकारो में राजेन्द्र यादव की अपनी पहचान हैं। उनके उपन्यासों का उद्देश्य प्रगतिवादी चिन्तन के आधार पर मध्यवर्गीय समाज के पारिवारिक जीवन का विश्लेषण तथा चित्रण करना है। डॉ. शिवनारायण श्री वास्तव के शब्दो में 'राजेन्द्र यादव में बड़ी तीव्र अनुभूति, कुशल कल्पना तथा संजीव चित्र विधायिनी प्रतिभा है।'[2] उनके उपन्यासो मे आग्रहयुक्त समाजवादी चेतना का प्रस्फुटन हुआ है। वे जन जीवन में व्याप्त विषमताओं का उद्घाटन करते है, युग धर्म को आत्मसात करने की जागरूकता उनमें सतत् दिखाई देती है। राजेन्द्र यादव के प्रमुख उपन्यास है – प्रेत बोलते है'(1952 लन),उखड़े हुऐ लोग (1955 लन) शह और मात' (1956 लन), अनदेखे अनजान पुल' (1963 लन), तथा मंत्रविद्ध थे उनकी प्रखर अनुभूति तथा जीवन्त चित्रण शक्ति के प्रमाण है। डॉ. शिव 'सारा आकाश'(1960) यादव के प्रथम उपन्यास प्रेत बोलते है का संशोधित और परिमार्जित रूप है। यह राजेन्द्र यादव की दृष्टि से उनका तीसरा उपन्यास भी है' और पहला भी,क्योंकि यह उनके पहले उपन्यास प्रेत बोलते है, का रूपान्तरण है ।[3] एक इंच मुस्कान उनका तथा उनकी लेखिका पत्नी मन्नू भण्डारी की सम्मिलित कृति है।

'उखेड़े हुए लोग' उपन्यास में राजेन्द्र यादव ने आज के जीवन में सर्वत्र व्याप्त भ्रष्टाचार, अनैतिकता तथा यौन लिप्सा का निरूपण किया है। समाज में इधर जो परिवर्तन हुए है, उनके अन्तर्गत सत्ता और पूँजी में एक अलिखित समझौता हो गया है, और इस अपवित्र गठबन्धन के फलस्वरूप साधन-हीनों का शोषण हो रहा है। साम्यवाद की शोषण विरोधी नीति एवं सामान्य जन हितकारी भावना से पूरित प्रस्तुत उपन्यास अत्याधुनिक सामाजिक व्यवस्था तथा सामाजिक सम्बन्धों का एक अत्यन्त सजीव यथार्थवादी और व्यंगयात्मक चित्र है।' डॉ.त्रिभवन सिंह के अनुसार 'साम्यवाद की अनुपस्थिति में प्रजातन्त्रात्मक व्यवस्था किस प्रकार पूँजीवादिता का रूप ग्रहण कर सकती है, इसे लेखक ने खोलकर दिखाया है।'[4]

इसमें लेखक ने एक बड़े पूंजीपति के मिथ्याडम्बर का निर्मम विश्लेषण करते हुए ऐसे लोगों के चित्र अंकित किये हैं, जो समझ बूझ रखते हुए भी अपनी दुर्बलताओं के तथा कपटाचारियों के शोषण के शिकार हुए हैं, छोटे-

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, इछावर, जिला – सीहोर (म.प्र.) भारत

मोटे समझौतों में टूटे है, और जिनका भविष्य अन्धकारमय हो उठा है।

उपन्यास की कथा का आरम्भ शरद और जया से होता है, जो सम्मिलित जीवन-यापन पर विचार करते-करते विवाह कर लेते है। 'शरद सामाजिक धरातल पर विवाह को एक व्यक्तिगत समस्या समझता है। परन्तु विवाह का रूढ़िग्रस्त मिटता हुआ आधुनिक व्यक्ति मानस के अनुकूल नहीं है, वरन् उसके विकास में सबसे बड़ा बाधक है। किन्ही भी कारणों से जब तक विवाह का यह रूप नहीं बदलता तब तक व्यक्ति को पूरी स्वतन्त्रता है कि इस मसले को भविष्य के समाज की दृष्टि से आज शुद्ध व्यक्तिगत स्तर पर हल कर ले।'[5] आज विवाह एक समझौता है और इसके अतिरिक्त कुछ हो भी नहीं सकता। शरद और जया का घर से भाग जाना इस जीवन, दृष्टि का परिणाम है इस नयी परिस्थिति के कारण शरद को वकालत की ट्रेनिंग छोडनी पड़ती है और वकील के परिचित मित्र श्री देशबन्धु एम.पी. की शरण लेनी पड़ती है। इस उपन्यास में वर्ग भेद, जात-पात तोड़ने की आवश्यकता सिद्ध की गयी है, योकि उसके बिना सुख उल्लास एवं सहजता नहीं प्राप्त हो सकती है। शरद ब्राहमण है और जया कायस्थ, लेकिन दोनों विवाह करके सुखी इसलिये रहते हैं कि उन्होंने भेदभाव की उपेक्षा मानवीयता को अधिक महत्व दिया है।

देशबन्धु कांग्रेस की पूंजीपति नेता है। बाहर बालों की दृष्टि में वे त्याग की प्रतिमूर्ति समाज के सच्चे सेवक,उदायशय तथा धर्मात्मा व्यक्ति मालूम पड़ते है। किन्तु निकट आने पर मालूम पड़ता है कि उनकी देश सेवा, उदरता, विनम्रता, धार्मिकता आदि सब ऊपरी आडम्बर हैं। अपनी मीठी बोली से सीधे सादे लोगो को फांसकर उनका रक्त चूसने में नेताजी सिद्धहस्त है। उनकी नेतागिरी तो उसके धन कमाने का साधनमात्र है। किसी व्यक्ति पर किसी क्षेत्र में यदि वह रूपया खर्च करते हैं, तो उससे कई गुना वसूल भी कर लेते हैं। उनके कमीनेपन का साक्षात् उदाहरण माया देवी हैं। वह आन्दोलन में देशबन्धु के साथ रही और यह न जानते हुए कि वह विवाहित हैं, उनसे प्रेम करने लगी। माया देवी का पति स्वयं लाखों का आदमी है, वह माया देवी को डांटता-धमकाता भी है। किन्तु देशबन्धु का कुछ ऐसा जादू है कि वह उनके पीछे दीवानी है, उन्हें लाखों की सम्पत्ति दी, अपने पति से उनकी मित्रता कराई, पूंजीपति, बनाने में सहायता दी, किन्तु देशबन्धु ने माया देवी के पति को विष दिया ओर स्वयं माया देवी उनकी रखेली से अधिक पद न पा सकी। बाद में जब उन्हें देशबन्धु के असली स्वरूप का, उनकी लम्पटता का, नारी मात्र के प्रति उनकी कमजोरियों का पता चलता हे तो माया देवी निराशा एवं विद्वेष से विक्षुब्ध हो उठती है। इसकी प्रतिक्रिया स्वरूप उनके मन में ऐसी ग्रन्थियाँ बन जाती हैं कि वह हर पुरूष को आकर्षित करने का फसानें का प्रयत्न करती हैं। देशबन्धु के माध्यम से कांग्रेसी शासन व्यवसायी की कमियों और नेताओं की अनीतियों पर प्रकाश अपने आप पड़ता रहता हैं। अत: लेखक ने बड़ी कुशलता के साथ वैयक्तिक चेतना को सामाजिक चेतना के स्तर पर प्रस्तुत किया है।

माया देवी के प्रसंग के द्वारा लेखक ने वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में पुरूष द्वारा किये जाने वाले नारी के शोषण और उसकी कुण्ठाओं का विश्लेषण और विवेचन करने का प्रयत्न किया है। माया देवी देशबन्धु के मायावी रूप में फंसकर अपना सर्वस्य लुटा देती हैं, और प्रतिदान में देशबन्धु के प्रेम के स्थान पर पाती है, उत्पीड़न, घुटन, कुण्ठा, और निराशा। किन्तु परिस्थितियों से समझोता करने के अतिरिक्त उसे भी और कोई मार्ग दिखाई नहीं देता हैं। अन्त में देशबन्धु के बलात्कार से अपनी रक्षा करने के प्रयत्न में उसकी पुत्री द्वारा आत्महत्या कर लेने पर वह भी पूरी तरह टूट जाती है। इस घटना से आतंकित होकर शरद और जया भी देशबन्धु का आश्रम छोडकर चले जाते हैं। उनकी जिन्दगियॉ उखड़ जाती हैं।

उपन्यास में राजेन्द्र यादव ने मध्यम वर्ग कें बुद्धि-जीवियों की त्रिशंकु सी स्थिति का आत्मविश्लेषण स्वयं शरद द्वारा व्यंगयात्मक रूप में करवाकर अपने प्रगतिवादी दृष्टिकोण का परिचय दिया है। विगुल का सम्पादक और सूरज भी देशबन्धु के शोषण के शिकार है। उनके जीवन में परिस्थितियां और विवशताओं की व्याख्या और विश्लेषण में उनकी उखड़ी हुई जिन्दगियों की वास्तविकता निहित है। डॉ.प्रभास चन्द्र शर्मा मेहता के शब्दों 'उपन्यास में इन सभी पात्रों की उखड़ी जिन्दगियां परिस्थितियों से समझौता करती हुई मुर्दा होकर भी टिकी हुई हैं।'[6]

इस उपन्यास में वर्णित आस्थाविहिन मध्यम वर्ग की उखड़ी-उखड़ी जिन्दगियों के मूल में आर्थिक विषमता पर आधारित समाज व्यवस्था का जो स्वरूप है, उसने सभी प्रकार के मानवी सम्बन्धों को विकृति और अप्राकृतिक रूप प्रदान कर रखा है। मध्यम वर्ग, कुण्ठा, नारी, इत्यादि के तर्क वितर्क से उबारना नहीं जानता। अपने जीवन की विवशता, विफलता और निराशा को लेकर उसका बुद्धिवाद केवल जीना चाहता है। उसका मत है, लगातार भविष्य में सपने देखना अन्धविश्वास है, हवाई उड़ान है। 'लगातार पीछे देखना पलायनवाद है, .और वर्तमान हमारा है, भी इनता कटु कि उसे सह नहीं सकते। अत: उसके जिस क्षण को जीते हैं उसे ही गनीमत समझते हैं। हस - खेलकर जी लेना चाहते हैं, लिव इन द मोमेंट क्षण में जियों जो क्षण सामने है उसका वेस्ट यूज करो, एनजाय करो।'[7] जीवन की वास्तविकता मध्यम वर्ग के व्यक्ति की दृष्टि में टूटने से अधिक कुछ नहीं है। 'सचमुच वास्तविकता तो यह है कि हम सब टूटे हुए व्यक्तित्व के लोग है। हमारे स्वाभाविक गठन और व्यक्तित्व को कुछ इस तरह मरोड़ दिया है, जैसे गीली मिट्टी से बनी सुन्दर मूर्ति को कोई अत्यन्त निर्दयता से मरोड़ डाले।'[8] मजदूर वर्ग का स्वर क्रांन्तिकारी है। वह चिल्लाकर कहता है, 'हमारी किस्मत में वही वादा है-यही लिखा है। जिन्दा रहोगे तो तुम्हारा खून मिलो मे निचोड़ा जायेगा तुम बयालरों में जल-जलकर मरोगे और वैसे मरने से इन्कार कर दोगे तो नतीजा सामने है। जब तक यह खद्दर के दूध से धुले चोगे पहने राक्षस तुम्हारी हमारी छातियों पर है हमारी किस्मत यही है।.यही अहिंसा है ? रामराज्य है ? या यही सब कुछ है वह जिसमे ब्रिटिश राज्य को गाली देने मे यह अपने कोश की सारी गालियाँ खाली कर देते थे।'[9] स्वातन्त्रयोत्तर भारत मे श्रृमिक वर्ग की यह वेदना उत्तर चाहती है। लेखक ने अपने इस उपन्यास को भविष्य के उन प्रयत्नशील कदमों पर चढाया है, जो रूढ़ियों के मुर्दो की छाती पर पॉव रोपकर जीवन का शंख फूकेगें और जिनके रथ चक्रों की लीक पर युग की गंगा अपनी दिशाऐं खोजेगी ताकि जीवित लाशो की राखों मे प्राणो का स्पन्दन और सपनों की चेतना जागे।'[10] श्रमिक की वेदना का यही उत्तर है और यही पूंजीवाद को चेतावनी है।

'उखड़े हुए लोग' उपन्यास में पूँजीवाद, मध्यम वर्ग और श्रमिक तीनो वर्गो के जीवन की सजीव झांकिया प्रस्तुत की गयी है। मध्यम वर्ग का पूँजीवाद के विरूद्ध संघर्ष का केन्द्र है बिगुल कार्यालय और श्रमिक वर्ग तथा पूँजीवाद के बीच संघर्ष का क्षेत्र है, सत्यामिल्स। इस प्रकार मध्यम और श्रमिक वर्ग दोनों में अन्तर यह है कि मध्यम वर्ग का संघर्ष केवल बौद्धिक और तार्किक है जबकि निम्न वर्ग हड़तालों, नारों, और विरोध प्रदर्शनो में विश्वास रखता है। इस प्रकार इस कृति मे मार्क्सवादी जीवन दृष्टि यान्त्रिक न होकर विकासशील है।

राजेन्द्र यादव ने अपने इस उपन्यास में यथार्थ का एक सजीव और कलात्मक चित्र प्रस्तुत किया है। परिवर्तित मानव मूल्यों एवं आधुनिक सन्दर्भो के प्रति उनकी दृष्टि जिज्ञासा की रही है और उन्होंने उन्हें बड़े सन्तुलित ढंग से प्रस्तुत करने की चेष्टा की है, उपन्यास में स्त्री पुरूषों के सम्बन्धों की समस्याओं पर प्रकाश डाला गया हैं। इनके अतिरिक्त समाज के विभिन्न वर्गो की विषमता, आर्थिक प्रश्न एवं राष्ट्रीय आन्दोलन आदि प्रकरणों का चित्रण किया है। उन्होंने अपने चरित्र चित्रण मे इस बात का ध्यान रखा है कि वे आरोपित या यन्त्रात्मक न प्रतीत हो। वरन् अपने सहज स्वाभाविक रूप से ही विकसित हों।

डॉ0 लाल साहब के शब्दों मे उनके उपन्यासो में आज के धवंसोन्मुख मध्यवर्गीय जीवन एवं समाज की गलन-शीलता सांड़ाध एवं नारी पुरूष के बनते-बिगड़ते सम्बन्धों का यथार्थवादी चित्र उपस्थित किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी उपन्यासों में सामायिक चेतना कुण्ठा - डॉ0 लाल साहब सिंह (पृष्ठ-09)
2. डॉ0 शिवनारायण श्रीवास्तव हिन्दी उपन्यास - (पृष्ठ-485 व 489)
3. डॉ0 त्रिभुवन सिह हिन्दी उपन्यास - (पृष्ठ-19)
4. उखडे हुए लोग - राजेन्द्र यादव (पृष्ठ-19)
6. डॉ0 प्रभास चन्द्र शर्मा मेहता - प्रगति और हिन्दी उपन्यास (पृष्ठ-478)
7. उखडे हुए लोग - राजेन्द्र यादव (पृष्ठ-50)
8. उखडे हुए लोग - राजेन्द्र यादव (पृष्ठ-225)
9. उखडे हुए लोग - राजेन्द्र यादव
10. उखडे हुए लोग - राजेन्द्र यादव
11. डॉ0 लाल साहब सिंह - हिन्दी उपन्यासो में सामयिक चेतना उखडे हुए लोग राजेन्द्र यादव (पृष्ठ-146)

****

हिन्दी भाषा का उद्‌गम

डॉ. नरेन्द्र सिंह *

प्रस्तावना – दरअसल कुछ गुनिया या ओझा भाषा का न तो परिष्कार कर सकते हैं और न स्वरूप निर्धारण। गनीमत है कि हिन्दी को पाणिनी, कात्यायन या पतंजली नहीं मिले वरना यह भी 'कूप जल' हो जाती, 'बहता नीर' नहीं रहती और यह बार बार नित नई चाल में नहीं ढल पाती। कभी भारतेंदू ने कहा था कि 'हिन्दी नई चाल में ढल रही है' और अभी हिन्दी के प्रसिद्ध संस्मरण लेखक एवं भाषाविद् प्रो. कांति कुमार जैन कहते हैं कि 'हिन्दी फिर से नयी चाल में ढलने जा रही है'[1]।

भाषा की पवित्रता या शुचिता को लेकर चिंता करने वाले लोग भाषा की उत्पत्ति एवं उसके विकास से या तो अनभिज्ञ हैं या उसे अनदेखा करते हैं। हमारी भाषा की विकास यात्रा की शुरूआत उपलब्ध स्रोतों के अनुसार 'विरोस' समाज की यात्रा के साथ शुरू होती है। यह समाज भारोपीय भाषा का मूल प्रयोक्ता रहा है। इनके मूल स्थान के बारे में विभिन्न मत प्रचलित हैं। एक मत इनका मूल स्थान 'भारत' मानता है। एक मत भारत के बाहर एशिया में ही कहीं मानता है। एक मत 'यूरोप' को इनका मूल स्थान मानता है और एक मत इन्हें यूरोप-एशिया के किसी संधि स्थल को मानता है। पर इतना सब स्वीकार करते हैं कि इसकी दो शाखाएँ बनी, एक ईरान में बसी और दूसरी भारत में, कुछ पहाड़ी क्षेत्रों में भी बसे जिन्हें यदरद कहा गया। भारत में आर्यो के द्वारा लिखे गये पहले ग्रंथ, 'ऋग्वेद' में ईरान की भाषा 'अवेस्ता' के बहुत से शब्द मिलते हैं जो इन जातियों की नजदीकी या संपर्क का प्रमाण है।

वान ब्रैडले ने भारोपीय परिवार के दो वर्ग बनाये, सतम् वर्ग और केंतुम वर्ग। यह सतम् अवेस्ता भाषा का शब्द है। इसी वर्ग की एक शाखा भारत-ईरानी है इसे हिंद-ईरानी या 'आर्य' भाषा भी कहते हैं। 'भारोपीय परिवार की यह शाखा बहुत महत्वपूर्ण है। इस परिवार का प्राचीनतम प्रामाणिक साहित्य अपने शुद्ध अर्थो में इसी शाखा में मिलता है। इतना नहीं ऋग्वेद के बराबर पुराना शुद्ध साहित्य संसार की किसी भी भाषा में कदाचित नहीं मिलता। ऋग्वेद की कुछ ऋचाएँ दो हजार ई.पू. तक लिखी जा चुकी थी, ऐसी कुछ विद्धानों की धारणा है और 1500 ई.पू. तक तो इसका बहुत सा अंश लिखा जा चुका था।'[2] ईरानी में भी उस समय साहित्य रचना हो रही थी किन्तु 323 ई.पू. में सिकंदर और 651 ई. में अरबी आक्रान्ताओं ने ईरानी के पुराने साहित्य को जला डाला। अब वहाँ का उपलब्ध प्राचीनतम साहित्य यअवेस्ता है जिसकी भाषा ऋग्वेद से बहुत मिलती है। सातवीं सदी ई.पू. की इस पुस्तक की टीका या जेन्द पहलवी भाषा में लिखी गयी इसलिए इसे जेन्दावेस्ता भी कहते हैं। ईरानी की कुछ भाषाएं भारत से लेकर कैस्पियन सागर तक मिलती हैं इनमें फारसी, पारसी, कुर्दिश, पामीरी आदि हैं जो संस्कृत, अवेस्ता, फारसी और प्राकृत की नजदीकी स्थापित करती हैं। भारत और ईरान के लोग स्वयं को आर्य कहा करते थे। इसमें ईरानी (पारसी) जाति के यहाँ 'अवेस्ता' का वही महत्व था जो भारतीय जाति में 'वेद' का। दोनों जातियाँ यज्ञ एवं देवताओं को मानने वाली थीं पर 'जरस्थुश्च' के बाद दोनों धार्मिक दृष्टि से बिलकुल अलग हो गए और फिर अवेस्ता और संस्कृत दूर-बहुत दूर होती गई।

'भारत में प्रवेश करने वाले आर्यो के विभिन्न दलों की भाषा में कुछ न कुछ भिन्नता अवश्य थी परन्तु उनमें साहित्यिक भाषा का एक सर्वमान्य रूप विकसित हो गया था।' इसी साहित्यिक भाषा में 'ऋग्वेद' के सूक्तों की रचना हुई। दीर्घकाल तक ये सूक्त, श्रुति परंपरा से ऋषि परिवारों में सुरक्षित रखे जाते रहे। परन्तु जैसे जैसे बोलचाल की भाषा से सूक्तों की भाषा की भिन्नता बढ़ती गयी और वह दुर्बोध होने लगी, वैसे-वैसे इसके प्रत्येक प्राचीन-रूप को सुरक्षित रखने के लिए संहिता के प्रत्येक पद को संधि-रहित अवस्था में अलग-अलग कर 'पद पाठ' बनाया गया तथा 'पद पाठ' से यसंहिता पाठ बनाने के नियम निर्धारित किए गये और प्रत्येक 'वेद' की विभिन्न शाखाओं के 'प्रतिशाख्यों' की रचना हुई। प्रति शाख्यों में अपनी-अपनी शाखा के अनुरूप वर्ण विचार, उच्चारण विधि, पद पाठ से संहिता पाठ बनाने की विधि आदि विषयों पर पूर्णतया विचार किया गया है। पदपाठों एवं प्रति शाख्य-ग्रंथों से यह असंदिग्ध रूप से विदित होता है कि इनकी रचना के समय संहिता का जो रूप था, वही अविकल रूप से आज हमें प्राप्त हुआ है।'[3]

वैदिक संस्कृत काव्य-भाषा होने के कारण तत्कालीन बोलचाल की भाषा से थोड़ी भिन्न दिखाई देती है, जबकि इनके बाद लिखे गए ब्राम्हण एवं उपनिषद आदि का जो गद्य है वह बोलचाल की भाषा के अधिक नजदीक है। सात सौ ई.पू. के बाद संस्कृत का विकसित रूप मिलने लगता है इसे सूत्रों में देखा जा सकता है।' यह संस्कृत पाणिनीय संस्कृत के काफी पास पहुँच गई है, यद्यपि उसमें पाणिनीय संस्कृत की एक रूपता नहीं है। इसी काल के अंत में लगभग पाँचवी सदी में पाणिनी ने अपने व्याकरण में संस्कृत के उदीच्य में प्रयुक्त रूप के अपेक्षाकृत अधिक परिनिष्ठित एवं पण्डितों में मान्य रूप को नियमबद्ध किया, जो सदा-सर्वदा के लिए लौकिक या क्लैसिकल संस्कृत का सर्वमान्य आदर्श बन गया। पाणिनी की रचना के बाद बोलचाल की भाषा पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, आधुनिक भाषाओं के रूप में विकास करती आज तक आई है।'[4]

पाणिनीय व्याकरण ने संस्कृत को 'क्लासिक' रूप दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि संस्कृत का एक स्थाई रूप बन गया, उसमें परिवर्तन की संभावना लगभग खत्म हो गयी और एक लंबे समय बाद उसे 'कूप जल' कहा जाने लगा। पर उस समय जो जन भाषा थी या बोलचाल की भाषा थी उसमें निरंतर परिवर्तन होते रहे, इसी भाषा को मध्यकालीन आर्य भाषा कहा गया, इसे ही 'प्राकृत' कहा गया। प्राकृत के बारे में दो तरह की धारणाएं हैं, ग्रियर्सन का मानना है कि प्राकृत जनभाषा थी जिसे पंडितों ने परिष्कृत कर 'वैदिक संस्कृत' का रूप दिया, और बाद में लौकिक रूप दिया। नेमि साधु भी

* प्राध्यापक एवं अध्यक्ष (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

'प्राकृत' को पुरानी भाषा मानते हैं जिसको संस्कारित करके संस्कृत बनाई गई। वे काव्यालंकार की टीका में लिखते हैं –'प्राकृतेति एक लजग, जन्त्मां व्याकरणादिमिरनाहत संस्कार: सहजो वचन व्यापार: प्रकृति: प्रकृति तत्र भव: सेव वा प्राकृतम्।' वाक्यपति राज भी गउडबहों में कहता है कि 'जैसे जल सागर में प्रवेश करता है और सागर से ही निकलता है, उसी प्रकार सभी भाषाएँ प्राकृत में ही प्रवेश करती है, और प्राकृत से ही निकली हैं।' दूसरी धारणा यह है कि प्राकृत का जन्म संस्कृत से हुआ है। 500 ई.पू. से 1000 ई. तक बोली जाने वाली प्राकृतें संस्कृत से उत्पन्न हैं। वस्तुत: संस्कृत के पहले बोली जाने वाली जनभाषा 'प्राकृत' थी और जब 'संस्कृत' के वैदिक और लौकिक रूप बने उस समय की जनभाषा भी प्राकृत थी और जिसे संस्कृत से उत्पन्न मध्यकालीन आर्य भाषा कहा जाता है वह भी तत्कालीन जनभाषा 'प्राकृत' ही थी जिससे बाद में 'अपभ्रंशों' का विकास हुआ। जब संस्कृत नहीं थी उस समय की जनभाषा भी 'प्राकृत' थी और जब संस्कृत 'कूप जल' बन गयी तो जो जनभाषा 'बहता नीर' थी वह भी प्राकृत थी। प्राय: बोलचाल की भाषाएं ही परिष्कृत होकर साहित्यक भाषा बनती हैं और जब 'साहत्यिक भाषाएं' जनता से दूर होती है तो 'जनभाषा' पुनर्नवा बनकर विकसित होने लगती हैं।

जब संस्कृत 'क्लैसिक' हो गयी तो तत्कालीन जनभाषा का जो रूप विकसित हुआ उसे 'प्राकृत' कहा गया। अब उसको तीन कुलों में बाँटा गया है। 500 ई.पू. से 1 ई. तक प्रथम प्राकृत, 1 ई.से 500 ई. तक द्वितीय प्राकृत और 500 ई. से 1000 ई. तक तृतीय प्राकृत। इसमें प्रथम प्राकृत को 'पालि और अभिलेखी प्राकृत कहा जाता है। द्वितीय प्राकृत के अन्तर्गत सभी तरह की यप्राकृतें' और तृतीय प्राकृत के अन्तर्गत विभिन्न अपभ्रंशें एवं अवहट्ट भी आती हैं।

'पालि' शब्द की व्युत्पत्ति और उसके क्षेत्र के विवादों में न उलझकर हमें यह स्वीकार करने में कोई असुविधा नहीं है कि 'पालि' मध्य देश की भाषा है और इसे शौर सेनी प्राकृत का पूर्व रूप मान सकते हैं। 'पालि' के प्रारंभिक प्रयोग 'भाषा' के रूप में नहीं वरन् 'बुद्ध के वचनों' के रूप में मिलते हैं। 'पालि' शब्द का भाषा के रूप में प्रयोग आधुनिक काल में हुआ। अभिलेखी प्राकृत से आशय है शिलालेखों पर लिखी प्राकृत इसलिए इसे 'शिलालेखी प्राकृत' भी कहते हैं इसमें अशोक एवं अन्य राजाओं द्वारा लिखवाये गए अभिलेख आते हैं।

द्वितीय प्राकृत पहली से लेकर पाँचवी शताब्दी की 'प्राकृत' है। इसके अन्तर्गत विभिन्न धार्मिक, साहित्यक और अन्य प्राकृतें हैं। विभिन्न दृष्टिकोण के आधार पर प्राकृतों के बहुत सारे भेदों के उल्लेख मिलते हैं परन्तु मुख्य रूप से पाँच प्राकृतों को ही स्वीकार किया जाता है। 1.शौरसेनी, 2.पैशाची 3.महाराष्ट्री, 4.अर्द्धमागधी एवं 5. मागधी। 'प्राकृतों में अधिकांश शब्द तद्भव हैं। इनमें उन शब्दो के भी तद्भव है जो आस्ट्रिक या द्रविड़ आदि से संस्कृत में लिए गए थे। साथ ही इस काल तक आते-आते आर्य-भाषा में अनुकरण या अन्य आधारों पर बने बहुत से देशज शब्दों का भी विकास हो गया था। संस्कृत के माध्यम से या सीधे कुछ ग्रीक, ईरानी, तुर्की एवं अरबी शब्द भी प्रयुक्त होने लगे थे।'

द्वितीय प्राकृत काल की 'प्राकृतों' ने भी जब साहित्यिक रूप धारण कर लिया तो उसका संबंध 'जनभाषा' से दूर होता गया। इस काल की जनभाषा को ग्रामीण भाषा, देसी भाषा, आभीरी, अवहंस या अपभ्रंश कहा गया। 'अपभ्रंश' शब्द का प्रयोग सबसे पहले व्यादि और पतंजलि के द्वारा हुआ। भरत मुनि ने भी 'विभ्रिष्ट' शब्द का प्रयोग किया है। परन्तु इन्होंने इस शब्द का प्रयोग किसी भाषा के लिए नहीं किया बल्कि उन शब्दों के लिए किया जो तत्सम के तद्भव या विकृत रूप हैं। संभवत: जब जनभाषा में विभ्रष्ट शब्द, शैली और रूप की प्रधानता हो गयी हो तो उस भाषा को अपभ्रंश कहा जाने लगा हो। यहाँ यह भी ध्यान रखना चाहिए कि किसी क्षेत्र विशेष की भाषा अपभ्रंश नहीं थी बल्कि जितनी प्राकृतें थी उन सभी की उतनी ही अपभ्रंशों का विकास हुआ। ऊपर जिन प्राकृतों का उल्लेख हुआ, उनमें एक 'ब्राचड' अपभ्रंश और मानी जाती है। इन अपभ्रंशों से जो आधुनिक भाषाएं निकली वे इस प्रकार हैं – शौर सेनी अपभ्रंश से पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, पहाड़ी, पैशाची अपभ्रंश से लहँदा, पंजाबी, ब्राचड अपभ्रंश से सिंधी, महाराष्ट्री अपभ्रंश से मराठी, अर्धमगधी अपभ्रंश से पूर्वी हिन्दी, और मागधी अपभ्रंश से बिहारी, बंगाली, उड़िया और असमिया। यह तो ठीक है कि उत्तर भारत में बोली जाने वाली आर्य भाषाएँ हिन्दी की बहिनें हैं।'[5] पर यह कहना कि हिन्दी भाषा का उद्भव संस्कृत से हुआ है प्रमाणिक नहीं है। सर विलियम जोंस ने तो कहा था कि ग्रीक और लातिन का संस्कृत से इतना घनिष्ठ संबंध है कि वे निश्चित ही किसी एक सामान्य स्रोत से निकली प्रतीत होती है।'[6] संस्कृत कालीन बोलचाल की भाषा विकसित होकर पालि फिर प्राकृत फिर क्षेत्रीय अपभ्रंशो का विकास हुआ।[7] अत: संस्कृतकालीन या कह सकते हैं कि संस्कृत पूर्व की बोलचाल की भाषा धारा प्रवाहित होते-होते हिन्दी बनी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. कांति कुमार जैन- इक्कीसवीं शताब्दी की हिन्दी, साहित्यवाणी इलाहाबाद, पृ.7
2. डॉ. भोलानाथ तिवारी- भाषा विज्ञान, किताब महल, इलाहाबाद, 2008 पृ. 131
3. उदय नारायण तिवारी-हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास, लोक भारती इलाहाबाद, 2003 पृ. 25
4. डॉ. भोलानाथ तिवारी, भाषा विज्ञान, किताब महल इलाहाबाद 2008 पृ. 144
5. डॉ. भगीरथ मिश्र, हिन्दी साहित्य का परिचयात्मक इतिहास, राधाकृष्ण नयी दिल्ली 2010 पृ.11
6. देवेन्द्र नाथ शर्मा, भाषा विज्ञान की भूमिका, राधाकृष्ण, नयी दिल्ली, 2000 पृ.111
7. भोलानाथ तिवारी, हिन्दी साहित्य का इतिहास सं. नगेन्द्र, मयूर पेपर वेक्स 2000 पृ. 6

****

जनवादी कवि "धूमिल"

डॉ. मीना डोनीवाल *

प्रस्तावना – सुदामा पांडे धूमिल साठोत्तारी हिन्दी कविता के सशक्त हस्ताक्षर हैं। उनके साहित्य का जनवादी स्वर उन्हें भीड़ से अलग खड़ा कर देता है। साठोत्तरी कविता में भारतीय प्रजातंत्र, संसद तथा संस्थानों का सक्रिय और प्रबुद्ध विरोध दिखाई देता है। 'धूमिल' इस विरोध की अभिव्यक्ति के महत्वपूर्ण कवि हैं। उन्होंने समकालीन हिन्दी कविता को महत्वपूर्ण ही नहीं, प्रबुद्ध भी बनाया। उनका संपूर्ण साहित्य जनवादी चेतना का सबल प्रमाण है। उनकी काव्य–चेतना 'संसद से सड़क तक' से लेकर 'सुदामा पांडे का प्रजातंत्र' तक आक्रोश और विद्रोह से युक्त प्रतीत होती है। उनकी दृष्टि में जनवाद का अर्थ प्रजातंत्र का विरोध है। इस संबंध में डॉ. शुकदेव सिंह का कथन है – 'धूमिल अपने समय का ही नहीं, हिन्दी का सबसे महत्वपूर्ण जनकवि और जनवादी कवि था।'

विषय प्रतिपादन – जनवादी कविता का तात्पर्य स्पष्ट करते हुए डॉ. नरेन्द्र सिंह ने लिखा है – 'जनवादी कविता से हमारा तात्पर्य उस कविता से है, जो जनता के मानसिक परिष्कार, उसके आदर्श और मनोरंजन से लेकर क्रांति–पथ की तरफ मोड़ने वाली प्राकृतिक शोभा और प्रेम, शोषण और सत्ता के घमंड को चूर करने वाली, स्वतंत्रता और मुक्ति के गीतों को अभिव्यक्ति देने वाली ये सभी कोटियां जनवादी काव्य की हो सकती हैं।

धूमिल का कवि हृदय, लोकमानस की तकलीफों व दर्द को दूर करने प्रयासरत है। इसीलिए वे कविता को हथियार के रूप में प्रयोग करते हैं। उन्होंने अपनी कविता के माध्यम से व्यवस्था के शोषण–चक्र तथा दरिन्दगी को उजागर किया और लोगों को नया सोचने–समझने तथा विचारयुक्त होकर सामाजिक विसंगतियों को दूर करने की प्रेरणा दी। धूमिल जीवन जीने के लिए रोटी, कपड़ा, मकान के अलावा मानसिक खुराक को सबसे बड़ी चीज मानते हैं। मानसिक खुराक की कमी के कारण कुंठा होती है, निराशा, हताशा और छटपटाहट होती है। 'धूमिल' उस पूंजीवादी और सामंतवादी व्यवस्था के विरोध में हैं, जो स्वाधीनता के बाद भी आमजन को उसके अधिकारों से वंचित किए हैं, किन्तु गरीब जनता इस चालाकी को समझ नहीं पाती। आजादी के बाद के ढाई दशकों में विकसित हुई जनतांत्रिक पद्धति के संबंध में वे कहते हैं –

'दरअसल अपने यहाँ जनतंत्र
एक ऐसा तमाशा है,
जिसके जान,
मदारी की भाषा है।'

'पटकथा' शीर्षक कविता में धूमिल लोकतंत्र को कोसते नजर आते हैं। इसमें जहाँ उन्होंने मानवीय बेबसी, लाचारी और अत्याचार सहते लोगों के भयावह चित्र दिखाये हैं, वहीं कवि जनता की जनवादी चेतना को उभारना और गति देने में सहायता करना चाहता है। इसीलिए कवि जनता से संवाद करते हुए कहता है –

'इसलिए उठो और अपने भीतर सोए हुए जंगल को आवाज दो,
उसे जगाओ और देखो कि तुम अकेले नहीं हो
और न किसी के मोहताज हो।
लाखों हैं जो तुम्हारे इंतजार में खड़े हैं।'

धूमिल की काव्य–कला, संवेदना और सामाजिक पक्षधरता को समझने की दृष्टि से 'पटकथा' कविता महत्वपूर्ण स्थान रखती है। नेमीचंद जैन ने पटकथा' कविता के संबंध में लिखा है –

'देश की और अपनी ऐसी बेरहम तस्वीर इतनी बेबाकी से उतार सकता एक समर्थ सर्जनात्मक प्रतिभा द्वारा ही संभव है और उचित ही यह कविता धूमिल को समकालीन कवियों में एक अलग और ऊँचा स्थान देती है।'

रोटी, कपड़ा और मकान के लिए जनता अपने नेताओं की ओर आशा भरी नजरों से देख रही है। इसके विपरीत नेतागण चुनाव में जीतने की जोड़–तोड़ में लगे हुए हैं। इस संबंध में धूमिल कहते हैं –

'एक दूसरे से नफरत करते हुए वे
इस बात पर सहमत हैं कि इस देश में
असंख्य रोग हैं
और उनका एकमात्र इलाज
चुनाव है।'

वर्तमान व्यवस्था से धूमिल पूर्णत: असहमत थे। उनका आक्रोश कविता के माध्यम से विस्फोट करता है। अपनी कविता शहर में सूर्यास्त में धूमिल ने भाषा–विवाद और देश में व्याप्त चरित्रहीनता के द्वारा जनतंत्र पर कटु व्यंग्य किया है –

'हवा में एक चमकदार गोल शब्द
फेंक दिया है जनतंत्र
जिसकी रोज सैकड़ों बाद हत्या होती है।'

व्यवस्था जिसने जनता को छला है, उसे आईना दिखाना मानों धूमिल की कविताओं का परम लक्ष्य है। धूमिल की प्रथम काव्य–कृति संसद से सड़क तक' राजनीति से मामूली आदमी के संबंध का खुला आख्यान है। साधारण एवं मामूली आदमी का आक्रोश एवं उसकी छटपटाहट बड़े तीखे तेवरों के साथ काव्य में अभिव्यक्त हुई है –

'अब कोई आदमी, कपड़ों की लाचारी में
अपना रंगा चेहरा नहीं पहनेगा
अब कोई दवा के अभाव में
घुट–घुट कर नहीं मरेगा।'

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) ज.हॉ. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत

धूमिल ने सर्वहारा वर्ग की जनवादी चेतना को 'मोचीराम' के माध्यम से व्यक्त किया है। 'सुदामा पांडे का प्रजातंत्र' संग्रह की कविताओं में यह आक्रोश बहुत व्यापक पैमाने पर अभिव्यक्त हुआ है। उन्होंने लिखा है –

'न कोई प्रजा है
न कोई तंत्र है
यह आदमी के खिलाफ।
आदमी का खुला सा षड़यंत्र है।'

धूमिल विषय के स्तर पर ही नहीं, बल्कि भाषा और शैली के स्तर पर भी जनवादी प्रतीत होते हैं। भाषा के स्तर पर उन्होंने सपाट बयानी एवं भदेशपन को प्रमुखता दी, उनकी भाषा में आक्रामकता, तीखापन एवं व्यंग्य के साथ ही ग्रामीण जीवन की सरलता भी है। धूमिल के बाद के अनेक कवियों ने इस शैली को अपनाया। इसलिए धूमिल को जनवादी कविता का पथ–प्रदर्शक कहा जाये तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। धूमिल ने भाषा को उसकी जिम्मेदारी की जगह पर तैनात किया, उसने कविता को एक खास तरह की मुंहफट और खुर्राट ज़बान दी।

निष्कर्ष – धूमिल ने सामाजिक यथार्थ पर पैर रखते हुए सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक स्थितियों का पोस्टमार्टम किया है। उनकी कविताओं में आजादी के सपनों के मोहभंग की पीड़ा और आक्रोश को सशक्त अभिव्यक्ति मिली है। उनकी कविता का प्रमुख स्वर जनवादी भावना है। जनजीवन का कोई ऐसा कोना नहीं है, जिसे कवि ने अपनी खुली आँखों से न देखा हो। मानवीय संवेदनाओं से संपृक्त इनकी रचनाओं में मन को झकझोरने की अपार क्षमता।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. संसद से सड़क तक – सुदामा पांडे धूमिल।
2. कल मुझे सुनना – सुदामा पांडे धूमिल।
3. धूमिल की कविताएं – डॉ. शुकदेव सिंह।
4. धूमिक की श्रेष्ठ कविताएं – ब्रह्मदेव मिश्र, शिवकुमार सिंह।
5. वाग्प्रवाह (जुलाई–दिसम्बर 2010)–सं. डॉ. अनिल कु.विश्वकर्मा।

****

जुझारू व्यक्तित्व के धनी - गजानन माधव मुक्तिबोध

डॉ. सरोज जैन*

प्रस्तावना – मुक्तिबोध एक कठिन समय के कवि हैं। उन्होंने अपने सच को कठिन वैचारिक और भावात्मक संघर्ष से पाया और कविता में चरितार्थ किया। ऐसे समय में जब उनके अधिकार समकालीन छोटी कविताएँ लिख रहे थे, मुक्तिबोध ने प्राय: लंबी कविताएँ लिखने का जोखिम उठाया। अनुभव या विचार दोनों ही स्तरों पर मुक्तिबोध लगातार सरलीकरण के विरूद्ध में रहे क्योंकि वे जानते थे कि सत्य का सरलीकरण संभव नहीं है। उनका संसार हमारा जाना पहचाना रोजमर्रा का संसार है, जिससें मनुष्यता का गहरा संघर्ष अनेक स्तरों पर बराबर चलता रहता है। यही वही संसार है जिसकी प्राणवत्ता, संघर्षशीलता और परिवर्तन की इच्छा पर आज सबसे अधिक हमले हो रहे है। मुक्तिबोध इस अवसर खुरदुरे और रसहीन लगते संसार की बहुलता और विविधता के, मनुष्य की अपराजेयता के पक्षधर एक जुझारू कवि हैं।

मुक्तिबोध का जन्म 13 नबम्बर 1917 में श्योपुर (ग्वालियर) में हुआ था। 1953 में नागपुर विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए.किया। जीविका के लिए 20 वर्ष की उम्र से बड़नगर मिडिल स्कूल में मास्टरी तत्पश्चात् शुजालपुर, उज्जैन, कलकत्ता, इन्दौर, मुंबई, बेंगलोर, बनारस, जबलपुर आदि स्थानों पर मास्टरी, वायुसेना, पत्रकारिता आदि विभिन्न क्षेत्रों में नौकरी की। सूचना एवं प्रकाशन विभाग और आकाशवाणी में काम करने के बाद 'नया खून' में काम और पाठ्य पुस्तक लेखन के उपरांत 1958 से दिग्विजय महाविद्यालय, राजनाँद गाँव में प्राध्यापक पद पर कार्य किया। लम्बी बीमारी के बाद 11 सितम्बर 1964 को नई दिल्ली में निधन हो गया।

नई कविता का आत्मसंघर्ष, नये साहित्य का सौंदर्य शास्त्र, एक साहित्यिक की डायरी (साहित्यालोचना) काठ का सपना, सतह से उठता आदमी (कहानी-संग्रह) विपात्र तथा भारत: इतिहास और संसेंति।

अंग्रेज कवि डब्ल्यु.बी.एट्स के अनुसार –'जब हम अपने से बाहर संघर्ष करते है तो कथा-साहित्य की सृष्टि होती है और जब हम अपने आप से लड़ते हैं तो गीत काव्य की। अपने आप से लड़ने पर जो गीतकाव्य पैदा होता है वह नि:संदेह छायावादी गीत नहीं बल्कि आज की कविता का गीत है।' डॉ. नामवर सिंह के अनुसार लेकिन एक तीसरी भी स्थिति होती है जब हम अपने आप से लड़ते हुए बाहरी स्थिति से भी लड़ने की कोशिश करते हैं तो एक विशेष प्रकार की लम्बी कविताएँ पैदा होती हैं जो आधुनिक कविता की सबसे उपलब्धि है। निराला की 'राम की शक्तिपूजा', 'सरोज स्मृति' आदि लम्बी कविताएँ इसी प्रकार के संघर्ष से उत्पन्न हुई हैं। मुक्तिबोध की लंबी कविताएँ उसी परंपरा में आती है। अशोक वाजपेयी जी के अनुसार- 'मुक्तिबोध की कविता अपने समय का जीवित इतिहास है वैसे ही जैसे अपने समय में कबीर, तुलसी और निराला की कविता। हमारे समय का यथार्थ उनकी कविता में पूरे कलात्मक संतुलन के साथ मौजूद है। उनकी कल्पना वर्तमान से सीधे टकराती है जिस हम फैन्टेसी की शक्ल में देखते हैं। नयी कविता की पायेदार कविता बनकर भी उनकी कविता उससे आगे निकल जाती है, क्योंकि समकालीन जीवन के हॉरर की तीव्रतम अभिव्यक्ति के बाबजूद वह एक गहरे आत्मविश्वास की उपज है। चीजों को वे मार्क्सवादी नजरिये से देखते हैं इसीलिए उनकी कविताएँ सामाजिक यथार्थ के परस्पर गुंफित तत्वों और उनके गतिशील यथार्थ की पहचान कराने में समर्थ है। वे आज की तमाम अमानवीयता के विरूद्ध मनुष्य की अंतिम विजय का भरोसा दिलाती हैं।'

मुक्तिबोध का काव्य विभिन्न प्रभावो को लेकर चला है तो कुछ कविताएं मार्क्सवादी जीवन दर्शन से प्रभावित हैं तो कुछ अस्तित्ववादी जीवनदर्शन से। मुक्तिबोध का काव्य चिंतन प्रधान है किंतु उनके चिंतन में निराला जैसी दार्शनिक तटस्थता अथवा मार्क्सवादियों जैसा निश्चित विवेचन नहीं मिलता। एक भयावह 'त्रासदी, आतंक एवं अपार हाहाकार उनके काव्य को चिल्लाहट का रूप देते हैं। कतिपय समीक्षाओं ने उनके काव्य की तुलना 'जलते हुए अंगारो पर चलने वाले व्यक्ति की मन' स्थिति से की है। उन्होंने संघर्ष कांत मानव की स्थिति का वर्णन करते हुए लिखा है –

दिल के भीतर गर्म ईंट है , गर्म ईंट है।
जले हुए ढूढ के तने सी स्याह पीठ है।
जमाने की जीभ निकल रही है।
ये पंक्तियाँ उनके काव्य का भी परिचय देती है।

मुक्तिबोध को आत्मसंघर्ष का कवि कहा जाता है। समग्र रूप में वे आत्मसंघर्ष के कवि है और उनका काव्य मूलत: उसी की छाया है, उनमें व्यक्ति का आत्मसंघर्ष भी उस वर्ग के आत्मसंघर्ष को अभिव्यक्त करता है लेकिन यह सही है कि उनकी अनेक कविताओं में आत्मसंघर्ष बहुत उत्कट रूप में दिखायी देता है यह आत्मसंघर्ष प्रत्येक कविता में अलग-अलग रूप में प्रकट हुआ है। 'अंधेरे में' कविता में आत्मसंघर्ष मध्यवर्गीय संस्कारों और श्रमिक वर्ग से तादात्म्य की आकांक्षा को लेकर है जबकि ब्रधराक्षस में अपने व्यक्तित्व को अतिरेकवादी पूर्णता देने के लिए अच्छे व उससे अधिक अच्छे को लेकर जिसमें आत्मचेतना और विश्वचेतना भीतर और बाहर के बीच का संघर्ष भी शामिल है।

'ब्रह्मराक्षस' मुक्तिबोध की प्रसिद्ध कविता है। ब्रह्मराक्षस जब मनुष्य योनि में था तो एक शोधक था, सत्य का खोजी। अपनी खोज को लेकर वह बहुत पेरशान था। वह उन समस्याओं का निदान नहीं ढूंढ सका और अन्तत: उसी में घुटकर मर गया। शोधक की ट्रैजेडी यही थी कि वह भीतर और बाहर के, आत्म और विश्व के संबंध को न समझकर उनके बीच के गलत संघर्ष में पिसता रहा।

पिस गया वह भीतरी
औ बाहरी दो कठिन पाटो के बीच
ऐसी ट्रैजेडी है नीच।

अस्मिता की खोज आज के मनुष्य की ज्वलंत समस्या है। आज के व्यापक

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला – सागर (म.प्र.) भारत

सामाजिक संबंधो के संदर्भ में जीने वाले व्यक्तियों के माध्यम से ही मुक्तिबोध ने 'अंधेरे में' कविता में अस्मिता की खोज को नाटकीय रूप दिया है। निस्संदेह अंधेरे में सामान्य स्वप्न कथा नहीं बल्कि दु:स्वप्न का कथालोक है जिसमें हर चीज प्राय: कुछ विकृत, कुछ अन्यथा रूप में दृष्टिगत होती है किंतु काव्य नायक की असाधारण मन: स्थिति को देखते हुए यह असंगत नहीं लगता। डॉ. नामवर सिंह के अनुसार – 'अंधेरे में ' के अंतर्गत सर्वत्र अंधेरा ही नहीं है बल्कि चमकती हुई रंग बिरंगी मणियां भी है, बूंदक और गोली ही नहीं फूलो के गुच्छे भी है भय ही नहीं मानव करूणा भी है। पीडा ही नहीं आस्था भी है। संपूर्ण कविता के अंधकार के ऊपर अस्तित्व की एक आलौकिक सुगंध व्याप्त है।

डॉ.नामवर सिह के अनुसार रघुवीर सहाय और श्रीकांत वर्मा दोनों ही कवियों से मुक्तिबोध में जो विशेष है वह है भयावह शक्ति से जूझने वाले आलोककण के अस्तित्व की पहचान मुक्तिबोध का संसार कुल मिलाकर निषेध का निषेध है यह उसकी विशिष्ट मूल्यवत्ता है।

निस्संदेह मुक्तिबोध अनेक अर्थो में हिन्दी काव्य के इतिहास में अद्वितीय कवि है। उन्हें किसी पंरपरागत विशेषण से नहीं आका जा सकता है। उनकी संवेदना और शिल्प के संबंध में विभिन्न समीक्षको ने विभिन्न प्रकार के मन्तव्य प्रकट किए है। जीवन भर उपेक्षित रहने के बाद मृत्यु के समय सहसा वे अखिल भारतीय बन गए और उनके जीवन और काव्य की तरफ सभी का ध्यान आकर्षित हुआ। सच तो यह है कि उनका काव्य उनके जीवन और व्यक्तित्व से अभिन्न रूप से जुडा है। श्रीकांत वर्मा के अनुसार 'किसी और कवि की कविताएं उसका इतिहास न हो पर मुक्तिबोध की कविताएं अवश्य उनका इतिहास है।'

संदर्भ ग्रंथ सूंची :–

1. कविता के नये प्रतिमान, डॉ नामवर सिंह।
2. निराला और मुक्तिबोध – नंदकिशोर नवल।
3. नयी कविता – डॉ.कांति कुमार जैन।
4. गजानन माधव मुक्तिबोध प्रतिनिधि कविताएँ – अशोक वाजपेयी।
5. आलोचना त्रैमासिक नमावर सिंह अंक।
6. छायावादोत्तर काव्यधारा – डॉ.शिवमंगल सिंह सुमन डॉ.बहादुर सिंह।

****

The Secondary Protagonists in the plays of G.B. Shaw

Dr. Vikas Jaoolkar * Poonam Matkar **

Abstract - The established roles of women were challenged in Victorian era and it was because of painstaking efforts of writers like Shaw that people realized the importance of women. In my research paper I would like to discuss how the women characters in the plays of Shaw played a vital role in uplifting the position of women in the society. I would also like to put emphasis on why they deserved to be the protagonists of the plays but because of the prejudiced minds of Victorian era had to remain content with the tag of secondary characters.

Keywords - Protagonist, secondary protagonist, Victorian era, Feminism, Life-Force.

Introduction - In the words of William Rathbone Greg, "it is not by the monk in his cell or the saint in his closet, but by the valiant worker in humble sphere and in dangerous days, that the landmarks of liberty are pushed forward."After the blossomy days of Romantic period were over, people woke up to a new morning which did not have just the warm sunshine but the tensions of daily survival. The nineteenth-century or Victorian era was one of a realistic spirit and as the times were changing so were the thinking of the people. It was an age of social unrest and political fermentation. The society was undergoing prison reforms, industrial revolutions, political readjustments and the citizens were groaning under the burden of heavy taxation. The various revolutions influenced the people in adverse ways, scientists were inventing new life saving drugs, and Darwin propounded the theories like Origin of Species and Survival of the Fittest. Various theories like *Socialism, Marxism* and *Feminism* came into existence in the Victorian era as a result of numerous revolutions. The social unrest had a strong impact on the works produced in the age and the writers left idealism and romanticism and focused on the problems of society. The violent turbulences in the lives of different classes of society, the struggle to earn a living were the subjects of Victorian writers. Also as the themes and plots changed so did the characters and protagonists. Now the heroes were not some incredible, strong, men who would rule the kingdom and kill the enemies but the common men who were striving hard to fulfill the basic needs.

With the emergence of realism a new movement that came into existence was that of feminism and when Ibsen portrayed the saddening condition of women in the society, Shaw gave them an image of a protagonist but hard as it was to conceive an idea of a woman protagonist in his day, he gave them an additional strength which even women of his time was unaware of. In my research paper I would like to emphasize on the women characters of Shaw and whether were equally or more important as that of the male protagonists of the plays. There are more than sixty- three plays of Shaw and while all are exceptionally good I have confined my research to the study of *Arms and the Man, Man and the Superman, Candida.* George Bernard Shaw was one of the most powerful writers of all times. His subjects varied from socialism, democracy, to prostitution but the most peculiar thing we find in the works of Shaw is his women characters. He never thought of women as some inferior person who was weak or humble, instead his women were strong and independent. Before Shaw the image of women has always been one of a weak, fragile, dependent, a secondary person who stands inferior to men in all facets of life, be it education, finances, law or employment. It happened towards the end of the nineteenth century that women realized the importance of raising their voices to earn equal position as that of men in the society. With the emergence of 'Feminism' as a movement there was born a spirit not only in women but in men as well who knew the capabilities of a strong and independent woman. Critics were always against Shaw for they thought he presented highly unconventional and unbelievable ideas and characters. His characters were not the kings or queens, neither did they carry any mystic, romantic aura around them. They were plain, simple, sometimes shrewd and cunning but someone the audiences could identify themselves with. His men and women were not heroes and heroines in the traditional sense but regular people. With the changing times the role of man was changing but it was very difficult to change the role of women.

The New Women - When writers were busy presenting weaker and suppressed women, Shaw brought the concept of 'The New Woman' who was not a soft target but was a powerful person who could turn the table around. He believed that women were stronger and more intelligent than they think. He was specialized in understanding the society and people more than they could understand themselves and he proved it in all his plays.

* Professor and Head (English) Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) INDIA
** Research Scholar, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA

Protagonists - When we come across the word protagonist we identify ourselves with a male character that carries out all major actions in a play. He is the avenger, lover, fraud, victim, culprit, hero, and survivor. So basically all the important deeds are carried on by the MAN in the play. But when we read the plays of Shaw we realize that his women are more powerful than the 'protagonists' or the male characters in the play. The reason these women were never considered protagonists is because of the prejudiced minds of the people in and before Victorian era. Shaw was among the first ones to realize the position of women in the existing society and the future calibers lying within her. Shaw had unusual ideas about his characters, specially his heroes. His heroes do not possess the qualities of an ideal hero. His hero may not be blindly courageous and would rather carry chocolate creams instead of arms; his hero may not win the woman in the end or even worse may get manipulated into the traps of a woman. What makes the plays of Shaw more interesting is that he never presents the hero as a special or grand person with unusual qualities. The audience keeps swinging between the hero and villain as Shaw presents a villain like a hero and the hero like a villain, not until end the audience can get to decide who the real hero is. About Shavian characters it is said that they were true to life not only in their age but even today. But Shaw's women did not surrender to the traditional roles of the society. They were not dutiful wives or daughters, instead they stood up for what is right or sometimes wrong as pleased their own desires. His women were bold and assertive who could lead and manipulate, they could be honest and loyal or shrewd and cunning.

Text-based study - We come across the heroine in *Arms and the Man* and admire her beauty as well as her courage to challenge her own concept of love. Not only Raina, but Louka and Catherine, even if being the supporting actors in the play, embody the shrewdness, ambition, jealousy and competency required to rule the world. Louka very cleverly and tactfully entices Sergius to marry her over Raina. Louka who is a servant to the Petkoffs and engaged to Nicola but subdued by her own ambitions she betrays him and seduces Sergius because of his high rank and social status and we see Sergius, an otherwise brave army man falling helplessly into the hands of a clever woman. Catherine is lady of the house and married to Petkoff is very proud of her own social status and holds her head high because of the huge library in their house. All these women have one quality in common which was very rare to see in the period this play was written and that is, being a strong woman. Not only this but there some other uncommon virtues like being confident, clever, determined, proud, persuasive and manipulative these women possess. It is one of the most dominant features in the plays of Shaw that he understood the psychology and human conditions. The audiences were so strongly influenced by male protagonists that they often ignored the women characters and their importance in the plays. There are plays like '*Arms and the Man'*, '*Man and the Superman'* and '*Candida*' which had strong female characters but his women centric plays were '*Mrs. Warren's Profession'* or '*Saint Joan'* where the women emerged strongly on the stage. The performance of '*Mrs. Warren's Profession'* was banned for nine years because it was considered 'offensive' by many.

Before Shaw the women characters of previous playwrights carried an air of mystery, grace, divinity, allurement and charm in them. Shaw's heroines are portrayed as intelligent and wise human beings who were new and unidentified in the period. If we read Shaw today we might find his women interesting, inspiring, sometimes cunning even admirable and realistic, but the age in which he portrayed these women they were considered unromantic, unrealistic and even irritated the audience as they were accustomed to a more fragile image with no common sense of their own. Shaw is known to understand women more than he can understand men and he can portray a weak, dependent and soft hearted man but not a woman of a low moral like in his '*Candida*'. Candida, who is married to a good looking, pleasant, and well mannered socialist clergyman is a strong confident, independent woman. The plot involves a love triangle between Morell, Candida and Marchbanks where we find out that Eugene Marchbanks is deeply devoted and affectionate towards Candida and thinks that Morell does not deserve her. Throughout the play we realize that Morell is extremely occupied with his work and preaching. He keeps bragging about how his life has been 'heaven on earth' since he has married the most perfect woman. When, in the beginning Morell forgets to fetch Candida from the station just because of a petty argument between him and his father-in-law, she comes back accompanied by Marchbanks to which Morell doesn't pay much attention. Marchbanks on the other hand notices all her hard work and sincerity towards her house and family and is disgusted even by the fact that she has to fill paraffin in the lamps. We are stunned when Candida asks both the men to bid for her and when Morell is bragging to offer her all kinds of securities, we are made to think about the strength and security a man can offer and the social notions of how a woman is protected and respected when she has a husband of high respect in the society. She chooses Morell not for his love and security but for she knows how weak her man is and that he will not be able to survive the abandonment of his wife.

The general belief that women are inferior to men is targeted by Shaw in all his plays. He did not present women who were weaker and sought security; his women were upfront, strong and very well aware of their desires. Shaw was more of a philosopher than an artist and we can get a good glance of his theories in his plays. One such is his theory of 'Life Force'. Although seen in a lot of his plays this particular theory is specially emphasized in *'Man and the Superman'*. As Shaw said 'it is a woman's business to get married as soon as possible and a man's to keep unmarried as long as he can.' Ann Whitely pursues Tanner to marry her irrespective of the fact that Octavius is madly in love with her since childhood and Mr. Whitefield would have wanted

Ann to get married to Tavy. Love has always been a prominent theme in all of our literature but the love which we find in other works and the love we read in Shaw's works are quite different from each other. Shaw's portrayal of love is not romantic or entirely philosophical.

Conclusion - Shaw portrayed his women characters very carefully. He did not want them to look mean or selfish in a demonic or unnatural or inhuman way, instead he put the very normal qualities in them which any other man could have had but a woman was not supposed to. He made sure that his message went to the audience and specially women who have been underestimating their vigor for so long. Shaw stood up for women and their position in the society and no one before him could do it so effectively. He attempted to educate women about the fundamentals of socialism in *'The Intelligent Women's Guide to Socialism and Capitalism'.* It would be justified if we gave characters the title of 'secondary protagonists' even if we could not call them the real leaders or the 'protagonist' of the play.

References :-

1. Gupta, S.C. Sen. *The Art of Bernard Shaw*. Calcutta: A. Mukherjee & Co. (Private) Ltd., 1957.
2. Jain, Sangeeta. *Women in the Plays of George Bernard Shaw*. New Delhi: Discovery Publishing House, 2006.
3. Jeffares, A.N. and Suheil Bushrui. *York Notes Candida*. Beirut: Longman York Press, 1984.
4. Shaw, Bernard. *Plays Pleasant*. Great Britain: Penguin Books Limited, 1946.
5. Watson, Barbara Bellow (1991). "*The New Woman and the New Comedy*," Critical Essays on George Bernard Shaw, Ed. Elsie.

****

Women Empowerment

Dr. Rashmi Nagwanshi *

Abstract - This is a small effort to make general people understand the place a woman deserves in society and should be considered as the equal partner in the implementations of the action plan. Lack of education, lack of opportunity in employment, least participation in decision making and nutritional stress are the common characteristics of a typical woman across the globe. The difference is only in degree and magnitude. Gender equality and empowerment of women are recognized globally as the key element to achieve progress in all areas. Increased awareness is one of the most valuable means of achieving gender equality, and the girls and women's empowerment.

Empowerment has multiple, interrelated, and interdependent dimensions: economics, social, cultural and political. The political situation in the country has had its inevitable reaction on its educational system. It can be understood in relegation to resources, perceptions, relationships and power. "Ensure women's equal access to economic resources, including land, credit, science and technology, vocational training, information, communication and markets, as a means to future the advancement and empowerment of women and girl's including through the enhancement of their capacities to enjoy the benefits of international cooperation."

Introduction - Increased awareness is one of the most valuable women's empowerment. Empowerment has multiple, interrelated, and interdependent dimensions: economics, social, cultural and political. The political situation in the country has had its inevitable reaction on its educational system.[1] It can be understood in relation to resources, perceptions, relationships and power. "Ensure women's equal access to economic resources, including land, credit, science and technology, vocational training, information, communication and markets, as a means to further the advancement and empowerment of women and girl's including through the enhancement of their capacities to enjoy the benefits of international cooperation."

Women represent half the resource and half the potential in all the societies. "We all know that empowered women are essential to a democracy. And this is even clearer to us today as we look around the world and see what happens in countries where half of the population is left out." Efforts to promote gender equality between women and men can also contribute to the overall development of human society. Elizabeth cady stanton stated, "All men and women are created equal, endowed with the same inalienable rights.[2]"

In any society women constitute almost 50 per cent of the population and our country is no exception to that. Women in India are treated as a vulnerable section of the society. The traditional Indian society was patriarchal in character

And hence patriarchal norms and values determined sexuality, reproduction and social production.

Mrs. Neeta Rawal, a teacher by profession, is fully aware of the position of women, and elaborates that women's development is directly related to national development. In western countries women were empowered long ago but in India the concept and process of empowering of women have started lately.

The women of India should be provided with the facilities of education, employment and health. This can be achieved only by the strong will of the government to implement the various legislatures related to these basic of the overall to be achieved.

All the parties must respect the desire of the people and take necessary steps to resolve peoples' problems including human rights violations. People cannot afford to wait a long period of time for solutions. These are achievable objectives, and if moral values are practiced in a disciplined way then it will be of great help in bringing about the change.

Education is the base of all development processes. Education is one of the most important means of empowering women with knowledge, skill and self-confidence necessary for them to participate fully in the development process. So everything depends upon the application of education and simple training for improving women's health condition. The pace of women's education will have to be accelerated so that women become aware of their rights, and are able to create what they choose.

No doubt, changes are taking place from one corner of the country to another but the intensity is different in every state. Women should be equipped with all the necessary

*Asst. Professor (English) Govt. College, Junnardeo, Distt. Chhindwara (M.P.) INDIA

rights, and then make them conscious about their rights and also the use of their rights. The objective is to work at strengthening existing human rights mechanism and develop practical action-oriented measures and strategies to combat intolerance.

"The struggle for women's suffrage was long and difficult. The main instrument for winning the struggle to amend the Constitution admitting women to full citizenship was a powerful social movement that dared to challenge the status quo, used unconventional tactics to gain attention and sympathy, and demanded bravery and commitment from many women.[3]"

"No document discussing India's constitutional system and the directions in which it could be developed improved could omit the women of India.[4]" It takes time to build trust and hope after decades of oppression. There are no short cuts to success. It takes year for result to show. This mission will highlight all social creative actions of society.

Women's dependency is the major obstacle in women empowerment. This was endorsed by most of the respondents who said that persistence of poverty, discriminatory attitudes towards women and girls, negative cultural attitudes and practices against girls, as well as negative stereotyping of girls and boys were stumbling blocks to women empowerment.

A number of Articles of the Indian Constitution guarantee greater freedom for women empowerment. It recognizes women's right to equality and nondiscrimination.

Article 14 confers equality before law. Article 15 (1) ensures that there is no discrimination by a state on the grounds of sex. Article 15 (3) make it mandatory for a state to make special provision for women and children. Article 16 envisages equality of opportunity in matters relating to employment or appointment in any office under the state and thus gives equal status to women at workplace and in the matter of seeking employment. Article 39 (a) speaks out about the state policy to be directed to securing the right to an adequate means of livelihood for men and women. Article 39 (d) guarantees non-discrimination in payment of salary and wages for women on the principle of 'Equal pay for equal work' irrespective of sex. Article 42 requires the state to make provisions for securing just and human conditions of work and for maternity relief. Article 51 (A) (e) ensures promotion of harmony and renunciation of practices derogatory to the dignity of women.

Thus the Indian Constitution not only guarantees equal status to women in society but also ensures and directs the state to make special laws for women on various subjects. Mrs. Dimple Kanojiya's opinion was endorsed by a majority of respondents that in spite of all the guarantees given by the country's constitution, there is no denying the fact that in the Indian society women plays only a secondary role, mostly subservient to men. The Constitution of Independent India provides equal rights and opportunities to men and women. Yet the indiscrimination again women are continuing. "When you are aware of your capacity, the capacity allows you to relate to other people's feelings and sufferings." Dalai Lama

There is a need to uplift women's position and status in society. Rich and educated people use advanced technology as sonography to detect the sex of their unborn child and abort the girl-child. This is evident in the widening gap of the sex ration in our census. If a female is murdered before her birth, how we can say that there is empowerment to women in India? It is evident that in tribal societies, women perform an important role in the economic life more so than in nontribal societies.

"It is evident that the women perform an important role in the economic life of the tribal's. In tribal society, women shoulder heavy responsibility of maintaining their respective families side by side with their male partners. Despite their important economic role they do not stand on par with men.[5]" Mrs Madhuri Batra a social worker is a housewife. She has clear views regarding women and society. Traditions and culture are no hindrance affecting her capabilities and is free to do the work of her choice and capabilities and is free to do the work of her choice and actively participate in the decision making at home. She strongly supports women's participation in every sphere of life for the community's betterment which is as necessary as air is needed for life. Women are very much responsible for their condition and status they get in society. They suffer because they keep silent and adjust themselves in any situation succumbing to the pressures of family and society. They don't share their problems, their dreams, their wishes and aspirations with their family members. They are afraid of the society, which has a habit of criticizing every woman struggling for her position, but women should ignore such criticism by these people. Regarding social evils like alcoholism the family members suffering from this problem should get attention and care of relatives and society, so that they can help the person get out of this habit. Bonded and child labour reduced the possibility of a child to get education and these should be checked and stopped through panchayats and the administration so that there is no abuse of human rights.

References :-

1. Shiv Kumar saini, Development of Education in India, Cosmo Publications, New Delhi, 1980, p.11.
2. Edward S. Greenberg & Benjamin I. Page, the Struggle For Democracy, Wesley Educational Publishers Inc. United States, 1999, p.247.
3. Edward S. Greenberg & Bejnamin I. Page, op.cit.
4. Siomn Commission Report of 1930, Vol. 1, p. 49.
5. Jasprit Kaur Soni, Introspection of Tribal Development, Sonali Publications, New Delhi, 2004, p. 182.

****

Poetic Genius Of Harindranath Chattopadhyaya

Dr. Vikas Jaoolkar * Dr. Ravindra Sharma **

Abstract - Harindranath Chattopadhyaya (1898-1990) was really an astonishing and versatile genius India has seen in the spheres of Indian English writing in last one hundred years. Harin was a prolific writer with different "avatars" like a mystic, a revolutionary, a patriot, a social reformer, a lyricist of film world and a worshipper of nature. The greatest influence on Harin is Sri Aurobindo. He was a disciple of Sri Aurobindo - 'the poet's poet'. Harin, alongwith Nirodbaran, K.D. Sethna, D.K. Roy, Nolinikant Gupta etc., was deeply impressed by Sri Aurobindo's views on spiritual evolution of human beings. His patriotic songs have a deep sense of self respect.
Keywords - Mysticism, Patriotism, Mother India.

Introduction - If Harindranath's early poetry sings ancient Indian glory and wisdom, mature and later poems show his commitment for social justice. His poems present Indianness in diverse ways. The greateness of Harindranath lies in his consummation of Indian themes such as mysticism, partioticism and social justice. He conveys the message of the soul, the thrill of mysterious with exceptional fluency. This mystic quality is the result of his deep faith in Indian mystic tradition. The influence of great mystic thinker like Sri Aurobindo, Maharshi Raman and William Blake is visible in the poems of Harindranath. He successfully mysticism and Hindu Advaitism in his poetry. The strange Journey, Reflections, The Dark Well, The Treasury of poems, and The Divine Vagabond are collections of poem filled-in with mystic elements.

Harindranath belonged to a family of freedom fighters. His patriotic songs motivated thousands of freedom fighters. He became overwhelmed when India attained freedom. In his words, "This is the first time we arise our festival of lamps to share since India, our Motherland, has shaken off her shameful chains. So, let us light a million lights and conquer darkness everywhere. The coloured Garden, The power of Love, Festival of Thirsts, A Bird sang on a Bough, Reflections, Strange Journey etc. are some examples of patriotic poems.

Aurobindonian Mysticism in Harin's Poetry

According to Sri Aurobindo, man is a transitional being, striving to attain over mind consciousness, spiritual perfection i.e. superman hood. A big part of the poems in 'Reflections', 'The Strange Journey', 'The Dark Well' etc. tries to see the one Inseparable in the separate like Sri Aurobindo's poetry.

Harindranath is a follower of Aurobindonion mysticism. William Blake's influence is hidden one. Harin's mystic poetry is basically and necessarily Indian. Harindranath, under the spell of mystic intoxication, does not hesitate to find out keen relationship with worm and rock also. He sees the same inward light in a tiny worm which illumines our very self. God is omnipresent and a worm is no exception. 'The Worm' is as sincere a work with mystic note as 'Moment of Soul' or any other poem. God is paying mystic homage to himself:

O What a mystic homage, fried!
He comes to pay Himself:
And that is why He doth descend
Into this fragile elf.[1]

Finally all the objects of universe are manifestation of God. The animate or inanimate display the different facets one divine existence. He is present in the rock as well as in the worm:

Exposed to sun and shade and shock
Of wind, we breathe and dwell
Fulfilling Him who is the rock –
Tea, and the worm as well ![2]

Harindranath experiences the same Power responsible for the continuity of all actions in the universe. His following lines present his views:

There is no difference or distinction between the minutest particles which swirl and swim in us and the mightiest spheres swirling and swimming in the infinite deeps of the sky... in the eyes of the Power that set both particles and spheres swirling and swimming, caught in the pattern of a perfect order of inescapable rhythm.

Harindranath, as a disciple of Sri Aurobindo, was always aware of his mystic experiences and tried to reveal such mysticism as Mantric Poetry. Sri Autobindo takes Vedic Mantra as natural medium of communication from the poet to the reader. he remarked in 'The Future Poetry':

The true creator (of poetry), the true hearer is the soul. The more rapidly and transparently the rest do their work of transmission, the less they make of their separate claims to satisfaction, the more directly the word reaches and sinks

* Professor and Head (English) Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) INDIA
** A-01/06, Awas Nagar, Near Saint Star Academy, Dewas (M.P.) INDIA

deep into the soul, the greater the poetry...A Divine Ananda... is that which the soul of the poet feels and which when he can conquer the human difficulties of his task, he succeeds in powering into all those who are prepared to receive it.[4]

Harindranath's collections 'The Strange Journey' 'Reflections', 'The Dark well', 'The Treasury of Poems', 'The Divine Vagabond' etc. contain glimpses of this mantric effect and incantation:

And the form is lost,
The dark line crossed:
All is but one high
Concentrated eye.[5]

Harindranath's appeal to Almighty taken as charioteer has keen resemblance to the requests of Arjuna to Lord Sri Krishna:

Earth will not rest until
Its rondure measures all space,
O Charioteer of eternal ways!
Reveal thy face.[6]

Harindranath had been a life time believer in Aurobindonion Mysticism; most of his volumes have flashed of this mystic sense. According to Sri Aurobindo, humanity is moving upward continuously. This journey of man's evolution is described in different works of Sri Autobindo. They show the ascent of consciousness to the supramental level through the transformation in the self step by step. This theme of spiritual evolution is dealt with great mastery by Harindranath in his oft quoted poem 'Futurity':

Time is Eternity's womb-hole ensconcedly bearing
Each man like a foetus in projected formation
Armed into ripeness conceived by some far evolution;
Sealed grave-lids of eyes, strange image of funerals pathos,
Rawness of limb awaiting the strength of a giant[7].

The mysticism in Harindranath's poems has a typical Indian flavour. His early poetry shows yearning and aspiration expressing his wishful longing for the Infinite in highly passionate outbursts. His soul has a keen desire to meet the beloved (God) as soon as possible in all the charms of mystical senses. He is ready to rise above self love and all trivialities of materialistic way of life.

Freedom and Patriotism in Harin's Poetry

Harindranth Chattopadhyaya was arrested by British Government during the satyagraha of 1930. He was committed to rigorous imprisonment in Nasik Jail and suffered incarceration for a fairly long period. He composed spirited and soul-stirring national songs in English, Bengali and Hindi. He wrote "Amara Mukti Bahini" in Bengali which was sung by the youth during the Bangladesh struggle. He wrote:

I am vertitably a piece of India my blood is a poem of her vision, her inspiration.[8]

Harindranath's patriotic songs motivated thousands of freedom fighters of India to sacrifice for the liberty of enslaved Motherland. Former President of India recalls those days and Harin's contribution in these words:

Those belonging to the generation that participated in the struggle for freedom recall the exhilarating verses composed at that time by Harindranathji. They were outpourings of the heart, reflection the aspiration of renascent India.... Harindranathji expressed himself effortlessly and with great effect. Through writing songs and plays Harindranathji enthused countless persons and especially the youth to take to social and national service.[9]

Harindranath was a worshipper of Mother India. He wrote haunting patriotic lines in his boyhood:

My own coloured country,
I shall serve you well
Ring for you my lifetime
Like a crystal Bell.....[10]

Like Cowper, he expressed his love for country in his own way. He is more akin to Tagore and Sarojini in delineation of the themes of patriotism Sarojini in delineation of the themes of patriotism and freedom. He had a great love of dust similar to Tagore. According to Harindranath man's dust has divine effulgence so if it is a prisoner, we should revolt against tyranny. He wrote:

No tyrant power can withstand the rich awakening that has come Out of long centuries of sorrow, misery and martyrdom.[11]

Harin is firm that India will achieve her lost glory soon. He writes optimistically:

Lo even though our present fate
Seems like a narrow cell that cramps
Our Motherland shall celebrate
Her ancient festival of lamps.[12]

Harin had a throbbing pain in his heart for the unfortunate partition of Mother India. He writes even after 50 years of Independence:

India, the beautiful, once that was one
Through colonial intrigues had sadly begun
To be partitioned and divided in disgrace
And now this nation was forced to face
A bloody division, and the nation the mother
Would be tortured to see brother separate form brother.[13]

Harin's patriotic feelings have a deep note of self respect and he has a strong belief in true Indianness. On seeing a statue of a governor even after the independence of India, he expresses his anger and rebukes Indian Government and people in a way reminding of Swami Vivekananda. The British Governor's statue makes fun of the slave mentality of India in this way:

Your chains have not diminished,
Your mind is still a slave,
Since here, in costly plaster,
My statue stands as yet,
I, white man, once your master,
You hardly can forget.[14]

Harin's love, respect and devotion for India remained the same till his last days of life. He sometimes felt neglected by government authorities after independence but his love for culture, people and land of India had been constant. He showed his eternal love for country in these words:

The piece of earth called my motherland, gave me one artist's limbs and imagination and culture which is adored by the peoples of other lands. My country is me....it loves me.....even as I love it.....what does it matter if the state, which is but temporal, does not recognize my eternity.[15]

Harin's unconditional patriotism believes in 'giving' without any expectation. His patriotic approach is full of humanitarian spirits and world welfare. Harin, unlike Shelley who has a note of despair, finds rapture while dealing with the theme of liberty. He goes to universal level of freedom instantly. He favours liberty directly without any fear:

I seek true liberation, and I crave
A luminous unbodning from
And formula, for I would take the round
Of an intense vast rapture, like a wave
Which knows no inward rhythm of ocean save
The individual one unto it owed.[16]

Harin spiritualizes the concept of freedom. His Indian philosophic and cultural mind set up motivates him to cry for freedom because imprisonment is a crime for an honest, soul-oriented India. He is desirous to throw away all the hindrances in the path of freedom. He presents the picture of complete freedom like Tagore:

No more shall we hear the tolling
Of time's ponderous prison gong
Which have marked our creeping moments
Melancholy so long ![17]

Harin contributed in spiritualizing Indian freedom movement in the manner of Swami Vivekananda, Bankim Chand, Sri Auorobindo, Sarojini, Swami Ram Tirtha etc. He supported freedom efforts anywhere in the world. He supported Hungarian freedom movement and Bangla Desh freedom struggle. Harin was a champion of liberty. He broadly announced the liberty of spirit.

Conclusion - Harindranath's poetry expresses Indian quest for eternal varieties such as, a passion for assimilation and acceptance in an artistic fashion. His poetry is a blend of tradition and modernity. In the first phase of his poetic career, he is seen as a spiritual and mystic singer. In his second phase, he sings for Mother India and world-peace. He never cared for name and fame. He advocated silent devotion for creative work. He expressed the very self of India. In the words of Myles,

"The poetry of Harindranath Chattopadhyaya represents much of what workshop poets were reaching against. He was influenced by the mysticism of Blake and Aurobindo and social doctrine of Marx. His poetry is varied and truely bridges the gulf among three twentieth century trends in Indo-Anglian poetry between the two world-wars, the post independence and the most recent experiments. He has successfully utilized the philosophic doubts for intense personal explorations and carries on the tradition of Indianness in enunciating the Hindu concept of God as the creator and the Destroyer".[18]

References :-

1. The Worm, A Treasury of Poems.
2. Ibid.
3. Harindranath, Reflections, p. 200-201
4. Sri Aurobindo, The Future Poetry, p. 13
5. The Dark Well, p.06
6. Ibid. p. 83
7. Futurity, The Golden Treasury of Indo-Anglian Poetry, p. 199
8. Harindranath Chattopadhyaya, Reflections, p. 235
9. R. Venkataraman, foreword to A Bird Sang on A Bough.
10. The Coloured Country, The Coloured Garden.
11. Lotte : The Power of Love .p. 210
12. Festival of Lamps, Festival of Thirsts.
13. Lotte : The Power of Love, p. 145
14. A Governor's Statue, A Bird Sang On A Bough.
15. Harindranath, Reflections, p. 234
16. Quest, Strang Journey.
17. Unimprisoned, The Divine Vagabond.
18. A, Myles introduction to Anthology of Indo-Anglian poetry, (1991), New Delhi, Mittal Publication.

****

Existentialism with Special Reference to Anita Desai

Dr. Rajani Singh *

Abstract - The key note of existentialism is that 'existence precedes essence'. It grapples with the problems of uprooted man just to prove his identity. It is a philosophical trend which stress the importance of human existence. It originates with the work of Danish Philosopher Soren Kierkegaard who stresses that uniting himself with god is necessary. This trent finds full expression in the works of German philosopher Martin Heidegger whose theory is that man is thrown in a particular situation, not chosen by him. The French philosopher and movelist Jaun-Paul Sartre believes in the supremacy of man's existence in a Godles world. Other philosopher such as Garbriel Marcel who perceives that inhuman values have reduced man to a meaningless code of words, Karl Jaspers believes that morbid such for identity lies at the core of all philosophical thought. Albert Camus emphasizes individual experiences. Thus 'existentialism' is a revolt against 'self', traditions and values. All the exponents of this trend believes that man exists in the world in a unique sense, where he is open to future which is determined by his choices. This frame work does not tell what to choose but it simply implies that there are right and wrong ways choosing. One can e authentic or inauthentic, act in a bad faith or sincerity. The dilemma of choice leads to a state of anxiety, disillusionment, alienation and rebellion. Albert Camus says, "I rebel therefore I exist". Existentialism has an enormous influence on philosophy, theology and literature, Anita Desai is mainly influenced by Jasper, Camus and Heidegger. Her main characters are tormenting by their fears, phobias, as they feel circumscribed by the frightening conditions of their existence. Almost all the major concepts of existentialism find expression in her novels. Her concern with human subjectivity, naturally involves her interest in the existentialist predicament of the modern age.

Introduction - The key note of existentialism is that 'existence precedes essence'. It grapples with the problems of uprooted man just to prove his identity. It is a philosophical trend which stress the importance of human existence. It originates with the work of Danish Philosopher Soren Kierkegaard who stresses that uniting himself with god is necessary. This trent finds full expression in the works of German philosopher Martin Heidegger whose theory is that man is thrown in a particular situation, not chosen by him. The French philosopher and movelist Jaun-Paul Sartre believes in the supremacy of man's existence in a Godles world. Other philosopher such as Garbriel Marcel who perceives that inhuman values have reduced man to a meaningless code of words, Karl Jaspers believes that morbid such for identity lies at the core of all philosophical thought. Albert Camus emphasizes individual experiences. As a philosophy it takes the view that the universe is an explicable, meaningless and dangerous theatre for the individual's being and existence. It expounds man's search for himself and his potentialities to create his own values in the world. It reiterates the idea everybody in this world has to assume the responsibility of making choices that determine the nature of his existence. It is therefore a definite attitude of looking at life.

Existentialism greatly influenced the intellectual scenario of the post-second period. It has a considerable impact on literature, art, culture and politics. Its bearing on the playwrights of the fifties and sixties has been no less significant. The absurd dramatists like genet, Adamov, Backett, Printer, Edward, Albee, Tom Stopped and others share implicity the existential concerns of their philosophical counterparts, though their mode of presentation remains more artistic than philosophical. Their plays highlight the problem of life and death, isolation lack of communication with consequent despair, fear and loneliness of the man cast in a godless, alien universe. Therefore, these playwrights display affinity with the atheistic existentialistic like Heidegger, Sartre and Camus.

In the true existentialistic temper the absurd plays depict man as involved in a particular situation confronted with the basic question of choice. Like existentialistic philosophy these play give primary to the individual's live experience and try to communicate truth of the experience of the characters involved like existentialism, the absurd play do not consider it right that human character is based on immutable essence. Man is seen as a contradictory and unpredictable being constantly in flux. As the existential philosophy is replete with nations or irrationality, they being safer guides than logical maxims- we find in these plays excursions into subconscious even unconscious yearnings. Dreams, fear, and nightmares.

* Deptt. of English, Govt. P.G. (Autonomous) College, Datia (M.P.) INDIA

Samuel Beckett's waiting for Godot vividly shows spirit. Godot's non presence is the theme of the play. It is emptiness and the void that is at the center of human existence. The emphasis is laid on some ultimate philosophical horizons beyond history and society. The modern American playwright Edward Albee's The Zoo Story is such an existentialist play, which, in existential terms, explorer the pointless life situation of modern man. it treats the experiences, decision and irrevocable action of Jerry, a social outcast, who describes himself paradoxically but significantly as a permanent transient. Jerry is projected to confront Peter, a conformist representative of the American middleclass who has been living a complacent life with a cosy job, a comfortable home, the average number of children and right status symbols. When in a last desperate attempt at human communication Jerry Suddenly approaches Peter seated on a park bench, the symbol of his bourgeois complacency, he tries to engage him in conversation first. Then Jerry tries physical contanct by tickling Peter and provoking him with insult and finally thrusts himself deliberately on the knife Peter is made to hold out in self-defense. Jerry's suicide is thus a positive existentialist Peter of his bench converting to an existentialist awareness.

Anita Desai is mainly influenced by Jasper, Camus and Heidegger. Her major characters are formalized by these fears and phobias, as they feel circumscribed by the frightening conditions of their existence. Jaspers existentialist, concept of the border line situation figures prominently in the novels of Anita Desai, As Maya in Cry the Peacock her morbid and constant fear of death places her in a border line situation. Monisha in voices in the city unable to bear the absurdity of her existence commits suicide, Heidegger's concept of temporality manifests itself in BIM's character Clear light of Day Nirode's desire to move from failure to failure and Sita's endeavor to retain his unborn baby is unique. Camus concept of the absurdity of human existence and his concept of the problem of murder and suicide are evident in the shape of Maya's murder of Gautama Monisha's suicide, murder and rape of Ela Das etc.

Thus almost all the major concepts of existentialism found expression in Anita Desai's novels. Her concern with human subjectivity naturally involves his interest in the existentialist predicament of the modern man.

Now the question arises what is the use of such type of philosophy in our society? Where will this lead us? Definitely from "nowhere to nothingness". Ours is a duty-oriented society. 'Karma, Dharma and Moksha' are the basic principles of our life. We have deep faith in the Supreme Power and His divine Design. In Hind Literature, the great critic of the 20th century. Dr. Ram Vilas Sharma has also severely condemned the present philosophy. Hence the necessity of human involvement in action (Karma) is the only answer to the absurdity of human position in the modern world. We need to march ahead hopefully as "the best is yet to be".

References :-

1. Edward Wagenknecht "Cavalcade of the English Novel", Henry Holt & Company Newyork, 1954.
2. Margaret Atwood "Surfacing", Popular Library, Newyork, 1956.
3. Manmohan Bhattacharya "Indian Writings in English" Atlantic Publishers and Distributors, New Delhi, 2001
4. M.K. Ray "Studies in Women Writers in English", Atlantic Publishers and Distributors, New Delhi, 2005
5. Jasbir Jain "Creative theory- Writers on Writing", Pen craft International, New Delhi, 2000.

****

Mahesh Dattani 's Final Solutions : An Effort To Set A Communal harmony In India

Dr. M.P. Sharma *

Abstract - Mahesh Dattani, one of the most serious contemporary playwrights', is conscious of the social system in the contemporary India and effectively depicts through his art. Dattani's effectiveness as a playwright lies in the fact that he has always jotted down plays not only on common man but on problems faced by them in real life. He has chronicled the social victim and also the follies, foibles and prejudices of Indian society Dattani as a playwright is unique in his own sense because of his perfect endeavors into burning issues of social relevance. He shows his deep insight into human psyche while exploring the dark areas of our social life. Dattani deals with the burning, subjects like gender discrimination child sexual abuse, Hindu Muslim relations, status of eunuchs in society and the rights of homosexuals. The paper deals with Dattani's very popular play Final Solutions that is related to Hindu-Muslim relations in contemporary India society.

Introduction - Mahesh Dattani, one of the best known playwrights writing in English, is also a stage director, screen writer, an accomplished dancer and film maker. He was the first Indian playwright writing in English to be awarded the **SahitaAkademi. Award**for his contribution to Indian English Drama in 1998. What makes Mahesh Dattani unique is his dealing with the burning contemporary social evils that have victimized the Indian society. His plays deal with the evils like gender discrimination, the status of eunuchs in the society, child sexual abuse, hypocrisy about HIV+ People, social stereotyping, aftermath of partition and soon and so forth. According to SahityaAkademi Award (Citation)

Dattani's work probes tangled attitudes in contemporary India towards communal differences, consumerism and gender-a brilliant contribution to Indian drama in English.

Dattani strongly believes in art for a purpose. He believes that the purpose of the theatre is bring to the forefront issues that society would rather keep under wraps. Dattani himself opines:

The function of the drama in my opinion is not merely to reflect the malfunction of the societybut to act like freak mirrors in a carnivaland to project grotesque images of all passesfor normal in our world. It is ugly, buy funny.

Dattani has always been against the social disparity meted to the marginalized suctions of the society and decides to raise his voice against such mal-practices. He, thus, through his plays makes his readers aware of the fact that patriarchal culture, gender and cast or race discrimination are against rational civilization. He brings to the forefront such in human behaviour of one human to the other within our social milieu and believes that such disparity hampers the true development of a society and in order to make development possible in the true sense, such evils should be eradicated from the root level. Mahesh Dattani's **Final Solutions**, which came in the year 1993, deals with the theme of communalism. Dattani gets to grip with the tension and distrust between the Hindus and Muslims. It disturbs their normal social life as both the Hindus and Muslims suffer in the hands of the other community. They treat each other as foe and therefore pose a major problem for the national progress. The tensed confrontation between the Hindus and Muslims as the aftermath of partition provides the context for the basic situation.

The story of the play revolves round the Gandhi family, a middle class Hindu family in Gujarat, which is involved in a complex situation when two young Muslim man seek refuge in their house while trying to save themselves from a gang of blood thirsty Hindus in the midst of a riot. The head of Gandhi family, Ramnik is secular and decides to do something to save these boys from the gory crowd. For this act of his, he is even called 'a traitor'. His wife Aruna, who is staunchly religious and his mother Hardika who is the eye-witness of the riots during the partition of India and Pakistan, hold a grudge against Muslim community. They are also against Ramnik in his decision to save the boys. However, Ramnimk was decisive and became a true descendent of Mahatma Gandhi by acting as a wall between the two Muslim boys. Babban and Javed, two young Muslim men, on one side and the Hindu crowd on the other.The other tension is the conflict, present outside their house in the form of the blood thirsty crowd that wants its prey to be handed over to it. The communal riots in the city break out due to an attack by the Muslim subjects on the Rathyatra. This followed by the rumored agitation among both the Hindus and Muslims. Chaos and confusion prevail in the town and the entire peace of the town is distracted. The crowed is seen in the streets with naked swords, fire and other weapons.

* Head (English) Govt. P.G. Autonomous College, Datia (M.P.) INDIA

Ramnik, a man of liberal ideology and a practitioner of democratic views goes against both the people of his cast standing outside hishouse in the form of the crowd and members of his family including his mother and wife who do not want to refuge the boys, lest they have their own life in jeopardy. The chorus can be heard crying out **'Throw them out! Give them to us'.**

A true disciple of Mahatma Gandhi, Ramnik does not want the boys to get hurt a bit and even though the chorus has turned furious upon him, he does not budge:

Ramnik : I stand in front of the door, ifyou break the door, you will kill me.

Chorus : What? You protect them? Then you are a traitor!

Traitor! (Sound of glass breaking. Aruna rushes to the image of Krishna)

Ramnik : Go away! Leave us alone.

Chorus : Traitor: Traitor!

Ramnik : There is nothing you can take from here without killing me first

Chorus : Traitor! You are not one of us! We will kill you too.

Aruna in her panic and fear of being killed by the mob insists Ramnik to open the door let the Muslim boys out of their house. But Ramnik knows what he is doing and is ready to face the consequences. He confronts, with full aplomb and conviction the refutation, both of the crowd outside the house and of the family inside it.

The play also has a love story of Smita, a college student and daughter of Ramnik. She is in love with the liberal minded Babban, a Muslim boy. Their love, thus, is the embodiment of how love knows as no boundaries, no shackles, no caste and creed. Modern educated generation represented by Smita and Babban are free from the orthodox, conservative thinking and tries to bridge the gap between the Hindus and Muslims. Smita who is not a staunch believer of Hinduism like her mom asserts to her:

Smita : How can you expect me to be proud of something which stifles everything else around it? It stifles me! Yes! May be I am prejudiced because I do not belong, but not belonging makes things so clear. I can see so clearly how wrong you are you accuse me of running away from me religion …..

Javed who is there that night taking shelter at the Gandhi's is a misguided young man who is paid to start those communal riots. He is puppet in the hands of a politician who is trying to feather his own nest by instigating these riots. There politicians are the actual culprits behind there gory events. Thus Dattani shows the self-centeredness among the politicians, who make the society suffer just to ensure vote bank.

The tension include the heaviness in the house between the various members of the Gandhi family. Ramnik refers to a shameful act of burning a shop by his own father as a result of communal hatred. It shows the transferred resentment. As in the last scene of the play Ramnik tells his mother Hardika:

Hardika : Haven't you gone to your shop?

Ramnik : (Looks at her with pity) It's their shop. It's the same burnt up shop we bought from them, at half its value. And we burnt it. Your husband; My father. And his father. They had it burnt in the name of communal hatred.

Ramnik carries the guilt of the crime done in the name of communal riots by his father and grandfather. He feels the burden of guilt and in order to lessen this guild that he is carrying for years, now, decides to save these young men from the mad crowd. SantwanaHaldar states:

Ramnik guilt consciousness is thus perfectly usedfor dramatic purpose by Dattani. It is his guilt consciousness that prompts him to do something for the young men who have fallen prey to the anger of the Hindu fanatics.

Thus in his play **Final Solutions,** Mahesh Dattani tries to bridge the gap between Hindus and Muslims in India. He opines that this game of mutual hatred and killing in the name of communalism should come to a halt, as life is more to offer and people should grasp other opportunities to get more success in the personal front rather than picking up things from the past and living with the remnants.

References :-

1. Mahesh Dattani 'Final Solutions in Collected Plays, New Delhi: Penguin Books, 2002
2. SantwanaHaldar 'Mahesh Dattani's Final Solutions' A critical Study New Delhi; Asia Book Club, 2008
3. R.K. Dhavan 'The Plays of Mahesh Dattani, New Delhi: Prestige, 2005
4. Mahesh Dattani-An Invisible observer-A profile by Anita Nair, Gentleman, 2001
5. SachidanandMohanti, Interview Mahesh Dattani, Theater Reaching out to people, The Hindu, New Delhi, 14 Feb, 1999.

****

Healing Effect Of Poetry

Dr. Jyoti Vaidya *

Introduction - Literature can provide powerful support for us in times of trauma and sadness . It has such a powerful effect, that it provides a model for healing, guiding readers through the process of remembrance, mourning and reconnection and it succinctly puts a voice to our inner most feelings. It has power to touch lives literature and medicine have a long history of cross-pollination. The romantic poet William Wordsworth illustrates in his poetry the definition of true romantic feeling given by American writer Thomas Wolfe, "not the desire to escape life, but to prevent life from escaping you."

Lines composed a few miles above Tintern Abbey is a short lyrical poem of William Wordsworth describing about his revisit to Tintern Abbey for Wordsworth, nature possesses a spiritual, even mystical quality. Wordsworth and his sister went to Tintern Abbey as respite from noisy city and found solace and more profound understanding of nature. The poet has been absent from this scene for four years but he has not forgotten this scene through his long absence. The poet was troubled, disappointed and frustrated during these five years. But revisiting Tintern Abbey again memories of this lovely scene of nature refreshed his mind and brought him pleasure and peace of mind. Nature heals our troubles and sorrows the noise and the mad fever of the town life seemed to stop the beating of his heart. At such times the memories of this scenes of mountains fields and rivers cured his troubles and brought him happiness . Today he stand seeing this scene after five years absence . He is getting present pleasure; also he is filling his mind with a store-house of pleasure for the future. The remembrance of this scene in future well bring him great pleasure so this scene gives him joy in present and as well as it gives promise of joy for the future.

In hours of weariness, sensation sweet.
Felt in the blood, and felt along the heart;
And passing even into my purer mind
with tranquil restoration : - feeling too
of unremembered pleasure (lines 27-31)
(Tintern Abbey)

Wordsworth has the experience of the sublime, a realm beyond measurable experience and rational thought that arises from the awe-inspiring natural phenomena that lifts the burden of living from a person. In lines (93-96) Wordsworth expresses this connection of spirit with this higher realm as he feels.

A presence that disturbs me with the joy
of elated though; a sense sublime
of something for more deeply interfused,
(Tintern Abbey)

Further Wordsworth claims that he perceives in nature 'the language sense' and finds Nature a 'guide' or teacher that keeps him whole.

If I were not thus taught, should I the more
suffer my genial spirit to decay :

Nature Wordsworth writes, 'informs' . The mind that is within us and elevates man's thought that protects from the evils of the world and provides him with 'deeper zeal' for life. They heal and calm him and bring him back to own self. Not only that, they guide him towards more moral behave. He says that

These memories have no slight or trivial influence
on best portion of a good man's life,
His little, nameless, unremembered acts of
kindness and of love (line 29-35)
Tintern Abbey

In his autobiographical 'The Prelude' Book I, Wordsworth writes of his childhood experience of nature as having provided him 'a cheerful confidence in things to come'.

I held unconscious intercourse with beauty
old as creation, drinking in a pure
organic pleasure from silver wreaths
of curling mist, or from the level plain
(Lines 561-564)

In 'Ode : Intimations of Immortality', words worth describes the whole process of nature's nurturance from infancy, through adolescence, and on into adulthood. What is interesting about this poem is that it shows in stanza III and IV, how society trains us out of an appreciation of nature and than towards the end of the poem how we can again learn to appreciate it Wordsworth defines poetry is a "spontaneous overflow of power feelings recollected in moments of tranquility".

The memory of a youth in a wild natural setting has a lasting influence in a person's life. So that even after the stresses of everyday urban life one can find solace and spiritual health while meditating . There is a notable absence

* Asst. Professor (English) Govt. Madhav Arts and Commerce College, Ujjain (M.P.) INDIA

of human and helping fathers in Wordsworth's work. Instead, in the absence of father, nature steps in to provide food and shelter and moral support . Nature as the Nurse of infancy, the teacher in youth, spiritual comforter and healer in maturity.

According to John Keats, "Poet is a physician to all men". The power of poetry to heal its readership is a profound social claim, it is a capacity to unite or reunite the social body, to heal the wound of division through an act of imaginative sympathy. "The excellence of every art is its intensity, capable of making all disagreeable evaporate from being in close relationship with beauty and truth". (John Keats : letter 37).

Keats's notion of beauty and truth is highly inclusive that is, it blends all life's experience or apprehensions, negative or positive into a holistic vision. Art and nature, therefore are seen as therapeutic function. In 'Ode to a Nightingale', one can discern the consciousness of the use of nature, symbolised in the bird and its melodious song, not only for poetic composition, but also for advancing the poet's philosophical speculations . Apart from ecstasy that the bird's song generates, the unseen but vivid pictorial description of the surrounding landscape adds to the bliss and serenity of the atmosphere. Keats acknowledge the power of beauty and poetry to captivate the soul of man, to charm him and make him forget his cares and sorrow .

Poetry gives aesthetic pressure as well as it has healing power too . It has the power to console mankind . It is when man's mind is in harmony with the natural objects that a sudden flash of revelation comes upon him and he becomes aware of the unifying spirit behind everything.

References :-

1. John Keats and nature, an Ecocritical study by charles Ngiewih TEKE, Ph.D.
2. Science and Sesation in romantic poetry Noel Jackson Part of Cambridge studies in Romanticism.

****

A Study of Feminine Psyche in the Major Novels of Anita Desai

Dr. Kranti Vats * Dr. Mani Mohan Mehta ** Saurabh Mehta ***

Abstract - The rise of Feminism as a movement on the continent began with the crucial question that portrayal of women by male artists must be deficient for, even the most imaginative of male writers is by no means equipped to give an authentic rendering of the female sensibility. A genuine question that arises is how much men know about the feminine psyche.

Key Words - Post Colonialism, Displacement, Alienation, Feminism, Pessimism.

Introduction - Anita Desai is one of the most celebrated novelists of Indian writing in English. She represents the welcome "creative release of the feminine sensibility." Among all her contemporary Indian novelists, she excels in writing psychological novels. Unlike her fellow writers her real concern is exploration of human psyche. Her writings reveal inner realities of her characters. K.R.Srinivas Iyengar has rightly pointed out that "Her fort is the exploration of sensibility – the particular kind of modern Indian sensibility that is ill at ease" [1] in a sterile set up.

Cry the Peacock is a novel mainly concerned with the theme of disharmony between husband and wife relationship. The novels begin with the death of Maya's pet dog Toto. This makes matter worse. This event upsets Maya so terribly that she is off her mental balance. Being childless she is much attached to the dog and it seems that the dog was a child substitute.

"Childless women do develop fanatic attachments to their pets, they say. It is no less a relationship than that of a women and her child, no less worthy of reference, and agonized remembrance". [2]

Anita Desai's second novel **Voices in the City** (1965) has received adequate critical response. In this novel also Anita Desai has portrayed feminine psyche mainly through the character of Monisha, although there are other women characters in the novel. Through Monisha Anita Desai has portrayed the psyche of a sensitive of a sensitive intellectual woman who is suffocated in uncongenial atmosphere of her in- law's house. She is happy neither with her husband nor with his family members. She is not much interested in religion even through she reads the Bhagwad Geeta. Several Shlokas from it have been quoted. Had she began a believer, her anguish and plight would have been reduced but it is not so as she writes in her diary - "If I had religions faith, I could easily enough renounce all this .But I have no faith, no alternative to my confused despair, there is nothing I can give my self to, and so I must stay. The family here, and their surroundings, tell me such a life cannot be lived –a life dedicated to nothing – that this hunk is a protection from death….Ah yes, yes then it is a choice between death and man existence, and that, surely, is not a difficult choice". [3] Anita Desai has explored the psyche of both the childless women, as of Maya in **Cry the Peacock**, of Monisha in **Voices in the City**, and also of women which children, like Sita in **Where Shall We Go this Summer** and Nanda Kaul in **Fire on the Mountain**. The interesting thing to note is that Anita Desai has portrayed also the psyche of , "unwomanly'' women in the sense that they don't want children.

The character of Sita in **Where shall We Go this summer** and Maya in **Cry the Peacock**, Anita Desai has portrayed the feminine psyche of neurotic women. The cause of their mental disbalance is different. Both of them are not normal. They might be called sub-normal, if not abnormal. Anita Desai psychological probing of the women is that she includes females of different age groups. Anita Desai has also touched upon a very vital aspect of the feminine – psyche, Viz. the erotic. Maya is not only childless but also saxually unsatisfied. Anita Desai's handling of erotic is very subtle, absolutely unlike Kamala Markandeya, Kamala Das and Shobha Dey. In **Cry the Peacock** this is how the novelist describes Maya's desire for carnal pleasure.

Mira Masi in **Clear Light of Day** is a widow, a distant relative of the Das's and even though she is minor character, in her we find another example of sexually unsatisfied women. She became a widow when young and had she been pretty she must have become a victim of sexual exploitation by her husband's brother .This is another facet of feminine psyche.

Her latest novel **Baumgartner's Bombay**, we find

* Associate Prof. (English) Govt. M.V.M. College, Bhopal (M.P.) INDIA
** Asst. Prof. (English) Govt. S.G.S. College, Ganj Basoda (M.P.) INDIA
*** Research Scholar, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA

another aspect of feminine psyche .Lotte is the kept of a Calcutta based Marvari Seth Kantilal who comes periodically to her booze and sex Lotte in her declining years initiates sex with Baumgartiner and he obliges. In her case it is physical need.

In different novels Anita Desai has portrayed different facets of human feminine psyche. Her characters cover women of almost all age groups, not only are the women of different age groups but they are also of different types and character. Thus we can say that Anita Desai has done well in exploring different aspects of feminine psyche.

References :-

1. K.R. Srinivas Iyengar, "A note on Anita Desai's Novels." The Banasthali Patrika (January 1969), p.64.
2. Anita Desai, Cry the Peacock, Delhi, Orient Paperbacks, 1980, p. 10.
3. Anita Desai, Voices in the City, Delhi Orient paperbacks, 1965,

****

A Short History Of Indian Novel In English

Dr. Seema Sharma *

Introduction - India English literature is more than a hundred and fifty years old and India English writers have won several awards-national and international, Including the Nobel Prize, the Booker and the Pulitzer. This is enough to suggest its strength and acceptability in the world of literature. The world took its note when Tagore's *Gitanjali*, written originally in Bengali but translated into English by the poet himself, received the Nobel Prize for literature in the first quarter of the twentieth century. Novel in India English had begun to appear by mid-nineteenth century. The earliest novel*, A Journal of 48 Hours of the year1845,* written by Kailash Chandra Dutt, was published in *The Calcutta Literary Gazette* in 1935. It is a political novel which describes an unsuccessful revolt against the British rule which the writer imagines to be taking place a hundred years later in 1945. These works, however, have only historical value to day. The first notable novel in Indian English was Bankim Chandra Chatterjee's *Rajmohan's Wife* which was published in 1864. It is a social novel which depicts the contemporary society, particularly the condition of women in it.

It was the year 1935 that proved a landmark in the history of India English novel as this very year two novels *Untouchable* by Mulk Raj Anand and *Swami and Friends* by R.K.Narayan were published. Two years later came Raja Rao's *Kanthapura.* These three novels gave Indian English fiction its real beginning, and these three novelists came to be known as the 'Big Trio' of Indian English novel. The eldest among them, Mulk Raj Anand used the medium of literature to highlight the miserable condition of the poor and exploited people of the Indian society. In the 'preface' to his novel, *Two Leaves and a Bud* he writes:

"The world I knew best was the microcosm of the outcaste and peasants and soldiers and working people. In so for, however, as my work broke new ground and represented a departure from the tradition of previous Indian Fiction, where the pariah and the bottom-dogs haven't been allowed to enter the sacred precincts of the novel, in the their, it seemed to become significant and drew the attention of critics, particularly in Europe which only knew Omar Khayam, Li Po and Tagore but very little or nothing about the sordid or colorful lives of the millions of Asia."

Anand's first post-Independence work was *Seven Summers* that came out in1951. It is the first of the series of autobiographical novels that he planned to write. In it he has presented an account of his own childhood in the garb of the story of the protagonist of the entire series.

Summing up the fictional writings of Mulk Raj Anand, M.K.Naik writes:

"The strength of Anand's fiction lies in its vast range, its wealth of living characters, its ruthless realism; it's deeply felt indignation at social wrongs, and its strong humanitarian compassion. His style, at importation into English of words, phrases, expletives, turns of expression and proverbs drawn from his native Punjabi and Hindi."

R.K. Narayan, like Mulk Raj Anand, has written a large number of novels. His first novel *Swami and friends* had appeared in the same year as *Untouchable,* but both the novels are widely divergent in their themes and approaches. While *Untouchable* is a scathing attack on the inhuman treatment of one section of society by another, *Swami and friends* is a delightful picture of the childhood world. *The Bachelor of Arts and the English Teacher* is in a way an autobiographical trilogy in which Narayan describes experiences largely drawn from his own life. His first novel is the story of a child Swminathan whose activities at home and school from the plot of the novel. What is remarkable about this novel is the depiction of the child psychology. It is in this very novel that we are introduced to the now famous Malgudi town. The first three novels that came after Independence-*The Financial Expert (1952), The Guide (1958) and The Man-eater of Malgudi* represent the crowning glory of R.K. Narayan. *The Guide* (1958) which won him the Sahitya Akademi Award in 1960 is generally considered to be R.K. Narayan's masterpiece.

Raja Rao, the third member of the 'Big Trio', is entirely different from his two contemporaries. He is a philosophical novel – the greatest of this kind in India English fiction. His first novel, *Kanthapura* that came out in 1938, however, is political. It describes the impact of the non-cooperation movement of Mahatma Gandhi on a small South India village. Despite its political theme, the presentation of the story bears Raja Rao's typical stamp which gave him the recognition of a philosophical novelist.

Raja Rao's second novel, *The Serpent and the Rope* came after a gap of twelve years in 1960. It is this novel that established him as a philosophical novelist. The novel present an account of the spiritual journey of its protagonist, Ramaswami, a south Indian Brahmin who goes to France

* Asst. Prof. (English) Govt. Girls P.G. College, Ujjain (M.P.) INDIA

for his Ph.D. and meets and marries a French girl Madeleine there. The novel thus presents an encounter of cultures as well. Among the novelists who followed these three novelists the most prominent were Bhabani Bhattacharya, Manoher Malgonkar and Khushwant Singh. With his strong social commitment, Bhattacharya belongs to the line of Mulk Raj Anand. His very first novel, *so Many Hungers* that came out in 1947 sets the tone of his writing. Set against the background of the 'Quit India' movement and the Bengal famine of the early forties, the novel deals with the theme of exploitation – political, economic and social.

Bhattacharya's next novel, *A Goddess Named Gold* which came out in 1960 is an allegorical story. Bhattacharya had a knack of keeping up with the times. This is testified by his next novel, *Shadow from Ladakh* (1962) which was written on the background of the Chinese aggression on India at that time. The focus of the novel, however, is on two ideologies – the Gandian ideology of small scale rural industries and Nehru's ideology of big industries to take India into the modern world. In his last novel, *A Dream in Hawaii,* which came out in 1978, Bhattacharya deals with the theme of East-West encounter. The East is represented by India's spiritual values while the West is looked upon as the centre of commercialism.

Manohar Malgonksar as a novelist is guided neither by the sociological idealism of Mulk Raj Anand and Bhabani Bhattacharya nor by the philosophical concerns of Raja Rao. His first novel, *Distant Drum* (1960) is based on his army experiences. The novel is full of engaging details of army life. Malgonkar's next novel, *Combat of Shadaws* came out two years later in 1962. It is a story of love and lust, of desire and aversion. Malgonkar's next novel, *The Princes* (1963), has been hailed by M.K. Naik as his best novel. The novel unfolds the dramatic story of two princes, father and son, in the back drop of the merger of princely states with the Indian Union at the time of the independence of the country. *A Bend in the Ganges* is the most popular novel of Malgonka. It is one of the most remarkable novels written in Indian English on the back ground of the partition of the country. The novel begins with the issue of Indian nationalism and British colonialism but soon shifts to the conflict between the Hindu and the Muslim communities on the eve of Independence.

Khushwant Singh, an erudite scholar of Sikh history, a brilliant columnist and journalist, is chiefly famous for his novel, *Train to Pakistan.* The setting of the novel is the communal massacres that followed the partition of the country. The situation has been presented through the happening in a village in Punjab, Mano Majra, where the Sikhs and the Muslims had been living in peace and harmony for generations. All this changes in the wake of the communal violence which sweeps across the borders.

Kushwant Singh's next novel, *I Shall Not Hear the Nightingale* (1959) dose not have the impact that its predecessor has. The novel takes us to the period of 1942 to 1943 when the freedom struggle was its peak. Two more novels came from Khushwant Singh- *Delhi* which is a fictionalized account of the city. An important development that took place in the field of Indian English fiction was the arrival of a significant number of women novelists. They added a new dimension to the subject matter as well as perception of Indian English fiction. The most noted among these writers are Attia Hosain, Santha Rama Rau, Ruth Prawer Jhabvala, Anita Desai, Nayantara Sahgal, Kamala Markandaya and Shashi Deshpande. Attia Hosain has written just one novel and a volume of short stories. Her novel, Sunlight on a Broken Column was published in 1961. It is a complex novel, which keeps a number of themes smoothly in play.

Santha Rama Rau's novel, *Remember the House* is the story of a young woman's development from immaturity to a sense of reality.

Unlike these two writers, Ruyh Praver Jhabvala has a considerable number of novels to her credit. Born of Polish parents in Germany and educated in England, Jhabvala married an India and lived in India for more than twenty four years. Jhabvala has written eight novels that deal prominentiy with two themes-life in urban middle class India society and East-West encounter. Her novels like *to whom she Will, The nature of passion, The Householder and Get Ready for Battle* deal with the former theme while others like *Esmond in India, A Backward place, A new Dominion* and Heat and Dust focus on the latter theme.

As M.K. Nailk has aptly remarked, if Jhabvala is an outside-insider, Kamala Markandaya is an insider-outside. She is an expatriate who has been living in England for a long time. Markandaya's fiction evinces a much broader range and offers a greater variety of setting, character and effect. However, broadly speaking her novels also deal with two major themes-the East-West encounter and the role of women in different facets of life. Her first novel, Nectar in a Sieve (1954), is set in a village and examines the hard agricultural life of the Indian peasant. Her next novel, *Some Inner Fury* deals with East-West encounter. It is the story of a highly educated young woman and her English lover who are torn apart by the Quit India movement of 1942. *Possession* is another novel which shows the East-West encounter. Markandaya's *Silence of Desire* is a domestic novel. Markandaya's *A Hanadful of Rice* take us back to the theme of her fist novel, *Nectar in a Sieve.* Once again she focuses on hunger, poverty and exploitation. The background this time, however, is not a village but a town. The most remarkable female Indian English Novelist, however, is Anita Desai who has not only a considerable number of book her credit but has also been given high praise both by the common readers and critics. Her first novel, *Cry the Peacock,* Which was published in 1963 deals with the problem of unequal marriage. Anita Desai's second novel, Voices in the City, is written on the background of Calcutta. The novel is the story of four persons. In her third novel, Bye-Bye Blackbird, Anita Desai has described the predicament of sensitive souls in a foreign land. In spite of all efforts to adjust to the new world, the immigrants are overtaken by a

feeling of estrangement and homesickness and fly back home. The theme of loneliness is there in Desai's next novel, *Where Shall We Go this Summer also*.

The theme of aloneness reaches its most poignant fictional representation in Anita Desai in her novel*, Fire on the Mountain.*

Nayantara Sahgal, the daughter of Vijaya Laxmi Pandit and niece of the first Prime Minister of India, Jawahar Lal Nehru, entered the literary arena with her autobiographical work, *Prison and Chocolate Cake* which was followed by the novels, *A time to be Happy, From Fear Set Free, this time of Morning, Storm in Chandigarh,* The Day in Shadow, A Situation in new Delhi, Rich Like US, Plans for Departure and Mistaken Identity. There is a strong element of autobiography and in her novels.

Arun Joshi is among the greatest Indian English novelists that emerged during the 1960s. His five novels published before his premature death herald a new age of psycho-philosophical novels in Indian English. Joshi's first novel, The Foreigner is the story of an alienated soul, Sindi, who moves from one continent to another but fails to find solace and mooring in life. The Apprentice is a novel set in the background of the freedom struggle and the decline of values in the free India. The *Strange Case of Billy Biswas* presents a clash between the superficial life of the middle class neo-rich Indians and the tribal people of India who despite a lack of basic facilities of life lead a more satisfying and happy life. The Last Labyrinth is yet another story of search for fulfillment in life. Arun Joshi's last novel, The City and the River presents a mixture of politics and philosophy. It is the story of a city state by the side of a river where the rules tries to impose a dynastic dictatorship. He is resisted by the people and the lets loose a reign of terror. The river, however, purges the land of the evil when it floods the entire city state.

It is to this creatively rich period of nineteen sixties and seventies that the works of Chaman Nahal, an academic-turned-novelist, belongs. Iyengar says about him, "Of the novelists whose work appeared first in the seventies, the most outstanding is Chaman Nahal. He was awarded twice the Federation of Indian Publishers' Award and his novel, *Azadi* which is also his most famous novel was awarded the Sahitya Akademi Award in 1977. Nahal's literary output began with his collection of short stories, The Weird Dance in 1965 which was followed by his first novel, My true Faces in 1973. Nahal seems to have matured fast as a novelist because his second novel, Azadi (1975) shows all the signs of a masterpiece. Written on the background of the partition of India in 1947, the novel occupies a place of prominence among what has now come to be called as Partition novels. Nahal's next novel, *Into another Dawn* was published in 1977, the year in which he was given the Sahitya Akademi Award for *Azadi.* This time he takes up the theme of East-West encounter. The English queens, Nahal's next novel, came out in 1979. It is a satire on the Anglophiles in India who follow slavishly the English ways and language. Chanman Nahal's The Crown and the Loincloth focuses on the first phase of the Gandhian struggle for the independence of India. Nahal himself puts the theme of the novel as "the desire to live more honorably as human beings." He added two more novels – The Salt of Life and The Triumph of Tricolor – and came up with the Gandhi Quartet in 1993. The background of all these four novels is the Indian freedom struggle under the leadership of Mahatma Gandhi.

Among the young novelist Arundhati Roy has won the 1997 Booker Prize with her debut novel 'The God of Small Things.' Aravind Adiga also bagged the prestigious Booker for his debut novel. The White Tiger, a year after Kiran Desai had won it for the Inheritances of loss. Neel Mukherjee was short listed for the 2014 Man Booker Prize for 'The Lives of other's. Chetan Bhagat, the most talented young novelist with half a dozen books to back best selling novels – One Night at the Call Centre, Five Point Someone 2, States, Three Mistakes of My Life, Revolution 2020 and Half Girlfriend (2014) has single handedly reshaped the Indian English novel.

Conclusion - Thus we can say that all the novelist of Indian fiction in English today have one this in common they are not traditional Indian English writer. All of them are at ease with the English Language; rather English is their first language.

References:-

1. Naik, M.K. A History of Indian English Literature. New Delhi: Sahitya Akademi, 1982, pp. 156-57.
2. Mulk Raj Anand's: "Two Leaves and a Bud.

****

स्वातंत्र्यवीर सावरकरांचे जीवन प्रेरणादायी स्मरण

डॉ. शैलजा साबले *

प्रस्तावना – जयोस्तुते जयोस्तुते श्रीमहन्मंगले शिवास्पदे शुभदे।
स्वतंत्रते भगवति त्वामहं यशोयुतां वंदे।।

असे उत्स्फुर्त गीत लिहिणारे वीर सावरकरांना शतशत नमन, वंदन। 26 फेबुवारी 2015 ला त्यांची पुण्यतिथी आहे' 50 वर्षा आधी ते अमर झालेत' आज ही त्यांची आठवण–हृदयाला द्रवित करते' अनेक विचारांचे वादळ निर्माण करते'

भगुर, नाशिक चे राहणारे श्री दामोदरपंतांचे सुपुत्र श्री विनायक उपाख्य तात्यावांचा जन्म दि' 28 में 1883 ला झाला' ते जन्मा पासुनच देशभक्त स्वातत्र्यप्रेमी होते' बालपणी ते अत्यंत बुद्धिमान आणि साहसी विद्यार्थी होते' ते साहित्यिक व कवी होते' चाफेकर बंधुंच्या बलिदानाने प्रेरित होऊन वयाच्या 14 व्या वर्षी त्यांनी देशाच्या स्वतंत्रते साठी सर्वस्व अर्पण करण्याची शपथ घेतली, इंग्रजांच्या विरोधात अभिनव भारत या नावाने युवकांचे संगठन बनविले' इ'स'1906 या वर्षी विनायकराव इंग्लंड ला गेले आणि तेथे इंग्रजांच्या विरोधात अनेक युवकांना क्रांतिकार्या साठी प्रेरित केले'

स्वातंत्र्यवीर सावरकरांना उपमा द्यावी तर, स्वातंत्र्यवीर सावरकरांचीच! त्यांच्या अलौकिक व्यक्तित्वाचा शोध घेताना 'अनुपम!', 'असामान्य!', 'अद्वितीय!' हे उद्गार वारंवार निघतात, असे त्यांच्या व्यक्तिवाचे एकेक अंग आहे' अट्टलातला अट्टल अपराधी ज्यामुळे मऊ व्हावा असे अंदमानच्या यमपुरीतले हाल त्यांनी दहा वर्षे पचवले! वर हिंदुस्थानातल्या बंदिवासाचा, आत्महत्येला प्रवृत्ता करणारा जाच सुमारे तीन वर्षे भोगला! त्यानंतर, प्रभू रामचंद्रांच्या वनवासाप्रमाणे रत्नागिरी जिल्ह्यातील स्थानबद्धता चौदा वर्षे सहन केली! परकी शासकांच्या पंजात गवसलेला हा विनायक, हा गरूड, सत्ताावीस वर्षांनी सुटला तो पुन्हा हिंदुस्थानच्या गगनात स्वैर भरारया घेऊ लागला, सत्ताावीस वर्षे शत्रूच्या पंजात राहून न चुरता, शाबूत सुटणे, हाच एक जागतिक विक्रय असेल' मग शत्रूच्या पंजात सावरकर चुरले तर नाहीतच! नुसते टुकूटुकू जिवंत ही राहिले नाहीत, तर अंदमानात त्यांनी उत्कृष्ट काव्यरचना केली, विस्तृत वाचन केले, राजबंद्यांना नि इतर कैद्यांना शिक्षण दिले, अन्यायाला झुंझारपणे वाचा फोडली, शुद्धीची चळवळ केली! हिंदुस्थानच्या कारागृहात प्रेरक, उद्बोधक, साहित्यगुणसंपन्न ग्रंथ लिहिले! रत्नागिरीच्या स्थानबद्धतेत, देशाच्या त्या सनातनी मागासलेल्या कोपरयात, त्यांनी जातिभेदीन्मूलनाचे नि अस्पृश्यता निवारणाचे अपूर्व आंदोलन उभारले नि एक सामाजिक क्रांती त्या जिल्ह्यापुरती अशी यशस्वी करून दाखवली की, उभ्या हिंदुस्थानात जिल्हाला तोड नाही! स्थानबद्धता संपताच, हिंदू राष्ट्रवादाचे नवे तत्तवज्ञान देशापुढे मांडून, राजकारणात हिंदुत्ववादी पक्ष त्यांनी असा गाजवला की राष्ट्रसभेच्या बरोबरीने त्या पक्षाला काही काळ मान्यता मिळाली' गांधी–नेहरूंसारखे लोकोत्तार तेजोभास्कर तेव्हा राजकीय नभांगणात तळपत होते; पण सावरकरांचे तेज त्यांच्यापुढे फिके पडले नाही'

मराठीमध्ये एक संग्राम गीत आहे' त्यात एक ओळ आहे' 'शूर आम्ही सरदार आम्हाला काय कुणाची भीती। देश अन् धर्मासाठी प्राण घेतलं हाती।।' इतिहासामध्ये जे शूर राजे होऊन गेले, त्यांनी देश, धर्म व देव याच्यासाठी हाती प्राण घेतले' युद्ध केली' रणांगणावर धर्मासाठी मरण पत्करले पण धर्म सोडला नाही' जगातील बहुतक युद्धे देव, देश व धर्म यांचे साठी झाली आहेत असे इतिहास सांगतो'

'1857 चे स्वातंत्र्ययुद्ध' या आपल्या इतिहास ग्रंथात स्वातंत्र्यवीर सावरकरांनी या विषयाची चांगली चर्चा केली आहे' ग्रंथाचा आरंभच त्यांनी समर्थ रामदास स्वामी यांच्या स्फूर्तिप्रद शब्दांनी केला आहे'

'धर्मासाठी मरावे। मरोनि अवघ्यासी मारावे
मारिता मारिता घ्यावे। राज्य आपुले'

इतिहासामध्ये जी युद्धे झाली, क्रांत्या झाल्या त्यांच्या मुळाशी तत्तवे कोणती होती? तर देश, धर्म व देव यावर झालेलं अतिक्रमण, त्यांचा झालेल्या अपमानच होता'

देश हा माझा देह आहे' देवाची पूजा, अर्चा, उत्सव यामुळे जशी राष्ट्राची प्रगती होते तशीच प्रगती देश पूजल्यामुळे होते' 'देश हा, देव असे, माझा' अशी ही कविता आहे' धार्मिक प्रवचनाच्या, व्याख्यानाच्या शेवटी आपण गर्जना करतो, 'भारत माता की जय' आपण ज्या देशात राहतो' ज्या देशाने आम्हास घडविले, तो भारत देश माझा देव आहे' देशात सर्वत्र भारतमातेची पूजा केली जाते' ती देवांचीच पूजा आहे'

ही भारतभूमी आमचीपुण्यभूमी व पितृभूमी आहे' म्हणून आम्हाला ती वंदनीय आहे' आईला देव माना' वडिलांना देव माना' 'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव'' हा आपल्या संस्कृतीचा उद्गार आहे' हा देश म्हणजे आमचा देव आहे ही भारतभूमी आमची देवता आहे' ही भावना हृदयात जर दृढ झाली तरच भारताशी द्रोह करण्याऱ्या शत्रूंचा राग येईल' स्वातंत्र्यवीर सावरकरांनी या भारतभूमीला आपले दैवत मानले व सर्वकाही तिच्या चरणी वाहिले' ते म्हणतात,

हे मातृभूमी तुजला मन वाहियेले।
वक्तृत्तव वाग्विभवही तुज अर्पियले।
तू तेचि अर्पिली नवी कविता रसाला।
लेखाप्रती विषय तूचि अनन्य झाला।।

ज्ञानेश्वर, तुकाराम, व सारे भक्त यांनी आपले मन, वक्तृत्तव, लेखन, कविता, सारं काही विट्ठलाच्या चरणी अर्पिले होते' तसे सावरकरांनी राष्ट्राला देव म्हणून त्याच्या चरणी सर्वस्व वाहिले होते' भगवान श्रीकृष्ण म्हणतात'

* अतिथि विद्वान (मराठी साहित्य) शासकीय माधव कला, वाणिज्य एवं विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

यद् करोषि यदश्नसि यज्जुहोसि ददासियद्।
यत्तापस्यासि कौन्तेय तत् कुरूष्व मद्र्पणम्।।

'अर्जुना, जे करशील, जे खाशील, जे हवन करशील, जे दान देशील, जे तप करशील ते सर्व मला अर्पण कर'' हे करणे म्हणजे देवाची भक्ती करणे होय' त्याप्रमाणे जे जे कार्य करशील, ते ते देशासाठी कर, जे प्राप्त करशील ते देशाला अर्पण कर'

बंकिमचंद्र आपल्या 'वंदे मातरम्' या 'राष्ट्रगीतात म्हणतात'

'हे मातृभूमी दहा शस्त्रे धारण करणारी दुर्गा तू आहेस' कमला,
व कमलदलात विहार करणारी, वाणी, विद्यादायिनी तूच आहेस' तूच धर्म आहेस'' म्हणजे देश हीच देवता आहे' सान्या देशभक्तांनी, क्रांतीकारकांनी देश हाच देव मानला' त्याच्या स्वातंत्र्यासाठी मी सशस्त्र युध्दात शत्रूस मारिता मारिता मरेतो झुंजेन' माझा देश माझा देव आहे' त्यासाठी मी प्राण अर्पण करीन अशी प्रतिज्ञा करून ती तडीला नेणारे अनेक क्रांतीकारक होवून गेले म्हणून देव कोण? तर आमचा देश हाच आमचा देव आहे' असेम्हणत-म्हणत त्यांनी संपूर्ण जीवन देशाला वाहून टाकले' असे स्वातंत्रय वीर जगात अमर होऊन जातात आणि सतत समाजाला स्फूर्ती व प्रेरणा देतात'

अनुवाद - हमारे भारत के जाने-माने स्वातंत्र्य वीर सावरकर को जाकर ज्यादा समय नहीं हुआ है। 26 फरवरी 2015 को 49 साल हो रहे है। आज उनका स्मरण करके, उनकी वीरता को याद करके मन द्रवित व स्फुरित हो उठता है। उनकी जीवनी पढ़कर उर्जा प्राप्त होती है सकारात्मक सोच गति पकड़ती है। आज हम ऐसे अनेक स्वातंत्र्य वीरों को याद करके उनसे प्रेरणा ले। और आने वाली पीढ़ियों को जागरूक व सचेत चैतन्यमयी बनाने का पाठ सिखाये। आज हम उन्हें स्मरण करके शत-शत नमन करते है।

महाराष्ट्र में नासिक जिले का एक छोटा सा गाँव-'भगूर'' वहाँ के जहागीरदार थे-श्री दामोदरपंत सावरकर। उनके घर वीर सावरकर का जन्म 28 मई 1883 को 'भगूर' हुआ था। उनकी माता का नाम सौ'राधाबाई तथा पिता का नाम श्री दामोदरपंत सावरकर था। सावरकर जी के परिवार का वातावरण अत्यन्त धार्मिक व देशभक्ति से परिपूर्ण था। दामोदरपंत व राधाबाई के बड़े पुत्र का नाम गणेश था। अत: बड़े स्नेह से उन्होंने इस पुत्र का नाम विनायक रखा। विनायक दामोदरपंत सावरकर को ही उनके कर्तृव्य के कारण आज हम 'वीर सावरकर' के नाम से जानते हैं। ये चार भाई-बहन थे। सबसे बड़े गणेश, फिर स्वयं विनायक, बहन मैना तथा सबसे छोटे भाई का नाम नारायण था। विनायक दिखने में अत्यन्त सुंदर एवं बुद्धिमान थे। परिवार में रामायण / महाभारत का नियमित पाठ होता था। महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी तथा पेशवाओं की वीर गाथाएँ तथा वीररसपूर्ण गीत गायन घर में होता रहता था।

इस धार्मिक व राष्ट्रभक्ति के वातावरण का विनायक के बाल मानस पटल पर गहरा प्रभाव पड़ा और बाल्यकाल से ही उनकी लेखन क्षमता, विराट स्मरणशक्ति सभी को दृष्टिगोचर होने लगी। उन्हें पढ़ने में गहरी रुचि थी वह अपने देश के इतिहास के साथ-साथ अन्य देशों का इतिहास भी तुलनात्मक रुप से पढ़ते थे। और इसी का परिणाम रहा कि केवल 14 वर्ष की उम्र में सशस्त्रक्रांति से भारत को स्वतंत्रता दिलवाने की प्रतिज्ञा करने वाला विश्व का यह पहला क्रांतिकारक बना।

सावरकर एक क्रांतिकारकों के संगठक थे। बेरिस्टर के रुप में कानून के विद्वान भी थे। नेतृत्व संपन्न व अत्यन्त रुपवान व्यक्तिमत्व इन सभी बातों से वे आज भी हमारे समक्ष आदर्श के रुप में हैं तथा आगे भी कई युगों तक अविस्मरणीय रहेंगे।

सावरकर जब 10 वर्ष के थे तभी उनकी माता सौ'राधाबाई का हैजे की चपेट में आने से निधन हो गया। विनायक गाँव छोड़कर नासिक में पढ़ने लगे। यहाँ उन्होंने अपने साथियों को वीररसपूर्ण कविताएं लिखकर व सुनाकर स्वतंत्र देश हेतु प्रयास के लिए उकसाया। मित्रों को लेकर व्यायामशाला जाना, दण्ड-बैठक लगाना, कुश्ती खेलना, मल्लखम्भ, लाठी चलाना, तैराकी इत्यादि अनेकानेक तरह की कसरतें कर शरीर को बलशाली व पुष्ट बनाना शुरु किया। छुट्टी के दिन नदी किनारे जाकर दो दल बनाकर आक्रमण-प्रत्याक्रमण का खेल खेलना उन्हें रुचिकर लगता था।

भारतीय जनता पर अंग्रेजों के अत्याचार जारी थे। 1896 में महाराष्ट्र में भीषण अकाल पड़ा तथा प्लेग रोग महामारी के रुप में फैला। जनता और भी परेशान हो उठी थी। अंग्रेज सरकार को महामारी के प्रति सचेत करने के लिए लोकमान्य तिलक जी ने पत्र लिखा परंतु उसका कोई परिणाम नही निकला। महाराष्ट्र के युवकों का रोष पराकाष्ठा तक जा पहुँचा और अवसर पाकर 22 जून 1897 को चाफेकर बंधुओं ने ब्रिटिश प्लेग कमिश्नर रैण्ड तथा एक अन्य अंग्रेज अधिकारी आयर्स्ट को गोलियों से भून डाला। लेकिन द्रविड़ बंधुओं ने गद्दारी की और चाफेकर तीनों भाईयों के नाम अंग्रेजों को बता दिये फलस्वरूप चाफेकर बंधुओं को अंग्रेजों ने फाँसी पर लटका दिया। यह 1899 की घटना है तब विनायक सावरकर अस्वस्थ थे और भगूर गाँव में उनका इलाज चल रहा था। उन्होंने चाफेकर बंधुओं को फाँसी दिये जाने का समाचार पढ़ा और उनका मन क्रोध से उबल पड़ा। उन्होंने अपनी कुलदेवी दुर्गा माता के सामने प्रतिज्ञा की- 'देश की स्वाधीनता के लिये मैं जीवन के अंतिम क्षणों तक सशस्त्र क्रांति का झण्डा उठाते हुये साम्राज्यवादियों से जूझता रहूँगा।'

आगे चलकर यही क्रोध का बीज एक प्रेरणादायी पोवाडे को जन्म दे गया। जिसमें चाफेकर बंधुओं के साहस व बलिदान का वीररसपूर्ण शैली में ऐसा अप्रतिम व हृदयस्पर्शी वर्णन किया गया था कि उसे पढ़ने या सुनने वालों की आँखों से अनायास आँसू निकलते थे।

विनायक सावरकर की तिलक, म्हसकर, पागे, परांजपे जैसे निष्ठावान देशभक्तों से मित्रता हो गयी थी। समान विचार धारावाले इन मित्रों ने मिलकर 1899 में 'देशभक्तों का मेला' नामक एक दल बनाया और 1900 का वर्ष शुरु होते-होते 'मित्र मेला संगठन' खड़ा कर दिया चार वर्ष बाद यहीं संगठन 1904 में 'अभिनव भारत सोसाइटी' के रुप में उभरकर आया। जिसका एकमात्र उद्देश्य भारत की पूर्ण राजनैतिक स्वतंत्रता था।

1905-06 सावरकर बी'ए' कर रहे थे। उन्होंने अपने मित्रों के साथ मिलकर स्वदेशी का प्रचार व बंगाल विभाजन का विरोध प्रारम्भ किया। 01 अक्टूबर 1905 में पूना में एक विशाल जनसभा हुई जिसमें सावरकर जी ने विदेशी बहिष्कार की घोषणा की तथा दशहरे पर विदेशी वस्त्र व वस्तुओं की होली हेतु जनता का आह्वान किया और उनको प्रचंड समर्थन भी मिला। परंतु इस कारण उन्हें कॉलेज में 10/- रु का जुर्माना व कॉलेज से निष्कासन भी सहना पड़ा। परंतु मुंबई विश्वविद्यालय ने उन्हें परीक्षा देने दी और 1906 में वे बी'ए' की परीक्षा उत्तीर्ण हुए। तभी श्यामजी कृष्ण वर्मा ने घोषणा की कि जो छात्र लंदन में पढ़ना चाहेंगे उन्हें 'शिवाजी छात्रवृत्ति' दी जायेगी कुछ अड़चनों के निवारण के पश्चात् सावरकर जी को यह छात्रवृत्ति प्राप्त हुई और वे लंदन रवाना हो गये। वहाँ वे 'इंडिया हाऊस' में ठहरे। जहाँ उनका परिचय सेनापति बापट, भाई परमानंद, लाला हरदयाल, ज्ञानचंद्र वर्मा, वीरेन्द्र चट्टोपाध्याय, एम'पी'टी' आचार्य जैसे तेजस्वी सितारों से हुआ जो उनके मित्र

समूह में थे। सावरकर जी ओजस्वी वक्ता थे। उनकी लेखन शैली भी रुचिकर किंतु कठोर थी। सावरकर जी के प्रखर उद्बोधन से ब्रिटीश सरकार चौकन्नी हुई और उनके पीछे लगी तब कुछ समय के लिये वे पेरिस चले गये। बाद में 13 मार्च 1910 को जब वे वापिस लंदन आये तो उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। तथा ब्रिक्स्टन जेल में रखा गया। लेकिन कई प्रकार के समर्थन व विरोधों के बाद अंत में उन पर भारतीय न्यायालय में मुकदमा चलाना तय हुआ। 29 जुन 1910 को 'मोरिया' नामक जलपोत (पानी का जहाज) से उन्हें भारत के लिये रवाना किया गया। 7 जुलाई को जहाज में खराबी आने से फ्रांस के 'मार्सेल्स' नामक बंदरगाह पर जहाज रुका। सावरकर जी अत्यंत साहसी व बलशाली थे। उन्होंने कुछ निर्णय लिया। प्रात: काल शौचालय में जाने पर ऊपर के जंगले के छेद से शरीर पर साबुन मलकर उसको चिकना करके वे जैसे-तैसे समुद्र में फिसल गये। ईश्वरकृपा व दृढ़ आत्मविश्वास के साथ वे बंदरगाह की दीवार से छलांग लगाकर जमीन पर पहुँचकर दौड़ने लगे। परंतु दुर्गाग्य से अंग्रेज अधिकारियों ने पीछा करके उन्हें पुन: पकड़ लिया। ओर 50 वर्षों के लिए कालेपानी की सजा भुगतने अंडमान भेजा गया । जहाँ सावरकर जी पर घोर अन्याय व अमानवीय अत्याचार हुये। उन्हें अंडमान आदि कई कारागृहों में अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग समय में बंदी बनाकर रखा गया। वहाँ उन्होंने कमला काव्य लिखकर अपना आत्म बल बनाये रखा। निष्ठावान देशभक्त, कर्मठ, स्वदेश के प्रति पराकाष्ठा का स्वाभिमान रखने वाले, तेजस्वी व्यक्तिमत्व एवं ओजस्वी वाणी के धनी विनायक दामोदर सावरकर अपने निष्काम सतत प्रयत्नों से भारत को स्वतंत्रता दिलाने में यशस्वी हुये। 15 अगस्त 1947 को भारत स्वतंत्र हुआ।

सावरकर जी ने बाल्यावस्था से अब तक अनेक आघात सहे। माता-पिता, जेष्ठ बंधु, भाभी, पत्नी इत्यादि का परलोकगमन, आर्थिक समस्याएँ, अंग्रेजों के अत्याचार आदि। परंतु अब धीरे-धीरे स्वास्थ्य उनका साथ छोड़ने लगा था। शरीर कमजोर होने लगा था। उनके अंतिम स्पष्ट शब्द थे- 'इस जीवन में मैंने सबकुछ पा लिया। मैंने सब कुछ कर लिया। अंग्रेजों के चंगुल से मेरा देश मुक्त हो गया। मैं कृतार्थ हूँ। मैं धन्य हूँ।'

स्वातंत्र्यवीर या क्रांतिवीर विनायक दामोदरपंत सावरकर नामधारी दिव्यात्मा 83 वर्ष की आयु में 26 फरवरी 1966 को परमज्योति रुप में विलीन हो गई।(स्वातंत्र्यवीर सावरकर जयंती के उपलक्ष में व्याख्यान कार्यक्रम का भाग-मुनी नगर उज्जैन-2011)

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महाराष्ट्र संस्कृति-डॉ. पु.ग. सहस्त्रबुद्धे कान्टीनेन्टल प्रकाशन पुणे 2006
2. स्वातंत्रयवीर सावरकर-एक रहस्य - इ.न.गोखले मौज प्रकाशन गृह मुंबई 1989 पृ.क्रं.1
3. मुक्त आनंदधन-देवीदास पोटे न्यु एज प्रिंटीग प्रेस प्रभादेवी मुबंई 2009 पृ.क्रं.123, 124, 125
4. स्वतंत्रता संग्राम में महाराष्ट्रीयन क्रांतिकारियों का योगदान-वीरेन्द्र कावडिया वसुधैव कुटुम्बकम सामाजिक संस्था (रजि.) महानंदानगर, उज्जैन।
5. प्रदक्षिणा कालखंड 1840 ते.1965-संपादक मंडल-कान्टीनेन्टल प्रकाशन-पुणे।

****

भारत में धर्म, संप्रदायों की विभिन्नताओं में एकता का दर्शन

डॉ. शैलजा साबले *

प्रस्तावना – प्राचीन भारत के संबंध में हमारे पास, वेद, उपनिषद, गीता, रामायण तथा महाभारत, जैन ग्रंथ, बौद्ध ग्रंथ धार्मिक पुस्तकों के अतिरिक्त कुछ सिक्के, शिलालेख स्वदेशी, विदेशी इतिहासकारों द्वारा लिखे ग्रंथ इत्यादि ही है।

प्राचीन युग में संपूर्ण देश में, सर्वजगत में धर्म ही एकमात्र संस्कृति का मूलाधार होता है। प्राचीन युग के इतिहास का अध्ययन करने पर दृष्टीगत होता है कि काव्य, तत्वज्ञान, विद्या, कला इनका जन्म धार्मिक प्रेरणा से हुआ है। धार्मिक सत्ता का सर्वकश, सर्वव्यापी प्राबल्य था। इस कारण संस्कृति के इतिहास में धार्मिक विचारों को प्रथम स्थान दिया है।

तत्व ज्ञान, नीति एवं आचार यह धर्म के तीन प्रमुख अंग है। आत्मा परमात्मा व जग या जीव, शिव और सृष्टि के स्वरूप का सिद्धांत यह तत्वज्ञान होता है। सांख्य योग, वेदांत ये तत्व ज्ञान के पंथ है। नीति में सत्य, अहिंसा, दया, परोपकार, सर्वभूतहित, इंद्रियनिग्रह, मातृपितृ भक्ति इत्यादि का समावेश होता है। यज्ञ, याग, होमहवन, स्नान संधया व्रत वैकल्यें, तीर्थ यात्रा, ग्रंथ भस्मलेपन, छुआ–छूत, उपवास इत्यादि यह आचार धर्म माने जाते है। धर्म के यह तीन अंगों से ही किसी भी समाज या सम्प्रदाय का धार्मिक जीवन साकारित है।

'धारयातीति धर्म:।' यह धर्म की परिभाषा है। हमने जो क्षेत्र धारण किया है उसका कर्त्तव्यनिष्ठा से पालन करना ही धर्म कहलाता है, जो समाज को, व्यक्ति का धारण करे व धर्म है हिन्दु समाज की संस्कृति धर्म पर ही आधारित है।

सरजेम्स फ्रजेर के अनुसार – धर्म मनुष्य से श्रेष्ठ उन शक्तियों की संतुष्टि या आराधना को समझता हूँ, जिनके संबंध में यह विश्वास किया जाता है कि वे प्रकृति और मानव जीवन को मार्ग दिखलाती और नियंत्रित करती है।

डॉ. अग्रवाल के अनुसार, 'धर्म और जीवन का मेल हिन्दू संस्कृति के आग्रह का विषय है। कर्म पर पूरा जोर दिया गया है, किन्तु कर्म बिना धर्म अपूर्ण है। जिस कर्म में धर्म–ज्ञान का भाव नहीं, वह कर्म स्वार्थयुक्त होने से व्यक्ति और समाज के जीवन को और भी उलझन में डाल देता है। इसीलिए हिन्दुओं ने जीवन को एक आध्यात्मिक स्तर पर प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न किया है जिससे कि 'इस जीवन में भी सुख मिले और इस शरीर के अन्त के पश्चात् भी यदि कोई जीवन हो तो वह भी सुसम्पन्न हो।'

भारतीय दर्शन में को अभ्युदय और नि:श्रेयस, ऐहिक तथा पारलौकिक सुख की सिद्धि के हेतु समाज का धारण करने वाला कहा गया है। इस धर्म की मान्यता यह है कि प्रत्येक प्राणी में वह एक ही ईश्वर का निवास है। अत: हम सब एक हैं, हम सबका जीवन एक ही परम शक्ति द्वारा संचालित व नियंत्रित है। अत: जीव व जीवन के मध्य भी ईश्वर का दर्शन सम्भव है। महाभारत में तो एक स्थान पर कहलाया गया है कि मनुष्यलोक में जो श्रेय है वही परम महत्त्वपूर्ण है। 'मौलिक विचार यह है कि संसार को भोगने के लिए ही रचा गया है, परन्तु इस भोग का कदापि यह अर्थ नहीं है कि ईश्वर को भूल जाया जाए।' इस ईश्वर को याद रखने के लिए कोई विशेष प्रयत्न, जप–तप की आवश्यकता नहीं है। इसके लिए सबके प्रति प्रेम–भाव ही पर्याप्त है।

स्वामी विवेकानंद जी के शब्दों में, 'सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण से लेकर कीड़े–मकोड़े तक सबमें प्रेम–मूर्ति भगवान् का निवास है। उसी प्रेम–मूर्ति के चरणों में भक्तिपूर्वक अपने तन–मन–धन को समर्पित कर दो। निखिल विश्व में उन्हीं के प्रकाश को हर प्राणी मात्र में देखने की चेष्टा करो। ऊँच–नीच की भावना को त्यागकर सबसे प्रेम करो–यही मुक्ति, यही मन्त्र, यही पूजा, यही भगवान् है।'

भारत में सदैव से धार्मिक चिंतन की स्वतंत्रता रही है। इस युग में अनेक ऐसे दार्शनिकों का प्रादुर्भाव हुआ जिन्होंने परंपरागत रूप से चले आ रहे ब्राह्मण धर्म तथा वेदों को आलोचनात्मक दृष्टी से देखा तथा उन्हें यथावत स्वीकार करना उचित समझा कारण बहु देववाद, ब्राह्मणों के चरित्र व विचारधारा में गंभीर–अंतर का आना धार्मिक जटिलता, कर्मकांड को प्रधाानता कठिन खर्चीले यज्ञ–क्लिष्ट धार्मिक साहित्य–जिनकी भाषा क्लिष्ट एवं विषय सामान्य व्यक्ति की, ज्ञान की सीमा के परे थे। जन साधाारण ऐसे धर्म का पालन करना चाहता था जो सरल हो।

छठी शताब्दी ई.पू. में हुई धार्मिक क्रांति के परिणाम स्वरूप जैन धर्म के समान ही एक अन्य धर्म का उदय हुआ जिसे बौद्ध धर्म कहा जाता है। इस धर्म के संस्थापक महात्मा बुद्ध है जो विश्व के प्रमुख धर्म सुधारकों व दार्शनिकों में से प्रमुख स्थान रखते है। इनके अतिरिक्त भागवत संप्रदाय, शैव संप्रदाय, पाशुपत संप्रदाय, लिंगायत संप्रदाय, धर्मों की भिन्नताएँ थी।

प्रजातियों की भांति हमारे देश में धर्मों में भी भिन्नताएँ है। यहाँ एलाशिक धर्म और अनुयायी कितने ही वर्षों के साथ–साथ रहते है और अब भी रह रहे है। यही कारण है कि हिंदू धर्म में अगणित रूपों और संप्रदायों के अतिरिक्त इस देश में बौद्ध, जैन, सिक्ख, इस्लाम, ईसाई आदि धर्मों का प्रचलन है केवल हिंदू धर्म के ही विविध संप्रदाय व मत सारे देश में फैले हुए है जैसे वैदिक धर्म, पौराणिक धर्म, सनातन धर्म, शाक्त धर्म शैवधर्म, वैष्णव धर्म, राजावल्लभ संप्रदाय, नानकपंथी, आर्य समाजी इ. है। इनमें से कुछ धर्म साकार ईश्वर की पूजा करते है तो कुछ धर्म निराकार ईश्वर की आराधाना करते है। कोई धर्म में बली और यज्ञ पर बल देता है तो कोई अहिंसा का पुजारी है किसी धर्म में शक्ति मार्ग की प्रधानता है तो किसी में ज्ञान मार्ग की प्रधानता है।

भारत में प्राचीन काल से ही विभिन्न जाति–धर्म, भाषा और सम्प्रदायों के सदस्य निवास करते आए हैं। सभी धर्मों और वर्गों के व्यक्ति साथ–साथ मिलकर सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक तथा आर्थिक कार्यों का संचालन

* अतिथि विद्वान (मराठी साहित्य) शासकीय माधव कला, वाणिज्य एवं विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

करते रहे हैं। यहाँ सम्प्रदायवाद जैसी कोई समस्या नहीं थी। भारत में सम्प्रदायवाद का बीज दरअसल अंग्रेजों ने बोया था, अंग्रेजों की फूट डालो और शासन करो की नीति थी। उनकी इस नीति ने भारत में हिन्दुओं और मुसलमानों में फूट डालकर उन्हें एक दूसरे का विरोधी बना दिया। अंग्रेजों द्वारा बोए गए सम्प्रदाय के बीज आज संपूर्ण देश में फल-फूल रहे हैं।

हिन्दू और मुसलमानों के बीच पैदा किए गए सम्प्रदायवाद के परिणामस्वरूप ही भारत के दो टुकड़े हुए थे। आज भारत और पाकिस्तान विश्व भर में दो दुश्मन देशों के रूप में जाने जाते हैं। देश में भी हिन्दुओं और मुसलमानों के संबंध एक लम्बे समय से तनावपूर्ण चल रहे हैं। इसी प्रकार हिन्दुओं और सिक्खों का संप्रदायवाद का ज्वलन्त उदाहरण सन् 1984 के साम्प्रदायिक दंगे रहे। आज भी बाबरी मस्जिद और राम मंदिर को लेकर अनेक हिन्दुओं और मुसलमानों के मन में सम्प्रदायवाद की आग जल रही है। समाज के कुछ स्वार्थी लोग अपना स्वार्थ सिद्ध करने हेतु इस आग को और भड़का रहे हैं। आज सम्प्रदायवाद धर्म की तुलना में राजनीति से अधिक प्रेरित हैं। गुजरात का गोधारा कांड साम्प्रदायिक दंगों का एक ताजा उदाहरण है।

सम्प्रदायवाद एक जटिल समस्या है। इसको बढ़ाने में विभिन्न धार्मिक संगठनों एवं राजनीतिक पार्टियों का प्रमुख योग रहा है। भारत में सम्प्रदायवाद का इतिहास बहुत ही विभक्त रहा है। भारत-पाकिस्तान का बँटवारा सम्प्रदायवाद का ही परिणाम है। इसी सम्प्रदायवाद के फलस्वरूप भारत में विशाल जन-धन की हानि हुई। देश में शान्ति व्यवस्था बनाए रखने के लिए सम्प्रदायवाद को मिटाना अति आवश्यक है। नहीं तो राम मन्दिर-बाबरी मस्जिद जैसे गंभीर मामले भविष्य में भी पनपते रहेंगे। सम्प्रदायवाद फैलाने वालों को कठोर दण्ड दिया जाना चाहिए। उन राजनैतिक पार्टियों को मान्यता नहीं दी जानी चाहिए जो सम्प्रदायवाद का प्रचार करती हैं। आज के युवा वर्ग को सम्प्रदायवाद के दुखद इतिहास से शिक्षा लेनी चाहिए और सम्प्रदाय को मिटाकर धार्मिक एकता का प्रचार-प्रसार करना चाहिए। धर्म ही एक ऐसा समूह है जो ईश्वर के प्रति आस्था व श्रद्धा रखता है एवं सभी धर्मों व वर्गों को संगठित करने की प्रभावशाली शक्ति है।

भारत एक बहुधर्मी देश है। भारत में सन् 2001 की जनगणना के अनुसार सात प्रमुख धार्मिक समुह है। सबसे अधिक लगभग 82 प्रतिशत जनसंख्या हिंदुओं की है। दुसरा स्थान मुस्लिम 12.12 प्रतिशत, ईसाई 2.34 प्रतिशत, सिक्ख 1.94 प्रतिशत, बौद्ध धर्म 0.76 प्रतिशत, 0.44 जैन धर्म को मानने वालों की संख्या का अंकन किया गया है। अन्य धार्मों को मानने वाली जनसंख्या 0.40 प्रतिशत है। अन्य धर्मों में पारसी, आत्मवादी आते है। परंतु इनका योगदान इतना महत्वपूर्ण है कि इनकी गिनती बड़े धार्मिक समूहों में की जाती है।

भारतीय समाज में धर्म जहां एक और एकता स्थापित करने का साधन है। वही दुसरी और समाज में दरार डालने का कार्य भी करता है। सभी धार्मिक समूह आंतरिक रूप से भिन्नता को प्रकट करते है। हिंदुओं, मुसलमानों, सिक्खों और ईसाईयों में भी जाती विभिन्नता या जाती समूह देखने को मिलते है। वैसे तो यहाँ अनेक धर्म संप्रदाय कुछ समान दर्शन व नैतिक नियमों पर आधारित है। एकेश्वरवाद, आत्मा की अमरता, कर्म, पुनर्जन्म, मायावाद, मोक्ष, निर्वाण, भक्ति ई. प्राय: सभी धर्मों की समान निधी है। साथ ही विष्णु और शिव की उपासना संपूर्ण भारत में प्रचलित है। राम व कृष्ण की गाथा का गुणगान संपूर्ण भारत में प्रचलित है। राम व कृष्ण की गाथा का गुणगान संपूर्ण भारत में किया जाता है। हिमालय के शिखरों से लेकर कृष्णा तथा कावेरी के समतल डेल्टाओं तक सर्वत्र शिव और विष्णु के मंदिरों के शिखर प्राचीन काल से आकाश से बाते करते है और धार्मिक एकता की घोषणा करते आ रहे है।

मोक्ष प्रदान करने वाली पवित्र पुरियों-अयोधया, मथुरा, गया, काशी, कांची और अवंति सारे देश में बिखरी हुई है गाय को सभी हिंदू पवित्र मानते है। उनके आदर्श पुरूष-मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम और श्रीकृष्ण एक से है। वे समान रूप से उपनिषद, वेद गीता, रामायण, महाभारत, धर्मशास्त्र, पुराण आदि के प्रति श्रद्धा रखते है। वाराणसी, उज्जैन, अमृतसर, मथुरा, बौद्धगया, वैष्णो देवी, तिरूपति, कुरूक्षेत्र, ज्वालाजी और अजमेर शरीफ ऐसे धार्मिक स्थान है। जहाँ पूरे देश में विभिन्न धर्मों व जातियों के लोग भक्ती और श्रद्धा से दर्शनों के लिए आते है। इस प्रकार भारतीयों के समक्ष भारत की एकता की कल्पना सदैव मूर्तिमान रही है। यही संगठित भारत की विशेषता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्राचीन भारत का इतिहास-आर.सी.अग्रवाल प्रथम संस्करण 1987 कैलाश पुस्तक सदन भोपाल/ग्वालियर।
2. महाराष्ट्र संस्कृति-डॉ.पु.ग.सहस्त्रबुद्धे, कान्टीनेन्टल प्रकाशन पुणे 2003 पृ.क्रं.151, 159, 160, 162, 167.
3. भारतीय इतिहास प्रारंभ से 1947 ई. तक - डॉ.त.के.मित्तल-साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा 2000 पृ.क्र.56, 57.
4. भारतीय समाज व संस्कृति-डॉ.रविन्द्रनाथ मुकर्जी पे.नं. 12-13 विवेक प्रकाशन, जवाहरनगर दिल्ली-2008.
5. प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास-डॉ.श्रीकृष्ण ओझा रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर।

****

संगीत में स्वर साधना

डॉ. जितेन्द्र शुक्ला *

प्रस्तावना – संगीत में रियाज का अर्थ अभ्यास करना होता है। रियाज शब्द की उत्पत्ति उर्दू भाषा से हुई है। हिन्दी में इसे अभ्यास कहते हैं। संगीत में साधना, रियाज,अभ्यास का एक ही अर्थ है। संगीत की विशेषता यह है कि इसमें साध्य और साधना दोनों ही सूक्ष्म रूप हैं। संगीत की कोई भी विधा हो, गायन, वादन या नृत्य इन तीनों में रियाज का बड़ा ही महत्त्व है।

साधना का अर्थ है, मन को किसी विषय में एकनिष्ठ भाव से संयुक्त करना अर्थात् किसी साध्य वस्तु की प्राप्ति के लिए जो प्रयत्न किया जाता है उसे साधना कहते है। संगीत साधना में इन्द्रियों के समाहित होने, मन के ध्यानस्थ होने तथा परब्रह्म के गुणगान में ब्रहम से तादात्म्य स्थापित होने की योग साधना कितनी सुलभ एवं सुन्दर है, इसकी अनुभूति संगीत के अभ्यास द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है।

यदि संगीत साधक अपनी कला में माहिर हैं तथा उसने अपनी कला में सही ढंग से प्रतिदिन अभ्यास किया है, तो वह अपनी कला द्वारा प्राप्त सिद्धि से चमत्कृत रुप से समस्त श्रोताओं के मन को एकाग्र कर आनन्द प्रदान करता है। अभ्यास के विषय में कहा गया है कि –

'अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः'

महर्षि पतंजलि के अनुसार चित्त वृत्तियों का निरोध अभ्यास एवं वैराग्य से होता है, संगीत साधक भी संगीत साधना में अभ्यासरत् रहकर निरन्तर साधना करता है।

संगीत में साधना, रियाज व अभ्यास के अतिरिक्त एक और शब्द होता है 'चिल्ला' यह फारसी भाषा का शब्द है। प्राय: संगीत विद्यार्थी अपने जीवन में संगीत के अभ्यास का संकल्प करते हैं। उन दिनों वे अपनी दिनचर्या में आवश्यकता भर आराम करने के बाद, अतिरिक्त समय रियाज में लगाते हैं।

इसे ही चिल्ला खिंचना कहते हैं। चिल्ला की अवधि 40 दिनों की होती है। जो कलाकार इस प्रकार से रियाज करता है उसे सिद्धी प्राप्त होती है। साधारणत: संगीत का विद्यार्थी एक बार चिल्ला के बाद पुन: भी चिल्ला खींच सकता है।

संगीत में स्वर साधना एक महत्वपूर्ण कार्य है और यह कार्य तभी संभव हो सकता है जब साधक अपना बल सही दिशा में लगाये। स्वर साधना संगीत की आधारभूत प्रक्रिया है। संगीत के साधारण विद्यार्थी से लेकर उच्चकोटि के कलाकार तक को इसकी आवश्यकता होती है। संगीत के क्षेत्र में कोई कलाकार कितना पारंगत है, यह उसकी स्वर–साधना पर निर्भर करता है। रियाज की अवहेलना करके एक अच्छा गायक या वादक बन पाना असम्भव है। अतएव स्वर साधना के महत्व को ध्यान में रखते हुए आज के विद्यार्थियों को इसकी प्रयोगात्मक विधि को जानना और व्यवहारिक प्रयोग करना परम आवश्यक है। स्वर साधना के लिये कुछ महत्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है –

1. स्वर साधना के लिये सर्वप्रथम साधक की बैठक सरल और साधना के अनुकुल होनी चाहिये, आड़ा–तिरछा बैठना, मुँह ठेढ़ा करना या अकारण हिलते रहने से स्वर उच्चारण में कई दोष आ जाते हैं। पालथी मारकर, एकाग्रचित्त होकर, बिना हिले–डुले सीधा बैठना चाहिये तथा तानपुरा छेड़ने की प्रक्रिया भी सरल एवं स्वाभाविक होना चाहिये।

2. स्वरों में 'षड्ज' स्वर अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। यह आधार स्वर होता है। षड्ज (सा) स्वर की पहचान हमें ठीक मिले हुए तानपुरे मिलती है। तानपुरे को छेड़ने से हमें जो प्रमुख स्वर मिलता है उसे संगीतिक भाषा में सा कहा जाता है। विद्यार्थियों को इसकी आवाज के साथ अपनी आवाज मिलानी चाहिए। सुविधा के लिये इस ध्वनि पर 'सा' शब्द का उच्चारण किया जाता है परंतु स्वर की पहचान हो जाने पर आकार में अर्थात् ओ शब्द का ही उच्चारण करना चाहिए। जो स्वर नाभि से प्रेरित होकर कण्ठ से विकसित होता हुआ मुँह द्वारा व्यक्त होता है, वहीं स्वर स्वाभाविक लगता है। अत: स्वर के प्रस्फुटन में नाभि, कण्ठ और मुँह का संयुक्त योगदान होना चाहिए। यही कारण है कि स्वर साधक की बैठक का स्वर लगाव पर सीधा प्रभाव पड़ता है। स्वर लगाते हुए अपने श्वास को यथासंभव लंबा करना चाहिए तथा उचित बल से इसका उच्चारण करना चाहिए। इससे आवाज में एक स्थिरता आती है जितनी देर श्वास रहे, आवाज तानपुरे के स्वर से बिल्कुल घुली–मिली रहनी चाहिये। आवाज का उंचा–नीचापन हर रोज के अभ्यास से स्वत: अपनी जगह ढूंढ लेता है और वांछित स्वर मिल जाने पर एक गहन रंजकता का बोध होता है। प्रत्येक बार स्वर लगाने पर इसी स्थिति को बनाये रखने का कोशिश करनी चाहिये। अब निरन्तर इस क्रिया के करने से स्वर लगाव की प्रक्रिया में जहाँ आवाज के ऊँचे–नीचे की पहचान करना आवश्यक है, वहीं उसे सही स्थान पर स्थापित करके टिकाऊ बना देना, स्वर का ऊपर–नीचे हिलने नहीं देना, उसका उचित बल के साथ घनत्व बनाये रखना आदि बातें बहुत उपयोगी सिद्ध होती हैं। जब ये सब क्रियाएँ काबू में आ जाएं तो सांस को यथासम्भव ज्यादा देर तक रोककर रखने का अभ्यास करना चाहिए।

3. 'षड्ज' स्वर के लगाने के पश्चात् सप्तक के अन्य स्वरों की बारी–बारी से पहचान करनी चाहिए। सा' स्वर से एक निश्चत अन्तराल पर रे, ग, म, प, ध तथा नि:स्वर स्थित रहते है। इनकी जानकारी किसी योग्य शिक्षक के पास बैठकर करनी चाहिए। सर्वप्रथम पूर्वान्ग स्वरों सा रे गा म को लगाने के बाद उत्तरांग स्थित स्वर प ध नि सा को जानना चाहिए। इस प्रकार के ज्ञान से सम्पूर्ण सप्तक के शुद्ध स्वरों का व्यवहारिक ज्ञान प्राप्त हो सकेगा। शुद्ध स्वरों के ज्ञान के बाद विकृत स्वरों (कोमल, तीव्र) के स्वर ध्यानों का ज्ञान करना चाहिए।

* अतिथि विद्वान (संगीत) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

4. एक सप्तक के कोमल तथा तीव्र स्वरों के स्वरांतरालों की स्थिति के ज्ञान के उपरांत विशेष स्वर साधना आरंभ होती है, जिसे षड्ज-साधना कहा जाता है। इस साधना को तभी किया जा सकता है जबकि सप्तक के स्वरों के स्थानों का सही ज्ञान हो जाए।

षड्ज-साधना में मध्य सप्तक के षड्ज (सा) को लगाने के पश्चात् मन्द्र स्थित स्वरों को लगाया जाता है। मन्द्र स्वरों में क्रम से उतरते हुए प्रत्येक स्वर पर यथासंभव देर तक रुकना चाहिये। इस प्रकार मन्द्र सा स्वर तक जाना चाहिए। मन्द्र षड्ज स्वर को लगाने के लिये जल्दबाजी से काम नहीं लेना चाहिए बल्कि धीरे-धीरे कई दिनों के निरन्तर अभ्यास के बाद मन्द्र षड्ज तक आना चाहिए। साधना के आरम्भिक दिनों में मन्द्र प तक आना चाहिए। इसके कुछ दिनों के पश्चात् मध्यम, गन्धार क तथा कई दिनों के निरन्तर अभ्यास के पश्चात् धीरे-धीरे ऋषभ तथा षड्ज स्वर तक उतरना चाहिए। जब मन्द्र सा' पकड़ में आ जाए तो इस पर न्यास के समय को प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा करके बढ़ाना चाहिए। आरम्भ में एक मिनिट तक सा' पर रुकना भी लाभदायक रहेगा तदोपरान्त प्रतिदिन अभ्यास से यह क्रिया 10 से 15 मिनिट तक भी की जा सकती है। मन्द्र षड्ज के इस स्वर लगाव की प्रक्रिया षड्ज-साधना कहलाती है। यह साधना कठिन अवष्य है पंरतु अत्यधिक उपयोगी भी है। इसे संगीत के प्रत्येक विद्यार्थियों को प्रतिदिन समय एवं सुविधानुसार अवश्यक करते रहना चाहिए। षड्ज-साधना प्रात: नित्यकर्म से निवृत्त होकर आरम्भ करनी चाहिए। प्रात:काल कण्ठ की तंत्रियां सिकुड़कर आराम की स्थिति में होती हैं। अत: जो स्वर सुबह-सुबह निकलते हैं वे स्वाभाविक रुप से मन्द्र सप्तक के होते है। इसलिये यह समय षड्ज साधना के लिये उपयुक्त होता है। दिन की तीव्रता के साथ में खिंचवा आ जाता है। अत: प्रात: काल के अतिरिक्त और किसी समय षड्ज साधना के परिणाम ठीक नहीं होगे।

षड्ज-साधना में मन्द्र, मध्य व तार सप्तक तीनों स्थानों के स्वरों का लगाव आलाप तथा तानों में सहज हो जाता है। इससे स्वर का घनत्व बढ़ता है, टिकाव आता है तथा सुरीलापन बढ़ता है। इसके साथ ही षड्ज-साधना से कण्ठ दोषों से भी मुक्ति मिलती है। षड्ज-साधना के बाद धीरे-धीरे मध्य सप्तक के स्वरों का अभ्यास करना चाहिए।

5. स्वरों को साध लेने के पश्चात् स्वर अलकारों को साधना चाहिए। अलंकार ऐसी स्वर साधना है जिसमें स्वर, लयबद्ध योजना को प्राप्त होते है। अत: अलंकारों की साधना से जहाँ स्वर की एक सुन्दर योजना तैयार होती हैं, वहीं लय पक्ष की भी पुष्टि होती है। आरम्भ में साधारण अलंकारों का अभ्यास करना चाहिए, फिर धीरे-धीरे कठिन तथा क्लिष्ट प्रकार के अलंकारों की ओर अग्रसर होना चाहिए। अलंकारों की इस साधना से तानों के कई प्रकार स्वत: ही बन जायेंगे। जिन्हें रागों में आसानी से प्रयोग किया जा सकता है।

उपर्युक्त बातों में स्वर-साधना को निर्धारित करने वाले तत्व विद्यामन हैं। यदि आज संगीत का विद्यार्थी अच्छे आचार-विचार, खान-पान, उत्तम व्यवहार तथा चिन्तन, मन की एकाग्रता, लगन तथा संयम से इनका व्यवहारिक प्रयोग करे तो इसमें कोई संदेह नहीं हैं कि कल एक आदर्श तथा उच्चकोटि का संगीतकार बन सकता है।

साधना के विषय में कहा गया है कि -
'सतु दीर्घकालैरन्तर्य सत्कारसेवितो'।

अभ्यास काल में साधक को उकताना नहीं चाहिए, उसे ये दृढ़ विश्वास रखना चाहिए कि किया हुआ अभ्यास व्यर्थ नही जायेगा। संगीत साधक को साधना काल में धैर्य की परम आवश्यकता होती है। कई बार एक राग या ताल की साधना करते-करते एकताहट आना स्वाभाविक है, परन्तु निरन्तर धैर्यपूर्वक संगीत का अभ्यास करने से सफलता अवश्य प्राप्त होती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची : -

1. श्रीवास्तव आचार्य गिरीशचन्द्र, तालकोष, प्रथम संस्करण 1996 ई.।
2. शर्मा डॉ. उमाशंकर, संगीत का योगदान मानव जीवन के विकास में।
3. वर्मा चमनलाल, संगीत पीयूष निधि, प्रथम संस्करण 1998 ई.।

****

ऋतुसंहारम् में महाकवि कालिदास की रंग योजना

डॉ. नीता तोमर *

शोध सारांश – महाकवि कालिदास के कवि मानस में रंगों के प्रति आकर्षण संभवत: उनके जीवन के आरम्भ से ही रहा होगा, ऐसा प्रतीत होता है क्योंकि रंगों के प्रति महाकवि कालिदास का आकर्षण 'ऋतुसंहार' में भी व्यक्त हुआ है, जिसे अधिकांश विद्वानों द्वारा कालिदास की युवावस्था में रची गई प्रथम काव्यकृति माना जाता है ।

शब्दकुंजी: –महाकवि कालिदास की रंग संयोजना।

प्रस्तावना – 'ऋतुसंहारम्' का आरम्भ ग्रीष्म ऋतु के वर्णन से होता है, जहाँ महाकवि कालिदास रंगों की विविधता का उल्लेख फव्वारों के जल और रत्नों के ढेर के माध्यम से करते हैं। 'ऋतुसंहारम्' के प्रथम सर्ग (1/2) में रंग बिरंगे फव्वारे और रत्नों के ढेर का वर्णन किया गया है। प्रथम सर्ग के पंचम श्लोक में स्त्रियों के महावर से रंगे पैरों का उल्लेख हुआ है, जिनमें हंसों के समान रूनझुन करने वाले बिछुए बजा करते हैं। श्लोक क्रमांक 6 में गले के हार का रंग हिम के समान उजला बताया गया है तथा कर्धनी के सुनहरे रंग का उल्लेख किया गया है । महाकवि कालिदास ने आकाश के नीलेपन की तुलना आँजन से की है और कहा है कि सूर्य के ताप से झुलसे हुए और प्यास से व्याकुल वन्य पशु भ्रमवश उन जंगलों की ओर दौडे ज़ा रहे हैं, जहां के आँजन के समान नीले आकाश को ही वे पानी समझ बैठे हैं।[1]

ग्रीष्म ऋतु में जगंल में लगने वाली आग के लाल रंग की उपमा महाकवि कालिदास ने कुसुम्भी के फूल तथा सिन्दूर से देते हुए कहा है कि पूर्ण खिले हुए कुसुम्भी के फूल जैसी और स्वच्छ सिन्दूर जैसी लाल-लाल चमकने वाली जंगल की आग आंधी से और अधिक धधक कर वृक्ष और लताओं की फुनगियों को चूमती हुई जंगल में यहाँ-वहाँ धरती को जला देती है।[2]

महाकवि कालिदास ने कहा है कि पवन से भड़काई हुई सेमर के वन की आग वृक्ष के खोखलों में अपना सुनहरा पीला प्रकाश चमकाती है ।[3] इस प्रकार ऋतुसंहारम् के प्रथम सर्ग में लाल, नीला, पीला (सुनहरा), उजला आदि रंगों का उल्लेख हुआ है । 'ऋतुसंहारम्' के द्वितीय सर्ग में 'वर्षा ऋतु' का वर्णन करते हुए बादलों के नीले, पीले और काले रंग का उल्लेख करते हुए कहा है।

कहीं तो अत्यन्त नीले कमल की पांखुड़ी जैसे नीले, कहीं गर्भिणी के स्तनों के समान पीले और कहीं घुटे हुए आँजन की ढेरी के समान काले-काले बादल आकाश में इधर-उधर छाए हुए हैं।[4]

महाकवि कालिदास ने धौले रत्न, मटमैले पानी, हरी-हरी घास, बिम्बा फल जैसे लाल ओंठ और नीले कमल के वर्णन के द्वारा 'ऋतुसंहारम्' के द्वितीयसर्ग को रंगमय बनाया है। इस प्रकार 'ऋतुसंहारम्' के वर्षा वर्णन विषयक दूसरे सर्ग में लाल, नीला, हरा, पीला, उजला, काला, धौला, मटमैला, साँवला आदि रंगों का उल्लेख हुआ है।[5]

'ऋतुसंहारम्' के तृतीय सर्ग में 'शरदऋतु' के वर्णन में भी महाकवि कालिदास की सुन्दर रंग योजना दृष्टिगत होती है । शरद में 'श्वेत' का अपना सौन्दर्य संसार होता है । विभिन्न रंगों के सौन्दर्य का वर्णन तो सहज है परन्तु 'श्वेत-संसार' में सौन्दर्य की अनुभूति महाकवि कालिदास जैसे समर्थ कवि ही करा सकते हैं। 'ऋतुसंहारम्' में तृतीय सर्ग के आरम्भ में शरद् के उजले रंग के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए महाकवि कालिदास ने कहा है कि शरद के आगमन से धरती को काँस की झाड़ियों ने, रात को चन्द्रमा ने, नदियों के जल को हंसों ने, सरोवर को कमलों ने, वनप्रान्तर को छतिवन के वृक्षों ने, और फुलवारियों को मालती के फूलों ने उजला बना दिया है।[6]

प्रकृति में विभिन्न रंगों की जो अनुपम छटा बिखरी है, वह भला किसका मन नहीं मोह लेती है, विशेषत: युवा मन को प्रकृति का रंगमय संसार चचंल बना देता है, इसी भाव को व्यक्त करते हुए महाकवि कालिदास ने 'ऋतुसंहारम्' के शरदवर्णन में कहा है की घुटे हुए आँजन की पिंडी जैसा नीला सुन्दर आकाश, दुपहरिया के फूलों से लाल बनी हुई धरती ओर पके हुए धान से लदे हुए सुन्दर खेत इस संसार में किस युवक का मन डांवा-डोल नहीं कर देते।[7]

शरदऋतु में कमल के फूलों के पराग से नदियों के जल के लाल हो जाने का वर्णन 'ऋतुसंहारम्' के तृतीय सर्ग में किया गया है।
तृतीय सर्ग में कमल के नीले फूलों का वर्णन बार-बार हुआ है। नीलकमल के साथ ही श्वेतकमल का वर्णन भी तृतीय सर्ग में किया गया है ।

हरी लताओं तथा बन्धुक के फूलों की लाली के साथी ही शरद ऋतु में स्त्रियों के सौन्दर्य चित्रण में विभिन्न रंगों का उल्लेख 'ऋतुसंहारम्' के तृतीय सर्ग में किया गया है । बालों की काली लटों, काली आँखों, सुनहरी करधनी और नीली आँखों का उल्लेख तृतीय सर्ग में उपलब्ध है । स्तनों पर चन्दन लेपन और मुख पर चित्रकारी का वर्णन भी तृतीय सर्ग में हुआ है। इस प्रकार 'ऋतुसंहारम्' के तृतीय सर्ग में श्वेत, श्याम, लाल, नीले, हरे और सुनहले आदि रंगों का उल्लेख हुआ है।

'ऋतुसंहारम्' के चतुर्थ सर्ग में 'हेमन्तऋतु' का वर्णन करते हुए महाकवि कालिदास द्वारा अनेक रंगों का उल्लेख किया गया है । उजले और कुंकुमी रंग के कंठ हार और काले केशों का उल्लेख स्त्रियों के सौन्दर्य वर्णन में किया गया है । पाले से भरे, ठंडी वायु से हिलती हुई तथा पक

* अतिथि विद्वान (चित्रकला विभाग) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

कर पीली पीड़ गई प्रियंगु की लता की उपमा विरह में पीली पड़ गई युवती से महाकवि कालिदास ने की है।[8]

ऐ प्यारी पाले से भरी शीतल हवा से हिलती हुई यह पकी हुई प्रियङ्गु की लता वैसी ही पीली पड़ गई है, जैसे अपने पति से अलग होने पर युवती पीली पड़ जाती है ।[9]

थकावट के कारण मुख के पीले पड़ जाने का उल्लेख भी चतुर्थ सर्ग में किया गया है। रात भर जागने से आँखों के लाल हो जाने का उल्लेख भी महाकवि कालिदास द्धारा किया गया है। नीलकमल का वर्णन भी चतुर्थ सर्ग में किया गया है । इस प्रकार 'ऋतुसंहारम्' के चतुर्थ सर्ग में लाल, नीले, पीले, कुकुंमी, श्वेत और श्याम रंगों का उल्लेख हुआ है।

'ऋतुसंहारम्' के पंचम सर्ग में शिशिर ऋतु का वर्णन करते हुए महाकवि कालिदास ने विभिन्न रंगों की छटा बिखेरी है। शिशिर की रातों के पीले-पीले तारों का वर्णन पंचम सर्ग में हुआ है। स्त्रियों के श्रृंगार-वर्णन में लाल रंग का अनेक रूपों में वर्णन हुआ है। कहीं केसर से रंगे हुए लाल स्तनों का उल्लेख किया गया है, कहीं मुख पर मद की लाली का उल्लेख किया गया है। लाल-लाल ओंठ और सुनहरे कमल जैसे मुख का वर्णन भी पचंम सर्ग में किया गया है। इस प्रकार 'ऋतुसंहारम्' के पंचम सर्ग में पीला, लाल, काला और सुनहरी रंग का प्रयोग किया गया है।[10]

'ऋतुसंहारम्' के अन्तिम, छठे सर्ग में भी बसंत ऋतु के छा जाने पर प्राकृतिक परिवेश में उभर आने वाले विभिन्न रंगों के साथ ही स्त्रियों के सौन्दर्य और प्रसाधन वर्णन में रंगों की वैविध्यमयी झांकी देखने को मिलती है । महाकवि कालिदास ने कहा है कि लाल-लाल कोपलों के गुच्छों से झुके हुए और सुन्दर मंजरियों से लदी हुई शाखाओं वाले आम के पेड़ जब हवा के झोकों से हिलने लगते हैं तो उन्हें देख-देखकर युवतियों के मन उछलने लगते हैं।[11]

बसंत ऋतु में लाल रंग की बात ही कुछ और होती है। लाल कोंपलों से झुके हुए आम्र वृक्ष के पश्चात् अगले ही श्लोक में लाल-लाल फूलों वाले अशोक के वृक्ष का वर्णन महाकवि कालिदास द्धारा किया गया है।[12]

नई कोंपलों और मूंगे जैसे लाल-लाल फूलों से नीचे से ऊपर तक खिल गए अशोक के वृक्षों को देखते ही नवयुवतियों के हृदय में शोक होने लगता है। 'ऋतुसंहारम्' में अशोक के लाल फूलों के उल्लेख के साथ लाल रंग के माध्यम से पलाश, के रंग का अत्यन्त सुन्दर बिम्ब प्रस्तुत करते हुए महाकवि कालिदास ने कहा है कि बसन्त में पवन के झोकों से हिलती हुई पलाश के वृक्षों की फूली हुई शाखाएं जलती हुई आग की लपटों के समान दिखाई देती है तथा पलाश के जंगलों से ढकी हुई पृथ्वी ऐसी लग रही है, जैसे लाल साड़ी पहने कोई नववधु हो।[13]

अगले श्लोक में ही तोते की चोंच के समान लाल टेसू के फूलों का उल्लेख हुआ है। लाल रंग की छटा बिखेरते हुए बंसत वर्णन के एक और श्लोक में कहा गया है कि अपने कुंज के फूलों की चमक दिखाकर यह बसंत स्त्रियों की मुस्कान में चमक उठने वाले दाँतों की दमक की हंसी उड़ा रहा है तथा मूंगे जैसी लाल-लाल कोमल पत्तों की ललाई दिखाकार कमनियों की कोंपलों जैसी कोमल और लाल हथेलियों को जला रहा है।[14]

कुसुम के लाल रंग से रंगी रेशमी साड़ी तथा केसर और महावर से रंगे वस्त्रों के उल्लेख के साथ ही गोरे स्तनों पर केसर ओर कस्तुरी के लेप, काली घुघंराली लटें, धौले चन्दन से भीगे हुए मोती, उजले कुन्द के फूल का उल्लेख भी वसंत वर्णन में किया गया है।

लालरंग के साथ ही पीले और सुनहले रंग के सन्दर्भ भी 'ऋतुसंहारम्' के छठे सर्ग में उपलब्ध है। कहीं युवतियों के मुख की उपमा सुनहले कमल से दी गई है तथा कहीं बसंत में पीले पड़ गए युवतियों के स्तनों का वर्णन किया गया है। इस प्रकार 'ऋतुसंहारम्' के अन्तिम सर्ग में लाल, सुनहले, पीले आदि रंगों का उल्लेख हुआ है।[15]

निष्कर्ष – रंग योजना की दृष्टि से 'ऋतुसंहारम्' का अध्ययन करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि भले ही विद्धानों ने 'ऋतुसंहारम्' को महाकवि कालिदास की प्रथम रचना ही माना हो परन्तु इस प्रथम कृति में भी यथास्थान रंगों के सटीक वर्णन के द्धारा काव्य के सौन्दर्य में संवर्धन का कौशल विद्यमान है । इस प्रकार हम देखते हैं कि महाकवि कालिदास ने 'ऋतुसंहारम्' में प्रकृति और नारी सौन्दर्य के आकर्षक चित्र विभिन्न रंगों के माध्यम से प्रस्तुत किये हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महाकवि कालिदास : ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक- पंडित सीताराम चतुर्वेदी : सर्ग 1 : श्लोक क्र. 11 : पृष्ठ क्र. 428
2 महाकवि कालिदास : ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक- पंडित सीताराम चतुर्वेदी : सर्ग 1 : श्लोक क्र. 24 : पृष्ठ क्र. 430
3 महाकवि कालिदास : ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक- पंडित सीताराम चतुर्वेदी सर्ग 1 : श्लोक क्र. 26 : पृष्ठ क्र. 431
4 महाकवि कालिदास : ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक- पंडित सीताराम चतुर्वेदी : सर्ग 2 : श्लोक क्र.2 : पृष्ठ क्र. 432
5 महाकवि कालिदास : ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सर्ग 2 : श्लोक क्र. 5, 7, 13, 8, 12, 15: पृष्ठ क्र. 432, 433
6 महाकवि कालिदास : ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक- पंडित सीताराम चतुर्वेदी : सर्ग 3 : श्लोक क्र. 2 : पृष्ठ क्र. 437
7 महाकवि कालिदास : ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक- पंडित सीताराम चतुर्वेदी : सर्ग 3 : श्लोक क्र. 5 : पृष्ठ क्र. 437
8 महाकवि कालिदास ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक- पंडित सीताराम चतुर्वेदी : सर्ग 3 और 4 : श्लोक क्र. 8, 11, 27, 19, 26, 28, 18 : पृष्ठ क्र. 438, 439, 440, 441, 442
9 महाकवि कालिदास : ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक- पंडित सीताराम चतुर्वेदी : सर्ग 4 : श्लोक क्र. 11 : पृष्ठ क्र. 443
10 महाकवि कालिदास : ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक- पंडित सीताराम चतुर्वेदी : सर्ग 4, 5 : श्लोक क्र. 6, 15, 9, 4, 11, 13 : पृष्ठ क्र. 443, 442, 444, 445, 446
11 महाकवि कालिदास :ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक- पंडित सीताराम चतुर्वेदी : सर्ग 6 : श्लोक क्र. 17 : पृष्ठ क्र. 450
12 महाकवि कालिदास : ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक- पंडित सीताराम चतुर्वेदी : सर्ग 6, श्लोक क्र. 18 : पृष्ठ क्र. 450
13 महाकवि कालिदास :ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक- पंडित सीताराम चतुर्वेदी : सर्ग 6 : श्लोक क्र. 21 : पृष्ठ क्र. 451
14 महाकवि कालिदास :ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक- पंडित सीताराम चतुर्वेदी : सर्ग 6 : श्लोक क्र. 31 : पृष्ठ क्र. 453
15 महाकवि कालिदास :ऋतुसंहारम् : कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक- पंडित सीताराम चतुर्वेदी : सर्ग 6 : श्लोक क्र. 5, 15, 14, 6, 7, 25, 8, 10, 12 : पृष्ठ क्र. 448, 450, 449, 452

अजंता गुफा चित्र शैली में विधि विधान का महत्व

डॉ. नीता तोमर *

शोध सारांश – भारतीय चित्रकला का उज्जवल इतिहास भित्ति चित्रों से ही प्रारम्भ होता है, भारतीय भित्ति चित्रण परम्परा आदि मानव काल से ही मानी जाती हैं। इस भित्ति चित्रों का विस्तार भारत में सर्वत्र मिलता हैं। भित्ति चित्रण परम्परा का पूर्ण विकसित रूप दूसरी शताब्दी ई.पू. से दृष्टिगोचर होता है।[1] भारत में बौद्ध कला की महान विरासत भित्ति चित्रों के रूप में सुरक्षित हैं। बौद्ध कला की इस महान थाती का समृद्ध केन्द्र 'अजन्ता' है, जो महात्मा बुद्ध के जीवन की घटनाओं तथा जातक कथाओं पर आधारित है। इन चित्रावलियों में इस काल की आरम्भिक और अन्तिम दोनों चरणों की कला दिखाई पड़ती है।[2] इस प्रकार बौद्धकला की सर्वोत्तम चित्राकृतियाँ अजन्ता में देखने को मिलती हैं, इन गुफा चित्रों की विशेषताएं संसार भर में प्रचलित है।

शब्द कुंजी – अजन्ता के गुफा चित्र।

प्रस्तावना – अजन्ता की गुफाओं के चित्रों ने आज अपनी विशालता और सुन्दर योजनाओं के कारण समस्त संसार का ध्यान अपनी और आकृष्ट कर लिया हैं चित्र संयोजन में प्रमुख व्यक्ति का आकार बड़ा बनाया गया हैं। चित्रों की योजना सुन्दर एवं सुव्यवस्थित हैं। चित्रों के चारों ओर आलेखन बनाकर योजनाओं को और अधिक पुष्ट बना दिया गया हैं। चित्रों की योजनाएं अलंकारपूर्ण, सरल और ज्यामितिक योजना पर आधारित हैं फिर भी चित्र के प्रमुख व्यक्ति को ऐसे स्थान पर संजोया गया हैं कि दर्शक की दृष्टि सर्वप्रथम चित्र के प्रमुख व्यक्ति पर ही पड़े। इस प्रकार इस शैली में दृष्टि के केन्द्रत्व के सिद्धान्त का सुन्दरता से पालन किया गया हैं प्राय: महात्मा बुद्ध की विशाल सक्रिय आकृति को केन्द्र बिन्दु मानकर उसके चारों और सहायक आकृति समूहों की रचना की गई है।[3]

अजन्ता की चित्रकला में वात्स्यायन के कामसूत्र में वर्णित षंड़गों का पूर्णतया पालन होता हुआ दिखाई देता हैं। परन्तु कहीं–कहीं स्वतन्त्रता से भावाभिव्यक्ति करने के लिए अजन्ता में कलाकारों ने कुछ मौलिकता प्रदर्शित की है।[4] बोधिसत्व आदि से अजन्ता की भित्तियाँ सजी हुई हैं। वहीं तत्कालीन, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक परिस्थितियों का प्रदर्शन करती विविध घटनाएँ अजन्ता की भित्ति का अलग रूप प्रदर्शित करती है।[5]

अजन्ता गुफा शैली के चित्र विधि–विधान की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। अजन्ता के चित्रकारों ने यहां की स्थानीय सामग्रियों द्वारा ही चित्रों को चिरायु बनाया हैं। ये सब चित्रों की विधि पर ही आधारित हैं।

अजन्ता में भित्ति चित्रों हेतु 'भूमि बन्धन' में मृतिका, गोबर, चावल की भूसी और चूर्ण (कदि शर्करा) आदि सभी चूर्ण एवं द्रव यथा पूर्ण प्रतिपादित प्रक्रिया के द्योतक एवं समर्थक है।[6] इनके संयुक्त मिश्रण के अवलेह द्वारा भित्ति पर आवश्यकतानुसार करीब एक व पौन इंच का पलस्तर किया जाता था। अवलेह के लिए अलसी के पानी में गारे को कई दिनों तक भिगोकर फूलने दिया जाता था व इसमें उरद की दाल का पानी भी प्रयुक्त किया जाता था। करीब 1/2'–'' पलस्तर द्वारा इन ज्वालामुखी गुफाओं की चट्टानी दीवारों के छिद्रों को भली प्रकार भर दिया जाता था तथा पलस्तर के सूख जाने के बाद उस पर एक पतला अस्तर सफेद का लगाकर उसे छोड़ दिया जाता था। श्री ई.वी. हेवेल के अनुसार अजन्ता में चित्र पूर्ण हो जाने पर चित्र में अत्यधिक उभार दर्शाने के लिए सफेद मिश्रित रंग को प्रयुक्त किया जाता था।[7]

अजन्ता के चित्रकारों के पास गिने–चुने ही रंग थे जो कि वो प्रकृति से प्राप्त खनिज वस्तुओं से तैयार करते थे, अधिकतम मिट्टी के ही रंग होते थे। मुख्य रंग गेरू से बनता था।[8]

लेडी हेरिंगम के मतानुसार अजन्ता के चित्रकार इतने कुशल हस्त थे कि विषय वस्तु को ध्यान में रखते हुए तुलिका के माध्यम से लाल रंग की रेखाओं द्वारा चित्र को सफद पलस्तर की विशाल भित्ति पर रेखांकित करते थे। उसके पश्चात गन्दे हरे रंग (टेरावर्ट ग्रीन) से कहीं कहीं लाल रंग झलकता छोड़कर हल्की टोन लगा दी जाती थी और फिर स्थानीय रंग प्रयुक्त किये जाते थे। बाद में काले तथा भूरे रंगों से निश्चित सीमा रेखाएं बना दी जाती थी। आवश्यकता अनुसार छाया प्रकाश का भी प्रयोग किया जाता था। स्थानीय रंगों व काले सफेद रंगों के प्रयोग द्वारा आकृति को निश्चित रूप प्रदान किया जाता था। परन्तु गिफ्टस महोदय के चित्र के रेखाकन में केवल लाल रंग के प्रयोग के द्वारा रेखांकन करने की पद्धति का ही वर्णन किया हैं व आवश्यकतानुसार छाया प्रकाश रेखांकन का प्रयोग किया जाता था।[9] वर्ण विधान के आधार पर ही चित्रों में एक मधुर आकर्षण उत्पन्न होता हैं। वर्ण संयोजन की दृष्टि से अजन्ता के चित्रकारों ने चित्रों के प्रयुक्त रंगों को बड़े ही सुन्दर ढंग से संजोया हैं। चित्रकारों ने इन भित्ति चित्रों में कुछ ही रंगों का प्रयोग किया है जो वहां के स्थानीय खनिज वर्ण हैं इनमें सफेद, लाल (गेरूआ, हिरोजी) काला, हरा, भाट्टा, पीला तथा लेपिस लाजुली 'नीलेय रंगों को ही स्वतन्त्र रूप से चित्रों में प्रयुक्त किया हैं। इन रंगों के प्रयोग का कारण हैं कि प्लास्तर के मिश्रण एवं चूने के क्षारात्मक प्रभाव और जलवायु एवं सूर्य के प्रकाश से अपने अस्तित्व को खो न बैठे व अत्यधिक समय तक स्थिर रह सके यही अजन्ता के चित्रों का प्रमुख कारण रहा हैं।[10]

अजन्ता की चित्रकला में रेखाओं का भी बहुत महत्व हैं। केवल रेखाओं द्वारा भाव प्रद्रशन इसकी विशेषता हैं। संसार के चित्रों में कहीं भी रेखाओं द्वारा इतना सुन्दर भाव–प्रदर्शन व गतिमयता नहीं है।[11] अजन्ता चित्र शैली में विभिन्न आकृतियों के निर्माण में सुन्दर हस्त मुद्राओं का प्रयोग हुआ हैं।

* अतिथि विद्वान (चित्रकला विभाग) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

जिसमें प्रमुख रूप से शांति की हस्त मुद्रा, शिखर हस्त मुद्रा, दण्ड हस्त मुद्रा, नीलकमल धारण किये भगवान बुद्ध की हस्त मुदा, ज्ञान हस्त मुद्रा, धर्मचक्रम मुद्रा, कत्ता का मुख मुद्रा, वैराग्य सूचक साधु की हस्त मुद्रा, सुन्दर व भावपूर्ण हैं। हस्त मुद्राओं में पुष्प लिये, वाद्य यंत्र बजाते, मधु पात्र पकड़े, चंवर ठुलाते, वस्त पकड़े भी दिखाये गये है।[12]

भाव प्रदर्शन की दृष्टि से अजन्ता के चित्रों में अंग–भंगिमाओं का भी विशेष महत्व है। कलाकार ने अपनी छन्दमय बुद्धि और कल्पना का परिचय देते हुये नारी को सुकोमल लतिका के समान लचकदार भंगिमाओं में अंकित किया हैं, साथ ही नारी के प्रति सहानुभूति और श्रृद्धा अजन्ता से बढ़कर कहीं नहीं चित्रित की गई।

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि अजन्ता के गुफा चित्र विधि विधान की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण हैं और आज समृद्ध बौद्ध कला की महान विरासत इन भित्ति चित्रों के रूप में सुरक्षित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. नाथूलाल वर्मा – राजस्थानी चित्र शैली की विभिन्न चित्रण विधियां: पृ.क्र. 65 प्रकाशन – राज पब्लिशिंग हाउस जयपुर।
2. डॉ. रीता प्रताप – भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास – पृ.क्र. 86 प्रकाशक – राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
3. डॉ. नाथूलाल वर्मा – राजस्थानी चित्र शैली की विभिन्न चित्रण विधियां– पृ.क्र. 65 प्रकाशक – राज पब्लिशिंग हाउस जयपुर।
4. डॉ. गिर्राज किशोर अग्रवाल – भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास प्र.कृ. 54 – अलीगढ़ प्रकाशन।
5. आर.एस. गुप्ता एवं वी.डी. महाजन – अजन्ता ऐलोरा और औरंगाबाद केव्जस् प्र.क्र. 44–45
6. ग्रिपिथ – द पेन्टिंग इन द बुद्धिस्ट केव टेम्पलस आफ अजन्ता वाल्युम I[st] पृ.क्र. 13
7. ले विन्सेट स्मिथ – फाईन आर्ट इन इण्डिया एण्ड सीलोन पृ.क्र.–90
8. डॉ. गिर्राज किशोर अग्रवाल – भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास– पृ.क्र. 40: अलीगढ़ प्रकाशन।
9. डॉ. नाथूलाल वर्मा – राजस्थानी चित्र शैली की विभिन्न चित्रण विधियाँ– पृ.क्र. 66 – प्रकाशक – राज पब्लिशिंग हाउस जयपुर।
10. डॉ. नाथूलाल वर्मा – राजस्थानी चित्र शैली की विभिन्न चित्रण विधियाँ– पृ.क्र. 66 प्रकाशक – राज पब्लिशिंग हाउस जयपुर।
11. डॉ. गिर्राज किशोर अग्रवाल – भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास– पृ.क्र. 50– अलीगढ़ प्रकाशन।
12. डॉ. रीता प्रताप – भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास – पृ.क्र. 86 प्रकाशक – राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।

****

A Study Of Student's Attitude Towards CCE System (An Analytical Study)

Priya Mishra *

Introduction - Student itself means a learner. He/She learns from his/her surroundings (friends, institution and environment).Evaluation tells them where they stand in the process of learning. Evaluation not only measures the progress and achievement of the learners but judge the effectiveness of teaching materials and teaching methods also.

In traditional evaluation, result is expressed in pass or fail. This system doesn't have different ideas to comprehend the student. Whenever exam comes student as well as parents feel stressed . It is known as exam phobia. It was a system of cramming (parrot learning). To overcome on these drawbacks of traditional evaluation we need a holistic and vital approach of evaluation i.e. the Continuous Comprehensive Evaluation System.

Continuous Comprehensive Evaluation System is only the system, which gives real status or analysis of the learners. This evaluation system does not lead in one direction but works for all over development of the learner. If evaluation is seen as an integral part of teaching learning process; learners will not perceive tests and examination with fear. It will lead to diagnosis, remedial action and enhancement of learning. In the process of learning there are two main important factors i.e. student and teacher. Support of parents is also expected for smooth learning.

Researcher is actually tried to find out student's views about CCE.

Objectives - This study was undertaken with the aim to find out attitude of students towards CCE so that drawbacks of this system may be identified.

Population and Sample - Researcher has studied her own educational institute i.e. Maa Bharti Sr. Secondry School (Swami Vivekanand Nagar) Kota . Approximate 500 students are studying in 9th and 10th class. Around 100 students of class 9th and 10th were taken as research sample.

MAA BHARTI EDUCATIONAL GROUP

Maa Bharti Group of education has been established in 1983. Mr. Mahesh Vijay is the chairman. This group has approximate 10,000 students and around 500 staff members. From last 32 years this group has given around 150 merits in RBSE as well as CBSE and won many prizes in sports and other co-curricular activities.

Tool - For accurate and proper feedback of CCE, researcher has applied a self prepared Questionnaire of 15 questions.

Delimitation - In present research only one educational institute in which researcher is servicing i.e. Maa Bharti Sr. Sec. School(SVN) Kota, has been included. Only few portion is covered through 15 questions.

Questionwise analysis and Interpretation is as follows-

Tabulation

S.No.	Subjects	Yes	No	Don't know
1.	Concept of CCE	92%	8%	-
2.	Instructions from CCE	77%	20%	3%
3.	Personality Improvement	85%	15%	-
4.	Teacher's Knowledge	70%	15%	15%
5.	As a Future Guide	65%	20%	15%
6.	Co-Scholastic development of Learner	70%	18%	12%
7.	Suitable environment for Students	65%	25%	10%
8.	Teachers are bias	50%	50%	-
9.	Platform to get chance for Presentation	85%	15%	-
10.	Negative Effects	23%	73%	4%
11.	Develops Skills	90%	7%	3%
12.	Burden on Students	38%	2%	-
13.	Satisfied	75%	15%	10%
14.	Parents' Support	40%	60%	-
15.	Time Consuming	80%	20%	-

Interpretation -

- Most of the students understand the concept of CCE, very few are not aware of CCE.
- Maximum no. of students are getting instructions from this evaluation system while less no. of students are not in favour.
- Most of the student's personality is developing by CCE while very few students are not getting any benefit regarding personality.
- Maximum no. of students are satisfied with teacher's knowledge about CCE, some of the students are not satisfied while very few do not have any idea.
- Most of the students observe CCE as a future guide while some of the students are not consider it as guide, very few don't know about it.

* Research Scholar, Career Point University, Kota (Raj.) INDIA

- Maximum no. of students are agree that it develops the co-scholastic area of learner, some are disagree while very few don't have any knowledge.
- Most of the students are getting healthy atmosphere for CCE and some students are disagree with this concept while very few don't have any idea.
- Half of the students are agree with teacher's partiality while other half is disagree with teacher's bias nature.
- Most of the students are not feeling any negative effect of CCE while very few think that it has any negative aspect.
- Maximum no. of students take CCE as a motivational and personality developing tool while less no. of students do not consider CCE as developing tool.
- 60% students do not feel any burden in CCE while 40% students take it as burden.
- Most of the students are satisfied with this new evaluation system while some are not satisfied, less no. of students can't say anything.
- Maximum no. of students are not getting any support from their parents while others are getting the help.
- Most of the students think that this evaluation is a time consuming system.

Major Findings - After completion of this short survey, researcher come to some findings. It shows student's real thinking regarding CCE, which will help us to improve 'EVALUATION SYSTEM'.

- CCE develops student's scholastic as well as co-scholastic aspect. It gives them a strong platform to expose their talent.
- It is totally Child/Learner centered Evaluation System which works as a guide for their secure future.
- It grooms their personality and increases their confidence.
- Most of the teachers are helping the students to create a healthy environment for evaluation in the school.
- Overall, most of the students are satisfied with this Evaluation System.

Recommendation for school management and teachers

- **Creation of Environment -** Proper environment for this evaluation must be created in the school.
- **Orientation of Teachers -** Teachers must be trained and updated about its new change
- **Removal of student's problems -** It will sort out different types of problems in all aspects which is faced by students generally. For example their future plans, competitions, personality etc.

Conclusion - By this survey researcher can conclude that **Continuous Comprehensive Evaluation** is a diagnosis and remedial system of learning which leads the student towards right direction. Learner can achieve his/her goal without any fear and hesitation.

References :-

1. CBSE manuals for teachers.
2. C R Kothari (Research Methodology)
3. WWW.CBSE.NIC.IN

****

Education In The Era Of Globlization

Dheeraj Verma *

Abstract - Education has benefited from global orientation. Globalization is typically understood as an economic, political and cultural process that is reshaping the role of many nation-states in relation to global markets, agreements, and traditions. Globalization has enabled more of human orientation and a less mechanical view of mankind. It has resulted in more liberalization and freedom of adoption. The aim of this article is to outline a theoretical framework to address Higher Education organizational change in a globalizes and globalizing age. Global education has put mega issues of various natures social, political, economic, national and international to world stage. But it is important for nations to reap global benefits by not merely copying global phenomenon but a way of implementation that would g temporal dimension need to be realized.

Key Words - Evolutionary Perspective, Social concerns, Economic Concerns, Political Concerns, National concerns.

Introduction - "The greatest challenge we face today is to ensure that globalization becomes a positive force for the entire world's people, instead of leaving billions of them behind in squalor. Inclusive globalization must be built on the great enabling force of the market, but market forces alone will not achieve it. It requires a broader effort to create a shared future, based upon our common humanity in all its diversity."

(From the Millennium Report)

Education from time immemorial has been a means towards achievement of desired end. Enabling generation towards adoption of prevailing basics or at times techniques to serve growth of an individual in order to run, survive and lead among distinguished has been a sincere motive of education. It has provided masses with variety of options in hand with equalizing pace of development. Globalization is not a single concept that can be defined and encompassed within a set time frame, nor is it a process that can be defined clearly with a beginning and an end. Furthermore, it cannot be expounded upon with certainty and be applicable to all people and in all situations. Globalization involves economic integration; the transfer of policies across borders; the transmission of knowledge; cultural stability; the reproduction, relations, and discourses of power; it is a global process, a concept, a revolution, and "an establishment of the global market free from socio political control." The term 'globalization' means integration of economies and societies through cross country flows of information, ideas, technologies, goods, services, capital, finance and people. Cross border integration can have several dimensions – cultural, social, political and economic. In other words "The total education system of the world under one roof" it requires the unification of teaching curriculum, methodology and up gradation of knowledge and system to remain in the context for efficiency and effectiveness by which transformation of knowledge in justified manner to attain the goals of life.

Education need to absorb the impact of such global changes and cropping issues. A growing need to develop understanding level at the right and ripe sage among the taught, strengthening the teachers, policy framework and plan implementation strategies at every stage of upbringing the growing masses. **Globalization** in world usage has been termed as a rapid change with universalization of usage, interchange, sharing among products, needs, values, culture, belief and thought. Globalization and global education have been thought the same though many would still argue among the relationship. Globalization is an inter-national and inter-national force, while global education is a teaching/learning paradigm. Thus their areas of focus though in different domains have a circular relationship. Education in such a context has prefixed 'global' and modified itself from mere education to global education.

Global education places particular emphasis on the changes in communication and relationships among people throughout the world, highlighting such issues as human conflict, economic systems, human rights and social justice, human commonality and diversity, literatures and cultures, and the impact of the technological revolution. While it continues to depend on the traditional branches of specialist knowledge, global education seeks to weaken the boundaries between disciplines and encourages emphasis on what interdisciplinary and multidisciplinary studies can bring to the understanding and solution of human problems. **"Globalization is a process that encompasses the causes, course, and consequences of transnational's and Tran cultural integration of human and non-human activities."**

* **Research Scholar (Education) Career Point University, Kota (Raj.) INDIA**

Evolutionary Perspective - Education from its previous concept of classroom teaching, need to widen its horizons to incorporate present changing dimensions. A need has risen to think education as strengthening of power of individuals in every walk of life. It should relieve itself from bondage of age, creed, and nation. Education has to enable a poor to learn his living, a hungry to satisfy his hunger, younger ones to seek path of growth and progress, older ones to manage age old affairs. Further education need to serve as a bond between various welfare agencies and individuals for better exchange of thought and initiations of common world policy. It is always easy said than done but presently education in the process of enveloping social, political, economic, national and international dimensions.

Teacher Education and Globalization - In any educational system, the teacher performs a significant function of perpetuating society's heritage and energizing human resources towards social progress. The level of a nation's education cannot rise far above the quality of the teacher of that nation. This therefore, makes the preparation and selection of teachers a significant social concern. There is a need to review and transform both the professional preparation of teachers and their in-service training. There is little doubt that likes all developing countries, educational particularly in its quest to achieve education for all by 2020. Undoubtedly, teachers lie at the heart of this educational crisis because only the teachers who possess the necessary technical competence and professional skills through a well coordinated teacher's education program that can rise to meet the challenges of the crisis.

The Education commission recommended the introduction of "a sound program of professional education of teachers".

Social Concerns - World over loud noises and speeches of social equality of treatment, basic standard of living for all reducing poverty level, saving lives, medical benefits to poor, food for all find place in every meet or conference. World Social Forum organised a meet in Mumbai Jan. 16-21 Jan.2004 which again cried for rights, equality of judgement and provision of adequate living among the suffering masses. It is very pity that even in such forums the developed countries face the wrath of protestors.

Economic Concerns - The world economy globalizes as national economies integrate into the international economy through trade; foreign direct investment; short-term capital flows; international movement of workers and people in general; and flows of technology. This has created new opportunities for many but not for all. It has also placed pressures on the global environment and on natural resources, straining the

Capacity of the environment to sustain itself and exposing human dependence on our environment. A globalized economy can also produce globalizes externalities and enhance global inequities.

Political Concerns - With different forms of government and different features of administrative governance, globalization has resulted in more knowledge interchange. Scholars of different field's political science, public administration have undergone cross-cultural, cross-national, ecological and comparative studies. This has enriched field of study and governing strategies. Study of coalition features, popular governments, world power blocks, unification and division, elections, referendum, power of electorate have brought awareness among the masses.

National Concerns - Globalization has improved upon the country's economic advancement with respect to other related economics. The countries have enriched themselves with realization of production potentials and earn foreign exchange. It has fastened development process and positions in the world markets. Improvement in food, health, medical benefit programmes, women and child concerns, poverty elevation, research potential have been trapped. Education has helped or orderly study factors that could be improved upon through systematic research to increase the pace development and curbing upon drawbacks. It has resulted in importing successful planned strategies from other countries and providing a scholarly thrust for national enrichment.

International Concerns - Global issues of promotion of international peace, securing human rights, women and child welfare, decreasing poverty level, provision of health benefits to the poorest, World aid to suffering nations, countering military and terrorism threats, dealing with Intercontinental conflicts, provision of world rehabilitation programmes have favoured the rights of humans on this planet. The development strategies need to enable the future generation for a better sustainable growth. **"In order the development to be sustainable, it must meet the needs of present generation, without compromising the ability of future generations to meet their own needs."**

Indian Context - Global forces have brought in speedy revival in both direction and weight age of education in India. The last round of General Agreement on Tariffs Trade (GATT) in 1994 gave rise to multilateral agreement on Trade under World Trade Organization (WTO). It is to provide to secure and more open market in services in similar manner as GATT has done for trade in goods. Education is one of the twelve services, which are to be negotiated under the General Agreement on Trade in Services (GATS). Education divided into following five categories: Higher Education, Secondary Education, Primary Education, Adult Education and Other Education.

Strategic Revival - It is always beneficial to learn from errors. Much is being done and many remain to follow the line. Global education could benefit in practice if a common, co-ordinated approach is followed. Government need to bring forthcoming issues on table between those who will and those on whom it is to be evaluated. Still grave issues like primary education, compulsory education, education for all, spending on higher education, preventing brain drain, import of foreign know how better advanced laboratories, provision of world class research facilities, are demanding quick

implementation for achieving world targets. This would help to survive and excel in global competition. Not only this, it is required to involve temporal dimension for effective disposal both among the developed as well as developing ones.

Conclusion - Teaching is a profession, which requires expert knowledge and specialized skills, acquired and maintained through rigorous and continuing study. It also calls for a sense of personal and corporate commitment to the education and welfare of the students. A teacher has many roles to perform. Roles of a teacher are not static but dynamic as these continue changing as per the demands of the society. Various policies also limit or extend the scope of these roles. World is positive about its potential for economic and political progress in the 21st century, The trends and characteristics of globalization perhaps call for a total re-invention or repackaging of the teaching profession. The Teacher in the globalises environment must be prepared to think globally and act locally in matters relating to education. He must be able to create a learning, friendly and animating environment in the classroom.

References :-

1. Adelabu (2005) Teacher Motivation and Incentives.
2. Bottery, M. (2006) Education and globalization: redefining the role of the educational professional, Educational Review Vol. 58, No. 1.
3. Delandshere, G. & Petrosky, A. (2004) Political rationales and ideological stances of the standards-based reform of teacher education in the US, Teaching and Teacher Education I, Vol.20 (1),
4. Kishan N R, (2007) Global Trends in Teacher Education.
5. Leclercq, F. (2002) The Impact of Education Policy Reforms on the Education System: A Field Study of EGS and Other Primary Schools in Madhya Pradesh, Centre de Sciences Humaines, Delhi.
6. Linde, G. (2003) The Meaning of a Teacher Education Reform: national story-telling and global trends in Sweden, European Journal of Teacher Education, Vol. 26, (1).
7. Marginson, S. (1999) After globalization: Emerging politics of Education, Journal of education Policy Vol. 14(1).
8. MHRD (2003) Selected Education Statistics, 2002-03, Ministry of Human Resource Development, New Delhi.
9. Patil & Pudlowski (2000) The Globalization of Indian economy: a need for internationalization of higher technical education.
10. Popkewitz, T. S. (2000) Educational Knowledge, Changing Relationships between State, Civil Society and the Educational Community, New York State University of New York Press.
11. Pratham (2006) ASER 2005-06, Annual Status of Education Report. Pratham, New Delhi.

****

Either Teaching Or Teaching Learning Process : An Analysis

Dr. Rashmi Sharma *

Abstract - Present paper is an attempt to analyze the teaching learning process as it is a complex phenomenon comprising several aspects of presage, process and product variables, each of them has unique efficacy to make teaching learning process successful.

Introduction - Teaching is a complex phenomenon as its nature is artistic as well as scientific. Teaching is the task of a teacher, which is performed for the development of a child. Thus teaching is for someone's development implies shaping behaviour and conduct; communication of knowledge and beliefs. Teaching process involves certain modes of behaviour. These modes of behaviour are in a continuum. It indicates that teaching is continuing for developing behaviour to the formation of beliefs. Thus teaching is a continuum from conditioning to indoctrination as shown in fig. 1.

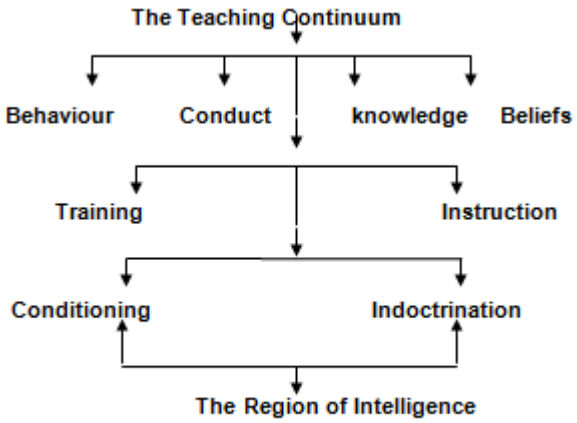

Fig. 1. Representation of teaching as continuum.

It indicates that teaching has four modes of operation in a continuum from conditioning to indoctrination. Teaching conditions may be classified from thoughtless to most thoughtful modes of operation in teaching. The continuum of operations helps in achieving objectives from knowledge to evaluation and in creating conditions of learning from stimulus response to problem solving. Teaching becomes complete when learning is also added to it. Teaching and learning are complementary to each other both of them run together.

Analysis - Smith,B.O.(1961) has defined the concept of teaching learning likewise "Learning does not necessarily issue from teaching that teaching is a one thing and learning is another." In other words "Teaching is a system of actions intended to produce learning."

In the view of Gage, N.L.(1969) "Teaching learning should be conceived as a process for effective learning." He considers that the process of teaching and learning must be adapted to each other so as to make whatever combination of procedures pay off best. Advocating the bond between teaching and learning, Thomas Green has argued that there is no learning without teaching and teaching may be without learning. He stresses, Teaching intent or goal may be learning but all teaching may not facilitate learning. Bernard developed paradigm of teaching learning bond. He is of the view that the process of education goes through four aspects viz teacher, student, learning process and learning situations.The interaction between teacher and taught form the basis of learning process, while the learning situation includes teacher taught interaction and other educational programmes within or outside the school. The interrelationship among these areas is shown in fig. 2.

It is clear from the fig.2 (see in next page) that the teacher creates the learning situation by performing teaching activities. Teacher behaviour and learning situation influence the student learning or development. John, Carroll (1963) defined school learning as a function of time. The amount of time students are successfully covering the content is termed as Academic Learning Time(ALT). ALT is a combination of three separate variables: Content overlap, involvement and success. Changes in ALT are most directly impacted by the teachers' classroom performance in terms of planning, management and instruction. It is ultimately the result of many decisions about how time is spent in schools and in classrooms as depicted in fig. 3. (see in next page)

The gap Between ALT and allocated time can be reduced by properly organizing context, input and process variables of teaching learning process as described by McIlrath & Huitt(1995) through diagram 4. It indicates that learning (output) is a function of context, input and process each of which includes various factors. Teaching aptitude, pedagogical knowledge and teaching competence are considered as prerequisite for proper utilization of context, input and process variables and make teaching learning process most beneficial for students. Mathew (1978) stated

* **Principal, Bhartiya College,Ujjain (M.P.) INDIA**

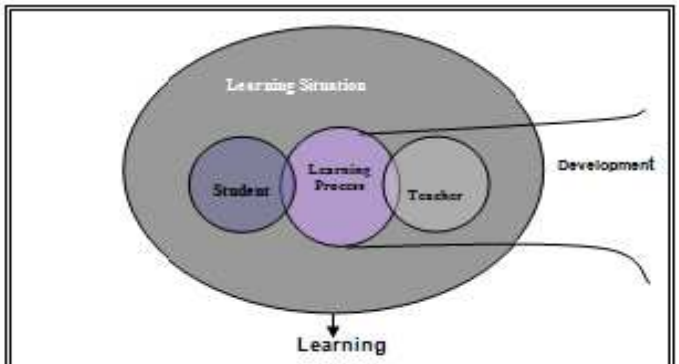

Fig. 2 Showing Paradigm of teaching learning bond.

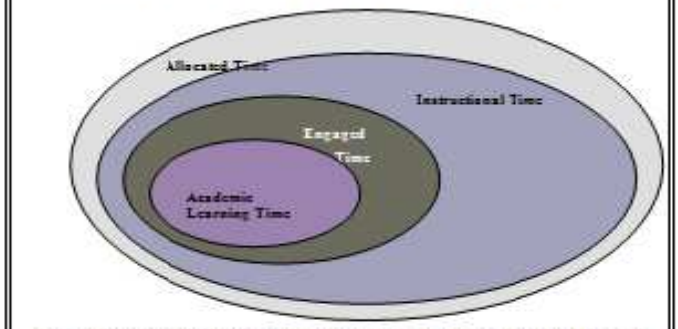

Fig. 3 Showing relationship among various levels of time for learning.

that the ability of a teacher manifested through a set of overt teacher classroom behaviors. Which is a resultant of the interaction between presage and product variables of teaching within a social setting." According to Damid G. Rayns, (1969) , "Teaching is complex and many sided demanding a variety of human traits and abilities. These may be grouped in two major categories – first these involving the teacher's mental abilities and educational principles and his knowledge of general and specific subject matter to be taught and second those qualities stemming from the teacher's personality, his interests, attitudes and beliefs, his behaviour in working relationship with pupils and other individuals and the like."

Conclusion - In all we may say that teaching alone is nothing, mere sending information. The turm teaching is completed when there is learning side by side. Teaching and learning may also be considered as cyclic process, as the objectives and planning of teaching aspects depends upon the learning levels of pupils. Learing response of puplis work as feedback to plan further teaching strategy. An effective teaching is that where there is 100% learning, which may be possible only by proper utilization of presage, process and product variables of teaching learning process.

References :-

1. Sharma, R.A(2003). "Teacher training technology: Managing classroom activities." R.Lall Book Depot, Meerut.
2. Sharma, R.A. (2005). " Pedagogical Analysis of Teaching. " Loyal Book Depot, Meerut.
3. Senapaty, H.K. & Nityananda, Pradhan. "Constructive pedagogy in classroom: a paradigm shift." *Journal of Indian Education*, Vol. XXXI, NO. 1, May 2005, NCERT, New Delhi.
4. Merlin, C. . Writrock(1985). "Hand book of Research on teaching: A project of the American educational research association." McMillan Publishing Company, New York
5. Huitt, W.(2006). "Overview of classroom processes." Educational Psychology Interactive Valdosta, GA: Valdosta State University. http:/chiron.Valdosta.edu./whuitt./col/ process/class.
6. Bhatnagar, A.B. Meenakshi & Anurag(2003). "Psychology of teaching and learning." Surya Publication, Meerut.

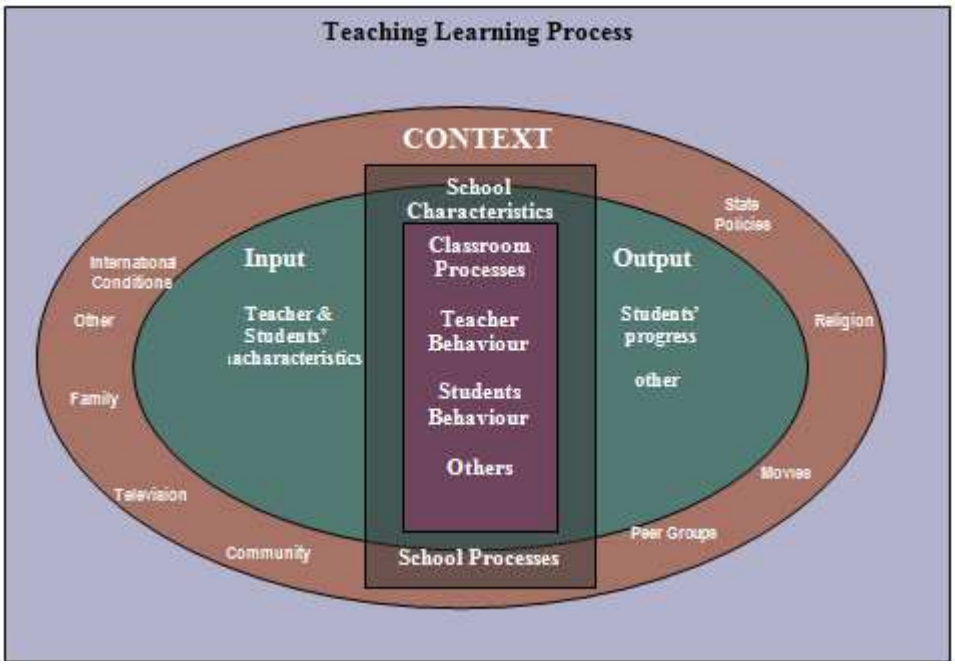

Fig. 4 Showing whole teaching learning process.

किशोरों के आत्म-सम्प्रत्य का उनकी बुद्धि एवं सृजनात्मकता

मधु बाला * डॉ. सतीश गिल * *

शोध सारांश – प्रस्तुत अध्ययन में फरीदाबाद जिले के किशोरावस्था के छात्र के आत्म-सम्प्रत्यय का उनके बुद्धि एवं सृजनात्मकता के संदर्भ मेंअध्ययन करना है। परिकल्पनाएँ में किशोरों के आत्म-सम्प्रत्यय का उनकी बुद्धि और सृजनात्मकता के साथ कोई सार्थक सम्बंध नहीं है। प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। इसके लिए शोधार्थी ने 80 किशोरावस्था के छात्रों का चयन किया है। अध्ययन में उपकरण – प्रतिभा देओ आत्मसम्प्रत्य मापनी, बुद्धि मापन जलोटा सामूहिक आंकलन का सामान्य मानसिक योग्यता और सृजनात्मकता मापन बकेर मेहदी मूक आंकलन का सृजनात्मक विचार। शोध के निष्कर्ष में किशोरों के आत्म-सम्प्रत्यय का उनकी बुद्धि और सृजनात्मकता के साथ सार्थक सह सम्बंध पाया गया है

प्रस्तावना – मानव को तीन स्तरों से गुजरना पडता है शैशवावस्था बाल्यावस्था तथा किशोरावस्था। जिसके बाद वह प्रौढ़ता को प्राप्त करता है। बालक के जन्म लेने के उपरान्त की अवस्था को शैशवावस्था कहते है।, शैशवावस्था के बाद बाल्यावस्था का आरंभ होता है। यह बालक के व्यक्तित्व के निर्माण की अवस्था होती है। बाल्यावस्था के समापन अर्थात् 13 वर्ष की आयु से किशोरावस्था आरम्भ होती है।इस अवस्था को तूफान एवं संवेगों की अवस्था कहा गया है।

हैडो कमेटी की रिपोर्ट में कहा गया है। 11-12 वर्ष की आयु में बालक की नसों में ज्वार उठना आरंभ होता है। उसे किशोरावस्था के नाम से पुकारा जाता है। यदि इस ज्वार का बाढ़ के समय ही उपयोग कर लिया जाता है एवं इसकी शक्ति और धारा के साथ नई यात्रा आरंभ की जाये तो सफलता प्राप्त की जा सकती है। इस अवस्था में समायोजन न कर सकने के कारण मृत्यु दर और मानसिक रोगों की संख्या अन्य अवस्थाओं की तुलना में बहुत अधिक होती है।किशोरावस्था को शारीरिक विकास का सर्वश्रेष्ठ काल माना जाता है और किशोरावस्था में ही बालकों में व्यक्तित्व निर्धारण में आत्म सम्प्रत्यय बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखताहै।

हम जैसा अपने बारे में सोचते है कि हम अपने आप में क्या हैं, हमारी क्या अच्छाईयाँ तथा बुराईयाँ हैं, हममें किस प्रकार की कितनी योग्यताएं तथा क्षमतायें हैं, किस परिस्थिति में हम कैसा व्यवहार कर सकते हैं? आदि विभिन्न बातों से संबंधित हमारी अपने प्रति जो धारणा या विचार बना हुआ होता है उसे ही एक तरह से आत्म- संप्रत्यय या स्व-अवधारणा का नाम दिया जाता हैं। एक तरह से व्यक्ति का यह अपने आप के बारे में एक निश्चित दृष्टिकोण होता है। आत्म-सम्प्रत्यय के द्वारा मनुष्य अपने आपको दूसरे बालकों, व्यक्तियों या वस्तुओं से अलग करके देखने, सोचने तथा अपनी योग्यताओं तथा कार्य क्षमताओं का अनुमान लगाने में मदद मिलती है और इन सभी क्षमताओं व योग्यताओं का अनुमान लगाने में आत्म-सम्प्रत्यय के साथ-2 बुद्धि भी मदद करती है। अत: आत्म सम्प्रत्यय में बुद्धि भी भूमिका निभाती है।

कोई दो व्यक्ति एक समान नहीं होते। कुछ लोग बुद्धिमान हो सकते हैं कुछ औसत हो सकते हैं तथा अन्य इनसे निम्न बौद्धिक स्तर के हो सकते है। क्योंकि व्यक्ति अपने वंशानुक्रम तथा वातावरण का उत्पाद हैं, इसके उत्तर के लिए हमें इन दोनों कारकों या इनमें से किसी एक की ओर देखना होता है। प्राचीन काल से ही इन ज्ञान के प्रश्नों का उत्तर पाने का प्रयत्न किया गया है। अध्यापक को अपनी कक्षा में ऐसी विभिन्नताओं का सामना करना होता है तथा अपने अध्यापन को उसी के अनुसार अनुकूल बनाना होता है। इसलिए उसके लिए यह आवश्यक है कि वह बुद्धि तथा इसके मापन के संसार के बारे में ज्ञान प्राप्त करें। बुद्धि शब्द प्राचीन काल से व्यक्ति की तत्परता, तत्कालिकता, समायोजन तथा समस्या समाधान की क्षमताओं के संदर्भ में प्रयोग होता रहा है। सभी व्यक्ति समान रूप से योग्य नहीं होते।

मानसिक योग्यता ही उनके असमान होने का प्रमुख कारण है। प्राय: उस व्यक्ति को बुद्धिमान कहा जाता है जो जीवन की सामान्य स्थितियों का सामना करने में सफल हो। बुद्धि हमारी समस्याओं को दूर करने तथा हमारे उद्देश्यों को प्राप्त करने की क्षमता देती है। बुद्धि किसी में कम तो किसी में बहुत ज्यादा पाई जाती है। और कुछ बालक अपनी बुद्धि के प्रयोग से किसी भी समस्या का हल प्राप्त कर लेते हैं। किशोरावस्था में सही समय पर बच्चों में बुद्धि एवं सृजनात्मकता की पहचान कर उनकी बुद्धि एवं सृजनात्मकता का विकास किया जा सकता हैं।

सर्वशक्तिमान् ईश्वर ब्रहाण्ड का सृष्टा है उसमें सूक्ष्म सृजनात्मक योग्यताएँ विद्यमान है। उसने हम सबको तथा प्रकृति की सभी वस्तुओं को बनाया है। भारतीय दर्शन के अनुसार हम उस परमात्मा के अंश है। इसलिए हममें सृजनात्मक योग्यताएँ भी विद्यमान है। परन्तु जैसा कि हम देखते है, हम में से प्रत्येक व्यक्ति अनुपम है,इसलिए सभी प्राणियों में एक ही स्तर की सृजनात्मक योग्यता विद्यमान नहीं है। हममें से कई व्यक्तियों में उच्च स्तरीय सृजनात्मक प्रतिभाएँ होती हैं और यही व्यक्ति कला, साहित्य, विज्ञान, व्यापार आदि विभिन्न मानवीय क्षेत्रों में संसार का नेतृत्व करते हैं। सृजनात्मकता प्रत्येक क्षेत्र में प्रगति के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। सभी प्रकार की प्रगति नये विचारों या सृजनात्मक प्रक्रिया के परिणाम के आधार पर होती है। यह सभी प्रकार के सामाजिक विकास तथा विज्ञान व तकनीकी के नये अन्वेषणों तथा खोजों का आधार है। सर्जक व्यक्तियों के बिना हम अन्वेषण,

* शोधार्थी, शिव कॉलेज ऑफ एज्यूकेशन तिगांव फरीदाबाद, (हरियाणा) भारत
** सहायक प्राध्यापक, शिव कॉलेज ऑफ एज्यूकेशन तिगांव फरीदाबाद, (हरियाणा) भारत

खोज तथा प्रगति ज्ञान के किसी भी क्षेत्र में नहीं कर पायेगें। इसलिए यह विद्यालय का दायित्व बन जाता है कि वह विद्यालयी छात्रों में सृजनात्मकता का विकास करें। मनुष्य में सृजनशीलता का आरंभ बाल्यकाल की शिक्षा से ही प्रारम्भ हो जाता है। बचपन से ही बालक में रचनात्मक प्रवृतियों के विकास को प्रेरित करना चाहिये। इस कार्य में शिक्षकों एवं अभिभावकों का अभूतपूर्व योगदान होता है।

शोध की आवश्यकता – वर्तमान युग वैज्ञानिक एवं कम्प्यूटर तकनीकी की प्रणाली से युक्त है। इस वैज्ञानिक युग में जहॉ व्यक्ति ने तकनीकी से अपने जीवन का कुछ हद तक तकनीकी के द्धारा सर्वसुलभ बनाया है। वहीं भौतिक इच्छाओं के कारण आज के किशोर वर्ग को कुछ क्षेत्रों में समस्या ग्रसित कर दिया है। जिससे की आज के किशोरों में अनेक प्रकार की दुश्चिन्ताऐं, तनाव, सांवेगिक अपरिपक्कता दृष्टिगोचर हो रही है। इनका सीधा प्रभाव किशोरों की जीवन शैली, व्यक्तित्व एवं उसकी उपलब्धि पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से पड़ रहा है । मानव जीवन की विभिन्न अवस्थाओं का मानव पर प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पडता है। जिस प्रकार शैशवावस्था एवं बाल्यावस्था में बालक अनुकरण करता है। उसी प्रकार किशोरवास्था में बालक में भावनाओं का विकास अपने उच्च स्तर पर होता है।

किशोरावस्था में बालक अत्याधिक संवदेनशील एवं भावुक होते है। जिस कारण इस अवस्था को मनोवैज्ञानिकों ने तुफान एवं सवेंग की अवस्था कहा है। इस अवस्था में बालक के मानसिक स्वास्थ्य, आत्म–सम्प्रत्यय, संवेग एवं व्यक्तित्व पर नियन्त्रण होना आवश्यक है। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की आत्म–सम्प्रत्यय संगठन के नियमों के अनुसार होता है। आत्म–सम्प्रत्यय में खुद को जानने के वे तत्व सम्मिलित है। जो आवश्यक नहीं की स्वयं की वास्तविक से शत प्रतिशत मेल रखते है। आत्म सम्प्रत्यय के विषय में व्यापक वैयक्तिक भिन्नता पाई जाती है। किन्हीं दो व्यक्तियों के आत्म–सम्प्रत्यय एक समान नहीं होते है। इसलिए किशोरवस्था में बालकों के आत्म–सम्प्रत्यय को समझने की आवश्यकता महसूस होती है।

प्रत्येक व्यक्ति का आत्म–सम्प्रत्यय हमेशा उसके अन्दर विद्यमान रहता है। तथापि उसे हमेशा उसका ना तो आभास रहता है। न उस पर ध्यान! किशोरावस्था में बालकों की बुद्धि का विकास भी चरम स्तर पर होता है। एवं उनके अन्दर सृजनात्मकता भी अपनी विकास की अवस्था में होती है। बालक किशोरावस्था में अपने आत्म–सम्प्रत्यय बुद्धि एवं सृजनात्मकता के कारण अपनी उपलब्धि एवं अनउपलब्धि को प्राप्त करता है। इस अवस्था में शिक्षकों एवं अभिभावकों को किशोरों की बुद्धि एवं सृजनात्मकता को पहचानकर उसका सही दिशा में विकास करना चाहिए। आज के किशोरों की आत्म–सम्प्रत्यय को जागृत करने की बहुत आवश्यकता है।

अध्यापकों एवं अभिभावकों को किशोरों के आत्म–सम्प्रत्यय को विकसित करने का समुचित ज्ञान होना बहुत जरूरी है। आत्म–सम्प्रत्यय का किशोरावस्था में बच्चों की बुद्धि एवं सृजनात्मकता के ऊपर स्पष्ट रूप से प्रभाव पड़ता है। जो कि वर्तमान तकनीकी युग में आज का किशोर दुश्चिंताओं, समस्याओं से युक्त है। उसकी दुष्चिंताओं एवं समस्याओं को जानकर उसका सर्वांगीण विकास अध्यापक एवं अभिभावकों का मुख्य कार्य है। वर्तमान समय में जो भी भौतिक परिवर्तन हुए है। उनका सीधा प्रभाव किशोर पर एवं उसके व्यक्तित्व पर स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहा है। इसलिए शोधकर्ता ने इस विषय को लेकर यह जानने का प्रयास किया है। आत्म सम्प्रत्यय का छात्रों की बुद्धि एवं सृजनात्मकता पर प्रभाव कितना ओर किस स्तर तक पड़ रहा है।

उद्देश्य – किशोरों के आत्म–सम्प्रत्यय का उनकी बुद्धि और सृजनात्मकता पर प्रभाव का अध्ययन करना ।

परिकल्पनाएँ – किशोरों के आत्म–सम्प्रत्यय का उनकी बुद्धि और सृजनात्मकता के साथ कोई सार्थक सम्बंध नहीं है

शोध प्रारूप – प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

शोध न्यायदर्श – फरीदाबाद जिले के किशोरावस्था के छात्र के आत्म–सम्प्रत्यय का उनके बुद्धि एवं सृजनात्मकता के संदर्भ मेंअध्ययन करना है। इसके लिए शोधार्थी ने 80 किशोरावस्था के छात्रों का चयन किया है।

शोध चर –

स्वतंत्र चर – आत्म सम्प्रत्यय।

आश्रित चर– बुद्धि, सृजनशीलता।

अध्ययन के उपकरण –

1. प्रतिभा देओ आत्मसम्प्रत्य मापनी
2. बुद्धि मापन जलोटा सामूहिक आंकलन का सामान्य मानसिक योग्यता
3. सृजनात्मकता मापन बकेर मेहदी मूक आंकलन का सृजनात्मक विचार।

शोध सांख्यिकी तकनीके – इस अध्ययन में शोधार्थी द्धारा निम्न सांख्यिकीय तकनीकों का प्रयोग किया गया है।

1. मध्यमान
2. एस डी
3. सह–सम्बन्ध

सारणी –1

किशोरों के आत्म–सम्प्रत्यय, बुद्धि और सृजनात्मकता का अध्ययन।

चर	श्रेणी	प्रतिशत
आत्म–सम्प्रत्यय	श्रेष्ठ	10
	औसत से अधिक	15
	औसत	55
	औसत से कम	20
बुद्धि	श्रेष्ठ	10
	औसत से अधिक	16
	औसत	45
	औसत से कम	20
	अल्प बुद्धि	8
सृजनात्मकता	उच्च श्रेणी	62
	निम्न श्रेणी	38

प्रस्तुततालिका 1से स्पष्ट होता है कि छात्रों के आत्म–सम्प्रत्यय के आयामों से पता चलता है कि श्रेष्ठ श्रेणी के 10 प्रतिशत छात्र औसत से अधिक के 15 प्रतिशत छात्र औसत श्रेणी के 55 प्रतिशत छात्र औसत से कम श्रेणी के 20 प्रतिशत छात्र पाए गए हैं। उनकी बुद्धि के आयामों से पता चलता है कि श्रेष्ठ श्रेणी के 10 प्रतिशत छात्र औसत से अधिक के 16 प्रतिशत छात्र औसत श्रेणीके 45 प्रतिशत छात्र औसत से कम श्रेणी के 20 प्रतिशत छात्र अल्प बुद्धि के 8 प्रतिशत छात्र पाए गए हैं। उनकी सृजनात्मकता के आयामों से पता चलता है कि उच्च श्रेणी के 62 प्रतिशत छात्र और 38 प्रतिशत छात्र निम्न श्रेणी के पाए गए हैं।

सारणी –2

किशोरों के आत्म–सम्प्रत्यय का उनकी बुद्धि पर प्रभाव का अध्ययन।

चर	कुल आंकडे	मध्यमान	सह सम्बन्ध
आत्म–सम्प्रत्यय	80	104	0.23
बुद्धि	80	99	

सह सम्बन्ध 0.23 सह सम्बन्ध गुणांक पाया गया अत: उपर्युक्त तालिका नम्बर 2 से पता चलता है कि आत्म–सम्प्रत्यय तथा बुद्धि में 0.23 का सह सम्बन्ध है यह निश्चित परन्तु सुक्ष्म सह सम्बन्ध को दर्शाता है।

सारणी–3

किशोरों के आत्म–सम्प्रत्यय का उनकी सृजनात्मकता पर प्रभाव का अध्ययन।

चर	कुल आंकडे	मध्यमान	सह सम्बन्ध
आत्म–सम्प्रत्यय	80	104	0.03
सृजनात्मकता	80	68	

सह–सम्बन्ध 0.03 सह–सम्बन्ध गुणांक पाया गया। अत: उपर्युक्त तालिका नम्बर 3 से पता चलता है कि आत्म–सम्प्रत्यय तथा सृजनात्मकता में 0.03 का सह सम्बन्ध है यह न के बराबर शुन्य सह–सम्बन्ध को दर्शाता है।

सारणी –4

किशोरों के आत्म–सम्प्रत्यय का उनकी बुद्धि और सृजनात्मकता पर प्रभाव का अध्ययन।

चर	कुल आंकडे	मध्यमान	चरिता विश्लेषण
आत्म–सम्प्रत्यय	80	104	29.89
बुद्धि	80	99	
सृजनात्मकता	80	68	

उपर्युक्त तालिका नम्बर 4 से पता चलता है कि आत्म–सम्प्रत्यय का मध्यमान 104 बुद्धि का मध्यमान 99 तथा सृजनात्मकता का मध्यमान 68 पाया गया है इसका चरिता विश्लेषण 29.89 पाया गया है यह चरिता विश्लेषण दोनों स्तरों 0.01 तथा 0.05 पर सार्थक नहीं है।

अत: परिकल्पना 'किशोरों के आत्म–सम्प्रत्यय का उनकी बुद्धि और सृजनात्मकता का कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है' प्रत्येक स्तर पर अस्वीकार की जाती है।

शोध के निष्कर्ष –

- किशोरों के आत्म–सम्प्रत्यय का उनकी बुद्धि के साथ सूक्ष्म सह सम्बंध पाया गया है।
- किशोरों के आत्म–सम्प्रत्यय का उनकी सृजनात्मकता के साथ न के बराबर शुन्य सह सम्बंध पाया गया है।
- किशोरों के आत्म–सम्प्रत्यय का उनकी बुद्धि और सृजनात्मकता के साथ सार्थक सह सम्बंध पाया गया है

शैक्षिक निहितार्थ – किसी भी अनुसन्धान को तभी सार्थक माना जाता है जब उसकी उपयोगिता एवं महत्व हो। इसलिए शोधकर्ता के अनुसार प्रस्तुत का शैक्षिक निहितार्थ निम्नलिखित है –

अनुसन्धान की उपयोगिता बढ़ाने हेतु यह आवश्यक हो जाता है कि अध्ययन से प्राप्त परिणामों को वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया जाये। अत: अनुसन्धान तभी प्रासंगिक होगा जब उसके परिणामों को वैज्ञानिक ढंग से विश्लेषण कर प्रस्तुतिकरण दिया जाता है। इसी कारण अध्ययन करने के पश्चात यह जानने का प्रयास किया जाता है के उक्त अनुसंधान के परिणामों की शैक्षिक उपयोगिता क्या है ? जिससे कि शोध कार्य का महत्व स्पष्ट हो सके एवं शोध कार्य को प्रभावशाली बनाने के साथ–साथ सन्दर्भित समस्याओं को हल करने में सहायता प्राप्त हो सके। प्रस्तुत शोध कार्य के शैक्षिक निहितार्थ निम्न प्रकार है –

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन में किशोरावस्था के विद्यार्थियों को चयनित किया गया है क्योंकि किशोर राष्ट्र की धरोहर होते हैं। अत: उनका सर्वांगीण विकास (शारीरिक, मानसिक, शैक्षिक एवं सामाजिक) उचित ढंग से होना आवश्यक है। किशोरों को शारीरिक, मानसिक व सामाजिक रूप से विकसित होने के लिए अनेक समस्याओं से गुजरना पड़ता है। यदि बुद्धि का किशोरों में पर्याप्त रूप से विकास हो जाए तो उन्हें उपरोक्त समस्याओं का समाधान करने में सहायता मिल सकती है।
2. प्रस्तुत शोध का महत्व अभिभावकों तथा शिक्षकों के लिए अधिक है। क्योंकि बालक का अधिकांश समय घर एवं स्कूल में व्यतीत होता है। अत: घर व स्कूल का वातावरण बालक के बुद्धि एवं सृजनात्मकता को बहुत अधिक प्रभावित करता है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार घर एवं स्कूल का वातावरण बालक के व्यक्तित्व एवं उसके भावी जीवन पर अमिट छाप छोड़ता है। जिस घर एवं विद्यालय का वातावरण अच्छा एवं स्वस्थ होता है। साथ ही जो अभिभावक एवं शिक्षक बालकों की वैयक्तिक विभिन्नता को ध्यान में रखकर उनका सही निर्देशन तथा मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखते हैं। उनके बालकों में बुद्धि और सृजनात्मकता का विकास अच्छा होता है एवं इस प्रकार विकसित बुद्धि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता प्राप्त कराने में सहायक होती है।
3. वर्तमान समय में, आत्म सम्प्रत्यय का किसी व्यक्ति की सफलता में औसत स्तर का योगदान माना जाता है अर्थात यह कहना अनुचित न होगा कि व्यक्ति की सफलता उसकी आत्म सम्प्रत्यय के समुचित विकास पर निर्भर करती है। अत: अभिभावक, शिक्षक तथा समाज शास्त्रियों के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वे विद्यार्थियों को उचित वातावरण, मैत्रीपूर्ण व्यवहार एवं उचित दिशा में निर्देशन प्रदान करें जिससे विद्यार्थियों की आत्म सम्प्रत्यय का समुचित विकास हो सके।
4. प्रस्तुत शोध ऐसे विद्यार्थियों के लिए उपयोगी है, जिनमें सामान्य आत्म–सम्प्रदाय कम है ऐसे विद्यार्थी जो मानसिक रूप से सामान्य या सामान्य से कमजोर है, उन्हें सकारात्मक एवं अभिप्रेरित वातावरण प्रदान कर उन्हें बुद्धिमान बनाया जा सकता है अर्थात ऐसे विद्यार्थी भी प्रत्येक क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने में सक्षम हो सकते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. वाल्या, जे.एस. (2011) 'अधिगमकर्ता अधिगम एवं संज्ञान' 2011,प्रकाशक अहमपाल पब्लिकेशर्ज, एन.एन.11 गोपाल नगर जालंधर सीटी, पंजाब।
2. शैफाली सुमन (2010) 'विद्यार्थियों में सृजनात्मकता का विकास, भार्गव विवके,शिक्षा मित्र, वर्ष 2 अंक 4 पेज नं01'
3. कुलश्रेष्ठ,एस0 पी0 (2009) 'शिक्षा मनोविज्ञान' प्रकाशक विनय रखेजा, आर0 लाल बुक डिपो, निकट गवर्नमेन्ट कॉलेज मेरठ पेज नं0 326
4. यादव, सत्येन्द्र (2009) (पूर्वाञ्जल विश्वविद्यालय जौनपुर) 'शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यार्थियों का सृजनात्मकता का शैक्षिक तुलनात्मक अध्ययन।'

5. हबीबउल्लाह,एन0 और कुमार वी0 (2009) स्नातक छात्रों की शैक्षणिक उपलब्धि का भविष्यवक्ताओं के रूप में बुद्धिमता, सृजनात्मकता और लिंग का अध्ययन का अध्ययन।
6. कुमारीब कविता (2008)'ग्रामीण व नगरीय सृजनात्मक किशोरों की शैक्षिक रूचि का तुलनात्मक अध्ययन।'
7. बच्चन,लाल (2008) 'आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान', प्रकाशक एच.पी.भार्गव बुक हाउस 4/230 कचहरी घाट, आगरा -282004।
8. लियू एम0एल0 (2007) 'सृजनात्मकता, चित्रात्मकता की योग्यता और दृश्य बुद्धिमता के बीच संबंध।'
9. दास ,भगवान (2007) 'बाल विकास', आमेगा प्रकाशन, 4398/5, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली पेज नं0 166-167।
10. शर्मा, आर. ए. (2007) 'शिक्षण-अधिगम का मनोविज्ञान', प्रकाशक सी./ओ आर लाल बुक डिपो, निकट गवर्नमेण्ट कॉलिज, मेरठ।
11. त्रिपाठीब मधुसूदन (2007) 'शिक्षण अधिगम की मनोवैज्ञानिक पद्धति', ओमेगा पब्लिकेशन्स, 4398/5 अंसारी रोड दरियागंज, नई दिल्ली।
12. पाठक,पी0 डी0 (2005) 'शिक्षा मनोविज्ञान', विनोद प्रकाशक, राघव मार्ग आगरा।

****

उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों की बुद्धि का आत्मविश्वास से संबंध का अध्ययन

डॉ. अर्चना श्रीवास्तव * डॉ. रागिनी श्रीवास्तव **

'बुद्धि एक प्रकार की 'योग्यता तथा योग्यताओं' का संयोगीकरण है जिसमें व्यक्ति विवेकशील तथा अमूर्त चिन्तन कर सकता है, ध्येयपूर्ण क्रियाएँ कर सकता है, ज्ञान संकेतो से युक्त अधिगम कर सकता है तथा नई परिस्थितियों में प्रभावपूर्ण समायोजन कर सकता है।' बुद्धि मनुष्य की सामान्य या विशिष्ट योग्यता है। बुद्धि मनुष्य के न केवल ज्ञानात्मक पक्ष को प्रभावित करती है। वरन् मानव बुद्धि पर भावनाओं का प्रभाव भी देखा जाता है।बालकों की योग्यता का ज्ञान, बालकों की भावी सफलताओं का ज्ञान, अपव्ययों का निवारण करने के लिये बौद्धिक क्षमता के साथ-साथ भावात्मक पक्ष का परिष्कृत होना भी आवश्यक है।अत: प्रस्तुत शोध कार्य में बुद्धि को भावात्मक चर जैसे आत्मविश्वास के साथ संबंध का अध्ययन किया गया है।

प्रस्तावना – गीता के अनुसार –

'बुद्धिर्मेद धृतेश्चैव गुणतस्त्रिाविंध श्रृणु।
प्रोच्यमानमशेषण पृथ्कत्वेन धंनजय।।'

अर्थात् – बुद्धि ही ज्ञान की शक्ति है तथा धृति का सम्बन्ध धारणा शक्ति से है। अंतकरण का दूसरा अंग बुद्धि ही है। बुद्धि का कार्य मन से उठने वाले विचारों, संकल्पों-विकल्पों आदि को एक निश्चय की स्थिति में लाना हैं।

बुद्धिबल के कारण ही मानव विश्व के समस्त जीवधारियों में श्रेष्ठतम समझा जाता है। बुद्धि ही मानव को पशुओं की श्रेणी से पृथक करती है। इसी के द्वारा मानव को नवीन कार्य करने की प्रेरणा मिलती है। बुद्धि का शाब्दिक अर्थ 'ज्ञान शक्ति' या 'मेघा' है। यह एक अनुमानित शक्ति है क्योंकि इसका ज्ञान प्रत्यक्ष रूप से नहीं होता। बल्कि क्रियाओं या व्यवहारों के माध्यम से होता है। दैनिक जीवन के प्रत्येक गतिविधि का निरीक्षण किया जावे तो कहा जा सकता है कि बुद्धि एक ऐसी मानसिक क्षमता है, जिसकी अभिव्यक्ति जीवन के विभिन्न पहलुओं के सन्दर्भ में होती है।

मनोवैज्ञानिकों ने बुद्धि को विभिन्न प्रकार से परिभाषित करने का प्रयास किया है। उनके अनुसार बुद्धि विभिन्न ज्ञानशक्तियों-सीखने की शक्ति, स्मरण शक्ति, चिंतन शक्ति, समायोजन शक्ति का समग्र रूप है। बुद्धि की विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है – 'बुद्धि मनुष्य की वह सामान्य या विशिष्ट विचार, तर्क एवं निर्णय शक्ति है जो परिवर्तनशील परिस्थितियों में उसका कार्य-कुशलता एवं तत्परता के साथ यथाशीघ्र पूर्ण करने में सहायता करती है।'

बौद्धिक क्षमता का व्यक्तित्व पर काफी प्रभाव पड़ता है। किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व की चर्चा उसके आत्मविश्वास के आकलन के बिना अपूर्ण हैं। बुद्धि तथा आत्मविश्वास का घनिष्ठ संबंध है, सामान्यत: देखा जाता है कि बुद्धिमान व्यक्ति किसी काम को आत्मविश्वास के साथ प्रारम्भ करता है इससे उसे आत्मबल मिलता है तथा कार्य की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा मिलती है।

व्यावसायिक निर्देशन एवं परामर्श के दौरान बुद्धि एवं आत्मविश्वास का समन्वय बहुत महत्वपूर्ण होता है। सामान्य तौर पर परामर्शदाता ऐसे व्यक्ति जिनमें बौद्धिक क्षमता कम होती है तथा आत्मविश्वास अधिक होता है उन्हें ऐसे व्यवसाय चुनने की सलाह देते है। जहाँ उनसे अधिक बुद्धिमान व्यक्ति कार्य करते हो तथा ऐसे व्यक्ति जिनकी बौद्धिक क्षमता अधिक है, आत्मविश्वास कम है, उन्हें ऐसे व्यवसाय चुनने की सलाह दी जाती है जहाँ उनसे कम बुद्धिमान व्यक्ति कार्यरत् हो अन्यथा उन्हें समायोजन में कठिनाई होती है।

बालकों की योग्यता का ज्ञान, बालकों की भावी सफलताओं का ज्ञान, अपव्ययों का निवारण करने के लिये बौद्धिक क्षमता के साथ-साथ भावात्मक पक्ष का परिष्कृत होना भी आवश्यक है। बढ़ते हुए परिवर्तन एवं सामाजिकरण की माँग एवं बुद्धि ने मनुष्य के ज्ञान एवं उत्साह को कदम दर कदम बढ़ा उसकी सोच एवं स्तर को वैज्ञानिक एवं तकनीकी युक्त बना दिया।

विकास के इन्हीं क्रमों में मनुष्य ने बुद्धि के विषय में कदम बढ़ाया और आज परिणामत: मनुष्य बुद्धि के विषय में इतना विकास कर सका। आज 21वीं शताब्दी में मनोवैज्ञानिकों, शिक्षाविदों एवं वैज्ञानिकों ने बुद्धि एवं उसके प्रभावों से संबंधित तथ्यों का अध्ययन किया। इन अध्ययनों से क्रो एण्ड क्रो, कर्नबेक केगाँन की एवं बर्क ने मानव बुद्धि का वर्णन किया है। अन्य मनोविज्ञान की पुस्तकों में वुडवर्थ, नील एवं साहित्य जैसे –

- Indian Journals of Intelligence
- The American Psychologiest
- Journal of Association of Educational Psychology and other reviews.

में भी मनोवैज्ञानिकों ने बुद्धि एवं परीक्षण के बारे में अपनी राय दी है। कुछ मनोविदों जैसे टर्मन, बिने, स्टर्न, वेश्लर आदि ने भी बुद्धि की व्याख्या की है। सिद्धान्त प्रतिपादित किये है एवं बुद्धि से संबंधित खोजों में 'क्षमता के आधार' मान कार्य किया।

स्पीयरमैन के बुद्धि के सिद्धान्तों में त्रिखण्डीय सिद्धान्त में भी यही आधार देखने को मिलता है। बुद्धि से सम्बन्धित ज्यादातर शोधों के परिणामों का विश्लेषण करने पर किसी ने कम एवं किसी ने ज्यादा जोर 'क्षमताओं' पर दिया है। आज के दिनों में हम यह विश्वासपूर्वक कह सकते हैं कि प्रत्येक मनुष्य की बुद्धि General (g) एवं Special (s) में बंटी होती हैं। यह सिद्धान्त

* प्राध्यापक, बी.सी.जी. महाविद्यालय, देवास (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, महाराजा महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

स्पीयरमैन तथा थर्स्टन ने दिया जो कि बुद्धि परीक्षण में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है। स्पीयरमैन एवं थर्स्टन की खोज को आगे बढ़ाने का काम गिलफोर्ड ने किया। उन्होंने "Structure of Intellect" की संकल्पना दी। जो कि मुख्य रूप से भावात्मक, अभिसारी तथा अवसारी सोच को एवं स्मरण शक्ति के बारे में थी।

हाल ही के शोध कार्यों में बुद्धि को 'रचनात्मक चिन्तन' से जोड़ा गया। 'हब' का नाम इसमें प्रमुख रूप से आता हैं।एक अन्य अध्ययन में जेनसन ने बुद्धि के दो स्तर बताए पहला स्तर `Rote learning' की क्षमता का स्तर एवं दूसरा स्तर समस्या हल करने की क्षमता को माना। कैटल ने मानसिक क्षमता को बुद्धि को आधार माना।

बुद्धि और आत्मविश्वास – 'आत्मविश्वास' शब्द दैनिक चर्चाओं में प्राय: उपयोग में लाया जाता है। किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व की चर्चा उसके 'आत्मविश्वास' के आकलन के बिना अपूर्ण हैं। व्यक्ति द्वारा लिए गए सामान्य एवं महत्वपूर्ण दोनों प्रकार व्यक्ति के आत्मविश्वास के स्तर का प्रभाव उसके स्वयं के दैनन्दिन जीवन पर पड़ता है। इसके साथ ही व्यक्ति के कार्यक्षेत्र में संबंधित समूह अथवा संगठन की प्रगति भी इससे प्रभावित होती है। 'आत्मविश्वास' के निम्न स्तर का प्रभाव व्यक्ति के प्रति अन्य व्यक्ति या समूह सहज स्वीकार्यता नहीं दर्शाते हैं। 'आत्मविश्वास' से सम्पन्न व्यक्तित्व के प्रति उससे संबंधित संगठन या अन्य व्यक्तित्व निर्भरता का अनुभव करने लगते है। एक आम आदमी की दृष्टि से आत्मविश्वास शब्द का अर्थ है – स्वयं में विश्वास। दैनिक जीवन में आत्मविश्वास से मिलते जुलते अर्थ वाले **शब्द –** आत्मपरिचय, आत्मप्रतिष्ठा, आत्मजागृति इत्यादि है। अंग्रेजी में Self-Confidence से मिलते–जुलते शब्द Self-reliance, Self-esteem, Self-awareness, Self-acceptance आदि है।

विविध मनोवैज्ञानिकों ने आत्मविश्वास शब्द के अर्थ विविध प्रकार से दिए हैं। Guilford (1959) ने आत्मविश्वास शब्द के अर्थ विविध प्रकार से दिए हैं। जिनकी सूची इस प्रकार हैं –

- व्यक्ति स्वयं की इच्छानुसार कार्य सम्पन्न करने में सक्षम है।
- व्यक्ति अनुभव करता है कि वह दूसरों द्वारा पसन्द किया जाता हैं।
- व्यक्ति अनुभव करता है कि वह दूसरों द्वारा स्वीकार या पसन्द किया जाता हैं।
- व्यक्ति स्वयं में विश्वास रखता है।
- व्यक्ति समाज में व्यवहार करते समय हुई त्रुटियों से घबराहट अनुभव नहीं करता।

इसके साथ ही Guilford ;1959) ने आत्मविश्वास से सम्पन्न व्यक्ति के गुणों की सूची इस प्रकार हैं –

- निर्भर रहने योग्य
- स्वयं के निर्णय में विश्वास रखना।
- अन्यों के अनुमोदन पर निर्भर न रहना।
- आज्ञाकारिता को स्वेच्छा से या सहजता से स्वीकार न करना।

स्वतः एवं Rabenstain (1955) के अनुसार आत्मविश्वास के लक्षण इस प्रकार है –

- दायित्व का बोध करना।
- अपनी कठिनाईयों के लिए दूसरों पर दोषारोपण न करना।
- भविष्य को विचार में लेना।
- परिस्थिति अथवा व्यक्तित्व की शिकायत कर लाभ न उठाना।
- दूसरों के लिए चिन्ता रखना।
- अपने आवेगों, प्रवृत्तियों पर नियंत्रण रख पाना।
- कार्य को सम्पूर्णता से देखना।

उपरोक्त लक्षणों का विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट होता है कि आत्मविश्वास व्यक्ति का एक महत्वपूर्ण गुण है। जिसकी सहायता से व्यक्ति समाज में सरलता व सफलता से व्यवहार कर सकता है। आत्मविश्वास से सम्पन्न व्यक्ति न केवल स्वयं के कार्यों को सफलता से पूर्ण कर सकता है। अपितु वह समाज में, संगठन में विविध दायित्वों को भली प्रकार निभा सकता है। ऐसे व्यक्तियों की निर्णय क्षमता का लाभ स्वयं के साथ–साथ समूह व संगठन को भी प्राप्त होता है।

बुद्धि तथा आत्मविश्वास का घनिष्ठ संबंध है। सामान्यत: देखा जाता है कि बुद्धिमान व्यक्ति किसी काम को आत्मविश्वास के साथ प्रारम्भ करता है। इससे उसे आत्मबल मिलता है तथा कार्य की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा मिलती है। इसके विपरीत मूर्ख या निर्बल बुद्धि के लोगों में इसका अभाव देखा जाता हैं। उन्हें अपनी योग्यता पर विश्वास नहीं होता है। किसी कार्य को करते समय वह डरते रहते हैं कि उन्हें सफलता मिलेगी अथवा नहीं। इसका परिणाम यह होता है कि वे प्राय: असफल ही रहते है, क्योंकि उनकी क्रिया का कोई ठोस आधार नहीं होता हैं। व्यावसायिक निर्देशन एवं परामर्श के दौरान बुद्धि एवं आत्मविश्वास का समन्वय बहुत महत्वपूर्ण होता है। सामान्यतौर पर परामर्शदाता ऐसे व्यक्ति जिनमें बौद्धिक क्षमता कम होती है तथा आत्मविश्वास अधिक होता है उन्हें ऐसे व्यवसाय चुनने की सलाह देते है। जहाँ उनसे अधिक बुद्धिमान व्यक्ति कार्य करते हो तथा ऐसे व्यक्ति जिनकी बौद्धिक क्षमता अधिक है आत्मविश्वास कम है उन्हें ऐसे व्यवसाय चुनने की सलाह दी जाती है। जहाँ उनसे कम बुद्धिमान व्यक्ति कार्यरत् हो। अन्यथा उन्हें समायोजन में कठिनाई होती है।

बुद्धि के विभिन्न शोध कार्यों का अवलोकन करने से यह ज्ञात होता है कि – बुद्धि मनुष्य की सामान्य या विशिष्ट योग्यता है। बुद्धि मनुष्य के न केवल ज्ञानात्मक पक्ष को प्रभावित करती है। वरन् मानव बुद्धि पर भावनाओं का प्रभाव भी देखा जाता है।**बुद्धि एवं आत्मविश्वास को सम्मिलित कर बुद्धि से संबंधित करने हेतु कोई प्रयास नहीं हुआ हैं।**

शोध कार्य का शीर्षक, उद्देश्य एवं परिकल्पना इस प्रकार हैं –

उद्देश्य –

1. उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय जैसे – विज्ञान, वाणिज्य एवं कला के विद्यार्थियों में बुद्धि के मध्यमानों की तुलना करना।
4. उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय जैसे – विज्ञान, वाणिज्य एवं कला के विद्यार्थियों में आत्म विश्वास के मध्यमानों की तुलना करना।
5. उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय जैसे – विज्ञान, वाणिज्य एवं कला के विद्यार्थियों की बुद्धि का आत्मविश्वास के साथ सम्बन्ध का अध्ययन करना।

परिकल्पना –

1. उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय जैसे – विज्ञान, वाणिज्य, गणित एवं कला के विद्यार्थियों में बुद्धि के मध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय जैसे – विज्ञान, वाणिज्य, गणित एवं कला के विद्यार्थियों में आत्मविश्वास के मध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
5. उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय जैसे – विज्ञान, वाणिज्य, गणित एवं कला के विद्यार्थियों की बुद्धि का आत्मविश्वास में कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

प्रविधि – प्रस्तुत शोध कार्य सर्वेक्षण –विधि पर आधारित है।

न्यादर्श – प्रदत्त संग्रह हेतु कक्षा– 11 और कक्षा– 12 के 179 विद्यार्थियों का न्यादर्श लिया गया। उज्जैन शहर के विद्यालयों तथा शैक्षणिक संस्थाओं को न्यादर्श हेतु या यादृच्छिक रूप से चयन किया गया। आयु समूह 15 से 16 वर्ष के 179 विद्यार्थियों के न्यादर्श में कुल 79 छात्र एवं 104 छात्राएँ थीं। कुल 179 विद्यार्थियों में 76 विज्ञान संकाय के विद्यार्थी, 57 वाणिज्य संकाय के विद्यार्थी तथा 46 कला संकाय के विद्यार्थी थे।

उपकरण – बुद्धि का मापन हेतु जे. सी. रेवन, एवं आत्मविश्वास का मापन डॉ. स्मिता भवालकर एवं सुश्री स्वाती अमलनयकर द्वारा निर्मित आत्मविश्वास मापनी की सहायता से किया गया है।

प्रदत्तों का एकत्रीकरण – विद्यालयों के प्राचार्य तथा कोचिंग क्लासेस के निर्देशकों से अनुमति ली गई। उनसे अनुमति लेने के पश्चात् इन संस्थाओं के विद्यार्थियों की बुद्धि , आत्मविश्वास का मापन किया गया। इन परीक्षणों का मापन करते समय निर्देशिका में दिये गए निर्देशों का पालन किया गया।

प्रदत्ता विश्लेषण – प्रदत्तों का विश्लेषण एक दिशीय प्रसरण का विश्लेषण One Way Analysis of Variance - (ANOVA) से किया गया। विभिन्न चरों के बीच सम्बन्ध ज्ञात करने के लिए Co-Relation का प्रयोग किया गया।

प्रदत्तों का विश्लेषण एवं परिणाम – प्रदत्तों का संकलन करने के पश्चात प्राप्त उद्देश्यानुसार विश्लेषण एवं व्याख्या की गई।उद्देश्यों के अनुसार निम्नलिखत परिणाम निकलकर आये हैं।

तालिका क्रमांक – 1.1

विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों की बुद्धि की तुलना के लिए प्रसरण के विश्लेषण का सारांश

S.No.	Source of Variance	Df	SS	Mss	F Value
1.	Among Group	2	213.021	106.51	0.972
2.	Within Group	176	19283.16	109.56	
	Total	178			

तालिका क्रमांक – 1.2

विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों के आत्मविश्वास के मध्यमानों की तुलना के लिए प्रसरण के विश्लेषण का सारांश

S.No.	Source of Variance	Df	SS	Mss	F Value
1.	Among Group	2	21940.98	10970.49	1.85799
2.	Within Group	176	1039191.162	5904.495	
	Total	178			

तालिका क्रमांक – 1.3

विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों की बुद्धि का आत्मविश्वास के मान के सहसंबंध का सारांश

बुद्धि	आत्मविश्वास	0.096

तालिका– 1.1 से विदित होता है कि विभिन्न संकाय से संबंधित F का मान 0.972 है जो कि सार्थक नहीं हैं। इसका अभिप्राय यह है कि विभिन्न संकायों का बुद्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया। इस परिप्रेक्ष्य में शून्य उपकल्पना 'उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय जैसे – विज्ञान, वाणिज्य, गणित एवं कला के विद्यार्थियों में बुद्धि के मध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।' अस्वीकृत नहीं की जाती हैं।

तालिका– 1.2 से विदित होता है कि विभिन्न संकाय से संबंधित F का मान 1.85799 है जो कि सार्थक नहीं हैं। इसका अभिप्राय यह है कि विभिन्न संकायों के विद्यार्थियों का आत्मविश्वास के मध्यमानों पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया। इस परिप्रेक्ष्य में शून्य उपकल्पना 'उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय जैसे – विज्ञान, वाणिज्य, गणित एवं कला के विद्यार्थियों में आत्मविश्वास के मध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।' अस्वीकृत नहीं की जाती हैं।

तालिका– 1.3 से विदित होता है कि बुद्धि का आत्मविश्वास के साथ सहसंबंध गुंणाक का मान 0.096 हैं जो कि सार्थक नहीं हैं।इससे स्पष्ट होता हैं कि बुद्धि का आत्मविश्वास पर कोई संबंध नहीं पाया गया हैं। अत: इस परिप्रेक्षय में शून्य परिकल्पना 'उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय जैसे – विज्ञान, वाणिज्य, गणित एवं कला के विद्यार्थियों की बुद्धि का आत्मविश्वास में कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।' अस्वीकृत नहीं की जाती है।

निष्कर्ष – उक्त शोध अध्ययन से स्पष्ट हैं कि 'उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न संकाय जैसे – विज्ञान, वाणिज्य एवं कला के विद्यार्थियों की बुद्धि का भावात्मक चरों आत्मविश्वास के साथ सार्थक सहसंबंध नहीं पाया गया।'

शैक्षिक उपयोगिता –

- बुद्धि के स्तरों का पता लगाया जा सकता है।
- बुद्धि और भावात्मक पक्षों को एक आधार प्राप्त होगा जिससे विद्यार्थियों में बदलती परिस्थिति के अनुरूप श्रेष्ठ समायोजन करने की क्षमता विकसित होगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. गैरट, हेनरी ई. शिक्षा मनोविज्ञान में सांख्यिकी, कल्याणी पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
2. भार्गव महेश (2003), मनोविज्ञान परीक्षण एवं मापन, एच. पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा।
3. पाठक, पी. डी. (2007), शिक्षा मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक आगरा – 2
4. डॉ. पाल, हंसराज (2008), प्रगत शिक्षा मनोविज्ञान, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।
5. डॉ. पाण्डे, कल्पलता एवं शंकर शरण श्रीवास्तव (2007), शिक्षा मनोविज्ञान, भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टि।
6. वर्मा, प्रीति व श्रीवास्तव डी. एन. (1996), बाल मनोविज्ञान : बाल विकास, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
7. शर्मा, बी. एन. (1997), शिक्षा मनोविज्ञान, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
8. सुलेमान मुहम्मद (2007), उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली।

****

प्राचीनकाल से वर्तमान काल तक भारत में नारी शिक्षा की स्थिति

डॉ. सचिन दास *

शोध सारांश – शिक्षा वह प्रकाश पुंज है जो संपूर्ण समाज को अपने दिव्य प्रकाशपुंज से आलोकित करता है। शिक्षा के बिना जीवन अंधेरा है। समाज और राष्ट्र की पहचान शिक्षा से होती है। यों तो शिक्षा का तात्पर्य सीखने से है, किन्तु अब यह सीखने-सिखाने की संकुचित परिधि से निकलकर व्यापक रूप से व्यवहत हो रही है। भारतीय मनीषियों ने शिक्षा को संस्कार माना है जो अंधविश्वास, कुरीतियों तथा पिछड़ेपन रूपी अंधकार को दूर भगा स्वच्छ और उन्नत समाज का निर्माण करता है। अगर हम देश की भागीदारी अर्थात् महिला शिक्षा के संदर्भ में विमर्श करें तो पाते हैं कि महिलाओं को शिक्षित करना अनिवार्य होना चाहिए। शिक्षा का तात्पर्य सिर्फ घर से बाहर निकलकर नौकरी करना ही नहीं है, बल्कि शिक्षा वह है जो अपनी तथा दूसरों की जिंदगी बेहतर बना सके और इस प्रकार से उपयोग में लाई जाए कि प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से राष्ट्रोत्थान में भागीदार हो।यद्यपि नारी ने अपनी पहचान बनाने की भरसक कोशिश की है यथापि अस्तित्व रक्षा हेतु उसका संघर्ष जारी है। दोहरी जिंदगी जीती हुई नारी स्वयं को उपेक्षित और असहाय पाती है,किन्तु विभिन्न प्रतिकूल परिस्थितियों में भी सामंजस्य स्थापित करती हुई प्रगति के पथ पर अग्रसर है। भारतीय स्त्रियों के सम्मान और मर्यादा के साथ समकक्षता हेतु भारतीय मनीषियों में राजा राम मोहन राय से महर्षि कर्वे तक के योगदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता। शिक्षित एवं आर्थिक रूप में सुदृढ़ नारी ही अत्याचार एवं अन्याय का विरोध कर विकास की मुख्य धारा से जुड़ सकती है। शिक्षा जैसे सशक्त माध्यम और धारदार हथियार के बल पर सशक्तिकरण के द्वारा निर्धारित लक्ष्य प्राप्त कर सकती हे।

प्रस्तावना – विभिन्न कालो में नारी शिक्षा की स्थिति –

1. प्राचीन भारत में नारी शिक्षा की स्थिति–

महाभारत काल के बाद अनेक कारणों से नारी के धार्मिक अधिकारों का धीरे-धीरे ह्रास होता गया, शिक्षा की सुविधाएँ कम होती गई, सार्वजनिक जीवन में भाग लेने की स्वतन्त्रता सीमित होती गई तथा इन सभी बातों के परिणामस्वरूप हिन्दू समाज में नारी के अस्तित्व में कमी आती गई। दूसरी ओर इसी युग में बौद्ध और जैन धर्मो का प्रचार और प्रसार हुआ। इन धर्मो के प्रवर्तकों ने नारी के प्रति किंचित उदार दृष्टिकोण अपनाया और नारी के धार्मिक अधिकारों को स्वीकार किया। हिन्दू समाज में जहाँ ब्रह्मावादिनियों का धीरे-धीरे लोप होता गया, वहीं दूसरी ओर बौद्ध भिक्षुणियों और जैन साध्वियों को आविर्भाव हुआ। बौद्ध भिक्षुणियों और जैन साध्वियों ने आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रशंसनीय प्रगति की और आचार्या, अर्हता और सिद्धा आदि की पदवी प्राप्त की तथा भारतीय नारी का गौरव बढ़ाया। कालान्तर में बौद्धधर्म का ह्रास होने पर नारी के लिए शिक्षा, आध्यात्मिक प्रगति और समाज-सेवा के अवसर कम हो गए और उसका कार्य-क्षेत्र घर-परिवार तक ही सीमित होकर रह गया। यह स्थिति लगभग 19 वीं शताब्दी के मध्य तक बनी रही।

2. मध्य युग में नारी शिक्षा की स्थिति – महाभारत काल के पश्चात् नारी के अधिकारों एवं नारी की स्वतन्त्रता को सीमित करने का जो क्रम शुरू हुआ वह हर्षवर्द्धन के बाद भी कोई एक हजार वर्ष तक निरन्तर चलता रहा। इतने लम्बे समय में मुसलमानों के आक्रमण और उसके परिणामस्वरूप पहले उत्तर भारत में और उसके पश्चात् दक्षिण भारत के अधिकांश भाग पर मुस्लिम आधिपत्य की स्थापना, मुस्लिम संस्कृति के प्रसार विशेषत: पर्दे की प्रथा के प्रचलन से नारी की स्वतन्त्रता पर कुठाराघात हुआ। परन्तु इसी काल में राजपूत और मराठा वीरांगनाओं ने मुसलमानों के आक्रमणों का मुकाबला करके यह भी प्रमाणित किया कि भारतीय नारी देश-प्रेम, आत्म-बलिदान और वीरता में पुरूषों से कम नहीं है। राजवंशों की नारियों ने अपनी शासन-कुषलता का भी परिचय दिया। इसी काल में प्रारम्भ में वैदिक मंत्रों के स्थान पर पौराणिक धर्म के अभ्युदय और बाद में भक्ति सम्प्रदायों के आविर्भाव और प्रचार के परिणामस्वरूप नारी को आध्यात्मिक बल प्राप्त हुआ तथा विकास की एक नई दिशा प्राप्त हुई। यद्यपि शिक्षा के अभाव के कारण अधिकांश नारियाँ निरक्षर रह गई, फिर भी जिन परिवारों में शिक्षा का क्रम अविच्छिन्न रहा उनमें संस्कृत, प्राकृत और प्रादेशिक भाषा की विदुषियाँ और कवियित्रियाँ हुई।

3. ब्रिटिश काल में नारी शिक्षा की स्थिति- सन् 1854 से 1882 तक – सन् 1854 के शिक्षा सुधार के बाद नारी शिक्षा के क्षेत्र में काफी जागृति उत्पन्न हो चुकी थी। स्त्रियों को प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने पर जोर डाला गया। कई संस्थाएँ आगे आई जिन्होंने लड़कियों की बुनियादी शिक्षा के लिए खुलकर अनुदान दिया। एक अंग्रेज महिला समाज सुधारक मैरी कारपेंटर ने यह अनुभव किया कि स्कूली शिक्षा के साथ-साथ महाविद्यालय की शिक्षा भी आवश्यक है। उनके प्रयासों से महिलाओं के लिए पहला प्रशिक्षण महाविद्यालय खोला गया।

सन् 1882 से 1902 तक – 1882-83 में इडियन एजूकेशन कमीशन स्थापित हुआ। लॉर्ड रिपन ने इसे डब्ल्यू.डब्ल्यू. हंटर की अध्यक्षता में नियुक्त किया था। इस आयोग का गठन प्राथमिक शिक्षा के विकास की जानकारी लेने व इसके विस्तार और इसमें सुधार के लिए सुझाव देने के लिए किया गया। हण्टर आयोग ने यह सुझाव दिया था कि पब्लिक फण्ड का अधिकांश भाग नारी शिक्षा में लगाना चाहिए और उसके लिए उदारतापूर्वक सहायक

* प्राचार्य, मौलाना आजाद कॉलेज, देवास (म.प्र.) भारत

अनुदान देना चाहिए। परिणामस्वरूप 1902 के अंत तक 12 महिला कॉलेज, 468 सैकण्डरी स्कूल, 5650 प्राथमिक स्कूल तथा 45 प्रशिक्षण संस्थाएँ (नारीयों के लिए) स्थापित किए जा चुके थे। सन् 1901-02 में 76 नारियाँ मेडिकल कॉलेजों में थी और 166 मैकेनिकल स्कूलों में थी।

सन् 1902 से 1921 तक – सन् 1902 से 1921 तक के काल में शिक्षा के प्रति काफी जागरूकता उत्पन्न हो चुकी थी। परिणामस्वरूप शिक्षा के सभी क्षेत्रों में स्त्रियों ने प्र्याप्त प्रगति की। सन् 1916 में स्त्रियों के लिए पहला मेडिकल कॉलेज, लेडी हार्डिंग कॉलेज, दिल्ली की स्थापना हुई और इसी वर्ष मुंबई में महिला विश्वविद्यालय (एस.एन.डी.टी.) की भी स्थापना की गई। इस काल में 19 महाविद्यालय, 675 उच्चतर माध्यमिक विद्यालय और 21,956 प्राथमिक विद्यालय थे। 1901-02 में प्राथमिक कक्षाओं में लड़कियों का नामांकन 3.45 लाख था, यह सन् 1922 में बढ़कर 11.99 लाख हो गया। माध्यमिक कक्षाओं में भी लड़कियों की प्रवेश संख्या में बढ़ोत्तरी हुई।

सन् 1922 से 1947 तक – इस काल में नारी शिक्षा के क्षेत्र में पर्याप्त उन्नति हुई। महात्मा गाँधी की शिक्षा के क्षेत्र में प्रभावशाली भूमिका, भारतीय नारियों में जागरूकता, वैवाहिक अवस्था में सुधार तथा प्रान्तीय स्वायत्तता (1937) के कारण नारी शिक्षा के प्रति अनुकूल स्थितियाँ पैदा हो गई। 1946-47 में प्राथमिक शिक्षा में छात्रा नामांकन की संख्या 12 लाख से बढ़कर 35 लाख तक पहुँच गई। इस समय उच्च शिक्षा में प्रवेश की गति काफी तेज रही। इस काल में लड़कियों के लिए शिक्षण संस्थाएँ इस प्रकार थी- 21479 प्राथमिक स्कूल, 2370 माध्यमिक स्कूल, 4288 व्यावसायिक एवं तकनीकी संस्थाएँ, 59 आर्ट्स और विज्ञान कॉलेज थे। इस काल में सह-शिक्षा की प्रवृत्ति का भी विकास हुआ। सन् 1947 में 50 प्रतिशत लड़कियाँ मिश्रित स्कूलों में ही शिक्षा प्राप्त करती थी।

4. स्वतंत्र भारत में नारी शिक्षा की स्थिति – भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात नारियों की शिक्षा की स्थिति में क्रान्तिकारी सुधार हुआ। भारतीय संविधान में कानून की दृष्टि से स्त्री व पुरूष को समानता की दृष्टि से एक माना गया। एक परिवर्तन यह हुआ कि हिन्दुओं के विवाह, विवाह-विच्छेद और उत्तराधिकार आदि के सम्बन्ध में कानून पारित करके स्त्रियों के साथ सदियों से होने वाले सामाजिक और आर्थिक अन्याय का सिद्धान्तत: अन्त कर दिया गया। इन व्यवस्थाओं के परिणामस्वरूप नारी की आर्थिक परतन्त्रता कम हुई, तथा परिवार एवं समाज में स्त्री का सम्मान बढ़ा। व्यस्क मताधिकार की प्राप्ति से राजनीतिक क्षेत्र में भी नारी का महत्व बढ़ा जिससे नारियाँ राष्ट्र के ऊँचे से ऊँचे पदों पर आसीन होने लगी हैं। यद्यपि स्वतन्त्रता के पश्चात् स्त्रियों की शिक्षा में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है लेकिन फिर भी अधिकांश नारियाँ शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ी हुई हैं तथा उदार, सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्थाओं से पूरा लाभ नहीं उठा पा रही हैं, फिर भी जहाँ तक शिक्षित मध्यमवर्गीय और उच्चवर्गीय नारियों का सम्बन्ध है, वे आत्मविष्वास और गर्व के साथ सिर ऊँचा किये जीवन के संघर्ष में हिस्सा ले रही हैं तथा राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में पुरूषों के साथ प्रतियोगिता कर नारी जाति और देश के गौरव को बढ़ा रही हैं।

5. वर्तमान में नारी शिक्षा की स्थिति-स्वतन्त्रता प्राप्ति के 63 वर्षों में देश ने शिक्षा के क्षेत्र में निरन्तर प्रगति की है। सन् 1881-82 में जहाँ नारी शिक्षा का प्रतिशत 0.2 था। वही सन् 1997 में 6.00 प्रतिशत हो गया। सन् 1951 में महिलाओं की शिक्षा दर 7.9 प्रतिशत रही, वहीं वर्ष 1981 में 24.2 प्रतिशत (पुरूषों की तुलना में आधा) तक पहुँच गया। वर्ष 1990-91 के दौरान कुल शिक्षार्थियों में लड़कियों का अनुपात प्राथमिक स्तर पर 41.4 प्रतिशत, माध्यमिक स्तर की शिक्षा में 37.4 प्रतिशत तथा उच्चतर माध्यमिक शिक्षा में 33 प्रतिशत तथा उच्चतर शिक्षा में 33.3 प्रतिशत था।

निष्कर्ष के रूप में यह कहॉ जा सकता है कि विभिन्न कालो में नारी शिक्षा की जो प्रगति हुई उसके परिणामस्वरूप नारी के लिए बहुमुखी प्रगति का रास्ता खुल गया। मध्यम वर्ग की शिक्षित नारियों ने इस व्यवस्था का पूरा-पूरा लाभ उठाया। वर्तमान में सरकारी व गैर-सरकारी क्षेत्र का शायद ही कोई कार्यालय, उद्योग, व्यवसाय और कारखाना होगा जहाँ नारियाँ ऊँचे से ऊँचे पदों पर कार्य न कर रही हों। नारियाँ पहले की तरह अध्यापिकाएँ ही नहीं, बल्कि क्लर्क, स्टेनोग्राफर, टेलीफोन ऑपरेटर, स्वागत अधिकारी, डॉक्टर, वकील, जज, मजिस्ट्रेट, इंजीनियर, प्रबन्धक, पायलेट, सेना अधिकारी, राजदूत आदि के रूप में बड़ी कुशलता से कार्य कर रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. स्त्री शिक्षा सुमेधा पाठक - अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।
2. स्त्री शिक्षा अमृता सिंह - अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।

****

शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति एक अध्ययन (उज्जैन संभाग के विशिष्ट संदर्भ में)

डॉ. पंकजा सोनवलकर * प्रतीक्षा पाठक **

प्रस्तावना – शिक्षा व्यक्तित्व विकास की एक ऐसी प्रक्रिया है जो सभी प्रकार के अवांछित परिवर्तनों से समाज को बचाती है। मानव को मानव बनाने की दृष्टि से शिक्षा निर्विवाद है। शिक्षा वृक्ष की भाँति होती है जो अपने जीवन की लय के साथ ताल मिलाकर उसके अनुरूप विकसित होती है।(रवीन्द्रनाथ टैगोर)

शिक्षा प्रत्येक राष्ट्र की समृद्धि और शक्ति का आधार तथा वहाँ के समग्र विकास का मापदण्ड है। इस विकासगामी प्रक्रिया के मानक वहाँ की सामाजिक, आर्थिक सांस्कृतिक और राजनैतिक क्षेत्रों में उच्चकोटि की संतुलित सफलता तो है ही साथ ही साथ वर्तमान परिदृश्य की चुनौतियों का सामना करने की ठोस तैयारी सम्मिलित है। जिससे उस राष्ट्र के स्थापित, निर्धारित उद्धेश्य पूर्णत: प्राप्त किये जा सके। राष्ट्रीय विकास के कारकों में वहाँ की शिक्षा के स्तर के पाँच घटक- ज्ञान, कौशल, सही निर्माण लेने की क्षमता, जीवन मूल्य तथा पाठ्यचर्चा आवश्यक रूप से सम्मिलित किये जाते है तभी राष्ट्र की जीवनशैली तथा वहाँ के लोगों में जीवन मूल्य निर्मित तथा प्रतिष्ठित होते है।

भारत में शिक्षा की परंपरा बहुत प्राचीन है। इसका प्रांरभ कब हुआ आज तक यह निश्चित रूप से बता पाना संभव नहीं है। किन्तु ज्ञान का चिरस्थायी एवं शक्तिशाली प्रभाव वैदिककाल से माना गया है। डॉ. टॉमस के अनुसार भारत में शिक्षा कोई नई बात नहीं है, संसार का कोई भी देश ऐसा नहीं है जहाँ ज्ञान के प्रेम का उद्‌गम इतना प्राचीन हो तथा उसका प्रभाव इतना सशक्त हो। वैसे सुदीर्धकाल से भारत में शिक्षा से तात्पर्य वैदिक शिक्षा था जहाँ महिलाएँ पुरूषों के समकक्ष बिना भेदभाव के शिक्षा प्राप्त करती थी और अपने सद्‌गुणों के कारण ऋषिकाओं के रूप में भी ख्यात हुई।

समय-समय पर शिक्षा के उद्देश्यों में कई कारणों से परिवर्तन हुए तथा उनके अनुसार वहाँ की महिलाओं ने सभी प्रकार की शिक्षा प्राप्त कर अपने अस्तित्व को प्रमाणित किया है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जहाँ प्रति पल वैचारिक परिवर्तनों द्धारा पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक सभी क्षेत्रों मे क्रांति परिलक्षित हो रही है तथा विकास को नित नये स्वरूप में परिभाषित किया जा रहा है वहीं महिलाएँ जो परिवार, समाज की धुरी हैं, अपनी प्रबल इच्छा शक्ति से शिक्षा के हर आयाम को प्राप्त कर अपने उच्चतम गुणों से शिक्षा को समृद्धि प्रदान कर रही है। शिक्षित महिलाएँ वास्तव में शिक्षा के विकास की वाहिनिकाएँ होती है उन्हीं से परिवार में संस्कारों को परिष्कृत, पल्लवित व पोषित कर पीढ़ी दर पीढ़ी से प्रेषित किया जाता है। इस प्रकार महिलाएँ जीवन के सभी क्षेत्रों के उन्नयन हेतु या कहें कि उनके जीवन के उत्पादकीय पक्षों के निर्माण में शिक्षा का प्रसार कर हस्तांतरण कर शिक्षा की सार्थकता को प्रमाणित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वर्तमान में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के युग में नित नयी सूचनाएँ एकत्रित कर स्वयं में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित कर प्राचीनकाल से स्थापित की गयी परंपराओं को रूढ़ियों के रूप में नहीं रहने देती। वैज्ञानिक अभिवृत्ति का विकास कर पूर्वजों द्धारा प्रतिष्ठित किये गये जीवन मूल्यों को न्यायोचित सिद्ध करके उनके स्वस्थ निर्वहन की आवश्यकता को प्रतिपादित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाने का सामर्थ्य रखती है। शिक्षा संवेदनशीलता तथा लक्षिकरण को परिमार्जित करती है। जिससे वैज्ञानिक सोच के साथ-साथ मस्तिष्क और आत्मा की स्वतंत्रता को बढ़ावा मिलता है।

इस प्रकार शिक्षित महिलाएँ परिवार, राष्ट्र को एक दृष्टि प्रदान करने में सक्षम है जिससे मानव की मूल प्रवृत्तियों एवं सहज क्रियाओं में परिमार्जन होकर जीवन जीने के सभी कौशल विकसित होते हैं।

शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं की सक्रियता स्वत: प्रमाणित करती है कि समाज के आवश्यक सूक्ष्म परिवर्तनों की वांछनीयता आवश्यकता उन्हीं के द्धारा सही स्वरूप में समझी जाकर उन्हें पूर्ण करने में अपनी केन्द्रीय भूमिका का निर्वहन करती है।

इसी तारतम्य में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में, तकनिकी शिक्षा के क्षेत्र में महिलाओं की दर्ज संख्या एंव सफलतापूर्वक इन शिक्षाओं को प्राप्त कर स्वावलम्बन का संदेश देती इन महिलाओं के उज्जैन संभाग के संदर्भ में गत वर्षो के आँकड़े स्पष्ट करते है कि पुरूष विद्यार्थियों की तुलना में महिला विद्यार्थी संख्या में अधिक है।

सारणी क्रमांक- 1

क्र.	जिले का नाम	महिला विद्यालयों की संख्या	उच्च शिक्षा पूर्ण करने वाली महिलाओं की संख्या
1.	रतलाम	06	4423
2.	शाजापुर	09	3355
3.	नीमच	06	3656
4.	देवास	09	3686
5.	उज्जैन	18	6923
6.	मंदसौर	06	4302

सारणी क्रमांक- 1 में उज्जैन संभाग के सभी जिलो के शासकीय महाविद्यालों में स्नातक तथा स्नातकोत्तर की शिक्षा प्राप्त करने वाली महिला विद्यार्थियों की संख्या विकास की आवश्यकताओं के अनुरूप अनुसंधान के गुण और स्तर में आमूल परिर्वतन कर सुधार कर सामाजिक अभिलाषाओं और आकांक्षाओं की पूर्ति करने के योग्य होगी।

* सहायक प्राध्यापक, शिक्षा महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

परन्तु प्रतिवर्ष प्रवेश लेकर उच्च शिक्षापूर्ण करने वाली वास्तविक संख्या संतोषजनक नहीं कहीं जा सकती क्योंकि उच्च शिक्षा में भी अपव्यय एवं अवरोधन की समस्या है। उच्च शिक्षा में अपव्यय संबधी अध्ययन करते हुए कामत एवं देशमुख (वेस्टेज इन कॉलेज एज्युकेशन, लंदन एशिया पब्लिशिंग हाउस, 1963 पृ.12) ने अपव्यय की परिभाषा में उन विद्यार्थियों को सम्मिलित किया है जिन्होंने कॉलेज के प्रथम वर्ष में प्रवेश लिया पर किसी कारण से कला, विज्ञान या व्यवसायिक पाठ्यक्रम की डिग्री प्राप्त करने से पूर्व ही कॉलेज छोड़ दिया। इस प्रकार के अपव्यय महिला विद्यार्थियों के साथ अधिक होता है क्योंकि परिवार समाज के रीतिरिवाज, रूढ़ियाँ उन्हें उच्च शिक्षा प्राप्त करने में वंचित करते है। एक अध्ययन के अनुसार विज्ञान संकाय में स्नातक एवं स्नातकोत्तर स्तर पर अन्य विषयों की तुलना में महिला विद्यार्थियों में अपव्यय की समस्या अधिक परलक्षित होती है।

उच्च शिक्षा प्राप्त कर पूर्ण करके प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता प्राप्त करने वाली महिलाओं का उज्जैन संभाग का विवरण इस प्रकार है –

सारणी क्रमांक–2

क्र.	जिले का नाम	प्रतियोगी परीक्षाओ में सफलता प्राप्त करने वाली महिलाओ की संख्या
1.	रतलाम	89
2.	शाजापुर	25
3.	नीमच	20
4.	देवास	02
5.	उज्जैन	40

प्रतियोगी परीक्षाओं की ओर प्रेरित करने की दृष्टि से उच्च शिक्षा में विश्वविद्यालय स्तर पर निर्देशन की आवश्यकता परिलक्षित होती है यह सारणी क्रमांक–2 में उज्जैन संभाग के विभिन्न जिलों से महिलाओं का प्रतियोगी परीक्षाओं की ओर उन्मुख होने को इंगित करता है। इन उपरोक्त जिलो में प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी हेतु संसाधनों की उपलब्धता अपेक्षानुरूप नहीं है यह सर्वविदित है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने बहुत पहले से विभिन्न विश्वविद्यालयों में ऐकेडेमिक स्टॉफ कॉलेज खोलने की योजना शुरू की थी। कई संस्थाओं का चयन अभिनवन पाठ्यक्रम केन्द्र (रिफ्रेशर कोर्स सेन्टर) के रूप में किया गया है इन सभी जगहों पर कई प्रबोधन पाठ्यक्रम (ओरिएन्टेशन कोर्स) आयोजित किये जाते है। साथ ही सबसे महत्वपूर्ण पक्ष विषयों का चयन होता है। इसके लिये कुछ ही विश्वविद्यालयों में इसके लिये मार्गदर्शन का प्रावधान है। उपरोक्त आँकड़ों में प्रतिवर्षानुसार वृद्धि प्रत्येक महाविद्यालय स्तर पर केरियर मार्गदर्शन के प्रकोष्ठों द्वारा की जा सकती है।

परीक्षाओं में सफलता की स्थिति के बाद प्रशासनिक अधिकारियों में प्रथम श्रेणी व द्वितीय श्रेणी अधिकारियों के रूप में कार्यरत महिलाओं के विवरण पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि यहाँ के सभी जिलो में कार्य करने वाली महिलाओं की प्रतिशत संख्या रेखांकित की जाने योग्य है। यदि अवसर और संसाधनों का संतुलन, उत्तम होगा तो इस प्रतिशत में बढ़ोत्तरी संभव है।

सारणी क्रमांक–3

क्र.	जिले का नाम	प्रशासनिक अधिकारी के रूप में कार्य करने वाली महिलाओं का कुल प्रतिशत	
		प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी
1.	उज्जैन	46.43	42.50
2.	देवास	37.50	38.85
3.	शाजापुर	28.26	25.00
4.	रतलाम	29.41	38.14
5.	मंदसौर	24.19	15.54
6.	नीमच	30.00	18.56

वर्तमान स्थिति के अनुरूप महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति, बौध्दिक क्षमता को केन्द्र में रखते हुए उनके निर्णय लेने की क्षमता, नीति निर्धारण में स्वतंत्रता विकसित कर उन्हें उत्साहवर्धक पारिवारिक, सामाजिक व प्रशासनिक वातावरण सुलभ कराया जाना आवश्यक है तभी वे अपने अधिकारों का वास्तविक ज़मीन पर उपयोग कर राष्ट्र विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान देने में सक्षम होगी।

महिलाओं का प्रत्येक स्तर पर अथवा कार्यानुभव और व्यवसायिकरण के भाग के एक रूप में विभिन्न प्रकार की व्यवसायिक प्रशिक्षण प्रविधियों से अवगत कराने के सतत् प्रयास किये जा रहे है लगभग 100 से अधिक औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान केवल महिलाओं के लिये हैं जिनका उद्धेश्य तकनीकी शिक्षा में महिलाओं का प्रवेश गुणात्मक एवं संख्यात्मक रूप से बढ़ाना हैं।

उज्जैन संभाग में कौशल विकास हेतु कुल 27 ओद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाएँ संचालित हैं जिनमें गतवर्षो में अध्ययनरत महिलाओं की संख्या एवं उनकी प्रतिशतता सारणी क्रमांक–4 में स्पष्ट है –

सारणी क्रमांक–4

क्र.	जिले का नाम	संस्थाओं की संख्या	अध्ययनरत महिला प्रशिक्षणार्थियों की संख्या	प्रतिशत
1.	उज्जैन	05	188	18.00
2.	देवास	04	116	14.18
3.	रतलाम	05	284	35.99
4.	मंदसौर	06	31	06.64
5.	नीमच	04	29	03.28
6.	शाजापुर	02	39	11.11
7.	सुसनेर	01	06	14.29

औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों में महिलाओं की कुशलताओं जैसे रिपेयर एवं मेंटेनेन्स ऑफ इलेक्ट्रिकल इन्स्ट्रूमेन्टस विकसित होकर सोच वैज्ञानिक हो जाती है। सारणी क्रमांक–4 से ज्ञात होता है कि औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं में महिलाओं की संख्या में वृद्धि सुसमन्वित प्रबंध व्यवस्था से किया जा सकता हैं। जिससे समाजोपयोगी उत्पादक कार्य को असली जामा पहनाया जा सके।

व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त कर महिलाएँ अपना रोजगार स्वयं स्थापित कर सके ऐसा प्रावधान राष्ट्रीय शिक्षा नीति द्वारा प्रारंभ से ही प्रमुखत: रखा गया है तथा इस कार्यक्रम को गतिशीलता देने के लिये अनौपचारिक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को भी शिक्षा की मुख्यधारा में सम्मिलित करने की योजना बनाई गयी और इस दृष्टि से औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं, पॉलीटेक्निक कॉलेजों के उद्धेश्यों एवं कार्यक्षेत्रों को स्पष्ट रूप से परिभाषित करने का प्रयास किया गया तथा इस संबंध में यह निश्चित किया गया कि ये प्रशिक्षण संस्थान संगठित उद्योग के क्षेत्रों की आवश्यकताएँ पूरी करेगें साथ ही इस बात पर भी जोर दिया गया कि विभिन्न सरकारी विभागों तथा सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग प्रतिष्ठानों में प्रचलित नियुक्ति प्रक्रिया में व्यवसायिक शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों

को नौकरी में वरीयता दी जायेगी साथ ही उन्हें सामान्य तकनीकी एवं उच्च स्तरीय व्यवसायों के पाठ्यक्रमों में प्रवेश मिल सकेगा।

उज्जैन संभाग में जहाँ महिलाएँ परिवारत या अन्य उद्योग केन्द्रों पर कुशलतापूर्वक कार्य करते हुए अपने कौशलों को प्रमाणित कर रही है वहीं स्वयं उनके द्वारा स्थापित उद्योग इकाईयाँ सफलता पूर्वक संचालित भी कर रही है। उद्योग प्रत्येक राष्ट्र के विकास में महत्वपूर्ण व मापको में से एक माप है। महिलाओं द्वारा उज्जैन संभाग में दिया जाने वाला योगदान तथा उनके द्वारा किया जा रहा पूँजी निवेश का विवरण सारणी क्रमांक-5 से स्पष्ट है-

सारणी क्रमांक-5

क्र.	जिले का नाम	महिला उद्यमियों की संख्या	पूँजी निवेश (लाख रू. में)
1.	उज्जैन	24	09.43
2.	रतलाम	41	42.00
3.	मंदसौर	77	08.44
4.	नीमच	57	133.38
5.	शाजापुर	15	196.99
6.	देवास	57	08.05
	कुल	271	398.29

इन आँकड़ों के अनुसार कहा जा सकता है कि महिला उद्यमियों की संख्या छोटे उद्योग समूहों से लेकर वृहत उद्यागों तक आश्चर्यजनक है। वैसे भी ग्रामीण क्षेत्र में शहरों तक एक सर्वे के अनुसार उद्योगों से जुड़ी महिलाओं की संख्या पुरूषों से अपेक्षाकृत अधिक है ओर इसके कारण महिलाओं का कार्य के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण, कार्य करने के समय की अधिकता अर्थात प्रत्येक दिन कार्य घंटे अधिक, कार्य के प्रति संवेदनशीलता कार्य करने की अधिक कुशलता तथा समायोजन सामर्थ्य के साथ उद्योगों के प्रबंधन की विशेषताएँ है। इसका प्रमाण कृषि के क्षेत्र में कारखानों में कामकाजी महिलाओं की बढ़ती संख्या मानी जा सकती है।

महिलाओं को यदि रोजगार उद्योगों, कृषि तथा अन्य सार्वजनिक उपक्रमों में भागीदारी बढ़ाने हेतु आत्मश्विास में वृद्धि की जाये तो ये देश की अर्थव्यवस्था को और अधिक मजबूती प्रदान करेगी।

चूँकि उज्जैन संभाग म.प्र. के मालवा का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। साहित्य, संगीत की प्राचीन प्रतिष्ठित परम्परा के साथ श्रीकृष्ण की शिक्षा स्थली का गौरव इसे प्राप्त है। यह आज म.प्र. की एक प्रमुख सांस्कृतिक नगरी है। इसके स्थापित संस्कारों का निर्वहन करने में यहाँ की महिलाओं का उच्च शिक्षा के क्षेत्र में, प्रतियोगी परीक्षाओं की सफलता में प्रशासनिक क्षेत्र में, बुनियादी तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में उद्यमिता विकास में योगदान महत्वपूर्ण प्रमाणित होता है।

उज्जैन संभाग में शिक्षा के विभिन्न आयामों में महिलाओं की स्थिति में और अधिक प्रगति संभावित है। शिक्षा के उपरोक्त आयाम महिलाओं द्वारा प्राप्त कर लिये जाते है वे निश्चित ही विकास जैसी बहुदिशीय प्रकिया की संतुलित समन्वित रूप से संचालित कर उनका प्रबंधन कर पाने में सक्षम है। महिलाएँ एक महत्वपूर्ण मानवीय संसाधन है अर्थात राष्ट्र की सम्पदा है जिनका राष्ट्र के विकास के निर्धारको के संरक्षण एवं प्रबंधन में महत्वपूर्ण योगदान है। यदि उन्हें अपनी महत्वाकांक्षाऐं साकार करने में, अपनी नेतृत्व क्षमता विकसित करने में, परिवेश के प्रति अपनी संवेदनशीलता को समझकर निर्णय लेने में पूरा-पूरा सहयोग दिया जायेगा तब निश्चित ही है कि वे समाज में अपनी शिक्षा से सूक्ष्म से सूक्ष्म सकारात्मक परिवर्तन करने में अपनी महत्ता सिद्ध करेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूंची :-

1. विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी 2011 रविन्द्रनाथ का शिक्षा दर्शन प्रकाशन अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक संघ।
2. रामानंद मिश्र 2010 भारतीय शिक्षा के प्रर्वतक प्रकाशक - मै. आर.एस.ए. इन्टरनेशनल डॉ. रांगेय राधव मार्ग, आगरा-2
3. मंजरी सिन्हा, डॉ. आई.एस. सिन्धू निकासोन्यमुखी भारतीय समाज में शिक्षा तथा शिक्षक की भूमिका श्री विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा-2
4. पी.डी. पाठक, भारतीय शिक्षा ओर उनकी समस्याएँ, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
5. डॉ. रामशकल पांडेय शैक्षिक निबंध श्री विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

****

ग्रामीण क्षेत्र में शासकीय माध्यमिक विद्यालय के अल्पसंख्यक छात्र व छात्राओं के संज्ञानात्मक व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. नीलम महाडिक *

प्रस्तावना – अल्पसंख्यकों के कुछ वर्ग मुख्यत: मुस्लिम वर्ग तालिमी दौड़ में काफी पिछड़े तथा वंचित हैं। अत: सामाजिक न्याय और समता का तकाजा है कि ऐसे वर्गों की शिक्षा का समुचित ध्यान दिया जाये। इस उद्देश्य हेतु प्रस्तुत अध्ययन में मुस्लिम वर्ग के विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया। ज्ञानात्मक ज्ञान और भावात्मक स्पंदनशीलता को ही संज्ञानात्मक ज्ञान कहा जाता है और विद्यार्थी मन में दोनों की क्रियाशीलता का व्यवहारिक परिलक्षण संज्ञानात्मक व्यवहार होता है। शिक्षा में ज्ञानात्मक एवं भावात्मक दोनों प्रकार के विकास सहयोगी होते हैं। पाठ्यक्रमों का निर्माण करते समय विभिन्न आयु के बालकों के संज्ञानात्मक क्षमता की जानकारी रखना आवश्यक है। पाठ्यचर्चा का निर्माण करते समय हर अवस्था के बालक की रूचि, अभिरूचि, स्मृति और कल्पना शक्ति, चिन्तन एवं तर्क शक्ति भाषा ज्ञान और प्रत्ययों के निर्माण की क्षमता आदि का अध्ययन कर लेना चाहिये।

संज्ञानात्मक क्षमता एवं उसके विकास की गति एवं स्वरूप का अध्ययन शिक्षण कार्य को भी प्रभावित करता है। प्रत्येक बालक के लिये अध्यापक एक ही शिक्षण प्रणाली का प्रयोग नहीं कर सकता। एक ही अवस्था के कुछ बालकों की सोचने–समझने एवं चिन्तन करने की शक्ति मन्द होती है और कुछ की तीव्र होती है। शिक्षण कार्य इन वैयक्तिक विभिन्न्ताओं को ध्यान में रखते हुए ही किया जाना चाहिये।

शोध विधि – प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का चयन किया गया इसका कार्य क्षेत्र प्रदत्तों का संग्रहीकरण एवं सारणीबद्ध करने के अतिरिक्त व्याख्या, मूल्यांकन, वर्गीकरण, तुलना तथा सामान्यीकरण करना भी है। इसके द्वारा विस्तृत क्षेत्र के आँकड़ों का संग्रह सरलता से किया जा सकता है।

उपकरण – इस शोध कार्य के लिए स्वनिर्मित उपकरण का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य –अल्पसंख्यक समुदाय के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों एवं छात्राओं के संज्ञानात्मक व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन करना।

प्राक्कल्पना – अल्पसंख्यक समुदाय के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों की तुलना में छात्राओं का संज्ञानात्मक व्यवहार अधिक विकसित होगा।

निष्कर्ष :अल्पसंख्यक समुदाय के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों की तुलना में छात्राओं का संज्ञानात्मक व्यवहार अधिक विकसित है।

ग्रामीण क्षेत्र में शासकीय माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों का संज्ञानात्मक व्यवहार (देखे अगले पृष्ठ पर)

ग्रामीण क्षेत्र के शासकीय माध्यमिक विद्यालय में अध्ययनरत मुस्लिम समुदाय की छात्राओं में अवधारणा का प्रतिशत 60.4 है जबकि छात्रों में 53.6 प्रतिशत ही है इसी प्रकार छात्रों में चिन्तन की क्षमता 50.4 प्रतिशत है जबकि इससे अधिक छात्राओं में 61.6 प्रतिशत चिन्तन करना पाया गया।

छात्राओं में तर्कशक्ति 47.2 प्रतिशत स्मृति 51.6 प्रतिशत पाई गयी किन्तु छात्रों में तर्कशक्ति व स्मृति छात्राओं की अपेक्षा कम पाई गई जो क्रमश: 42 प्रतिशत व 42.4 प्रतिशत रही।

स्पष्ट है कि ग्रामीण शासकीय के कुल न्यादर्श में मुस्लिम समुदाय के छात्रों में संज्ञानात्मक व्यवहार 47.6 प्रतिशत ही रहा जबकि छात्राओं में 55.2 प्रतिशत संज्ञानात्मक व्यवहार देखा गया जो कि छात्रों से अधिक पाया गया।

ग्रामीण क्षेत्र में शासकीय माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों का संज्ञानात्मक व्यवहार (ग्राफ देखे अगले पृष्ठ पर)

सुझाव –

विद्यालय को सुझाव –

1. विद्यालयों में स्वच्छ वातावरण निर्मित करना चाहिए।
2. रचनात्मक कार्यों के लिए भी विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करना चाहिए।
3. समय–समय पर विद्यालय में सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता का आयोजन करना चाहिए।
4. व्यायाम–योग खेलकूद आदि विद्यालय में प्रारम्भ करना चाहिए।
5. प्रशासन द्वारा चलाई जा रही अल्पसंख्यक योजनाओं की पूर्ण जानकारी विद्यार्थियों को देनी चाहिए।

प्रशासन को सुझाव –

1. प्रशासन को चाहिए कि वे अल्पसंख्यक विद्यार्थियों के विकास हेतु जो भी योजनाएँ प्रारम्भ कर रही है उन योजना के उद्देश्यों का व्यापक प्रचार– प्रसार करें ताकि योजना की जानकारी इन विद्यार्थियों तक पहुँच सके।
2. प्रशासन को चाहिए कि वो विद्यालय के वातावरण निर्माण हेतु विशेष ध्यान दें ताकि विद्यार्थियों के मानसिक विकास में इसका उचित प्रभाव परिलक्षित हो सके।
3. विद्यालय को शिक्षण–सामग्री उपलब्ध कराना चाहिए।

* सहायक प्राध्यापक , भारतीय महाविद्यालय,उज्जैन (म.प्र.) भारत

4. भौतिक संसाधनों की पूर्ति विद्यालयों में करना चाहिए।

अभिभावकों को सुझाव –

1. प्रत्येक माता–पिता की इच्छा होती है कि उनकी संतान का मानसिक विकास उत्तम हो इसलिए उन्हें प्रारंभ से ही बच्चों की शारीरिक व मानसिक रूप से उचित देखभाल करना चाहिए।
2. परिवार व पड़ोस के वातावरण का ध्यान रखना चाहिये जिससे बच्चे के मानसिक विकास पर अच्छा प्रभाव पड़े।
3. बच्चों के दोस्तों की जानकारी भी माता–पिता को होना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Sharma Nalin : Minority politics in India, Roll and Inpact of Kiswan in Panjub politics Book ; Sera Publishars.
2. Sethi D.L. Mahajan, (1964) : Minority Identics and the Session Stant, Oxford, University.
3. Walter, R. Borg, & Agrawal.I.C., (1975): Educational Research, New York, Comgan Inc.
4. J.M. Malastead, Education of Muslim children in the U.K.: Critical analysis.
5. अग्रवाल जे.सी. (2007):इसेशनल ऑफ एज्यूकेशनल साइकोलॉजी, नई दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि.।
6. अस्थाना विपिन एवं श्वेता (2007)मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन, आगरा, विनोद पुस्तक मंदिर।
7. चित्तौड़ा, डॉ.शशि एवं जरसावत, हरिशचन्द्र (2007) बालविकास एवं शिक्षा मनोविज्ञान, जयपुर; कल्पना पब्लिकेशन।
8. जैन, गोपाल, लाल (2009): आधुनिक शोध प्रणाली, जयपुर श्रीनिवास पब्लिकेशन्स, प्रथम संस्करण।
9. बीना,डॉ. आनन्द डॉ.वशा आनन्द डॉ.बानी (2002):संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, दिल्ली; मोतीलाल बनारसीदास।
10. सिंह.अरूण कुमार (2006) :संज्ञानात्मक मनोविज्ञान नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास।

ग्रामीण क्षेत्र में शासकीय माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों का संज्ञानात्मक व्यवहार

विद्यालय का क्षेत्र	शासकीय माध्यमिक विद्यालय	छात्रा	302 (60.4%)	308 (61.6%)	276 (55.2%)	236 (47.2%)	258 (51.6%)	1380 (55.2%)
संज्ञानात्मक व्यवहार ग्रामीण क्षेत्र		छात्र	248 (53.6%)	268 (50.4%)	252 (50.4%)	210 (42%)	212 (42.4%)	1190 (47.6%)

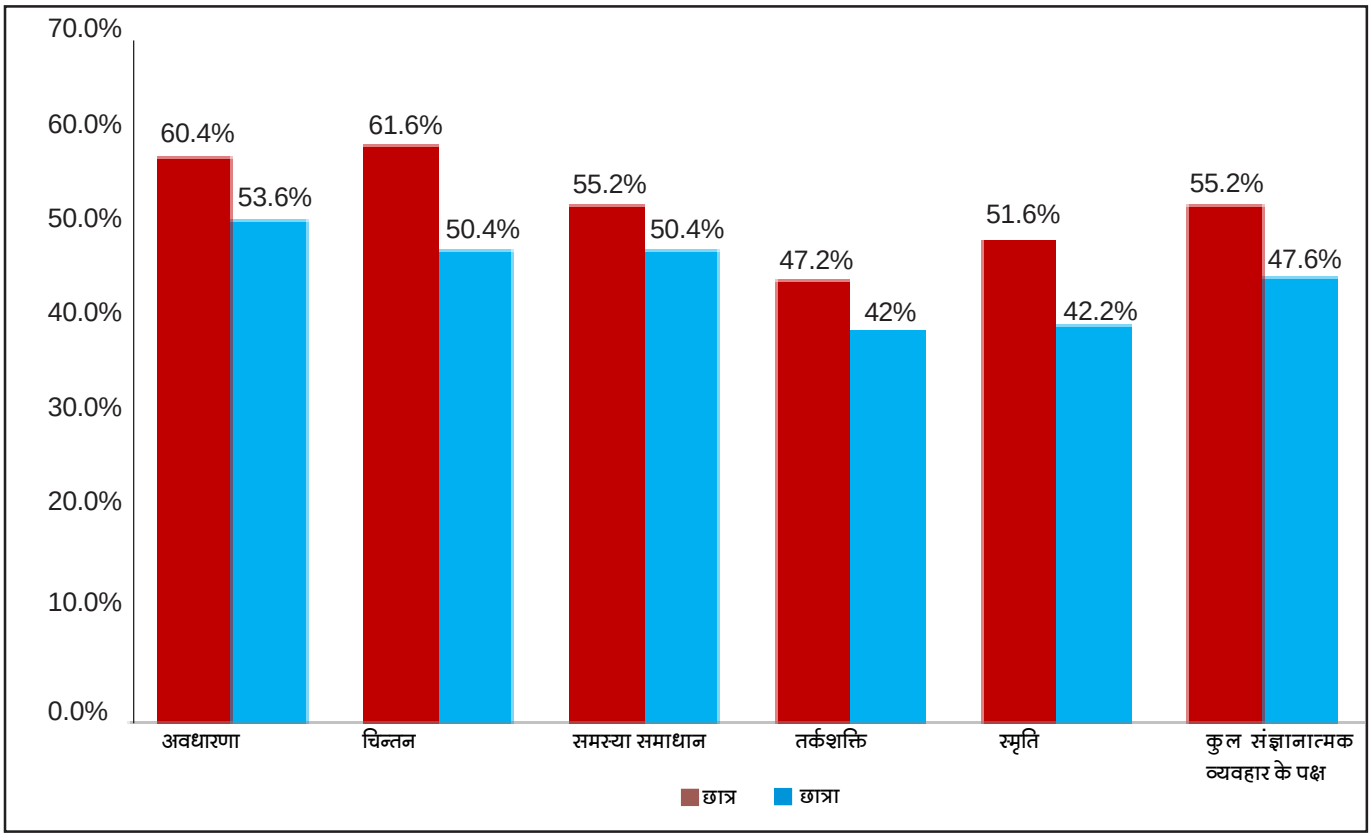

****

शिक्षण - अधिगम में जनसंचार माध्यमों की भूमिका

डॉ. रश्मि पाण्ड्या *

शोध सारांश – शिक्षण के द्वारा व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास होता है और अधिगम के द्वारा व्यक्तित्व में ज्ञान, अवबोध व कौशल विकसित होते हैं। अत: शिक्षण के साथ अधिगम का विशेष महत्व है। इसी शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को सहज व सरल बनाते हैं , जनसंचार माध्यम। इन्हीं की महती भूमिका पर यह लेख आधारित है।

प्रस्तावना – शिक्षण एक कला है। ऐसी कला जिसके द्वारा व्यक्तित्व को गढ़ा जाता है। अत: एक कुशल शिक्षक के लिए शिक्षण के साथ-साथ अधिगम के उद्देश्य भी पूर्ण करना नितांत आवश्यक है क्योंकि शिक्षण का अधिगम से सीधा संबंध है। जहाँ शिक्षण होगा वहाँ अधिगम भी होगा किन्तु अधिकांश अधिगम बिना शिक्षण के भी होता है। इस प्रकार शिक्षण व अधिगम में प्रत्यक्ष सम्बन्ध है इसलिये मनोवैज्ञानिकों ने अधिगम-सिद्धान्तों के साथ-साथ शिक्षण-सिद्धान्तों का भी विकास किया।

हम जानते हैं कि व्यक्ति का वास्तविक विकास अधिगम पर आधारित है। जब एक शिक्षक शिक्षण करवाता है तब शिक्षण का मुख्य उद्देश्य बालक को सिखाना ही होता है। इस शिक्षण के माध्यम से बालक ज्ञान, अवबोध, कौशल इत्यादि को गृहण करता है। इस प्रकार सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया बालक के अधिगम की ओर केन्द्रित होती है।

इस शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को सहज व सरल बनाने का कार्य आज जनसंचार माध्यमों के कंधों पर अधिक है क्योंकि ये संचार क्रांति सम्पूर्ण विश्व में इस हद तक फैल चुकी है कि शिक्षा का क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं रहा है। इन माध्यमों द्वारा शिक्षण, अधिगम को सरल बना रहा है।

जनसंचार माध्यम विज्ञान तथा सूचना तकनीकी की देन हैं तथा जिनका प्रभाव जन-जन तक एक ही समय में पड़ता है। इन माध्यमों में मुख्य रूप से समाचार-पत्र, स्लाइड, पोस्टर्स, रेडियो व टेलिविजन आते हैं। इन्हें हम व्यापक जनसंचार के माध्यम कहते हैं जिनकी पहुँच आम जनता तक होती है। जनता द्वारा स्वतंत्र रूप से सोचने, तथ्यों का विश्लेषण करने और स्वयं निर्णय करने में ही लोकतंत्र की सफलता अंतर्निहित है। जनसंचार माध्यम का औपचारिक तथा अनौपचारिक शिक्षा दोनों में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है।

जनसंचार माध्यमों का आरम्भ मनोरंजन की दृष्टि से किया गया था परन्तु आज ये माध्यम हमारी शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का आवश्यक अंग बन गए हैं।

जनसंचार माध्यमों के शैक्षिक कार्य – (देखे अगले पृष्ठ पर)

जनसंचार माध्यमों के अन्तर्गत आने वाले टेलिविजन माध्यम का आज कोई भी विकल्प नहीं है। हाँ, इंटरनेट के जाल ने इन दिनों टीवी के लिये खतरा उत्पन्न कर दिया है परन्तु गरीब वर्ग के लिये टीवी और रेडियो ही मुख्य रूप से सूचना, मनोरंजन व शिक्षा के साधन हैं।

जनसंचार माध्यमों की इस अनोखी व चकाचौंध वाली दुनियाँ का प्रथम आकर्षण 'रेडियो' ही था। इस रेडियो की शुरुआत के रूप में 1864 में केम्ब्रिज जेम्स मैक्सवेल द्वारा प्रारम्भिक प्रयोग किया गया था। तब से लेकर आज 2015 तक 100 से भी ज्यादा एफ.एम. रेडियो चैनल उपलब्ध हैं। जनसंचार माध्यम के रूप में रेडियो एक कम खर्चीला साधन है। एक ही समय में लाखों छात्र विभिन्न स्कूलों तथा स्थानों पर रहने वाले, इसके द्वारा प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों से लाभान्वित हो सकते हैं। नयी योजनाएँ जैसे - खुला (मुक्त) विश्वविद्यालय, खुला स्कूल, पत्राचार शिक्षा तथा दूरगामी शिक्षा आदि को क्रियान्वित करने के लिए यह एक किफायती, सरल तथा प्रभावशाली साधन सिद्ध हो सकता है।

महान् विद्वान श्री आर. जी. रेनॉल्ड ने रेडियो की शिक्षण प्रक्रिया में उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए लिखा है - 'रेडियो शिक्षा का बहुत ही महत्त्वपूर्ण साधन है। कक्षा-शिक्षण के पूरक रूप में इसकी सीमाएँ बहुत बढ़ जाती हैं। इसकी शिक्षण सम्भावनाएँ स्कूल दिवस के पाँच या छ: घण्टे तक ही सीमित नहीं है। वह प्रात:काल से रात तक उपलब्ध रहता है। रेडियो द्वारा प्रदत्त शैक्षिक तथा सांस्कृतिक उपहार दूर स्थित समुदायों के प्रौढ़ों तथा बालकों को संसार के कला और ज्ञान के उत्तम भण्डार से परिचित कराता है। किसी दिन शैक्षिक उपकरण के रूप में इसका प्रयोग इतना सामान्य हो जाऐगा जितना कि पाठ्य-पुस्तकों तथा ब्लैकबोर्ड का है।''

दूरदर्शन सम्प्रेषण संचार क्रिया का प्रभावी तथा शक्तिशाली माध्यम है। शैक्षिक दूरदर्शन, खुला परिपथ दूरदर्शन (Open Circuit Television) व बंद परिपथ दूरदर्शन (Close Circuit Television) इन दो प्रकारों के अंतर्गत कार्य करता है। दूरदर्शन कार्यक्रम अधिगम प्रक्रिया को सुधारने में बहुत सहायक सिद्ध होते हैं क्योंकि दूरदर्शन पर प्रसारित शिक्षा-कार्यक्रमों में दृश्य-श्रव्य सामग्री तथा उपकरणों की पूर्ण योजना, क्रमिक प्रस्तुतिकरण और एकीकरण सम्मिलित होता है। इन कार्यक्रमों को देखकर अध्यापक भी अपने शिक्षण-कौशलों को सुधारने के लिये मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं।

सिनेमा भी शिक्षण-अधिगम में पूर्ण रूप से सहायक रहा है। कई शैक्षिक फिल्में घटनाओं तथा तथ्यों को जीवन अनुरूप प्रस्तुत करने में सक्षम रही हैं। इन फिल्मों ने सुदूर अतीत तथा वर्तमान को कक्षा में ला खड़ा किया है। शैक्षिक फिल्मों के अंतर्गत बच्चों की फिल्में, औद्योगिक फिल्में, दस्तावेजी फिल्में, नाट्य फिल्में, ऐतिहासिक फिल्में, वैज्ञानिक फिल्में व जीवन-चरित्र पर आधारित फिल्में बच्चों के अधिगम स्तर को उच्चता प्रदान करती हैं। रवीन्द्रनाथ टैगोर, मुंशी प्रेमचन्द, सुभद्रा कुमारी चौहान, महावेवी वर्मा, शरदचन्द्र आदि की साहित्यिक कृतियों को उनके जीवन परिचय के अंतर्गत

* सहायक प्राध्यापक, सरस्वती शिक्षा महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

पढ़ने वाले छात्रों ने सिनेमा के माध्यम से उनके चरित्रों को पर्दे पर जीवंत होते देखा और वे चरित्र उनके मानस पटल पर अमिट छाप छोड़ते चले गए। इसी प्रकार देश के शहीदों पर बनी फिल्में भी विद्यार्थियों को भगतसिंह, सुभाषचन्द्र बोस, रानी लक्ष्मीबाई, महाराणा प्रताप, शिवाजी आदि के चरित्र को अपने जीवन में उतारने को मजबूर करती हैं।

विज्ञान पर बनी फिल्मों की गिनती बहुत कम है परन्तु विज्ञान से संबंधित विषयों पर बनी फिल्में यथा – एलियंस, जुरासिक पार्क, दी फिफ्थ एलीमेंट, ट्विस्टर, यूनिवर्सल सोल्जर आदि जब पर्दे पर आती हैं तो संसार के शिक्षण के घेरे को और विशाल व महान कैनवास देती हैं। ये फिल्में संख्या में कम अवश्य हैं परन्तु सबसे महंगी व सबसे ज्यादा पैसा कमाने वाली फिल्मों में साइंस फिक्शन फिल्मों की विधा को ही सबसे ऊपर स्थान मिला है।

इस प्रकार सिनेमा का पर्दा भी जनसंचार के सशक्त माध्यम की भूमिका का निर्वहन कर रहा है। 21वीं शताब्दी की फिल्मों का स्वरूप आज के बढ़ते हुए वैज्ञानिक तथा तकनीकी युग की एक उल्लेखनीय उपलब्धि कही जा सकती है। आने वाले दिनों का सिनेमा उच्च तकनीकी क्षमता का परिचायक होगा।

आज हम हाइटैक संसार में रह रहे हैं। आज इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने संसार को संकुचित कर दिया है। कम्प्यूटर व इन्टरनेट, फेसबुक, ट्विटर आदि साधनों में क्षण-भर में लोगों को नजदीक ला दिया है। शिक्षा के सभी क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी का प्रयोग महत्वपूर्ण सुधार कर दिखाने की क्षमता रखता है। इण्टरनेट पर वेब पृष्ठों में विभिन्न प्रकार की शैक्षिक जानकारियाँ उपलब्ध हैं जिनमें पाठ-सामग्री, तस्वीरें, ऐनीमेशन, मल्टीमीडिया आदि प्रमुख हैं। वेब पृष्ठों से ईमेल, कॉन्फ्रेंसिंग, इलेक्ट्रॉनिक पब्लिकेशन्स जैसी सेवाएँ और अन्य सुविधाएँ भी शिक्षा जगत को एडवांस बना रही हैं।

आज की दुनिया ग्लोबल विलेज की दुनिया है और इस दुनिया में आधुनिक जनसंचार माध्यम एक शक्तिशाली भूमिका तथा मानवीय सारोकारों की संवेदनशील भावनाओं का संचार प्रत्येक व्यक्ति के लिए करता है और करता रहेगा। इस शताब्दी के पहले दशक में सूचना तकनीक में अनेक क्रांतिकारी परिवर्तन सामने आए जिसके कारण आज जनसंचार माध्यमों की ताकत का अन्य कोई विकल्प मौजूद नहीं है।

छात्रों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। शैक्षिक पाठ्यक्रम विस्तृत होते जा रहे हैं। अच्छी पाठ्य-पुस्तकों, सुनियोजित शैक्षिक कार्यक्रमों, उपयुक्त शैक्षिक साधनों तथा अनुभवी व योग्य अध्यापकों का अभाव महसूस होता है। ऐसी स्थिति में जनसंचार माध्यम शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया की प्रभावशीलता बढ़ाने में मददगार साबित हुए हैं।

जनसंचार के अन्य माध्यमों के रूप में दूरभाष, फैक्स, टेलेक्स, कम्प्यूटर, इंटरनेट आदि भी अपने-अपने साम्राज्य को फैलाए हुए हैं। डिस्क व सिलिकॉन चिप जैसी नई तकनीकियाँ भी व्यक्ति को खूबसूरती से सम्मोहित कर रही हैं।

आने वाले दिनों में प्रसारण एवं जनसंचार माध्यम कितने और कैसे बदल जाऐंगे यह आज आधुनिक संचार क्रांति की चर्चा का विषय है। वर्तमान परिदृश्य में जनसंचार माध्यम शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के सशक्त हस्ताक्षर के रूप में परिलक्षित हो रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. रत्तू, कृष्णकुमार – दृश्य-श्रव्य एवं जनसंचार माध्यम, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर (2010).

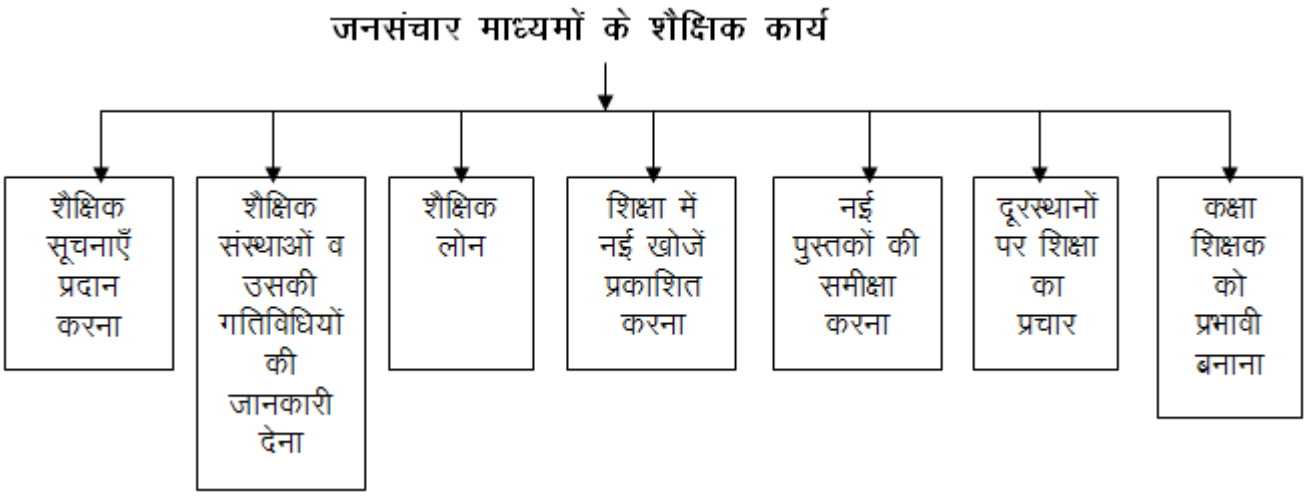

****

कस्तुरबा गाँधी बालिका विद्यालय की उपयोगिता - एक परिचय

डॉ. रागिनी श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप आज तक स्वतंत्रता, समानता एवं न्याय की प्राप्ति हेतु संघर्ष किए जा रहे हैं तो यह प्रश्न महत्वपूर्ण हो जाता है कि वे कौन से प्रमुख आधार हैं जिनकी प्राप्ति अनुसूचित जाति,जनजातीय एवं पिछडा वर्ग की महिलाओं को स्वतंत्रता का संबल प्रदान करेगी। इस संदर्भ में हमारे सम्मुख अनेक विकल्प हैं जिन्हें प्राथमिकता के आधार पर इंगित किया जा सकता है। सर्वाधिक प्रथम वरीयता आर्थिक आत्मनिर्भरता को, द्वितीय वरीयता घरेलू जीवन में महिलाओं को आदर एवं मान्यता, तृतीय वरीयता पुरुषों के दृष्टिकोण में सुधार के पक्ष में हो सकती है। महिला शिक्षा समाज का आधार है। दुर्खीम ने कहा है कि मात्रा में वृद्धि का अर्थ जनसंख्या की वृद्धि के अलावा भी है तथा दूसरा निरन्तर प्रयोग किए जाने वाला विकास का मापदण्ड है-सामाजिक विभेदीकरण का विस्तार जिसे मैकाईवार व पेज ने विशिष्ट मापदण्ड के रूप में माना है तथा स्पेन्सर, दुर्खीम और हावहाउस ने भी कार्यक्षमता और आपसी सहयोग के संदर्भ में विकास को प्रमुख आधार माना है। प्राचीन संदर्भ में विकास एक ऐतिहासिक प्रकार्य माना जाता था लेकिन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह एक सामाजिक, सांस्कृतिक व आर्थिक प्रकार्य के रूप में देखा जाता है। फलत: विकास राज्य द्वारा निर्धारित प्रक्रिया का रूप ले चुका है। अनुसूचित जाति एवं जनजातीय महिला विकास की अवधारणा मुख्यत: विकसित व अविकसित समाजों के मध्य अन्तर को प्रदर्शित करती है।

नारी को सशक्त बनाने के लिये शिक्षा का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। कहा जाता है 'सा विधा सा विमुक्तये' इसी कसौटी पर आज की शिक्षा प्रणाली पुनर्गठित करने की आवश्यकता हैं। वर्तमान में भारत शासन द्वारा बालिका शिक्षा के लिये विभिन्न योजनाएँ संचालित हैं। दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों की आर्थिक रूप से कमजोर एवं आरक्षित वर्ग बालिकाओं को माध्यमिक स्तर की शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराने के उद्देश्य से केन्द्र सरकार द्वारा अगस्त 2004 से कस्तुरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय, योजना प्रारम्भ की गई हैं। प्रदेश में प्रत्येक 10 में से 1 बालिका 5वीं पास करने के बाद शाला छोड़ देती हैं। अपनी प्रारम्भिक स्तर की पढ़ाई पूर्ण न कर पाना का एक कारण स्थानीय स्तर पर शाला सुविधा न होना हैं। अत: दुर्गम क्षेत्रों में रहने वाली शिक्षा सुविधा से वंचित बालिकाओं के लिये उनकी प्रारम्भिक शिक्षा पूर्ण करने तक उन्हें आवासीय सुविधा मुहैया कराने के लिये कस्तुरबा गाँधी बालिका विद्यालय योजना आरम्भ की गई हैं।

कार्यक्रम के उद्देश्य -

1. शिक्षा की दृष्टि से वंचित तबको की बालिकाओं को शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराना।
2. बालक-बालिकाओं के बीच शिक्षा की दृष्टि से अन्तर को समाप्त करना।
3. बालिकाओं को प्रारम्भिक स्तर तक की शिक्षा उपलब्ध कराने के लिये आवासीय विद्यालयों की स्थापना करना।

K.G.B.V. बालिका विद्यालय में 75 प्रतिशत बालिकाएँ अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़ा वर्ग एवं अल्पसंख्यक समुदाय के लिये आरक्षित हैं। 25 प्रतिशत बालिकायें गरीबी रेखा के नीचे के परिवारों से हैं। वहीं बुरहानपुर विकासखण्ड का कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय अल्पसंख्यक समुदाय की बालिकाओं के लिये आरक्षित किया गया हैं।

म. प्र. के ग्रामीण अंचलों में बालिकाओं की स्थिति दयनीय हैं। वंचित वर्ग की आज भी ऐसी बालिकाऐं हैं जो अपनी विवशताओं और पारिवारिक परिस्थितियों के कारण विद्यालयों तक नहीं पहुँच पाती है। परिणामस्वरूप अभी भी कई बालिकाएँ शिक्षा से वंचित है। वास्तविकता यह है कि ये बालिकाएँ किसी न किसी काम से जुड़ी हुई हैं। चाहे वे खेत में मजदूरी करती हो, घर का काम काज करती हो या भाई बहनों की देखभाल करती हो । इन बालिकाओं को शाला से जोड़ना अत्यन्त आवश्यक हैं। ऐसी बालिकाऐं जो पहले शाला से नहीं जुड़ पाई हैं जिन्होंने विद्यालय में प्रवेश की उम्र भी पूरी कर ली है और अब वे अपने से छोटी उम्र के बच्चों के साथ कक्षा में बैठकर पढ़ने में असहज अनुभव करती है, के लिए (S.S.A.) अभियान के अन्तर्गत K.G.B.V. प्रारम्भ हो चुके है, जहाँ पर मुख्यधारा से अलग हुई या शाला त्यागी बालिकाओं को रखकर अध्यापन कार्य कराया जा रहा है।

आज के परिवेश में बालिका शिक्षा का महत्व इसलिए भी है क्योंकि शिक्षा प्राप्त करना बालिका का जन्म सिद्ध अधिकार है। शिक्षा उसे ऊँचा मनोबल और आत्मविश्वास देती है। स्वयं को गौण मानने की हीनता से मुक्ति प्रदान करती है। शिक्षित बालिका परिवार व समाज की धरोहर होगी व समाज को सही दिशा निर्देश दे पाऐगी।

प्रारम्भिक स्तर की शिक्षा में ग्रामीण क्षेत्रों और वंचित समुदायों के बीच में लैंगिक असमानता अधिक है। बालकों की शिक्षा बालिकाओं की शिक्षा की प्रगति हेतु अभिभावकों का सक्रिय सहयोग आवश्यक है। अभिभावकों की रूचि के अभाव में बालिकाओं को शिक्षा कठिन ही नहीं असम्भव भी है। बालक-बालिकाओं में नामांकन, ठहराव, उपलब्धि एवं शिक्षा में बहुत अधिक अंतर है। लिंग की दृष्टि से 24.84 प्रतिशत बालिकाऐं, आज भी बालकों से पीछे है। स्त्रियों को स्वावलम्बी बनाने और लक्ष्य प्राप्ति तथा अपने मनपसंद क्षेत्र में सफलता प्राप्ति के लिये उसे आत्मविश्वास का प्रबल होना आवश्यक है जो K.G.B.V. के आवासीय छात्रावासों में संचालित गतिविधियों के द्वारा उत्पन्न करने का सार्थक प्रयास है। यहाँ अध्ययनरत छात्राएँ निर्धन परिवारों की होने से भौतिक सुख सुविधाओं से भी वंचित रहती है। इन आवासीय विद्यालयों में प्रवेश से लेकर इन्हें समुचित पारिवारिक वातावरण तो मिलता ही है, आगे बढ़ने के लिये शिक्षा के साथ-साथ व्यवसायिक कौशल की दक्षता भी प्राप्त होती है।

* सहायक प्राध्यापक, महाराजा महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

व्यवसायिक कौशल –व्यवसायिक शिक्षा के लिये दो शिक्षिकाओं की नियुक्ति की जाती है जो इन छात्राओं को सिलाई, कढ़ाई, पेन्टिग, मेहन्दी, रांगोली, ग्रीटिंग कार्ड बनाना, बेग बनाना अन्य कई वस्तुकारी कलाओं में दक्ष करती है। जिससे आगे चलकर यह बालिकाएँ आत्मनिर्भर बन सके, अपनी आर्थिक स्थिति को मजबूत कर सके।

शैक्षिक भ्रमण –कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय के छात्रावासों में रहने वाली बालिकाओं को शैक्षिक भ्रमण भी करवाया जाता है। भ्रमण हेतु आसपास कोई किला या कोई ऐतिहासिक इमारत, अस्पताल, पोस्ट आफिस, पुलिस स्टेशन, फैक्ट्री, फायर स्टेशन, नदी, तालाब, ट्रेन की यात्रा अथवा कोई शैक्षिक भ्रमण स्थल इत्यादि का चुनाव किया जाता है। इसका उद्देश्य मनोरंजन के साथ–साथ शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति करना भी होता है।

अनुभव आदान–प्रदान –छात्रावास में अध्ययनरत बालिकाओं को महिला डॉक्टर, वकील, महिला पुलिस अधिकारी आदि से भेंट करवाई जाती है। इनके द्वारा बालिकाओं को बताया जाता है कि उच्च शिक्षा के लिये एवं एक अधिकारी बनने के लिये कितनी मेहनत व लगन से अध्ययन करना पड़ता है। कितनी कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। यह भी बताया जाता है कि विपरीत परिस्थितियों में बालिकाओं को किस प्रकार संयम से काम लेकर आगे बढ़ना चाहिये। अधिकारियों से प्रेरणा लेकर, जीवन के अनुभवों को सुनकर बालिकाऐं अपने भविष्य में कुछ लक्ष्य निर्धारित करे व उसे मेहनत एवं लगन से प्राप्त करने का प्रयास करे।

सांस्कृतिक गतिविधियाँ एवं साहित्यिक प्रतियोगिता –छात्रावास में बालिकाओं के सर्वांगीण विकास हेतु सांस्कृतिक प्रतियोगिताओं का आयोजन समय–समय पर किया जाता है। जिससे छात्राओं की छिपी हुई प्रतिभा को मंच प्रदान किया जा सके। सांस्कृतिक प्रतियोगिता में गायन, नृत्य, कविता के साथ–साथ साहित्यिक गतिविधियों का भी आयोजन किया जाता है, जिसके अन्तर्गत कविता पाठ, वाद–विवाद, निबंध प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है। मेहन्दी, स्क्रेप, बुक प्रतियोगिताओं का आयोजन भी किया जाता है। इनडोर, आउट डोर गतिविधियों के साथ–साथ पुरस्कार वितरण भी किया जाता है।

फिल्मों के माध्यम से मनोरंजन व शिक्षा –K.G.B.V. छात्रावासों में संचालित गतिविधियों में फिल्मों के द्वारा बालिकाओं के ज्ञान में वृद्धि करना भी है।अवकाश के दिनों में सी.डी. के माध्यम से बालिकाओं को ऐसी फिल्में दिखाई जाती है जो उनके लिये ज्ञानवर्धक हो साथ ही में उनके आत्मविश्वास में वृद्धि करें। उदाहरणस्वरूप – डोर, ब्लैक, मीना, स्वदेश, फुटबाल, इकबाल आदि।

माँ–बेटी मेला –छात्रावासों में माँ–बेटी मेला भी आयोजित किया जाता है। इसमें छात्रावास में दर्ज बालिकाओं की माताओं एवं गाँव की महिलाओं को आमंत्रित किया जाता है। माँ–बेटी की परस्पर सामंजस्य के साथ–साथ एक दूसरे को समझने एवं उनके विचारों को समझाने के लिये प्रोत्साहित किया जाता है। बड़ी बेटी सखा सदृश्य होती है। बेटी–बेटे में भेदभाव न करें, बेटी को भी बेटे के समान व्यवहार मिलना चाहिये यह प्रत्येक माँ को समझाईश दी जाती है। माँ–बेटी की प्रतियोगिता आयोजित की जाती है, जिसमें खेल, मेहन्दी, भजन आदि गतिविधियाँ होती है। माँ–बेटी के द्वारा बनाई गई वस्तुओं को बिक्री के लिये रखा जाता है। माँ–बेटी मेले में माताओं को शाला की शैक्षणिक गतिविधियों का ज्ञान तथा बालिकाओं के सर्वांगीण विकास की जानकारी प्राप्त होती है।

जीवन कौशल शिक्षा –वर्तमान में बढ़ते शहरीकरण तथा आधुनिक जीवन शैली में युवाओं को अत्यन्त प्रभावित किया है। इस कारण किशोरों को माता–पिता, परिवार, मित्र तथा समाज के साथ तालमेल बिठाने में कठिनाई आ रही है। किशोर अवस्था में आ रहे शारीरिक बदलाव एवं उन्मुक्त विचारों व संयम की कमी जीवन को गलत दिशा की ओर मोड़ देती है।समाचार पत्रों की सुर्खिया एवं तेजी से बदलाव की ओर जाता हुआ हमारा आधुनिक समाज हमें इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि विद्यार्थियों को इस प्रकार की शिक्षा दी जावे, जिससे उसका संतुलित अच्छा विकास हो तथा वह भावी जीवन के समस्त तनावों का सामना दृढ़तापूर्वक कर सके। इस कारण विद्यार्थी जीवन की अत्यन्त महत्वपूर्ण अवस्था किशोर अवस्था पर हमें अपना ध्यान केन्द्रित करना होगा क्योंकि यह एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें न बाल्यावस्था होती है और न ही प्रौढ़ावस्था की श्रेणी में आती है। किशोरावस्था वह अवस्था है जब किशोर और किशोरियों में तीव्र शारीरिक, मानसिक और संवेगात्मक परिवर्तन होते है। इन्हीं परिवर्तनों के लक्षण हमें उनके व्यवहार में परिलक्षित होते है। जीवन कौशल शिक्षा की जानकारी शाला में प्रशिक्षित महिला शिक्षकों द्वारा दी जाती है। इसके अंतर्गत –(1) स्वजागरूकता, (2) प्रभावी संप्रेषण, (3) अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध, (4) निर्णय लेने की क्षमता, (5) समस्या समाधान, (6) तनावों से जूझना, (7) भावनाओं से जूझना आदि का परिचय करवाया जाता है।

बालिकाओं में किशोरावस्था में होने वाले परिवर्तन की जानकारी, समस्या का समाधान, यौन शिक्षा, एड्स की जानकारी जीवन कौशल की शिक्षा के द्वारा समाज में जीवन स्तर को ऊँचा उठाना है।

निष्कर्ष – भूमण्डलीकरण के साथ ही महिला–पुरुष समानता को कानूनी आधार प्रदान किया गया। 'अनिवार्य शिक्षा', 'हिन्दू मैरिज एक्ट', 'दहेज निषेधा कानून', 'सती निषेधा', 'समान कार्य समान वेतन' आदि कानूनों द्वारा महिला विकास हेतु सकारात्मक कदम उठाए गए। किन्तु केवल कानून द्वारा सामाजिक सुधार संभव नहीं है। सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है जनमानस में परिवर्तन, महिला–पुरुष की दृष्टि में प्रगतिशील सुधार। समाज द्वारा पुरुष को शिक्षित करने का लाभ केवल मात्र पुरुष को होता है जबकि महिला शिक्षा का स्पष्ट लाभ परिवार, समाज एवं सम्पूर्ण राष्ट्र को होता है चूंकि महिला ही माता के रूप में बच्चे की प्रथम अध्यापक बनती है। महिला शिक्षा एवं संस्कृति को सभी क्षेत्रों में पर्याप्त समर्थन मिला। यद्यपि कुछ समय तक महिला शिक्षा के समर्थक कम किन्तु विरोधी अधिक थे किन्तु आज समय एवं परिस्थितियों ने महिला शिक्षा को अनिवार्य बना दिया है। 'एक आदर्श माँ ही एक आदर्श परिवार का निर्माण कर सकती है।' इसी सोच पर आधारित कस्तुरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय, किशोरियों में सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास कर, उनका मार्गदर्शन करती है।यही कारण हैं कि वर्तमान समय में कस्तूरबा गॉधी बालिका विद्यालय की सीटों की संख्या 200 कर दी गई है। अत: नि:सन्देह कस्तूरबा गॉधी बालिका विद्यालय (K.G.B.V.) एक सार्थक पहल है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अग्रवाल जी. के.2009 मूलभूत समाजशास्त्रीय अवधारणाएँ।
2. आवासीय ब्रिज कोर्स विवरण पुस्तिका।
3. बलिका छात्रावास, माड्यूल्स।
4. कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय ,माड्यूल्स रा.शि.केन्द्र भोपाल।
5. www.ssa.mp.gov.in
6. en.wikipedia.org/wiki/kasturba
7. कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय दमदमा,उज्जैन।
8. कुरूक्षेत्र पत्रिका अंक 2006

सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी का शोध के क्षेत्र में उपयोग

इम्तियाज मन्सूरी * माधुरी पालीवाल **

प्रस्तावना – मुख्यत: सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी के उपयोग के माध्यम से शोध में उपयोगी गुणवत्ता किस प्रकार बढ़ायी जा सकती है इससे संबंधित आलेख।

प्रस्तुत आलेख में सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी शोध में उपयोग जैसे–

1. प्रकरण के निर्माण में
2. शोध कार्यो में कम्प्युटर डाटा बेस
3. संबंधित साहित्य का सर्वेक्षण
4. परिकल्पना का निर्माण एवं उसकी जॉच करने में
5. चर की व्याख्या करने में
6. शोध फाईलों एवं चार्ट, ग्राफ का कम्प्यूटर द्वारा निर्माण
7. शोध के उचित जानकारी डाटा संबंधी (क्वेरिस) प्राप्त करने में
8 डाटा को एस.पी.एस. के माध्यम से व्याख्या करने में
9 शोध कार्य में कम्प्युटर नेटवर्क
10. शोध के लिये इंटरनेटटूल्स
11. शोध प्रतिवेदन एवं सारांश बनाने एवं फारमेटिंग में–

आज का युग तकनीकी युग हैं। इस तकनीकी ने सारे विश्व में क्रांति फैला दी है। ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है जो इस तकनीक से अछुता रहा हो। सूचना प्रसार तकनीकी ने अपनी जड़े शिक्षा तंत्र में ऐसी जमायी है कि शिक्षा का पारम्परिक दृष्टिकोण अब आधुनिक दृष्टीकोण में परिवर्तित हो गया है।

सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी का अर्थ – शिक्षा में सूचना प्राप्ति और उसे ठीक तरह से नियंत्रित एवं व्यवस्थित करने की तकनीक सूचना तकनीक कहलाती है। परन्तु सूचना की ऐसी प्राप्ति तथा उसका उपयोग तब तक अपने आप में अधुरा है जब तक की इसमें संप्रेषण कला का समावेश न हो। संप्रेषण एक द्विपक्षीय प्रक्रिया है, जिसकी सहायता से हम अपने विचारों, मान्यताओं व जानकारी को दूसरों के साथ बाँटते है। सूचना स्त्रोत व सूचना ग्रहण करने वालों के बीच इस पारस्परिक आदान प्रदान से ज्ञान भंडार में वृद्धि होती है। यदि हमें सूचना एवं संप्रेषण संबंधी अपने कार्य में कुशलता एवं प्रविणता चाहिए तो हमें सूचना संप्रेषण तकनीकी की आवश्यकता होगी।

सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी से अभिप्राय औजारों, उपकरणों तथा अनुप्रयोग आधार से युक्त एक ऐसी तकनीकी जो सूचना के संग्रहण, भंडारण, पुन: प्रस्तुतीकरण, उपयोग, स्थानांतरण, संश्लेषण एवं विश्लेषण, आत्मसातीकरण आदि में सहायक सिद्ध होते हुवे उपयोगकर्ता को अपना ज्ञानवर्धन करने व उसके संप्रेषण व उसके द्वारा अपनी निर्णय व समस्या समाधान योग्यता में सहायक सिद्ध होती है।

परिभाषा–अत IT या ICT **की परिभाषा अंग्रेजी में कुछ इस प्रकार हो सकती है।–**

Information Technology (IT) or Information & Communication Technology (ICT) is the technology required for information processing. In particular the use of electronic computers and computer software to convert, store, process, transmit, and retrieve information from anywhere, any time.

आज सूचना एवं संप्रेषण तकनीक का उपयोग अनुसंधान एवं सांख्यिकी में भी किया जा रहा है। जिससे अनुसंधान कार्य सरल व सहज हो पाया है। पहले शोध कार्य को पूर्ण करने में कई वर्ष लग जाते थे व परिणाम भी आशातीत प्राप्त नहीं हो पाते थे। सूचना एवं संप्रेषण तकनीक के द्वारा शैक्षिक अनुसंधानकर्ताओं को सूचना के स्त्रोतों से परिचित होने, उसके द्वारा सूचना इकट्ठी करने, उन्हें ठीक ढंग से संग्रहित करने, व्यवस्थित कर भविष्य में आवश्यकतानुसार उपयोग में लाने का उचित अवसर और प्रशिक्षण मिलता है। इसके माध्यम से वे केवल ज्ञान ही नहीं प्राप्त करते बल्कि समस्या समाधान योग्यता निर्णय क्षमता का भी प्रशिक्षण मिलता है। जो कुछ भी उन्हें ज्ञान प्राप्ति, यर्थात व विश्वसनीय सूचनाएँ एवं संप्रेषण के रूप में चाहिए व सब कुछ सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी के सहयोग से प्रभावी ढंग से प्राप्त हो सकता हैं। इसके माध्यम से वे केवल ज्ञान ही नहीं प्राप्त करते बल्कि समस्या–समाधान, योग्यता, निर्णय क्षमता का भी प्रशिक्षण प्राप्त होता है। अनुसंधान के क्षेत्र में अपने विषय विशेष से संबंधित विभिन्न प्रकार की सूचनाएँ एवं आवश्यक संप्रेषण आकड़े भी प्राप्त होते है। किस प्रकार का अनुसंधान कार्य हो चुका है ? देश विदेश में उस अनुसंधान संबंधी क्या हो रहा है ? सभी प्रकार की जानकारी व सूचनाएँ सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी के माध्यम से प्राप्त होती रहती है। यही नहीं इसके द्वारा

- ऑकड़ों का संग्रहण
- वर्गीकरण
- प्रदर्शन एवं प्रस्तुतिकरण
- विश्लेषण
- निर्वचन
- पूर्वानुमान

आदि आसानी से किया जा सकता है।

1. प्रकरण के निर्माण में – अनुसंधानकर्ता सर्वप्रथम अपने शोध हेतु समस्या की पहचान कर शोध प्रकरण तैयार करता हैं। इस कार्य में सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी के माध्यम से यह जानने की कोशिश करता है कि कही इस

* सहायक प्राध्यापक, विवेकानन्द शिक्षा महाविद्यालय, सेंधवा (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक, विवेकानन्द शिक्षा महाविद्यालय, सेंधवा (म.प्र.) भारत

प्रकरण पर पहले से कोई शोध कार्य तो नहीं हो चुका नहीं तो इस प्रकार की समस्या में इससे संबंधित शोधों का अध्ययन कर अपने शोध पर कार्य करता है। यदि इस शोध में कुछ कमी रह गई हो तो वह उन कमियों को अपने शोधकार्य के माध्यम से दूर करने का प्रयास करता है।

2. शोधकार्यो में कम्प्यूटर डाटा बेस – सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी द्वारा समस्या सबंधी तथ्यों को व्यवस्थित, सुरक्षित व संग्रह कर सकता है। फिर इन तथ्यों को व्यवस्थित कर सूचनाओं में परिवर्तित कर डाटा बेस फाईनल बना ली जाती है जिसे कहीं भी किसी भी जगह आवश्यकता पढ़ने पर उपयोग में लाया जा सकता है। यहीं नहीं इसे इच्छित क्रम में व्यवस्थित करने, अनावश्यक सूचनाओं को हटाने, नई सूचनाओं को जोड़ने, उसमें संशोधन करने में इसका उपयोग किया जाता है। डाटा बेस फाईल बनाने में फाक्स प्रो एक्सेल आदि साफ्टवेयर का उपयोग किया जाता है।

3. संबंधित साहित्य का सर्वेक्षण–अनुसंधानकर्ता अपनी समस्या से संबंधित पूर्व अनुसंधानों का सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी द्वारा सर्वेक्षण करता है व पूर्व शोध में क्या कमियाँ थी, उनमें विधि का सही चयन किया गया या नहीं उससे प्राप्त निष्कर्ष में कोई दोष या कोई प्रभाव तो नहीं जिससे उसका शोध कार्य आसानी से हो सके।

4. परिकल्पना का निर्माण एवं उसकी जॉच करने में – परिकल्पनाओं के निर्माण एवं उसकी जॉच में उसे स्वीकृत एवं अस्वीकृत करने में भी कम्प्युटर का उपयोग किया जाता है।

5. चर की व्याख्या करने में – शोधकर्ता अपनी समस्या से संबंधित परिकल्पना का निर्माण करना है। उनसे संबंधित कितने चर है।किस चर के प्रभाव से दूसरा चर प्रभावित हो रहा है। जो चर है उसे एस.पी.एस. में वेल्यू दी जाती है व ऑकड़ों का व्यवस्थापन एवं विश्लेषण किया जाता है।

6. शोध फाईलों एवं चार्ट, ग्राफ का कम्प्युटर द्वारा निर्माण – अपने शोध कार्य के लिए आवश्यक व महत्वपूर्ण सूचनाओं को कम्प्युटर द्वारा संग्रहित करते है तथा समस्त आवश्यक व परस्पर संबंधित सूचनाओं को एक साथ किसी कम्प्युटर फाईल में संग्रहित रख सकते है, जिससे आवश्यकता के समय उन सूचनाओं का शोध कार्य में प्रयोग किया जा सके। यही नहीं इसके बेकअप को आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान पर भी ले जाया जा सकता है। कम्प्युटर के एम.एस. वर्ड के द्वारा फाईल संबंधित कार्य किया जा सकता है। शोध संबंधि यदि आकड़ों का चार्ट या बार ग्राफ है तो आसानी से एक्सेल के द्वारा निर्मित किया जा सकता है। पावर पाईन्ट की सहायता से स्लाईड के माध्यम से फाईलों का प्रस्तुतिकरण किया जा सकता है।

7. शोध के लिये उचित जानकारी डाटा संबंधी (क्वेरिस) प्राप्त करने में – शोध संबंधित जितनी भी जानकारी या क्वेरिस है, कम्प्युटर के द्वारा उसे आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। क्वेरिस रिकार्ड को एक या अधिक टेबल्स या डाटाबेस से चयन करती है जिससे उन्हें देखा जा सकता है, व्यवस्थित क्रम में जमाया जा सके, सार्ट किया जा सके, रिकार्ड एड किया जा सके, परिवर्तित किया जा सके, अपडेट किया जा सके। यह एक्सेस एवं डाटाबेस 3 या एस.क्यू.एल. के माध्यम से किया जा सकता है।

8. डाटा को एस.पी.एस. के माध्यम से व्याख्या करने में – शोध संबंधित टेस्ट जैसे टी टेस्ट, एफ टेस्ट, वन वे एनाकोवा, टू वे एनाकोवा, वन वे एनोवा, टू वे एनोवा, पेरामेटिक, नान पेरामेटिक टेस्ट कार्य आसानी से किया जा सकता है। इन्हीं टेस्ट के आधार पर शोधकार्य का परिणाम, एवं विवेचना, व व्याख्या की जाती है।

9. शोध कार्य में कम्प्युटर नेटवर्क – शोध कार्य में नेटवर्क से हम घर बैठे पूर्व शोध संबंधी जानकारी, अपने शोध से संबंधित जानकारी, ऑकड़े एक्सपर्ट से उनके दृष्टिकोण आदि प्राप्त कर सकते है। अपने निर्देशक से विडियो चेट कर या ई–मेल द्वारा अपने शोध संबंधी समस्याओं का हल कर सकते है। इन्टरनेट के माध्यम से विभिन्न शोध सर्वे व शैक्षणिक वेबसाईटों के अवलोकन में उपयोग किया जाता है।

10. शोध के लिए इंटरनेट टूल्स– शोध के लिए हम जितने भी सुविधाओं का लाभ इंटरनेट से लेते है उसके लिए इंटरनेट टूल्स जैसे वेब ब्राऊजर जिसमें नेटस्केप नेविगेटर, इंटरनेट एक्सप्लोरर, मोजेइक, स्क्विला, का प्रयोग किया जाता है।

11. शोध प्रतिवेदन एवं सारांश बनाने एवं फारमेटिंग में– शोध कार्यो में रिपोट को सरल व समझने योग्य हो इसके लिए कम्प्युटर में फाक्सप्रो में रिपोर्ट तैयार की जाती है। रिपोर्ट बनाने से पूर्व उसका डाटा बेस उसके फिल्ड के आधार पर तैयार कर उसे संग्रहित करते समय जब भी डाटा बेस की आवश्यकता हो तो हम उसे उपयोग कर सकते है। इस प्रकार डाटाबेस फाईल से समय की बचत भी होती है। इसके लिए एक्सेस व फाक्सप्रो का प्रयोग किया जाता है। अनुसंधान में प्रतिवेदन का प्रकाशन महत्वपूर्ण है ताकि अनुसंधान के प्रसारण व पुष्टिकरण में सहायता मिल सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कम्प्यूटर शिक्षण रमा शर्मा.एम.के.मिश्रा अर्जुन पब्लिशिंग हाऊॅस दिल्ली
2. कम्प्युटर प्रवेशिका–डॉ.एस.एस.श्रीवास्तव मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल।
3. अनुसन्धान परिचय–पाररूनाथ लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
4. शोध प्रविधि एवं क्षेत्रिय तकनीक डॉ.बी.एम.जेन रिसर्च पब्लिकेशन नई दिल्ली।
5. Application of ICT in Education Dr.S.Arul samy and Dr.P.Sivakumar.

****

Effect Of Bhastrika Pranayama On Psychomotor Abilities Of Volleyball Players

Grace S. Singh *

Abstract - The study aimed at trace out the effect of Bhastrika Pranayama on psychomotor variables of reaction time and speed of Volleyball players. 19 subjects were selected initially with a mortality of 5% (One subject). Pretest-posttest randomised group design was applied on selected variables. The subjects were n their own schedule with addition of Pranayama for the experimental group. However there was increase in performance for both the variable, but only reaction time was found significant (p = .048). This might be attributed to the effect of pranayama on nervous system. Thus Pranayama might be recommended as a supplementary exercise for enhancement of Reaction time.
Key words: Pranayama, Psychomotor, Volleyball, Reaction time, Speed

Introduction - Yoga is considered as a wealth of India and one of the greatest gifts to the world and is often a part of daily routine for many Indians (Kundu & Pramanik, 2014). The world yoga means 'unity' or 'oneness' and is derived from the Sanskrit word 'Yuj' which means 'to join'. This unity or joining is described in spiritual terms as the union of the 'individual consciousness' with the 'universal consciousness'. On a more practical level, yoga is a means of balancing and harmonizing the body, mind and emotions. This is done through the practice of Asana, Pranayama, Mudra, Bandha, Shatkarma and Meditation (Saraswati, 2004). Pranayama is the yogic science of breathing. It is a systematic exercise of respiration, which makes the lungs Stronger, improves blood circulation makes the man healthier and bestows upon him the boon of a long life (Jayachitra). Bhastrika Pranayama is characterised by incessant and quick expulsion of breath in all its varieties.

The positive effect of practicing yoga, and pranayama in particular, on different cardio-respiratory is well established (Sharma, Meena, Sharma, Meena, Meena, & Chauhan, 2013) however the neurological benefits of yoga have interested scientists all over the world. It has been reported to be beneficial in both peripheral nerve function as well as central neuronal processing (Bhavanani, Ramanathan, & KT, 2012). Thus yoga and Pranayama can very well expected to influence different psychomotor functions of human being. Even there are few studies in which effect of Pranayama has been tested on reaction time (Bhavanani, Ramanathan, & KT, 2012; Madanmohan, Udupa, Bhavanani, Vijaylakshmi, & Surendiran, 2005).

Unlike the past, modern volleyball is not based on stereotyped pattern of attack where in players hit hard in in standard conditions of play. High class teams now rely on artful and accurate sets, varied in form and agile moves of the front line players to display skilful movement in offense. In modern volleyball, which is a typical game of polystrcutred complex movement top notch result require certain somatic functional and kinesiological characteristics of players including psychomotor abelities. (Yadav & Avadesh, 2014). Furthey they have also founnd significant relationship of psychomotor abelities with villeyball playing abelity. Thus the present study aims at evaluating the use of pranayama to develop psychomotor abelities in Voleyball players.

Objective - To evaluate the effect of Bhastrika pranayama on psychomotor variables (Reaction time & Speed) of volleyball players.

Methods -

Selection of subject - For the purpose of the study 19 volleyball players (20.5 ± 1.15) were selected randomly from local volleyball sports club (Approx. training age of 2 years). They were randomly divided into two groups . Group I & II was assigned 10 & 9 players respectively. The treatment (Experimental & Control) group were also assigned randomly to minimize the effect of extraneous variables. However during the course of study one player from experimental group discontinued and thus eight players were considered for the final analysis in the experimental group.

Hypothesis

$H_{0\ (Reaction\ time)}$: μ_{Adj}-Po-Bhastrika = μ_{Adj}-Po-Control

$H_{0\ (Speed)}$: μ_{Adj}-Po-Bhastrika = μ_{Adj}-Po-Control

Experimental design and protocol - For the purpose of the study *Pretest-Posttest Randomized groups design* (Thomas, Nelson, & Silverman, 2005) was used. The treatment was imparted for 6 weeks, with a daily (excluding Sunday) 30 min session before their regular practise session by a regular yoga practitioner. During testing three trails were provided and the best score was considered. ANCOVA (Verma, A text book on sports statistics, 2009) was applied and level of significance was set at 0.05. SPSS 20 (Trail Version) was used for the analysis of the data.

* Sports Officer, M.L.B. Govt. Autonomous Girls College, Bhopal (M.P.) INDIA

Criterion measures

Variable	Test	Unit
Hand Reaction Time	**Ruler Drop Test** (Mackenzie, 2004)	**Cm**
Speed	**50 mt sprint** (50 Meter Dash)	**sec**

Results - Findings pertaining to descriptive statistics and Analysis of Covariance of reaction time and speed id presented in table 1-6

Table 1 - Descriptive Statistics of Reaction time measured in Post testing

Treatment Group	Mean	Std. Deviation	N
Experimental Group	12.3750	.76298	8
Control Group	12.7900	.80753	10
Total	12.6056	.79370	18

Table 1 denotes that post test reaction time of experimental group is better than control group and that the variation in experimental group is also less tan control group.

Table 2 - (See in Next Page)

Table 2 depicts the adjusted post test scores, where the score for experimental group has been reduced to that of actual post test and score of control group has been inflated to that actual post test score.

Table 3 - (See in Next Page)

Table 3 denotes that there exists a significant difference in post test result of experimental group and control group, as the obtained p-value (0.048) is less than 0.05. Here the obtained p-value is value is very closer to rejection point and thus indicates that there is lack of high significance.

Table 4 - Descriptive Statistics of Speed measured in Post testing

Treatment Group	Mean	Std. Deviation	N
Experimental Group	6.5863	.32120	8
Control Group	6.5410	.17130	10
Total	6.5611	.24197	18

Table 4 denotes that post test average speed of control group is better than experimental group and that the variation in control group is also less tan experimental group.

Table 5- (See in Next Page)

Table 5 depicts the adjusted post test scores, where the score for experimental group has been reduced to that of actual post test and score of control group has been inflated to that actual post test score, but the change is very minimal.

Table 6 - (See in Next Page)

Table 6 denotes that there exists a no significant difference in post test result of experimental group and control group, as the obtained p-value (0.249) is greater than 0.05.

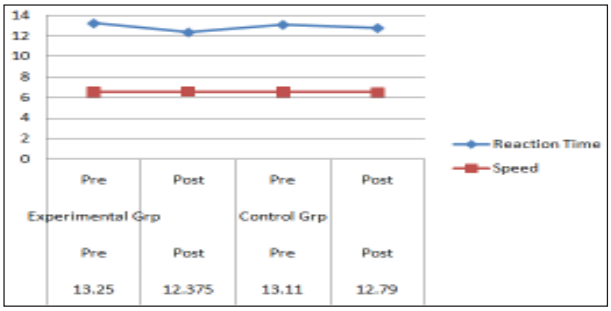

Figure 1- Comparative means of pre and post test result in treatment Groups

Discussion - In the research work undertaken to study the effect of Bhastrika Pranayama on Volleyball players, the null hypothesis may be rejected at 5% level of significance where in case of speed the researcher is not in a position to reject the null hypothesis at 5 % level of significance. Thus it can be concluded that Bhastrika Pranayam is effective in improving reaction time of volleyball players, however from the experimental setup it is difficult to point out the standalone effect of Pranayama, but its coupling with the existing training programme might make it useful. Bhavanani, Ramanathan, & KT (2012) have found the Pranayama to be effective for improving reaction time of mentally retarded children; Madanmohan, Udupa, Bhavanani, Vijaylakshmi, & Surendiran (2005) have also found Pranayama to be effective for improvement of reaction time. From this standalone effect in general population the current research extend the scope in exercise and sports setting. In case of speed there is no significant improvement, this might be because of the fact, that the subjects were volleyball players with approximately two years of training age and their development of general motor abilities might have been achieved. Further there is a need to explore this further by manipulating the duration and intensity of the Bhastrika Pranayama. Thus on the basis of current study it can be concluded Bhastrika Pranayama might be effective for enhancement of reaction time in volleyball players but it might not be effective for increasing speed. Further this research leaves scope in exploring various other research designs and manipulation of training duration and intensity.

References :-

1. *50 Meter Dash.* (n.d.). Retrieved 5 24, 2014, from Topendsports: http://www.topendsports.com/testing/tests/sprint-50meters.htm
2. Abu-Saleh, K. M. (2009). The Effect of Volley Ball Training Program on The Reaction Time. *Scientific Journal of King Faisal University (Humanities and Management Sciences) , 10* (1).
3. Bhavanani, A. B., Ramanathan, M., & KT, H. (2012). Immediate effect of Mukha bhastrika (a bellows type pranayama) on Reaction time in mentally challenged adolescents. *Indian J Physiol Pharmacol* , 174-180.
4. Binboga, M., & Suveren, S. Reaction Time Comparison Of Young Volleyball Players In Smasher and Setter Positions. *The Online Journal of Recreation and Sport, 1* (3).
5. Foroghipour, H., Monfared, M. O., Pirmohammadi, M., & Saboonchi, R. (2013). Comparison of Simple and Choice Reaction Time in Tennis and Volleyball Players. *International Journal of Sport Studies , 3* (1), 74-79.
6. Jayachitra, M. (n.d.). Effect of pranayama and bandha prctise on selected physiological variables among adolescent girls.
7. Kundu, U. B., & Pramanik, T. N. (2014). Effect of Asanas and Pranayama on Self-concept of school going

children. *International Journal of Scientific and Research Publications , 4* (1), 1-17.
8. Mackenzie, B. (2004). *Ruler Drop Test.* Retrieved 05 27, 2014, from www.brainmac.co.uk: http://www.brianmac.co.uk/rulerdrop.htm
9. Madanmohan, Udupa, K., Bhavanani, A., Vijaylakshmi, P., & Surendiran, A. (2005). Effect of slow and fast pranayams on reaction time and crdiorespiratory variables. *Indian J Physiol Pharmacol , 3* (49), 313-318.
10. Saraswati, S. S. (2004). *Asana Pranayama Mudra Bandha.* Munger, Bihar, India: Yoga Publications Trust.
11. Sharma, M., Meena, M., Sharma, R. B., Meena, C. B., Meena, P. D., & Chauhan, N. (2013). STUDY ON THE EFFECT OF YOGA (YOGASANS, PRANAYAM AND MEDITATION). *Ind. J. Sci. Res. and Tech , 2* (1), 89-95.
12. Thomas, J. R., Nelson, J. K., & Silverman, S. J. (2005). *Research Methods in Physical Activity* (5th Edition ed.). Human Kinetics.
13. Verma, J. P. (2009). *A text book on sports statistics.* Sports Publication.
14. Verma, J. P. (2011). *Statistical methods forsports and physical education.* New Delhi: Tata McGraw-Hill.
15. Yadav, R. C., & A. k. (2014). Relationship of psychomotor abelities to the playing abelities of interuniversity level volleyball players. *International Journal of behaivoural, social and movement sciences , 3* (2), 102-106.

Table 2 - Descriptive statistics of Reaction time in Post testing after adjustment

Treatment Group	Mean	Std. Error	95% Confidence Interval	
			Lower Bound	Upper Bound
Experimental Group	12.332[a]	.171	11.968	12.696
Control Group	12.824[a]	.153	12.499	13.149

a. Covariates appearing in the model are evaluated at the following values: Reaction time (Pre) = 13.1722.

Table 3 - Analysis of Covariance for post test data on Reaction time

Source	Type III Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
Group	1.072	1	1.072	4.612	.048*
Error	3.486	15	.232		
Total	2870.910	18			

*Significant at 0.05 level of significance

Table 5 - Descriptive statistics of Speed in Post testing after adjustment

Treatment Group	Mean	Std. Error	95% Confidence Interval	
			Lower Bound	Upper Bound
Experimental Group	6.583[a]	.025	6.530	6.636
Control Group	6.543[a]	.022	6.496	6.591

a. Covariates appearing in the model are evaluated at the following values: Speed (Pre) = 6.5767.

Table 6 - Analysis of Covariance for post test data on Speed

Dependent Variable: Speed (Post)

Source	Type III Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
Group	0.007	1	0.007	1.439	0.249
Error	0.074	15	0.005		
Total	775.863	18			

****

Effect Of Ujjaiyei Pranayama On Psychomotor Abilities Of Volleyball Players

Grace S. Singh *

Abstract - The study aimed at trace out the effect of Ujjaiyei Pranayama on psychomotor variables of Hand reaction time and Leg reaction time of Volleyball players. 21 subjects were selected initially with a mortality of 9.5% (Two subjects). Pretest-posttest randomised group design was applied on selected variables. The subjects were n their own schedule with addition of Pranayama for the experimental group. However there was significant increase in performance for both the variable. This might be attributed to the effect of Pranayama on nervous system. Thus Pranayama might be recommended as a supplementary exercise for enhancement of Reaction time.
Key words - Pranayama, Psychomotor, Volleyball, Reaction time

Introduction - Yoga is believed to bring fitness and vigour to physical body along with harnessing of our will and emotions to improve our power of analysis, insight and vision (Bhadoria, 2004). The world yoga means 'unity' or 'oneness' and is derived from the Sanskrit word 'Yuj' which means 'to join'. This unity or joining is described in spiritual terms as the union of the 'individual consciousness' with the 'universal consciousness'. On a more practical level, yoga is a means of balancing and harmonizing the body, mind and emotions. This is done through the practice of Asana, Pranayama, Mudra, Bandha, Shatkarma and Meditation (Saraswati, 2004). Pranayama is the yogic science of breathing. It is a systematic exercise of respiration, which makes the lungs Stronger, improves blood circulation makes the man healthier and bestows upon him the boon of a long life (Jayachitra). Pranayama is more important because it produces deeper effects as far as the outcomes are concerned. In simple words it could be said that asanas are more linked with muscular system, whereas the Pranayama is concerned with nervous system of the body. Unlike other Pranayama Ujjaiyei can be practised throughout the year with certain limitations. In Ujjaiyei Pranayama, both the nostrils are kept open during puraka and rechaka but the glottis is kept partially closed, narrowing the air-pasage at the level of vocal cords (Bhadoria, 2004). The positive effect of practicing yoga, and pranayama in particular, on different cardio-respiratory is well established (Sharma, Meena, Sharma, Meena, Meena, & Chauhan, 2013) however the neurological benefits of yoga have interested scientists all over the world. It has been reported to be beneficial in both peripheral nerve function as well as central neuronal processing (Bhavanani, Ramanathan, & KT, 2012). In technical sports, beautiful and graceful movements are product of psychomotor and coordinative abilities. To great extent it determines the maximum limits to which sports performance can be improved in several sports, specially the sports which depends largely on technical and tactical factors (Singh, 1991). Thus yoga and Pranayama can very well expected to influence different psychomotor functions of human being. Even there are few studies in which effect of Pranayama has been tested on reaction time (Bhavanani, Ramanathan, & KT, 2012; Madanmohan, Udupa, Bhavanani, Vijaylakshmi, & Surendiran, 2005).

Unlike the past, modern volleyball is not based on stereotyped pattern of attack where in players hit hard in in standard conditions of play. Nicholas(1979) have recomended power, agility, coordination, flexibility,muscular , cardio-respiratory endurance, concentration, quick thinking and reaction times as the performance indicators in volleyball. High class teams now rely on artful and accurate sets, varied in form and agile moves of the front line players to display skilful movement in offense. In modern volleyball, which is a typical game of polystrcutred complex movement top notch result require certain somatic functional and kinesiological characteristics of players including psychomotor abelities. (Yadav & Avadesh, 2014). Furthey they have also founnd significant relationship of psychomotor abelities with villeyball playing abelity. In the context of nural effect of ujjaiyei pranayama and demand of psychomotor abelities in volleyball, the present study aims at evaluating the use of pranayama to develop psychomotor abelities in Voleyball players.

Objective - To evaluate the effect of Ujjaiyei Pranayama on Psychomotor variables (Hand reaction time & Leg reaction time) of volleyball players.

Methods -

Selection of subject - For the purpose of the study 21 volleyball players (μ_{age} 20.5 ± 1.15) were selected randomly from a volleyball sports club (Approx. training age of 2 years). They were randomly divided into two groups . Group I & II was assigned 10 & 11 players respectively. The treatment

* Sports Officer, M.L.B. Govt. Autonomous Girls College, Bhopal (M.P.) INDIA

(Experimental & Control) group were also assigned randomly to minimize the effect of extraneous variables. However during the course of study two player from experimental group discontinued and thus nine players were considered for the final analysis in the experimental group.

Hypothesis

$H_{0\ (Hand\ reaction\ time)}$: μ_{Adj}-Po-Ujjaiyei = μ_{Adj}-Po-Control

$H_{0\ (Leg\ reaction\ time)}$: μ_{Adj}-Po-Ujjaiyei = μ_{Adj}-Po-Control

Experimental design and protocol - For the purpose of the study *Pretest-Posttest Randomized groups design* (Thomas, Nelson, & Silverman, 2005) was used. The treatment was imparted for 6 weeks, with a daily (excluding Sunday) 30 min session before their regular practise session by a regular yoga practitioner. During testing three trails were provided and the best score was considered. The reaction time of hand & leg was measured through 'Reaction time apparatus', supplied by Anand Agencies, Pune. ANCOVA (Verma, A text book on sports statistics, 2009) was applied and level of significance was set at 0.05. IBM SPSS Ver. 20 (Trail Version) was used for the analysis of the data.

Criterion measures -

Variable	Test	Unit
Hand Reaction Time	**Electronic reaction time apparatus** (Manual of Reaction time apparatus)	**Sec**
Leg Reaction Time	**Electronic reaction time apparatus** (Manual of Reaction time apparatus)	**Sec**

Results - Findings pertaining to descriptive statistics and Analysis of Covariance of reaction time and speed id presented in table 1-6

Table 1: Statistics of Leg Reaction time measured in Post testing Descriptive

Treatment Group	Mean	Std. Deviation	N
Experimental Group	.2285	.0089854	9
Control Group	.2326	.0347979	10

Table 1 denotes that post test reaction time of experimental group was better than control group and that the variation in experimental group is also less than control group.

Table 2 - (See in next page)

Table 3 - (See in next page)

Table 3 denotes that there exists a significant difference in post test result of experimental group and control group, as the obtained p-value (0.001) is less than 0.05, however the difference of mean is also significant at 0.01 level of significance.

Table 4: Descriptive Statistics of Speed measured in Post testing

Treatment Group	Mean	Std. Deviation	N
Experimental Group	.1813	.0104129	9
Control Group	.1838	.0083971	10

Table 4 denotes that post test Hand reaction time of experimental group was better than control group and that the variation in control group is less tan experimental group.

Table 5 - (See in next page)

Table 6 - (See in next page)

Table 6 denotes that there exists highly significant difference in post test result of experimental group and control group, as the obtained p-value (0.008) is less than 0.05. as well as 0.01

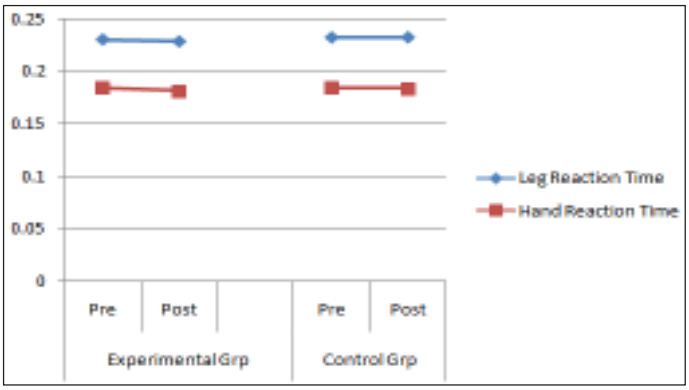

Figure 1: Comparative means of pre and post test result in treatment Groups

Discussion - In the research work undertaken to study the effect of Ujjaiyei Pranayama on Volleyball players, the null hypothesis may be rejected at 5% level of significance in both the cases of Hand Reaction time as well as Leg reaction time. Thus it can be concluded that Ujjaiyei Pranayam is effective in improving Hand reaction time of volleyball players. It is also effective in improving the leg reaction time. The reaction time is a product of nervous system in the body i.e. much of the performance of reaction time is controlled by central nervous system and Pranayama has deeper effect on nervous system of our body as it has been found effective in improving reaction time in many of the earlier studies (Bhadoria, 2004; Madanmohan, Udupa, Bhavanani, Vijaylakshmi, & Surendiran, 2005; Bhavanani, Ramanathan, & KT, 2012). Bhavanani, Ramanathan, & KT (2012) have found the Pranayama to be effective for improving reaction time of mentally retarded children; Madanmohan, Udupa, Bhavanani, Vijaylakshmi, & Surendiran (2005) have also found Pranayama to be effective for improvement of reaction time. However the subjects of the study were not very high level player and they had a training of around two years. Thus the limit to which Pranayama can improve reaction time remains a matter of question and needs to be investigated further. Further there is a need to explore this further by manipulating the duration and intensity of the Ujjaiyei Pranayama. Thus on the basis of current study it can be concluded that Ujjaiyei Pranayama might be effective for enhancement of reaction time in volleyball players.

References :-

1. (n.d.). Manual of Reaction time apparatus . Pune: Anand Agencies.

2. 50 Meter Dash. (n.d.). Retrieved 5 24, 2014, from Topendsports: http://www.topendsports.com/testing/tests/sprint-50meters.htm
3. Abu-Saleh, K. M. (2009). The Effect of Volley Ball Training Program on The Reaction Time. Scientific Journal of King Faisal University (Humanities and Management Sciences) , 10 (1).
4. Bhadoria, B. P. (2004). Effect of pranayama on selected physiological variables and coordinative abelities amond engeneering students. Gwalior: Unpublished thesis.
5. Bhavanani, A. B., Ramanathan, M., & KT, H. (2012). Immediate effect of Mukha bhastrika (a bellows type pranayama) on Reaction time in mentally challenged adolescents. Indian J Physiol Pharmacol , 174-180.
6. Binboga, M., & Suveren, S. Reaction Time Comparison Of Young Volleyball Players In Smasher and Setter Positions. The Online Journal of Recreation and Sport , 1 (3).
7. Foroghipour, H., Monfared, M. O., Pirmohammadi, M., & Saboonchi, R. (2013). Comparison of Simple and Choice Reaction Time in Tennis and Volleyball Players. International Journal of Sport Studies , 3 (1), 74-79.
8. Jayachitra, M. (n.d.). Effect of pranayama and bandha prctise on selected physiological variables among adolescent girls.
9. Kundu, U. B., & Pramanik, T. N. (2014). Effect of Asanas and Pranayama on Self-concept of school going children. International Journal of Scientific and Research Publications , 4 (1), 1-17.
10. Mackenzie, B. (2004). Ruler Drop Test. Retrieved 05 27, 2014, from www.brainmac.co.uk: http://www.brianmac.co.uk/rulerdrop.htm
11. Madanmohan, Udupa, K., Bhavanani, A., Vijaylakshmi, P., & Surendiran, A. (2005). Effect of slow and fast pranayams on reaction time and crdiorespiratory variables. Indian J Physiol Pharmacol , 3 (49), 313-318.
12. Saraswati, S. S. (2004). Asana Pranayama Mudra Bandha. Munger, Bihar, India: Yoga Publications Trust.
13. Sharma, M., Meena, M., Sharma, R. B., Meena, C. B., Meena, P. D., & Chauhan, N. (2013). STUDY ON THE EFFECT OF YOGA (YOGASANS, PRANAYAM AND MEDITATION). Ind. J. Sci. Res. and Tech , 2 (1), 89-95.
14. Singh, H. (1991). Science of sports training. New Delhi: DVS Publication.
15. Thomas, J. R., Nelson, J. K., & Silverman, S. J. (2005). Research Methods in Physical Activity (5th Edition ed.). Human Kinetics.
16. Verma, J. P. (2009). A text book on sports statistics. Sports Publication.
17. Verma, J. P. (2011). Statistical methods forsports and physical education. New Delhi: Tata McGraw-Hill.
18. Yadav,R. C., & A. k. (2014). Relationship of psychomotor abelities to the playing abelities of interuniversity level volleyball players. International Journal of behaivoural, social and movement sciences , 3 (2), 102-106.

Table 2 - Descriptive statistics of Leg Reaction time in Post testing after adjustment

Treatment Group	Mean	Std. Error	95% Confidence Interval	
			Lower Bound	Upper Bound
Experimental Group	.229[a]	.000	.229	.230
Control Group	.232[a]	.000	.231	.232

a. Covariates appearing in the model are evaluated at the following values: Reaction time leg (Pre) = .231437.

Table 3 - Analysis of Covariance for post test data on Leg Reaction time

Dependent Variable: Reaction time (Post)

Source	Type III Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
Group	2.223E-005	1	2.223E-005	15.837	.001*
Error	2.246E-005	16	1.404E-006		
Total	1.022	19			

a. R Squared = .998 (Adjusted R Squared = .998)

*Significant at 0.05 level of significance

Table 5 - Descriptive statistics of Speed in Post testing after adjustment

Treatment Group	Mean	Std. Error	95% Confidence Interval	
			Lower Bound	Upper Bound
Experimental Group	.181[a]	.001	.180	.183
Control Group	.184[a]	.001	.183	.185

a. Covariates appearing in the model are evaluated at the following values: Reaction time hand (Pre) = .184411.

Table 6 - Analysis of Covariance for post test data on Speed

Source	Type III Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
Group	3.410E-005	1	3.410E-005	9.337	.008
Error	5.844E-005	16	3.652E-006		
Total	.635	19			

a. R Squared = .962 (Adjusted R Squared = .957)

महिलाओं की सामाजिक - आर्थिक स्थिति और उनके मानवाधिकार

डॉ. मंजू सक्सेना * डॉ. ए.के. सक्सेना **

प्रस्तावना – महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति – महिला समाज का महत्वपूर्ण अंग है। संस्कृत वाङ्मय में कहा गया है कि 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता: ।'' इस प्रकार अतीत से महिला का समाज में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। उसे सुख और समृद्धि का प्रतीक माना जाता रहा है। यह स्थिति काफी समय तक चलती रही, किंतु कालान्तर में पुरूष ने स्वार्थवर्ष महिला को मात्र भोग-विलास की वस्तु मान लिया। इसके फलस्वरूप समाज में उसकी स्थिति दयनीय हो गई। कविवर मैथिलीशरण गुप्त ने आधुनिक नारी का चित्रण इस प्रकार किया है – 'अबला तेरी यही कहानी, आंचल में है दूध, आंखों में पानी।'' महिलाएं जो कि विश्व की आधी आबादी हैं और विश्व के कार्य-घंटों में से दो-तिहाई कार्य घंटे कार्य करती हैं, विश्व की आय का दसवां हिस्सा प्राप्त करती हैं तथा विश्व की संपत्ति के सौंवे हिस्से से भी कम की स्वामी हैं। विश्व के प्रति तीन निरक्षरों में से दो महिलाएं हैं। स्कूल शिक्षा की उच्च लागत और षिक्षितों के लिये रोजगार के न्यून अवसरों के कारण बहुत से पालक केवल लड़कों की शिक्षा पर व्यय करते हैं। घर में लड़कियों के काम का महत्व और किशोरावस्था में गर्भधारण की ऊँची दर भी लड़कियों के स्कूल शिक्षा में प्रवेश के लिये बाधक हैं।

इन्टरनेशनल लेबर ऑर्गेनाइजेशन के नये आँकड़े यह मिथक तोड़ते हैं कि पुरूष कृषक और खाद्यान्न उत्पादक हैं। आज विकासशील देशों में कुल खाद्यान्न उत्पादन का 50 प्रतिशत महिलाओं द्वारा किया जा रहा है। तन्ज़ानिया में हाल ही में किये गये सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि महिलाए वर्ष में औसतन 2600 घंटे कृषि-कार्य करती हैं, जबकि पुरूष मात्र 1800 घंटे। पूरे अफ्रीका में समस्त कृषि कार्यों का 60 प्रतिशत, पशु पालन कार्य का 50 प्रतिशत तथा खाद्यान्न प्रसंस्करण (Food Processing) का 100 प्रतिशत कार्य महिलाओं द्वारा किया जाता है।

स्वास्थ्य सेवाओं में भी महिलाओं को कमतर सेवाएं प्राप्त हो रही हैं। विकासशील देशों की तीन-चौथाई स्वास्थ्य-समस्याएं बेहतर पोषण, स्वच्छ पानी, सफाई-व्यवस्थाओं, शिक्षा और रोग-प्रतिरक्षण के द्वारा हल की जा सकती हैं। ये सभी प्राय: महिलाओं की जिम्मेदारी होती हैं। मेडिकल एवं स्वास्थ्य बजटों का 80 प्रतिशत उन अस्पतालों और चिकित्सकों के लिये होता है जो जनसंख्या के एक छोटे भाग के लिये निदानात्मक औषधियों की व्यवस्था करते हैं। गर्भधारण एवं शिशु जन्म के दौरान ग्रामीण क्षेत्रों में केवल 15 प्रतिशत जनसंख्या आधुनिक स्वास्थ्य देखभाल केन्द्रों की सुविधाओं का लाभ ले पाती है। विश्व की कुल महिलाओं के आधे से अधिक को कोई प्रषिक्षित सहायता नहीं मिल पाती। केवल एक-तिहार्ह महिलाओं की पहुँच परिवार नियोजन की सुविधाओं तक होती है।

कुल मिलाकर शिशु-जन्म और पालन तथा घर के बाहर काम करने का दोहरा बोझ महिला-उद्धार के मार्ग में सबसे बड़ा रोड़ा है। तृतीय विश्व में लाखों महिलाओं, जो कि खाना पकाती और घर की सफाई करती हैं, सिलाई और धोने का काम करती हैं, खेतीबाड़ी और बागवानी करती हैं, बुजुर्गों की देखभाल और बच्चों की परवरिश करती हैं, के लिये दिन में 16 घंटे का श्रम असामान्य बात नहीं है। ऐसी महिलाओं के लिए प्रशिक्षण, वृत्ति तथा आत्म-विकास के लिए न तो समय, न ही ऊर्जा और न ही अवसर उपलब्ध होता है।

औद्योगिक क्षेत्र में पुरूष और महिला कर्मचारियों के वेतन का अंतर वर्ष 1975 से कम अवश्य हुआ है, किंतु अभी भी किसी महिला को समान कार्य करने के लिये किसी पुरूष के बजाय औसतन आधे से तीन-चौथाई तक की राशि का भुगतान किया जाता है।

सर्वाधिक चिंतनीय यह तथ्य है कि आर्थिक विकास महिलाओं के लिये बुरी खबर हो सकता है। यदि अवसर केवल लड़कों को उपलब्ध करवाए जाते हैं तो शैक्षणिक अवसरों की बेहतरी असमानताओं को बढ़ा सकती है। उन्नत कृषि तकनीके एवं उपकरण जैसे कि ट्रैक्टर किसी पुरूष जो कि खेत जोतने का कार्य करता है, के कार्य के साप्ताहिक घंटों को कम कर सकते हैं, किंतु ये महिला, जो कि गुड़ाई का कार्य करती है, के कार्य के घंटों को बढ़ा सकते हैं।

संपूर्ण विकासशील विश्व में एक प्रमुख समस्या यह है कि महिलाओं का कार्य अकसर अदृश्य होता है। किसी पुरूष का कार्य, जैसे कि किसी शहर में पानी की पाइप लाइन डालना, विकास की सांख्यिकी का एक भाग होता है, जबकि कुंए से गाँव तक दिन भर की आश्यकता का पानी भरकर ले जाने जैसा किसी महिला का कार्य विकास की सांख्यिकी का भाग नहीं होता। उसका कार्य यद्यपि परिवार की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये आवष्यक होता है, किंतु यह न तो अभिलेख में अंकित होता है, न ही इसका कोई पुरस्कार मिलता है।

महिलाओं के मानवाधिकार – महिलाएं समाज के भेद्य (vulnerable) वर्ग में आती हैं। इनके अधिकारों की रक्षा इसलिए आवश्यक है कि कोई भी आर्थिक और सामाजिक विकास मानव अधिकरों के लिए सम्मान की आधार-रेखा के बिना कायम नहीं रह सकता है।[1] महिलाओं के अधिकारों के प्रति चिंता अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय ने द्वितीय विश्व युद्ध के समाप्त होने के समय से ही की है। संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में पुरूषों और महिलाओं के समान अधिकारों और व्यक्तियों की आर्थिक और सामाजिक प्रगति के लिये अंतर्राष्ट्रीय तंत्र के उपयोग की घोषणा की गई है। संयुक्त राष्ट्र संघ चार्टर और अन्य मानवाधिकार लिखत (instruments) महिलाओं के अधिकारों के लिये व्यवस्था करते हैं। संयुक्त राष्ट्र संध के चार्टर के अनुच्छेद 1(3) में

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय के.पी. महाविद्यालय, देवास (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (अंग्रेजी) शासकीय महाविद्यालय, धट्टिया (म.प्र.) भारत

'जाति, लिंग, भाषा या धर्म के विभेद के बिना सबकी मूलभूत स्वतंत्रता'' की बात कही गई है। इसी प्रकार मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा में पुरूषों तथा स्त्रियों की समानता का सिद्धांत सम्मिलित किया गया है। इसके अतिरिक्त, पुरूषों और स्त्रियों से समान अधिकारों को मान्यता निम्नलिखित अन्तर्राष्ट्रीय लिखतों (instruments)में दी गई है –

1. महिलाओं के विरूद्ध विभेद के समापन के लिये घोषणा, 1967;
2. महिलाओं के विरूद्ध सभी प्रकार के विभेद के समापन के लिये अभिसमय, 1979;
3. महिलाओं के राजनैतिक अधिकार पर अभिसमय, 1952;
4. महिलाओं की राष्ट्रीयता पर अभिसमय, 1957;
5. विवाह की सम्मति, विवाह की न्यूनतम आयु, तथा विवाह के पंजीकरण सम्बंधी अभिसमय, 1962 ;
6. अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन द्वारा अंगीकृत किए गए लिखत :
   (क) भूमिगत विश्व (महिला) अभिसमय, 1935;
   (ख) काम करने का अधिकार (महिला) अभिसमय (पुनरीक्षित), 1948 ;
   (ग) समान पारिश्रमिक अभिसमय, 1951 ;
   (घ) विभेद (रोजगार और उपजीविका) अभिसमय, 1958 और
   (ङ) कर्मकार परिवार जिम्मेदारी अभिसमय, 1981 .
7. शिक्षा में विभेद के विरूद्ध अभिसमय 1960; संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन के महासम्मेलन द्वारा अंगीकृत।

भारत की राष्ट्रीय स्थिति – भारतीय संविधान के अन्तर्गत पुरूषों और महिलाओं के अधिकारों में पूर्ण समानता सुनिश्चित की गई है। संविधान का अनुच्छेद 14 सभी को विधि के समक्ष समता और विधियों के समान संरक्षण का मूल अधिकार प्रदान करता है। समता के अधिकार का विशिष्ट उदाहरण अनुच्छेद 15(1) में पाया जाता है जो अन्य आधारों के अतिरिक्त लिंग पर आधारित विभेद का प्रतिषेध करता है।

महिलाओं और बालकों के संरक्षण के लिए राज्य सकारात्क कार्रवाई कर सकता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 15(3) के अंतर्गत राज्य स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबन्ध कर सकता है। इसी का सहारा लेकर संसद ने 1990 में राष्ट्रीय महिला आयोग सम्बंधी विधेयक पारित किया। अनुच्छेद 42 में कहा गया है कि राज्य काम की न्याय संगत और मानवोचित दशाओं को सुनिश्चित करने के लिए और प्रसूति सहायता के लिए उपबन्ध करेगा। इस नीति निदेशक तत्व को कार्यान्वित करने के लिए संसद ने प्रसूति प्रसुविधा अधिनियम, 1961 पारित किया। यह अधिनियम शिशु जन्म से पूर्व और पश्चात् भी महिलाओं के नियोजन को विनियमित करने तथा प्रसूति प्रसुविधा एवं अन्य प्रसुविधाओं का उपबन्ध करने के लिए पारित किया गया।2

संविधान का अनुच्छेद 39(घ) पुरूषों और स्त्रियों दोनों के लिए समान कार्य के लिए समान वेतन का उपबन्ध करता है। इस अनुच्छेद के अनुसरण में ससंद ने समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976 पारित किया।

इसी प्रकार महिलाओं के अधिकार से सम्बन्धित बहुत से अधिनियम पारित किये गये हैं जिनमें प्रमुख हैं – दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 ; अनैतिक दुर्व्यापार (निवारण) अधिनियम, 1956; स्त्रियों का अशिष्ट प्रस्तुतिकरण (प्रतिषेध) अधिनियम, 1986 ; सती (निवारण) अधिनियम 1987 ; गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम, 1971; राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम, 1990 आदि।

न्यायिक सक्रियतावाद और महिला मानवाधिकार – जब मानवाधिकार के प्रति सारे विश्व में जागरूकता बढ़ रही है तो न्यायिक सक्रियतावाद ने भी इसमें सहयोग दिया है। कुछ प्रमुख मामलों का उल्लेख निम्नानुसार है –

विशाका बनाम राजस्थान राज्य [3] के मामले में यौन उत्पीड़न को गम्भीरता से लेते हुए उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि कामकाजी महिला का यौन उत्पीड़न लैंगिक समता के अधिकार तथा प्राण और दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन है। अत: पीड़ित उपचार का हकदार है।

वजीर चन्द बनाम हरियाणा राज्य [4] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने दहेज उत्पीड़न के लिए अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 498 (क) के अधीन दंडित किया। दहेज मृत्यु के मामले में उच्चतम न्यायालय ने अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 304(ख) के अधीन दंडित किया।[5]

महिलाओं के अधिकार से सम्बंधित लिंग पर आधारित विभेद पर एक महत्वपूर्ण मामला **उत्तराखण्ड महिला कल्याण परिषद् बनाम उत्तर प्रदेश राज्य** [6] है। इसमें उच्चतम न्यायलय ने उत्तार प्रदेष राज्य को महिलाओं को समान कार्य के लिए पुरूषों के समान वेतन एवं पदोन्नति के समान अवसर उपलब्ध कराने के लिए परमादेश रिट जारी किया।

इस प्रकार महिलाओं को समानता और वैधानिक संरक्षण के लिये अनेक मानवाधिकार प्रदत्त किये गये हैं। इनके उपयोग से आधुनिक समय में महिलाओं की स्थिति शनै: शनै: बेहतर हो रही है, फिर भी बड़ी संख्या में महिलाओं में अशिक्षा और जागरूकता की कमी उनके अपेक्षित स्तर प्राप्त करने में बाधक है। सामयिक आवश्यकता महिलाओं में जागरूकता और शिक्षा के प्रसार की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग द्वारा प्रकाशित ह्यूमन राइट्स समाचार, जनवरी 1999 में संकलित डॉ.ए.एस. आनन्द (भारत के मुख्य न्यायमूर्ति) द्वारा मानव अधिकार दिवस के आयोजन पर दिए गए भाषण से उद्धत।
2. अधिनियम का उद्देश्य।
3. ए.आई.आर. 1997 एस.सी. 3011
4. ए.आई.आर. 1978 एस.सी. 378
5. शान्ति बनाम हरियाणा राज्य, ए.आई.आर. 1991 एस.सी. 1226
6. ए.आई.आर. 1992 एस.सी. 1695

****

वर्तमान काल में नैतिक शिक्षा – उच्च शिक्षा के संदर्भ में

डॉ. सीमा शर्मा *

प्रस्तावना – नैतिक शिक्षा अर्थात् मूल्यों की शिक्षा का मानव जीवन में बहुत महत्व हैं। जैसे मनुष्य शरीर आत्मा के बिना अधूरा है ठीक उसी प्रकार नैतिक शिक्षा एवं संस्कारों के बिना मानव जीवन अधूरा रहता है। भारत का प्राचीन साहित्य उसी संस्कारों की अमूल्य धरोहर की ओर इंगित करता है।

आधुनिक जीवन शैली ने मनुष्य को सुविधाएँ तो प्रदत्त की हैं, किंतु सार्थकता में कमी आई है। उसका कारण है बिना 'मूल्य की शिक्षा' 'मूल्यों की शिक्षा' अर्थात् जीवन में सदाचार, शिष्टता, उद्यमशीलता, अध्यात्म, परहित का विचार –

'परहित सरिस धरम नहीं भाई,
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई'[1] श्री रामचरितमानस (7/4/1)

गोस्वामी तुलसीदास जी का यह कथन सदियों पहले भी उतना ही सार्थक था जितना कि आज है।

राजा भर्तृहरि स्वयं एक सफल राजा थे और साथ ही परम ज्ञानी। हमारे सभी प्राचीन ग्रंथों में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, इन चारों की विस्तार से चर्चा की गई है। इनमें से पहले तीन को पुरूषार्थ कहा गया है, जबकि चौथे अर्थात् मोक्ष को परम पुरूषार्थ।'[2] भर्तृहरि की शतकत्रयी में इन तीनों का विवेचन है।

नैतिकता की बात हो भर्तृहरि उल्लेख नहीं हो ऐसा हो नहीं सकता है।

राजा भर्तृहरि के श्लोक जीवन की सच्चाईयों को चीरकर निकले थे। जब राजा भर्तृहरि ने अपने ही दिये फल को रानी पिंगला, मंत्री एवं गणिका के माध्यम से पुन: अपनी ही ओर लौटते हुए पाया, तो उन्हें वैराग्य हो गया। यहाँ नैतिकता के महत्व का जन्म हुआ।

'यां चिन्तयामि सततं मयि या विरक्ता,
धिक् तां च, तंच, मदनं चइमां च, मां च।।[3]

अर्थात् सबसे बढ़कर कामदेव पर धिक्कार है जिसके कुचक्र में हम सब धिक्कार के पात्र हैं। नीतिशतक में हमारी वर्तमान युवा पीढ़ी के लिये कई प्रेरक श्लोक हैं –

'प्रारभ्यते नखलु विघ्नभयेन नीचै:
प्रारम्भ विघ्नविहता विरमन्ति मध्या:।
विघ्नै: पुन: पुनरपि प्रतिहन्यमाना:,
प्रारभ्य चोत्तामजना न परित्यजन्ति।।'[4]

घटिया प्रकृति के लोग अड़चनों की आशंका से कोई काम प्रारंभ नहीं करते हैं। मध्यम कोटि के लोग काम प्रारंभ करके रूकावटों से घबराकर हिम्मत हार बैठते हैं, बीच में ही काम छोड़ देते हैं। परंतु उत्तम कोटि के लोग बार-बार विघ्नों की मार झेलते हुए भी जिस काम को हाथ में लेते हैं काम संपूर्ण करके ही छोड़ते हैं।

अत: ऐसे साहित्य को पढ़कर आत्मसात् कर भारत की युवा पीढ़ी उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो सकती है। ऐसा कहना सर्वथा अनुचित होगा कि युवा पीढ़ी मार्ग से संपूर्ण रूप से भटक चुकी है। आज भी भारत के युवा संसार में नाम रोशन कर रहे हैं आवश्यकता है तो केवल एक रोशनी की जो कि उनके जीवन को एक लक्ष्य प्रदान करे। व्यवसायिक करियर में सफल होने के साथ-साथ मानव जीवन में भी सफल होने का। मानव जीवन केवल भौतिक रूप से सफल होना ही नहीं है, सदाचार, अनुशासन, विनम्रता एवं बड़ों का आदर ये भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितना कि संपत्तिवान होना।

श्री मनुजी कहते हैं –

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविन:।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम्।।[5] (मनु. 2/121)

अर्थात् 'जिसका प्रणाम करने का स्वभाव है, और जो नित्य वृद्धो की सेवा करता है उसके आयु, विद्या, यश और बस ये चारों बढ़ते हैं।'

धर्म को आज के जीवन में केवल ईश्वर भक्ति से जोड़ा जा रहा है जबकि हमारे प्राचीन ग्रंथों में धर्म केवल एक है और वह है मानव धर्म जो कि संपूर्ण विश्व जाति के लिये एक ही है –

'धर्म का अर्थ है व्यक्तिगत जीवन में न्यायसंगत कार्य'।

न्यायसंगत कार्य से ही मानव जीवन सार्थक हैं। इसलिये पुराणों के निचोड़ रूप में कहा गया हैं –

'अष्टादशपुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्।
परोपकार: पुण्याय पापाय परपीडनम्।।[6]

अर्थात् परोपकार करना पुण्य है और दूसरों पर अपकार करना, अकल्याण करना पाप हैं, यही धर्म है और इसीलिये जगत कल्याण के कार्य को ही मानव धर्म माना गया हैं।

अत: मानव धर्म की ओर आज के युवा को प्रेरित करने हेतु भारत के अपार साहित्य जिसमें गीता, नीतिशतक एवं स्वामी विवेकानंद जैसे महापुरूषो के वचनों को पाठ्यक्रम में स्थान देना सर्वथा उचित होगा क्योंकि ये वचन केवल एक जाति या एक संप्रदाय के नहीं वरन् संपूर्ण विश्व कल्याण के लिये हैं।

आचार्य भर्तृहरि ने सर्वथा उचित ही कहा हैं –

'येषां न विद्या न तपो न दानं
न चापि शीलं न गुणों न धर्म:।
ते मृत्युलोके भुक्विभारभूता,
मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति।। भर्तृहरि नीतिशतक

अर्थात् जिनमें न विद्या है न तप है न दान है न शील (सदाचार) न गुण है न ही धर्म है वे इस मनुष्य लोक में पशु ही फिर रहे हैं।

इस प्रकार भाषा, वेश, खान-पान और चरित्र इन चारों के समूह को ही संस्कृति कहते हैं। अत: हम अपने देश के अमर साहित्य के द्वारा भावी पीढ़ी का भविष्य उज्जवल बना सकते हैं।

आधुनिक भारत के नीतिकार – भारत देश ऐसे कई विचारकों की खान है, जिन्होंने हमारी संस्कृति और सभ्यता को प्रभावित किया है। 5 सितंबर को प्रतिवर्ष देश में जिसके जन्म दिवस को शिक्षक दिवस के रूप में मनाया जाता हैं – सर्वपल्ली डॉ. राधाकृष्णन् न केवल वे उच्च कोटि के शिक्षाविद् थे अपितु एक महान राजनेता भी थे। उन्होंने न केवल देश को शिक्षा की नई परिभाषा दी अपितु 'मानव धर्म' को नैतिक शिक्षा का आधार बातया –

'कोई भी राष्ट्र आज की दुनिया में स्वाधीन होकर नहीं रह सकता। हम सब एक दूसरे पर आश्रित हैं। हमे मैत्री और सहयोग से काम करना चाहिये।

* प्राध्यापक (अंग्रेजी) शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

दुनिया का भाईचारा सर्वोच्च आदर्श है। यह केवल तभी संभव है जब हम शांतिपूर्ण सह अस्तित्व के उसूल पर चले।'

इस युग में झगड़े-झंझटों से एक नई सामाजिक व्यवस्था का उदय हो सकता है, जिसका आधार नैतिक उसूल और आध्यात्मिक मूल्य हो तथा जो विरोधी जातियों और अलग-अलग परम्पराओं को एकता प्रदान करें।

उक्त विचारों से यह परिलक्षित होता है कि मनुष्य मनुष्य के हित में यदि कार्य न करे तो वह मूल नैतिक धर्म से विचलित हो जाता है। यह विचार किसी विशेष धर्म पर केन्द्रित न होकर संपूर्ण मानव जाति के हितार्थ है। पं. राधाकृष्णन 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के सिद्धान्त को प्रतिपादित करते हैं। पं. राधाकृष्णन ने आधुनिक व प्राचीन विचारों का संगम कर भारत की नवीन पीढ़ी को एक नई राह प्रदान की। युवा पीढ़ी संस्कारों के मार्ग पर चलकर उन्नति एवं नवोन्मुखी योजनाओ को साकार रूप प्रदान करे, यही पं. राधाकृष्णन एवं स्वामी विवेकानन्द के विचार रहे हैं -

हमें वह शिक्षा चाहिये जिसमे चरित्र बनता है मन की शक्ति बढ़ती है। प्रतिभा का विस्तार होता है और आदमी अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है।

स्वामी विवेकानन्द ने पुरातनपंथी आधारहीन मान्यताओं को पीछे छोड़ने एवं हमारे आदर्शो को आत्मसात् करने की प्रेरणा युवा पीढ़ी को दी। वर्षो के सांस्कृतिक एवं सामाजिक प्रहारों को झेलने के पश्चात् भी भारतीय संस्कृति अक्षुण्ण रही है, इसका कारण है महापुरूषों की अनमोल परंपरा के कारण स्वामी विवेकानन्द उसी परंपरा के विद्धान रहें जिन्होंने नैतिक शिक्षा के महत्व को प्रतिपादित करते हुए कहा -

"Study the history of whole world and you well see that every high ideal you meet anywhere had its origin in India. From times immemorial India has been the mine of precious ideas to human study giving births to high ideas himself, she has freely distributed them broadcast to over the whole world. Religious researches disclose to us the fact that there is not a country possessing a good ethical code but borrowed something of it from us, and there is not one religion possessing good ideas of immorality of the soul but has derived it in directly from us".

"Our motherland" Swami Vivekanand English for Indian student M.P. Grant Academy Bhopal

वर्तमान में नैतिक शिक्षा की आवश्यकता एवं शिक्षक की भूमिका -

नैतिक शिक्षा प्रदान करो में माँ की भूमिका महत्वपूर्ण है। माँ के पश्चात् गुरू ऐसा केंद्रबिंदु है जोकि छात्र के जीवन को प्रकाशित करता है। गुरू अथवा शिक्षक की भूमिका प्राध स्मृति में कभी

'गुरू गोविंद दोउखड़े काको लागूँ पायँ।
बलिहारी गुरू आपकी जिने गोविंद दियो बताय।।'

समय के साथ-साथ गुरू अर्थात् की भूमिका बदल गई। मूल्यों के ह्रास के साथ-साथ शिक्षक की छवि में भी ह्रास हुआ। मूल्यों की शिक्षा देना शिक्षक का कर्त्तव्य था। किंतु समय के साथ-साथ समाज के अन्य तबके के परिवर्तन को देखते हुए शिक्षक भी बदल गया। शिक्षा एक कर्त्तव्य से बदलकर एक व्यवसाय बन गई। शिक्षा को रोजागारोनुखी करने के उद्देश्य में शिक्षक भटक गया। आधुनिकता के दौर में भौतिकवादी दृष्टिकोण को अपनाते हुए शिक्षक का स्तर आर्थिक रूप से बढ़ गया। किंतु मूल्यों के ह्रास की ओर इस कौम का ध्यान नहीं गया। श्री रजनीश द्वारा पुस्तक 'शिक्षा में क्रांति में इस ओर ध्यान आकर्षित किया -

'आधुनिक शिक्षक आधुनिक घटना है। पुराने युगों में लोग थे। वे शिक्षण में धंधे की भांति संबंधित नहीं थे। असल में कभी सोचा ही नहीं गया था कि शिक्षण भी कभी धंधा बन सकता है। लेकिन अब बन गया है। और उसका परिणाम जो हुआ है कि शिक्षण संस्थाएँ फैक्ट्रियों और कारखानों से ज्यादा नही है। कारखानों में चीजें बनाई जाती हैं। विश्वविद्यालयों में आदमी ढाले जाते हैं उतना ही फर्क है। लेकिन आदमी भी उसी तरह ढाले जाते हैं, जैसे मशीने ढाली जाती हैं। वह गुरू नहीं है, लेकिन शिक्षक के मन में यह भ्रम है अभी भी गुरू होने का, उसमें शिक्षक को बड़ा कष्ट है। उसको पीड़ा भी बहुत है। वह आदर तो उतना ही चाहता है जितना गुरू को मिलता था। सम्मान उतना चाहता है जितना गुरू को मिलता था।' इस तथ्य से स्पष्ट है कि मनुष्य की उन्नति के साथ ज्ञान की उन्नति हुई जो कि ज्ञान डेढ़ सौ वर्षो में प्राप्त होता था वह अब पन्द्रह वर्षो में प्राप्त हो रहा है। अत: जो शिक्षक छात्र से आगे होता था, आज ज्ञान में उसमें पीछे है। जबकि श्री रजनीश कहते है -

'शिक्षक केंद्र था कल तक। विद्यार्थी उसकी परिधि पर था। अब हालात बिल्कुल बदल गये है। विद्यार्थी केंद्र पर होगा। शिक्षक परिधि पर होगा।

शिक्षक को विनम्र होना पड़ेगा। भविष्य में शिक्षक को आदर के ख्याल को छोड़कर प्रेम के ख्याल पर आना पड़ेगा।

नये शिक्षक का काम अब ज्यादा से ज्यादा बड़े भाई का होगा पिता का नहीं। नया शिक्षक ठीक अर्थो में चित्र होगा। गुरू नहीं। उसको चित्रता की कोई धारणा विकसित होगी। उसे आशा देने की शक्ल भी देना होगी।

महात्मा गाँधी एवं नैतिक शिक्षा - महात्मा गाँधी के बिना भारतीय शिक्षा एवं मूल्यों की चर्चा करना सर्वथा अनुचित होगा।

'गाँधीजी के विचारों का आधार सत्य अहिंसा, प्रेम व मानवतावादी दृष्टिकोण है। गाँधीजी की रचना 'हिन्द स्वराज' उनके सभी विचारों के बीज रूप है। गाँधीजी ने लिखा हैं - 'सबसे पहले धर्म की शिक्षा या नीति की शिक्षा देनी चाहिये। हर एक पढ़े लिखे हिन्दुस्तानी को अपनी भाषा का सबको हिन्दी का ज्ञान होना चाहिये। वे कहते हैं - 'उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है। जिसके शरीर को ऐसी आदत डाली गई है। जिसकी बुद्धि न्यायदर्शी है, जिसके मनकी भावनाएँ शुद्ध हैं।

आज के आतंकवादी, बर्बर घटनाओं के भी युग में आवश्यकता है तो हमें पुन: महापुरूषो के वचनों की ओर देखने की। धैर्य, सहनशीलता, आत्मविश्वास, परोपकार आदि की भावनाएँ केवल उपदेश देने में नहीं अपितु कार्य व्यवहार में लाने से आएगी। नैतिकता को कार्य व्यवहार में लाने के लिये आज के शिक्षक को छात्र के साथ मित्रवत रहते हुए उसकी समस्याओं को समझना होगां उसके कैरियर के साथ उसके मनोबल को मजबूत करना होगा। स्वस्थ्य एवं मजबूत युवा ही मजबूत राष्ट्र का निर्माण कर सकेगा। अत: नैतिक शिक्षा को एक पाठ्यक्रम का नहीं अपितु जीवन का हिस्सा बनाए जाने की आवश्यकता है। उच्च शिक्षा में नैतिक शिक्षा की आवश्यकता को कभी भी नकारा नहीं जा सकता है। अपनी जड़ो की ओर लौटना एक शुभ संकेत है। भारतीय संस्कृति की रक्षा करना प्रत्येक युवा का कर्त्ताव्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्री रामचरित मानस - गीतप्रेस गोरखपुर (गोस्वामी तुलसीदास रचित)
2. भर्तृहरि शतक मनोज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2005
3. भर्तृहरि शतक मनोज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2005
4. भर्तृहरि शतक मनोज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2005
5. कल्याण 'धर्मशास्त्रांक गीता प्रेस गोरखपुर (संख्या 1 वर्ष 1996)
6. सर्वपल्ली डॉ. राधाकृष्णन् मनोज पब्लिकेशन, पेज नं. 72
7. English For Indian Students "Our Motherland" M.P. Grants Academy Swami Vivekananda, 1992
8. शिक्षा में क्रांति (ओशो) डायमंड पाकेट बुक्स, 1991, पेज नं. 54
9. रचना द्विमासिक अंक 80 सितम्बर-अक्टूबर 09 म.प्र. शासन उच्च शिक्षा विभाग एवं म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी का समवेत उपक्रम

समय प्रबंधन

डॉ. पी. सी. काशिव *

प्रस्तावना – समय प्रबंधन एक ऐसी जरूरत है जिसे हर किसी को सीखना समझना व सिखाना चाहिए। इसका यह अर्थ बिल्कुल नहीं है कि हम घड़ी की सुईयों में बंध जाये। बल्कि यह तो आजादी का एक दूसरा नाम है। जिस पर चलकर हम अपने स्वप्नों को, इच्छाओं को आसानी से पूरा कर सकते हैं। यह एक ऐसी आदत है, जिसे अपना लेने पर व्यक्ति के अधिक से अधिक कार्य कम व सही समय पर तो पूरे होते ही हैं, साथ ही साथ उसके मन को भी संतुष्टि मिलती है। समय प्रबंधन एक ऐसी कला है जिसके माध्यम से हम अपने कार्यो को सही समय पर इतने अच्छे ढंग से कर पाते हैं कि प्रत्येक कार्य में आनंद लेने का हमें उपयुक्त समय मिल पाता है। एक प्रकार से समय प्रबंधन का सम्बंध जीवन जीने की कला से ही है।

संसार में सफल वही है, जिन्हें समय प्रबंधन करना आता है, जो समय के पीछे नहीं दौड़ते, बल्कि समय उनके पीछे दौड़ता है और ऐसा तभी सम्भव हो पाता है जब हम अपने कार्यो को समय से पहले पूरा कर लेते हैं, और उनमें होने वाली कमियों को समय रहते सोचते, विचारते और दूर करते हैं। इस संसार में ज्यादातर लोग समय के पीछे दौड़ते रहते हैं और अपना काम समय पर न कर पाने के कारण दुखी होते हैं। बार बार प्रयास करते हैं लेकिन अपनी त्रुटियों को दोहराने के लिए विवश होते हैं। क्या कारण है कि वे समय का सही उपयोग नहीं कर पाते ?

इसका मुख्य कारण हमारी कार्य करने से सम्बंधित आदते हैं। जो हमें समय पर सही ढंग से कार्य पूरा करने नहीं देती। जो व्यक्ति जिस ढंग से कार्य करने का आदि हो गया है, वह उसी तरीके से अपने कार्य को करता है, और बार–बार असफल होता है। यदि हम कार्य करने की अपनी शैली के बारे में सोचे, उसमें जरूरी परिवर्तन लाये तो अधिक कुशलता से अपने कार्यो को समयानुसार कर सकते हैं। दूसरा मुख्य कारण है – हमारे पास उपलब्ध एक निश्चित समय हम अपने समय को न तो घटा सकते हैं और न ही बढ़ा सकते हैं लेकिन फिर भी समय को बर्बाद करके हम अपने निश्चित निर्धारित समय को घटा देते हैं और कम समय में अच्छे ढंग से कार्य को पूरा करने की आशा व्यर्थ है। क्योंकि कम समय में दबाव में, व्यक्ति कार्य तो पूरी मेहनत से करता है लेकिन उसमें कुशलता का कहीं न कहीं अभाव होता है और सही ढंग से कार्य पूरा करने में कहीं न कहीं कमी रह जाती है।

इसे दूर करने का एक उपाय यह है कि अपनी इस कमजोरी व आदत को समझा जाये कि उसका समय कहां कहां व्यर्थ, नष्ट होता है और फिर से समय को व्यर्थ गवांए बिना अपने कार्यो को सुव्यवस्थित ढंग से करने का प्रयास किया जाये कि उसमें व्यक्ति को कितनी सफलता मिलती है। हमारे कार्य करने के ढंग में सबसे बड़ी कमी होती है लक्ष्य पर ध्यान न रखना। जब हमारा ध्यान लक्ष्य पर नहीं होता है तो लक्ष्य से भटक कर हम अनावश्यक कार्यो को करने लग जाते हैं और अपना बहुत सारा समय यूं ही बर्बाद कर देते हैं या फिर मनोरंजन में गंवा देते हैं। मनोरंजन व्यक्ति के लिए बहुत जरूरी है इससे उसे कार्य करने के लिए आवश्यक ऊर्जा व प्रेरणा मिलती है। लेकिन यदि मनोरंजन का समय हमारे जरूरी कार्यो के समय को भी बाधित करने लगे तो यह हमारे लिए नुकसानदायक होता है।

समय प्रबंधन जीवन का एक बहुत ही महत्वपूर्ण अंग है। जिसके माध्यम से हम जीवन में समय को बचाना सीखते हैं। उपलब्धियां एवं सफलताऐं अर्जित करते हैं और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि जीवन में कुछ भी हासिल करने की एकमात्र कुंजी यही है। इसके द्वारा हम जीवन जीना सीखते हैं कभी सफल होते हैं तो कभी असफल होते हैं। लेकिन यह प्रबंधन हमें जीवन के सभी प्रबंधनों में दक्ष करता है। हमारी कार्य कुशलता बौद्धिक क्षमता, भावनात्मक क्षमता आदि की भी जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका है और इसके माध्यम से ही हम अपने समय को सही ढंग से व्यवस्थित कर पाते हैं और समझ पाते हैं कि इसमें हमें कितना समय लगाना है।

हमारे जीवन में कुछ कार्य ऐसे होते हैं, जिनमें हमें अधिक समय लगाना पड़ता है और कुछ ऐसे होते हैं जिनमें कम समय लगाने की जरूरत होती है। लेकिन अपनी नासमझी के कारण जहां हमें अधिक समय लगाना चाहिए वहां कम समय लगाते हैं और जहां कम समय लगाना चाहिए वहां अधिक समय लगाते हैं। लेकिन समय में यह खूबसूरती है कि वह हमें इस बात का अहसास जरूर करा देता है कि हमसे भूल कहां हो रही है और इसे कैसे दूर करना है यह हमारे ऊपर हमारी समझ के ऊपर है।

अत: जरूरी है कि हम समय प्रबंधन में बाधा पहुंचाने वाली अपनी आदतो कार्यशैली, व क्षमताओं को समझें व इनमें आवश्यक परिवर्तन लाने का यथासम्भव प्रयास व अभ्यास करते रहें। समय प्रबंधन में दक्ष लोगों व अपने साथियों के अनुभवों से परिचित होना भी हमें अपनी आदतों को सुधारने में बड़ा सहायक होता है। समय प्रबंधन की जरूरत हमें हमेशा पड़ती रहेगी इसलिए इसे सीख लेना और सीखते रहना जरूरी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. टाईम्स ऑफ इंडिया (संडे टाईम्स)।
2. इकॉनामिक टाईम्स।
3. सक्सेस।
4. अखण्ड ज्योति ।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय एल.बी.एस. महाविद्यालय, सिरोंज (म.प्र.) भारत

To study the need of upskill development training programs in micro, small and medium scale garment manufacturing units in Indore District

Dr. Sonal Bhati *

Abstract - Modernization of manufacturing process in the sector has created a skill gap due to mismatch of skills of the conventional labor. To reduce this gap, government of India has taken skill development initiatives like Integrated Skills Development Scheme (ISDS) by Ministry of Textiles, Deen Dayal Upadhay –Gramin Kaushal Vikas Yojna (DDU-GKY)being executed by Ministry of Skills. Currently, the training is largely focused on entry level job creation and does not cover other or existing resources in the value chain. The aim of the study is to find out in plant efforts done by existing garment manufacturing units towards skill development activity for their employees. The objectives of the study is To study the need of skill development training programs in micro, small and medium scale garment manufacturing units in Indore District. This is an empirical research based on secondary data, pilot survey, and experience survey. The data were collected from micro, small and medium apparel manufacturing enterprises. Descriptive statistics were used to describe present status of the initiatives taken by these apparel manufacturing enterprises for the skill development of employees, prospective in Indore. This study identified that there are significant difference between micro, small and medium manufacturing enterprises in terms of need of skill development programs for the existing employees.

Key words - Integrated Skills Development Scheme (ISDS), Deen Dayal Upadhay –Gramin Kaushal Vikas Yojna (DDU-GKY), micro (MIC), small(SM) and medium (MED) scale garment manufacturing Enterprises.

Introduction - The garment manufacturing process starts from design of the product which is planned three to four seasons in advance based on the fashion trends forecasted. Once design features such as fabric, color, styling etc. are finalized and order quantities are estimated, the sampling and costing process is started with several vendors. Each vendor showcases their capabilities in term of raw material procurement, workmanship, quality by submitting garment proto samples and costing. The buyer selects a vendor based on its price, quality and delivery offering. Once the order is placed, below mentioned production process is showen in table 1.

Table 1 (See in last page)

On the basis of the study conducted, it is concluded that Indore has some technological advanced set-ups and some base level set-ups. Upskilling occurs when employees or employers improve the skills of workers, usually through training, to enable them to perform better in their jobs and to progress through the company into various job roles and opportunities.

To ensure high productivity level, it is critical to provide up -skilling of employees at production floor level. In addition, to ensure sustainable growth in the industry and higher share of exports, training of Mid-Management level employees is essential. The workers in garment industry are generally classified as unskilled, semi-skilled, skilled and highly - skilled. This classification is based on the efficiency of the worker and ability to complete certain production operations. One of the key reasons for lack of skilled and highly skilled labor is absence of upskilling initiatives in the current training programs. Usually Skilled and Highly Skilled workforce at a factory floor perform critical operations such as collar attachment, sleeve placket attachment, etc. which require certain set of expertise and know-how. Without the right set of skills, these operations cannot be performed and if performed wrongly, it would result in rejections and wastages. Without the requisite workforce to perform these operations, factories would have face delivery delays, quality issues and bottlenecks at production floor. So it is of utmost importance for factory to have workers across different skill levels right from unskilled to highly skilled workforce to ensure smooth operations, quality and timely delivery, The current skilling initiatives by the Government focus on entry level skilling and providing employment opportunities to unskilled workforce, whereas there is no emphasis on up-skilling.The government should enhance the scope of current skilling initiatives to include up-skilling of the workforce across different skill levels.

Review of literature - In a study by Indrakumar 2013, on the subject of "Employment Intensity of Output: An Analysis of Non-Agriculture Sectors, Apparel Sector Deficiency in availability of skilled workers is a major problem particularly in the garment industry. Traditional manually operating skills are ineffective in modern garment industry. Shortage of these

* H.O.D. (Fashion Technology Department) Govt. Women's Polytechnic College, Indore (M.P.) INDIA

skills is affecting production and productivity of garment industry in particular. Availability of multi-skilled workers: Merchandiser, Quality Control Officer, Shipment Manager – for these three positions earlier three persons were employed whereas now one person is capable of looking after all these three positions. In another research study by Human Resource and Skill Requirements in the Textile Industry stated that "Study on mapping of human resource skill gaps in India till 2022. The availability of trained manpower is a key issue for the garmenting sector. The ATDC, ITIs and NIFT annually train up to 50,000 workers. A few private sector players also provide training specific to the garmenting sector. Mike Morris & Lyn Reed, A Pectoral Analysis of Skills Gaps and Shortages in the Clothing and Textile Industry in South Africa Report for the Human Sciences Research Council, February 2008, It is important to distinguish between skills gaps in the existing workforce which compromise the ability of people to perform to the level required by the firm and skills shortages which arise from insufficient numbers of recruits in the industry labour pool. Santosh Mehrotra, Ankita Gandhi, and Bimal K. Sahoo, Estimating the Skill Gap on Realistic basis for 2022, Government of India While the estimated number of people to be skilled is coming to about 291 million additionally by 2022, it is important here to make an extremely significant observation about those who are currently in the workforce that are skilled as well as those who are additionally required to be skilled. Dr. Jatinder S. Bedi, july 2009, Assessing the Prospects for India's Textile and Clothing Sector Most of the large and medium sized mills (both spinning and integrated) are found to be providing training to their workers before assigning them some work and even after a few years of experience for skilled jobs. In addition, large units hire formally trained skilled labour (e.g. engineers, technicians, managers, etc.) to supervise the sophisticated operations.

Methodology - The objective of the present study is to study the need of up-skill development training programs in micro, small and medium scale garment manufacturing units in Indore District. The hypothesis of the study is, there will be no significant need of up-skill development training programs in micro, small and medium scale garment manufacturing units in Indore District. This is an empirical research based on secondary data, pilot survey, and experience survey. The data were collected from 30 micro (MIC), small(SM) and medium (MED) scale garment manufacturing Enterprises. Chi- test statistical analysis method were used to describe present status of the initiatives taken by these apparel manufacturing enterprises for the up-skill development of employees, prospective in Indore.

Result and discussion

Table 2

Need of up-skill development training programs in garment manufacturing units in Indore District.

S.	Particulars	MIC	SM	MED	Chi-value	df	Asymp. sign
1	ITI/POLY-TECHNICE	-	-	67	268.3	2	0.000
2	ATDC/RVTI	-	-	33			signi-ficant
3	Private institutes /NGO's	-	81	-			
4	Training not required	100	19	-			

Chi – value for the Need of up-skill development training programs in garment manufacturing units in Indore District. Obtained 268.3, this is significant.

Figure 1 (See in next page)

Up-skilling is extremely important to drive productivity. Only entry-level training is not sufficient to build productivity and efficiency. Existing workforce need to work at a better skill level with operational capability across different operations at production floor to contribute to overall productivity in the factories. Out of the total respondents found in above subject, 100% micro scale units have no requirement of any up-skill oriented training, neither from govt. institute or nor from private institutes, the reason behind this scenario found that because of micro enterprise they have limited infrastructure and machines as well as very few employees or workers, in some cases they take responsibilities of both the work, as a worker or as a owner. In this situation they prefer on floor training at their place rather than going out for skill improvement. Skill building in the garment manufacturing is looked at with a different perspective. So far most of the Skill development programs have focused on the entry -level skills. While entry-level skills are required, but up-skill development training at various levels of workforce even in their place especially for micro manufacturing units is a challenging task for government. With the support of government grants, some of the private as well as NGOs are very actively dedicated towards skill development, especially in rural areas. Hence, around 81% small scale manufacturing units, interested to send their employees to the private institution for skill development trainings. These trainings provided by mentioned institutes or NGOs in free of cost or at very nominal fee structure. 19 % small scale units need not required any up-skill development training because from the entry level they recruit only skilled worker as per their requirement. 67 % medium scale manufacturing units have their inbuilt managerial strategies for the promotion based on up-skilled training pattern from ITI/polytechnic. So as per requirement, 67% MED they port their workers for up-skill training programs to these institutes.33% of MED workers or employees go to RVTI/ATDC for up-skill development programs.

As after analysis of this research it was found that there are significant need of up-skill development training programs in micro, small and medium scale garment manufacturing units in Indore District. So the hypothesis is rejected.

Conclusion and Recommendations - Skill development initiatives by Government should focus not only on the entry level training, but also on up-skilling of workforce. The trained workers under current programs may be incentivized to work for a fixed period with the manufacturers. This step would

ensure assured sustained job opportunities for the trained worker and higher participation by manufacturers.

A combination of on-Job training and some classroom training that may be mostly based on visual aids, which can give a perspective to the operator to see on how a certain operation can be performed better.

The up-skilling program should be implemented at a higher rate because the level of engagement will be far higher than the entry -level training. Training agencies should develop curriculum to suit the requirements of industry and ensure the engagement model is different for upskilling when compared to entry training skills.

References :-

1. Indrakumar 2013, "Employment Intensity of Output: An Analysis of Non-Agriculture Sectors, Apparel Sector", Institute of Applied Manpower Research Planning Commission, Government of India. IAMR Report No. 12/2013
2. Human Resource and Skill Requirements in the Textile Industry ,"Study on mapping of human resource skill gaps in India till 2022", National Skill Development Corporation, D-4, Clarion Collection, (Qutab Hotel), Shaheed Jeet Singh Marg, New Delhi 11 0 016Tel : 011 46 56 0414,Fax : 011 4656 0417. Email : nsdc@nsdcindia.org.
3. Miranda Pye, "A comprehensive summary of skills requirements in the Clothing, Textiles, Footwear and Leather and Furniture, Furnishings and Interiors" industries Research, Pye Tait Limited, 9, Royal Parade Harrogate, HG1 2SZ, email: info@pyetait.com, web: www.pyetait.com.
4. Mike Morris & Lyn Reed 2008 "A Pectoral Analysis of Skills Gaps and Shortages in the Clothing and Textile Industry in South Africa Report for the Human Sciences Research Council, February 2008, , and Lyn Reed Policy Research in International Services and Manufacturing (PRISM), School of Economics, University of Cape Town,mike.morris@uct.ac.za , , lynmead@gmail.com.
5. Santosh Mehrotra, Ankita Gandhi, and Bimal K. Sahoo,Estimating "the Skill Gap on Realistic basis for 2022", Santosh Mehrotra(santosh.mehrotra@nic.in), Ankita Gandhi (ankita.gandhi@nic.in)and Bimal K. Sahoo (bimal.sahoo@nic.in)are with the Institute of Applied Manpower Research, Planning Commission.
6. Dr. Jatinder S. Bedi, july 2009, Assessing the Prospects for India's Textile and Clothing Sector, Project Leader national council of applied economic Research.

Table 1

Process Initiation 45-60 days	**OrderPlacement 45-60days**	**Production Starts 45 – 60 days**					**Production Ends**	**Shipment**
Product development	Raw material sourcing	Cutting	sewing	washing	finishing	packing	Final inspaction	
135-80 days								

Figure 1 - Need of up-skill development training programs in garment manufacturing units in Indore District

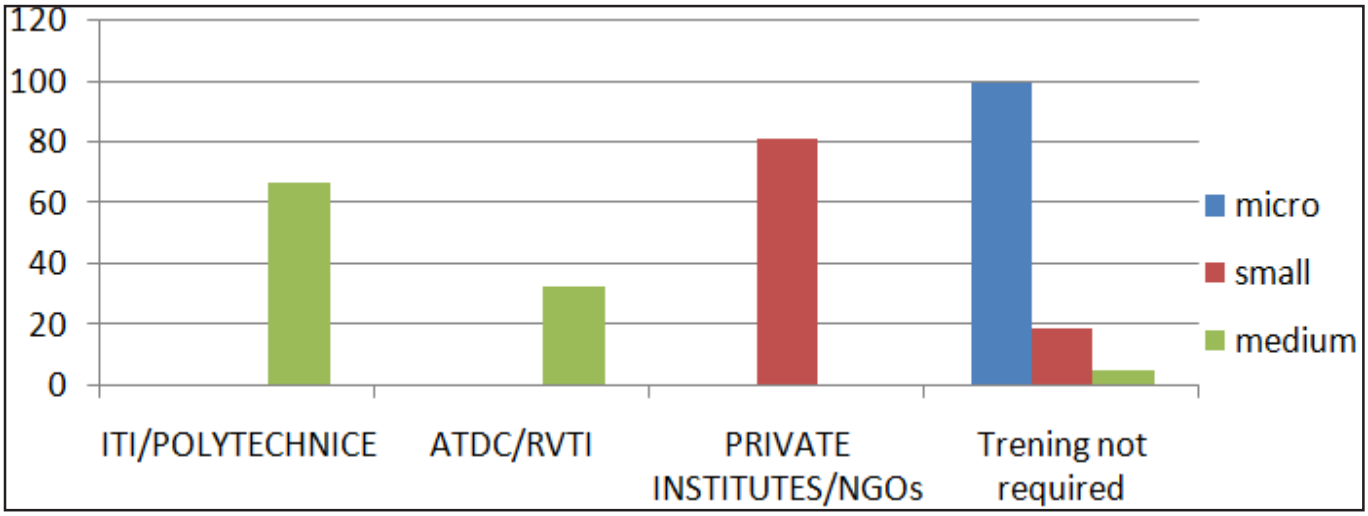

****

Naveen Shodh Sansar
(An International Multidisciplinary Refereed Journal)

RNI No.- MPHIN28519/12/1/2012-TC
ISSN 2320 - 8767, E -ISSN 2394 - 3793
Impact Factor - 0.715

MEMBERSHIP CUM AUTHOR'S BIO-DATA FORM

(Photocopy of this form may be used)

Name (Author / Member) : Mr/Mrs/Ms/Prof/Dr : .....

Name of Co-Author(s) : .....

Designation : ..... Subject : .....

Name of College/University/Institution : .....

Home / Official Address : .....

.....

State : .....Pin : ..... Country : .....

Tel. No. (Res. /Office) : .....Mobile : .....

E-mail Address : .....

Sign......

1. MEMBERSHIP will be valid for individual, University/College Institute Library-One Year SUBSCRIPTION RATES For printing/publication of one research paper.
   * Institutions Rs. 1,250/- per annum (without publication of paper)
   * Membership for Author Rs. 750/- for 1 Year.
   * Membership for Co-Author Rs. 750/- for 1 Year.
   * Publication of paper each after membership Rs. 850/- (2000 Words)
2. For Remittances can pay printing amount through DD/Cheque in favor of **'NAVEEN SHODH SANSAR'** payable at Neemuch (M.P) and send it by Registered Post. Fill information regarding Demand Draft.

   D.D. No. : .....Amount ..... Name of Bank .....Date : .....

   OR

   You can cash deposit / Online fund transfer on **NAVEEN SHODH SANSAR** Current A/c.

Bank Detail :-
NAVEEN SHODH SANSAR
Current A/c. no.:- 32768184328
Bank Name :- State Bank Of India
Branch :- Neemuch (M.P)
IFSC code:- SBIN0030055

Editor - Ashish Sharma
Add:- "Shri Shyam Bhawan"
795, Vikas Nagar Extension 14/2, Neemuch
(M.P) - 458441 Mob:- 09617239102
Email ID :- nssresearchjournal@gmail.com
Website :- www.nssresearchjournal.com

Note- Copyright form & Author's Guide line are availble on our web-site
{All disputes are subject to exclusive jurisdiction of NEEMUCH Court Only (M.P.)}

शोध पत्र तैयार की विधि
Method of Preparing of Research Paper

1.	शीर्षक	–	Title
2.	शोध सारांश	–	Abstract
3.	शब्द कुंजी	–	Key words
4.	प्रस्तावना	–	Introduction
5.	उद्देश्य	–	Object
6.	शोध परिकल्पना	–	Research Hypothesis
7.	शोध प्रविधि एवं क्षेत्र	–	Research Methods & Area
8.	शोध उपकरण	–	Research Tools
9.	सांख्यिकी तकनीक	–	Statistics Technics
10.	शोध व्याख्या	–	Description
11.	निष्कर्ष	–	Conclusion
12.	सुझाव	–	Suggestion
13.	संदर्भ ग्रंथ सूची	–	References
	a. अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक	–	Kotler, Philip : Marketing Management, 2007 P. 196
	b. राष्ट्रीय पुस्तक	–	कुमार, वि. : जनांकिकीय 2006, पृष्ठ 42
	c. अन्तर्राष्ट्रीय शोध जर्नल	–	नवीन शोध संसार, ISSN 2320-8767 जुलाई से सितम्बर 2014, पृष्ठ क्र. 81
	d. राष्ट्रीय शोध जर्नल	–	नवीन शोध संसार, ISSN 2320-8767 जुलाई से सितम्बर 2013, पृष्ठ क्र. 222
	e. अप्रकाशित शोध ग्रंथ	–	शर्मा लक्ष्मीनारायण : मन्दसौर जिले का जनांकिकीय अध्ययन1971 से 1991 अप्रकाशित पीएच.डी. शोध प्रबन्ध विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन 1995, पृष्ठ क्र.132
	f. पत्रिकाऐं	–	रचना, हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल फरवरी 2014 पृ. क्र.84
	g. समाचार पत्र	–	दैनिक भास्कर, रतलाम संस्करण, 5 सित. 2014, पृ. क्र. 6
	h. वेबसाईट	–	www.nssresearchjournal.com
	i. अन्य	–	व्यक्तिगत सर्वे एवं विभागों से प्राप्त जानकारियां
14.	शब्द सीमा	–	Word Limit - 2000
15.	व्यक्तिगत जानकारी	–	नाम, पद, महाविद्यालय का नाम, निवास का पता, मोबाइल नं. व ईमेल एड्रेस आदि ।